

फणीश्वरनाथ रेणु के कथा-साहित्य का सामाजिक एवं राजनीतिक अध्ययन



अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ की
पी-एच० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत
शोध-प्रबन्ध

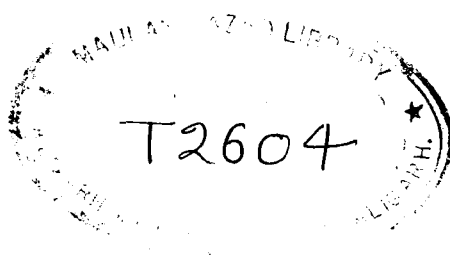
निर्देशक
डॉ० कुँवरपाठसिंह
रीडर
हिन्दी-विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय,
अलीगढ़ ।

प्रस्तुतकर्ता
सूरजप्रसाद पालीवाल
एम० ए०, एम० फिल०





T2604



भूमिका

फणीश्वरनाथ रेणु मूलतः सामाजिक-कथार्थ के लेखक हैं ।

रेणु के कथा-साहित्य में सामाजिक-जीवन और उसकी गतिविधियाँ विस्तृत ढंग पर चित्रित हुई हैं । "मेला जीवत" {1954} से चलकर "पस्ट बाबू राठ" {1979} तक की दीर्घ-यात्रा को हमने दो वर्गों में बाँटकर विश्लेषण किया है, इससे रेणु को समझने में सहायता जाई है । 1954 से लेकर 1960 तक के काल को हमने रेणु की कला का स्वर्णकृष्ट काल माना है, जिसमें "मेला-जीवत", "परती:परिकथा" और "दुमरी" सैराह जैसे उपन्यास-कहानियाँ लिखे गये । रेणु की प्रतिष्ठा का आधार भी यही उपन्यास-कहानियाँ हैं । 1960 के बाद का लेखन निरन्तर अस्पष्ट वैचारिकता के अभाव में अप्रभाव-शाली रहा - यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है । बाद के लेखन में न तो उतनी गहराई है और न उतनी जीवन्तता । इन कारणों को स्पष्ट करने के लिये उनके जीवन के विभिन्न पड़ावों का अध्ययन-विश्लेषण आवश्यक है - ऐसा हमने प्रथम अध्याय में किया है । प्रथम अध्याय में रेणु के जीवन-संघर्ष और परिवेश को लेकर हमने उनकी क्षमता और पक्षधरता की खोज की है, जिससे लेखक का लेखन संयोजित होता है ।

रेणु के साहित्य में स्वातन्त्र्योत्तर ग्रामीण-परिवेश ही प्रमुख रूपों में चित्रित हुआ है । जमींदारी-उन्मूलन, भूमि-सुधार, सख्खन्दी, पंचवर्षीय योजनाएँ, नयी कृषि-व्यवस्था और इन सबसे प्रभावित ग्रामीण-परिवेश को स्पष्ट कर रेणु-साहित्य को समझने के लिये हमने द्वितीय-अध्याय में राजनीति, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र एवं विधि के विद्वानों के विचारों को दृष्टिगत रखकर भारतीय-ग्रामीण-परिवेश की पड़ताल की है ।

स्वातन्त्र्योत्तर भारत का स्थिरित गति से औद्योगीकरण करने की सरकारी नीति के कारण समाज में तत्सन्तुलन उत्पन्न हुआ, गाँव और शहर का अन्तर निरन्तर बढ़ता गया, मिर्चन और सम्बन्ध के बीच खाई घीड़ी होती गई और शोका की चक्की के पाट और भी तीव्रता के साथ घूमने लगे, जिसमें समस्त मानवीय-सम्बन्ध कूटता और पार्श्विकता के कारण धूर-धूर हो गये, गाँव में नये भूस्वामी का जन्म हुआ, जिसमें जमींदारों जैसी घालाकी और पूजीपति जैसी मक्कारी दोनों का मिश्रण था। इस भूस्वामी-वर्ग ने ग्रामीण जीवन के समस्त उन्नात और आकीभाओं पर पानी फेरकर अपनी शोका स्पी फलम मन भरकर उगायी। ग्रामीण-जीवन को नारकीय बनाकर छोटे कुक्कों का छेतिहर-श्रमिक बनाने में इसने सरताधारी दल का सहयोग भी लिया। सरताधारी-दल की रीति-नीति इस भूस्वामी वर्ग के घर की और भरने में सहायक रही। जातिवाद की भिरित पर आरुद्र ग्रामीण-राजनीति और और उसके विभिन्न दल उन्नात के दोहन में सहायक हो रहे - यह अब तक राजनीति-वेत्ताओं के विरलेका और निरन्तर बढ़ती गरीबी के आधार पर सिद्ध होता है - रेणु का साहित्य भी यही कहता है। तृतीय अध्याय में हमने इन्हीं निष्कर्षों की पुष्टि हेतु विभिन्न विद्वानों के मतों का स्वीकार भी किया है और मात्र पुस्तकीय ज्ञान के आधार पर प्रतिपादित निष्कर्षों का विनम्र छण्डन भी। यह अध्याय भारतीय-ग्रामीण विकास में अवरोधक तत्वों का भी पर्दाफाश करता है।

"मैला जीवन्" और "परतोःपरिकथा" रेणु के प्रमुख दो उपन्यास हैं। ग्रामीण-जीवन का यथार्थ चित्र इन उपन्यासों में बड़ी ही कृमता के साथ स्पष्ट हुआ है। भूस्वामियों के निरन्तर बढ़ते प्रभाव, बनते-विगड़ते नये सामाजिक सम्बन्ध जाति और धर्म पर आरुद्र राजनीति-

कृषि का औद्योगीकरण, सरकारी कर्मचारियों की ग्रामीण-विकास में भूमिका और लोक संस्कृति का कितना ज्वलन्त और विस्तृत चित्रण इन उपन्यासों में हुआ है, यह अन्यत्र दुर्लभ है। चतुर्थ अध्याय में उपर्युक्त आधारों पर इन दो ही उपन्यासों का विश्लेषण किया गया है।

रेणु के "दीक्षिता", "कितने घोरारहे", "कुल" और "पन्हु बावू रोड" मध्यकालीन वितर्गतियों को लेकर चलने वाले उपन्यास हैं। मध्य काल का छोटी-छोटी समस्या इन उपन्यासों में चित्रित की गई है, किन्तु जो गहराई और विस्तार रेणु के प्रथम दो उपन्यासों में है, वह इनमें नहीं। यह रेणु की वैचारिकता का प्रभाव है। लेखक की दृष्टि जहाँ निरन्तर गहराती जाती है, जीवन के अन्तर्द्वन्द्वों के प्रति जाखी और कुंम हाती जाती है, वहाँ रेणु के साथ इसका विपरीत हुआ और बाद के ये उपन्यास इसी कारण सशक्त बन्ने से रह गये। पीछवा अध्याय रेणु के निरन्तर होते पतन और उसके कारणों को स्पष्ट करता है।

"ठुमरी" कहानी -संग्रह से रेणु हिन्दो कहानी में प्रवेश करते हैं। "मला आचल" उपन्यास की प्रसिद्धि के साथ ही "तीसरी कसम" कहानी रेणु की प्रसिद्धि में और भी चार-चाद लगा देती है। ग्रामीण-जीवन की रसभीनी -गन्ध इन कहानियों में मिलती है, किन्तु "आदिम राष्ट्र की महक" की कुछ कहानियों और अगिनजोर संग्रह की कहानियों में यह अकलीय गन्ध एवं अनुभव की ताजगी लुप्त हो जाती है। जो लेखक तीसरी कसम, रसप्रिया, तीर्थदिक, उस, सिरपंचमी का सगुन इत्यादि कहानियाँ देता है वहाँ अन्त में "अगि नजोर", "आजाद परिन्दे" "खे", "एक कहानी का सुपात्र" एवं "मन का रंग" जैसी सज्जी और अराजक कहानी देता है। रेणु के इन पतन के कारणों को हमने ७३ अध्याय में सकारण स्पष्ट किया है।

जदलते सामाजिक-राजनीतिक मानदण्डों के आलोक में अन्त में हमने रेणु के सम्पूर्ण कथा-साहित्य में उद्घाटित तथ्यों को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया है । अतः इस दिशा में हमने उनके विश्लेषणों को अध्यात्मकता प्रदान की है । प्रस्तुत शोध रेणु के विभिन्न क्षितियों का उद्घाटन कर आगे के लिये मार्ग-प्रशस्त करने में सहायक होगा, ऐसा विश्वास है।

यह एक विचित्र स्थिति है कि "मैला जीवत" के प्रकाशन से रेणु की जो प्रतिदि मिनी ,उत्तके कारण पत्र-पत्रिकाओं में भरपूर चर्चा तो हुई, कोई प्रामाणिक कार्य नहीं हो पाया । रेणु साहित्य से राजनीति में मानवीय-मूल्यों की प्रतिष्ठा हेतु आये, अतः उनके सम्पूर्ण कथा साहित्य का सामाजिक- राजनीतिक अध्ययन आवश्यक था । प्रस्तुत ग्रन्थ इसी दिशा में एक ईमानदार प्रयास है ।

प्रस्तुत शोध का श्रेय मेरे गुस्वर डी० कुंवरपाल सिंह, रीठर, हिन्दी-विभाग, जलौगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, जलौगढ़ को है । वे एक सहज और सहृदय विद्वान हैं । शोध-काल में उनकी सहृदयता और सहजता ने मुझे सम्बल प्रदान किया है और विषय की सूझ पकड़ ने मेरे इस शोध को नवीन दिशा दी है । मैं उनकी इस अपार कृपा के लिए श्रद्धावन्त हूँ ।

आदरणीया नमिता भाभी प्रख्यात कहानी-लेखिका होने के साथ एक चिन्तक भी हैं । शोध के विभिन्न मुद्दों पर उनसे निरन्तर विचार-विमर्श हुआ है और नवीनता पाई है, जिसके लिये मैं श्रदानत हूँ ।

आदरणीय प्रो० अमरनाथ सकसेना, प्राचार्य, लेड मोतीलाल कलेज, कुंभू {राज०} एवं आदरणीय इंदिरा दी की सतत प्रेरणा और आशीर्वाद इस ग्रन्थ की पूर्ति में सहायक रहे हैं। उनकी इस अनीम कृपा के लिये मैं श्रद्धांजलि देता हूँ।

मित्र, डॉ० वेद प्रकाश अमिताभ, डॉ० गोपाल शर्मा, श्री श्री० के०पालजीवाल, राजा राज किशोर उपाध्याय, हरिहर प्रसाद दोष्टि, प्रो० कलश शर्मा, विश्वनाथ शर्मा एवं अरविन्द सकसेना के साथ घंटों बहसता रहा हूँ। उनकी श्रुत्य सम्मतियों के प्रति धन्यवाद कोरी औपचारिकता होगी।

परिवार में धन्यवाद की आवश्यकता नहीं होती।

अन्त में, प्रातः स्मरणीया स्व० माँ की पुण्य-स्मृति को नमन।

हरिहर प्रसाद पालीवाल
{ हरिहर प्रसाद पालीवाल }

विषय - सूची

पृष्ठ संख्या

प्रथम अध्याय : रण्टु : परिवेश और जीवन-संघर्ष

1 - 90

परिवेश

जीवन- संघर्ष

नेपाली -क्रान्ति

वैचारिक-संघर्ष

द्वितीय अध्याय: स्वातन्त्र्योत्तर ग्रामीण-परिवेश

91 - 106

ग्रामीण- परिवेश

भूमि सुधार

जमींदारी-प्रथा

महात्वाङ्गी-प्रथा

रैतवाङ्गी-प्रथा

जमींदारी-उन्मूलन

चक्रवर्दी

हरित, क्रान्ति

पंचवर्षीय योजनायें

प्रथम पंचवर्षीय योजना { 1951-56 }

द्वितीय पंचवर्षीय योजना { 1956-61 }

तृतीय पंचवर्षीय योजना { 1961-66 }

तीस वार्षिक योजनाएं { 1966-69 }

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना ॥ १९६९-७४ ॥

॥ पंचम पंचवर्षीय योजना ॥ १९७४-७९ ॥

मुख्यांकन

तृतीय अध्याय : राष्ट्रीय परिवेश : सामन्ती एवं पूँजीवादी व्यवस्था

सामन्ती व्यवस्था का विघटन और पूँजीवाद का-
-विकास

नया उभरता भूस्वामी-वर्ग

राजनीतिक विचारधाराएं और दल

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस

भारतीय जनसंघ

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी

सोशलिस्ट पार्टी

जातिवाद का राजनीतिकरण

चतुर्थ अध्याय : मैला जीवन और परतों:परिवर्तन

भूस्वामियों का बढ़ता प्रभुत्व

बनते-बिगड़ते नये आर्थिक और सामाजिक सम्बन्ध

राजनीति का स्वल्प-जातिवाद, धर्म

ग्रामीण परिवेश में सरकारी कर्मचारियों की भूमिका

लोक संस्कृति

पंचम अध्याय : देश के परवर्ती उपन्यासों में चित्रित राजनीतिक

परिवेश और सामाजिक विघटन

"दीर्घतया": समाजसेवी संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार

"जुलूस ": शरणार्थी समस्या का भावुक चित्र

"कितने घोर राहें": राष्ट्रीय संघटन का संसानी-

-समाधान

"पन्डू बाबू रोठ": स्वातन्त्र्योत्तर समाज में व्याप्त-

-अराजकता का इतिहास

छठा अध्याय : रेणु की कहानियाँ

जाति-प्रथा

कर्म-विश्वास

धर्म

शांति - सामाजिक एवं राजनीतिक

उपसंहार

संदर्भ ग्रन्थ- सूची

रैणु : परिवर्त और जीवन-संघर्ष

स्वातंत्र्योद्धार हिन्दी-कथा-साहित्य में कणाश्वरनाथ 'रैणु' एक महत्वपूर्ण लेखक हैं। रैणु साहित्य का दृष्टिकोण में प्रौढ होने से पहले राजनीति में थे। राजनीति के प्रति उनका प्रीति प्रेरित बना रहा, समय-समय पर अवसर पाकर वह उदात्त की ली उठता। और तब रैणु साहित्यकार रूप, राजनीतिज्ञ अभिा ही उठते। साहित्य और राजनीति के बीच इस प्रकार की 'दो-धामा-नैता' नहीं है कि साहित्यकार राजनीति और राजनीतिज्ञ साहित्य में प्रीति न कर सके। समाज की वास्तविकताओं से निर्मुक्त रहकर न साहित्यकार यथार्थवाद साहित्य का पूजन कर सकता है और न राजनीतिज्ञ सामाजिक-परिवर्तन दोनों का साध्य एक है- सामन कल-यत्न। रैणु के साहित्यिक और राजनीतिक स्वभावों का वास्तव करने के लिए उनमें जीवन का भारावणों से गहरना होगा। रैणु एक संघर्षशील योद्धा का प्रति साहित्य में जाये। उन्हें जीवन-जगत में विमुक्त और गहरी अनुभव थे। इन्हीं अनुभवों के माध्यम से उन्होंने 'मेला-आँकल' (१९५४) और 'परतो : परिवर्त' (१९५७) को महत्वपूर्ण और गहरा समन-कृत के उपन्यास लिखे। लेकिन, थोड़े-थोड़े रैणु को लेखन दाय होता जाता गया। प्रेमचन्द 'दीवान' (१९१८) से कलकर 'गोदान' (१९३६) तक का महत्वपूर्ण यत्न तब करके निर्वात अपना दृष्टि और समझ के फलित और गहराये गये, वहाँ रैणु 'मेला-आँकल' से कलकर 'पलटू बाबू रोड' तक संघर्ष और उत्पत्ति लीते की गये।

हरी रैणु, वही रैणु । और मैं रैणु ही गया ।

कण्ठोत्तरनाथ रैणु का बचन कारकिर्दी और नेपाल का तराई में गुजरा । बचन ही था उन्हें राजनीति के प्रति वैहद लक्षित था । अपनी सबसे पहली राजनीतिक घटना का वर्णन करते हुए रैणु लिखते हैं - " सन् १९३०-३१ की बात है। मैं उस दिनों जरिया स्कूल में चौथे दर्जे में पढ़ता था । महात्मा गांधी की गिरफ्तारी का खबर मिलते ही, शारा बाजार बंद हो गया और स्कूल के सभी छात्र बाहर निकल जाये । इनके दिन में हम छुट्टास पर रहे । बूंगी में खरभारा था, इसलिये छुट्टास के अलावा 'पिपैली' में भी खर रहा था । याना, स्कूल जाने वालों की हाथ जोड़कर सम्फाता और भजा करता था । अतिरिक्त उत्साह में मैंने स्कूल के असिस्टेंट हेड मास्टर साहब की भा रीया । उन्होंने मुम्कलाकर खेला में कहा था- "तीसरा कुंठि आच्छी, जाच्छी । जाया केन टानही ?" हेडमास्टर साहब के साथ रैणु ने इस अनौपचारिक खेल के लिए उन्हें दस के लगाये । मैंने जो खरा दा गया । रैणु ने यह घटना के बारे इस प्रकार बताया है- "जोखि निकलने के बाद हा में अचानक 'सीरो' हो गया । ऊँचे दर्जे के विद्यार्थी कुंठि डांठस कोटते, लामाला पीते और जोर-जोर से तरस लाकर कहते- 'माफो भांग लो' । लेकिन, मैंने अलियाङ्गम काण्ड के फलन गोपाल का कहना सुनी थी । 'रे' लिए यह फलन गोपाल का जाया बाहर खरा हो गया यानी । --- मैं माफो भांगने की लगर नहीं हुआ । -- भिलों ने न जाने कहाँ से कुल्हाला, लंदन जादि का व्यवस्था कर ली था । नियत समय पर 'बागी' बैल 'पुला' । सभी वर्गों के लड़के लड़कियाँ मैदान में बाकर खेतिस्त हुए । चिन्मय मास्टर साहब, कुंठि टोपा और शेरबानी पहने- हाथ में बैल फुसते हुए मैदान के बाक में जाय। -- 'रे' नाम की पुहार छुं में 'रिगी' में बाकर लड़ा हो गया ठाक विमानदाय हुआ -

[illegible]

लिया । वही संदर्भ मैं रेंगू मिलते हैं- 'एक बार मैं ने, पिताजी के सामने हम दोनों को कुत्तार बड़े प्यार में रखा - ठाक है। अब है तुम लोग जब - जब जो चाहे लीया करो । तुम दोनों में नही लीन उठता है ? अच्छा बात । कत से एव काम करो । वही नही उठकर कोन्डा का तारा। हर और दिन वाली पाठों को कौन बदलता है- यह देखना है। एव सप्ताह में जिसका ज्यादा नम्बर जायेगा- उसको हर सप्ताह एव सुंदर सुनस्कार दिया जायेगा । काली ? --- हाँ है ठाक एव वही जब मैं बेंठवस्थाने का सामान टटोलने लगा तो वही जाहूँ भुने । मैं ने जानी कमी से हो पूजा- लीन हो--- ? 'एव, मैं रेंगू । एव हर और दिन बदल रहा है। 'एक भाग का सुझाव है बाद- पिताजी के कारों में उनको उन्मुख । वही लिखा है सुनाई नई । वही बाद लिया है तभी प्रमाण का गये है और बंधन है जो बंधन में फिर फुलकर बढ़ा या और का भुने हाँट रहा या और जो बंधन हुआ उनका दा तारिणा, पैर और ने बंधन करने का भेष्टा कर रहा था- 'जाना, नया दिन और नया सामान तो बारह बंधन हर मिनट में हो रहा है--- । 'मैं ने भिन्नता से पूरा कहा - 'हुप रही । कत सुझाव तुम दोनों का सप्ताह बंध । तुमसे बातबात बंध ॥ और तारा बंधन का बंध । 'तारा बंधन है तारा बंधन में कहा जाता है कि वह बंधन में हो विलक्षण होता है । पिताजी के नियम, अनुनियम इत्यादि उनमें बंधन में नही बंध पाती । उनका एक स्वतंत्र व्यक्तित्व होता है, जो जीवन स्वतंत्र हो रहता है। उता कारण कोहराला बन्धुजी का अनुमान या रेंगू की बंधन बंधन ।

सुझाविताना सप्ताह कर जो कोहराला - बंधु भाग्य हिन्दू विश्वविद्यालय में जाये तो रेंगू या उता काय जाये । उन दोनों बंधो विश्वविद्यालय गवाकाफिया का गढ़ बना हुआ था । जायाये

नरैन्द्रदेव और डा० राममनोहर लोहिया क्रुद्धि समाजवाद विचारों का एक सचित्र शान हुआ था- रैणु भी उस रंग के जूही न रह सके । यहाँ रहकर रैणु ने काका नवरत्न रस्तान को ज़ाति करा, परिवारियों के अनुवाद भी किये ।

बनारस के समाजवाद रंग में सराबोर होने के कारण रैणु की सोझों का रंग लगता । यह बात सन् १९३५ ई० में प्रारम्भ हो गई । रैणु ने हास्य बनाये हुए रसिक के सम्बन्ध में डा० लैलेन्द्रनाथ सावरास्व जी छलनाते हुए कहा - 'साव-सावन में लोझों का रंग होक जाय कि नाहिस्व-सैलन की रसिक भाँ खुद दिनों के लिए भर गया । यहाँ रहना की बात कहता हूँ "समय नहीं है" कहकर जहूँ की दुष्ट कहता । ज्ञास में प्रामाण्य बरबाद भाषण देता फिरता । फिर वह विरोध में पविष्ट हो अन्य तीनों जहाँ हुआ, वह और समाजों, समाजियों और गैरों से सम्बद्ध रहा ।' ^५ इण्टर करने के बाद रैणु की डिग्रीवर्गता बढ़ाई गयी के लिए भूट गयी । वह रैणु पूर्णतः नै राजनीति में जा गयी । समाजवाद में जा गयी । राजनीति का क्या क्या लगा कि छुटायी नहीं भूटा, इसका कारण बताते हुए रैणु कहते हैं- 'मैंने पढ़ाई करायी गयी है बड़े राज-नीति करने को ही बात गौब, क्योंकि राजनीति करने में ही सबसे अधिक पद प्राप्त होने वाला था। फिर पढ़ाई-लिखाई करी पीटा-ना-पीटा भाँ मिलता कि नहीं, इससेर भाँ राजनीति की और क्या बढ़ाया ।' ^६

जीवन-संघर्ष-

विश्व विश्व-युद्ध के नाम पर संघा रकड़िया करने के लिए सरकार ने एक प्रिन्ट - पेच का आयोजन किया - रैणु ने विरोधित करने निकल कर लिया । सन् १९४१ के की में प्रथमतः हुए और भू-गत जा-या

र्व हो १९४२ के जून में फुलफुलकर शुरू के किसान -ऑर्गैंस में दूसर भाग
 लिया बीर वल-सलाभा भाग लिखे। १९४२ के जास्त बाँदीलन में रैणू
 बड़े सक्रिय रहे। अथप्रकार नारायण जब जेल से भाग लिखे, तब रैणू
 जिस-दर १९४२ में गिरफ्तार हुए बीर गुणियों का जेल में सुप्रसिद्ध
 शैला उपन्यासकार या सलनाथ भादुडा से उन त परिचय हुआ। वह
 सजा उन्हें वरदान स्वयं ही मिले। इन दिनों उन्हें पुनः साहित्य
 के प्रातः अनाथ-भटा उत्पन्न^{हो}ने जो कुछ मिली, उसे भादुडा से जात्य
 सुनाते। यहाँ रैणू का कुबाब कविता को बीर हो पा। जेल से अथप्रकार,
 लैकड के अतिरिक्त अथप्रकार को गीतियाँ बीर जात्य में कला
 करती थे। को०पो०सिन्हा सौलस्त्रिम का कला से लिया करते थे। एक
 दिम कवि-गीतों का आयोजन किया गया। रैणू ने भादुडा से कविता
 "जागा तां के राजपक्ष में बहुर सुनाइ"। तरुणाई के उस प्रथम प्रे- का
 जाके ऐसा प्रश्न या गीतों जो उन भाणों का बाद रहे कह रहे थे।
 वे सुनते हा स्थान बात छो- बरलात- जलाल बीर रैणू की कविता बहुर
 छोड़ बैठ जाना पड़ा। भादुडा का ने पूछा कि तुमने गीत-या कविता
 सुनायो तो, उन्हें कविता के अतिरिक्त वह छंद अग्रेसरों वाला प्रश्न भा
 बताया। भादुडा ने गीतों प्रश्न पुनर कहा "जा उन सुझाँ का राय था
 कि गीतों का ने तरुणाई में क्या बस्तु-य का मुख्य वहाँ लिया होगा?"
 भादुडो का यह प्रश्न पुनर रैणू का उदास मन मिल उठा। बीर भादुडा
 का ने हा उन्हें कथ - लिखे को प्रेरणा दी। फेरी बंठकर वे रैणू की
 कथ को रचना-प्रक्रिया के बारे में समझाते रहते।

सन् १९४४ में रैणू जेल में टी०बी० के पिछार हुए बीर
 तब कटना महीना कलेज अस्पताल में लिये गये। यहाँ का रैणू को लक्षण

कनकों में घँट छुं, जो उन दिनों राजकाय-बंदियों वाले हाठ का नो-
 रोज़ा था। तलिका जो ही यह प्रफ़ घँट झारुता में बसता गया। तलिका
 को भी १८-दिन बक्कू परिणाम करके रेंगु की न्या बंधन प्रदान किया।
 हालांकि उन दिनों टा०बा०रींग आजकल को यह समय नहीं था, फिर
 भी तलिका को तैवा और हा० टा०र०बनका को तलिका ने रेंगु की
 स्तस्थ कर दिया।

सन् १९५० के अक्टूबर से दिसर १९५१ के जारिभन महानों
 तक रेंगु नेपाल को राजकाय है बिलस संघर्ष में लगा रहा - एक साथ
 में कलम और दूसरे साथ में बंदूक धावे रेंगु नेपाल का लड़ाई में पटकता
 रहा। और १८-दिन जहाँ संघर्ष सकल हुआ - नेपाल का जनताधिक
 सत्कार का गठन हुआ और रेंगु अपने गांव मुद्रास्वस्थ होकर लौटे।
 बमलेवार ने कहा है - नेपाल का मुक्ति के लिए रेंगु ने जो बंधन का
 बलिदान किया और सश्रय राजनात में जाने की मुद्रा कट्टा रहा। इसका
 ने यह टट गया - उ ने जाने सत्कार की बात-बिदाल किया।^{१९} यदि
 वाले उन्हें पुनः गठन धावे और यह सफलता यहाँ पटक गयी कि अब हमका
 बस पाना असंभव है। रेंगु ने इस संघर्ष में लगे बमलेवार से कहा है -
 "लोभारा ही मेरा रोगा हासल हो गया। उ कि परवाली और पिता ने
 मुझे अस्वस्थ में फिकरवा दिया था - यह सफलता कि मैं यहाँ पर -
 शरीर टट गया था - मेरी कारों परफ़ मुष्म और था। मैं स्वयं बमले
 था और यह जान रहा कि मैं मर रहा हूँ - तब मुझे तलिका मिली थी।
 उस जानकारी में नहीं था। तलिका ने मुझे बिलकाया - ताधुर्नो तरह लिपटा।
 जटायो की कहें हकालों का निरन्तर आक किया और ली का ने जाना

सब कुछ भुलाकर जीवन्मान किया--- यह विद्वान् ललिताने भी हाँ का
हुँ है, जिसके धर पर मैं बैठकर बना--- ।⁵

बीर एक स्वास्थ्य हो गये तो एक दिन जिद बाढ़ गई-
'जब कहां कहां जाऊंगा । वहाँ रक्षा, तुम्हारे पास ।' इस बाल-मुल्लम
जिद का क्या उतर देता ललिताने । तो, विवाह की बात पक्का हुई।
बीर ५ फरवरी १९५२ की छठारी रात के चूने भुल्लावा में निज ललिताने
के गहान पर विधिवत् विवाह हुआ । विवाह के दिन शराबि-बकक
साधनाता से कि विवाह की राती रोज़ बीर ने टिककर पूरा की।
विवाह के बाद हमी सम्पूर्ण रात वाली बिदाये के गहान में रहने लगे । रैण्ड
ने यह निश्चय कर लिया कि अब जमकर साहित्य लिखना है और 'मैला
जाँकल' लिखने का सुझाव हुआ । 'मैला जाँकल' केवल एक वर्ष में ही पूरा
हो गया । इसका कारण जाति-अनुभव और साहित्य के प्रति असाध्य
लगाव ही था । अब सभी बड़ा समस्या बाँट प्रकाशन का- तो समय प्रका-
शन के नाम समय में मैला जाँकल के सान्ध्यन प्रेस में प्रकाशित । उस समय 'मैला
जाँकल' का आकार में १०० रुपयों और बाजार में ७०० रुपयों तक पहुँचे । और
बाद की 'मैला जाँकल' राजस्व प्रकाशन की दे दिया गया ।

सन् १९५४ में 'मैला - जाँकल' के प्रकाशन के बाद राजस्व
वाले जी प्रकाशक का मैं परत : परिणत लिखने की माध्य किया, लेकिन
फटना में मैला विषम परिस्थिति में 'मैला जाँकल' के हो गयी था, उसे मैं
रैण्डका वहाँ रहना असमय था । फटना बाँटों की उस ली बीर अपरि-
क्षित रैण्ड के इस प्रकार साहित्य-जगत में हो जानी से हार्दिक-दुष्ट हुआ और
ने रैण्ड ने अपरिणत-आवक का उठाड़-पराड़ का पहिल्या राजस्व प्रेस में
ला गये । इस सबकी दुहा होकर रैण्ड अताहाता जाये, लेकिन यहाँ था वही

दिनकर बा भी रामप्रकाश के माध्यम से फटनावाहियों को घर सम्मत्
जा गया था कि रैणु वास्तव में प्रातिमावान हैं ॥ परिणामस्वरूप मैं
हा लोग को रैणु का विरोध कर रहे थे- जब रैणु को रैणु का गौरव
सम्मानने ली । बनारस के लौटने के साथ ही फटना रैणु को रैणु की
दिनकर मायके के संवाहन का पद गाँवा गया , जिसे उन्होंने बहुत ही मन-
दारा से पूरा भी किया । वर्ष १९५७ में ही जाकाहवाणा पर २० जविल
मार्तीय रवि सम्मान का जायजन किया गया जिसे जयि वगैरह भी जाये
ये । इस जवि जायेलन को पूर्णता के लिए रैणु ने भागदोड़ का जोर एवं
जदमुक्त रूप प्रदान किया । परन्तु जाहित्यकार के मतका २० पूर्णता लोको
है कि यह किया भी प्रकार का व्यन स्वाकार पर अपना नहीं । यदि यह
व्यन स्वाकार करता है तो उसका प्रतिमाभी उसमें जावेष्टित होता है जात
है और यदि नहीं व्यनता तो जावेष्टित विषयभताओं के ऊँचे-ऊँचे कठपुतल में
बंद हो जाता है। रैणु ने तीन वर्षों काय १९६० ई० में रैणुओं का लोकरा
में त्यागपत्र दे कर जावेष्टता को गाँवा ला । इस तीन वर्षों में मैं जवने को
बहुत व्यन-व्यन मा जमुक्त कर रहे थे। साहित्य-सर्जन प्रायः बंद - मत कड़
गया था और मैं जस्ता उनमें जावन में था, जब जावेष्ट होता था रहा था
लेकिन रैणु साथ में पड़े हा जाग उठे और उस "माया" को जाताने-ताक
में रैणु फिर अपनी उता विनकरा में जुट गये- २० जस्ता हा लेख ।

१९६० ई० में जौहन राजेश द्वारा संपातगत "पांच साधना
कहानियाँ" प्रकाशित हुई। जिनमें २० कहानियाँ "तोतरी" जवन उर्फ जाये गयी
गुलफामा में भी थी । य० कहानों सुप्रसिद्ध फटना लेखक नवीन्दू पाँथ के
पढ़ी और लेखक जा को मा पढ़ावे । लेखक जाये पढ़ी हा "तोतरी" जवने
पर फिला जवने का निर्णय किया । रैणु से जवने स्वाकृति मा ले ला ।

तोसरो कसम केसिर लेलेन्द्र ने बारा हजार रुपयो दिये थे। पन्द्रह हजार कहाना है, यांच हजार पटकथा लेका है। कर्-कां बार बाबू बाये-बये, वहाँ एग ने बारा हाँटल बदलती रहे - चारा सबे लेलेन्द्र का था।³⁰
तोसरो काम के निर्माण के समय रैणु के बेल बीर को लम्बे-लम्बे हो गये थे - फल में एग प्रकार को देखेना-ना रहतो - फिलम के शोध करने का। बम्बई रहते तो फटना का बेफको हाउस बाध जाता बीर फटना रहते तो बम्बई का सदा बहार हाँटल। फिलम कम्पे-कम्पे रैणु, लेलेन्द्र-का ही गये बीर लेलेन्द्र रैणु-स्य। दोनो ने सा-सुरी को अच्छे प्रकार पढ़ लिया था। इस फिलम के निर्माण में मानी लेलेन्द्र को ने लपारना-ना हा का। रात-दिन का जम् पोरबन बीर की में जो फिलम का निर्माण-काय पूरा हुआ तो वही फिलम बूरो बुरा फिटो बीर बाद में इसे राष्ट्रपति-पुरस्कार को मिला।

सन् १९६६ के फिलम में रैणु फिर गम्भार रूप से काबार हुए। इस बार को कबने को लोडोहाता नहीं पाह भूता था। फटना इसा बसतास में लाये गये बीर फिलम-बनारो रहकर सांख्य साम लिया। वहाँ उन्हें फलानी को मिला। इस सम्बन्ध में सार रैणु ने कहा है-
"उसा समय कायि (पेप्टिज - जतार) बीर उपाय (पुजा) दोनो मिली।^{३१}

सन् १९६३ से १९७१ तक रैणु राजनीति से जलग रहे। स्व घोना-ग्राफि के फलाम रैणु ने अपनी पाटी को राज्या में लिखना शुरू किया, वहाँ लोग हमको पाठ डीकते बीर कहते थे कि बहुत अच्छा लिख रहा है। अगर जो फिलमर्टेंट बर्न थे, वे कहते थे : नहीं, यह कुछ ठा- लिखी हैं, यहाँ भी लिखी लिखी हैं, क्या करते हैं तो फाम-फाम का बम्बई लिखी हैं, बाढ़ बीर बजल है समय रिपेक्ताम मा लिखी लिखी हैं।

कुछ घण्टे हैं, भार एक सामो है। जानी यह कि बाढ़ और जल में जो
 लोग काम करने जाते हैं, मीनतारों का वह गिराई जो नाव लेकर गाँव-
 गाँव पहुँचता है, रौटियाँ बाँटता है, आपने ली उसे जादवा से रखा।
 उसे पाटो का जादवा हीना बाहर था ; और अपनी पाटो का जादवा
 हीना बाहर था । ^{५२} और यहाँ रेंगु की लता कि पाटो में रेंगु
 उनका स्वतंत्र अस्तित्व बना रहना असंभव है। अपनी बात की न कह पाये
 का जितना दुःख लेखक को होता है उसे वे राजनीतिज्ञ भी समझें । इसीलिए
 रेंगु का यहाँ रहना असंभव होता गया, वह ही एक समस्यार्थ जाता रहने
 और रेंगु टूटते रहे उनसे टूटा-डूटा कर । प्रत्येक राजनीतिज्ञ साहित्यकार
 की छुरी स्तर का जादवी सम्पन्न है, उसी राज्य लेना की धु को अपने
 कार्य की गंध मो नहा लाने देता और साहित्यकार ही यह अकाल करता है
 कि वह उसी जादूनुसार चलता रहे । ऐसी स्थिति में फाँकर रेंगु ने
 सीधा बहुत गहरा जाकर और तब उन्हें लता कि - "हमारा नियति यही है
 कि राजनेताओं ने माफिया लता और उनकी किस पाइंट में हाथा जाये,
 कहां हाथा जाये, किस तरफ से हाथा जाये, यह तय करो । हमारा हा
 मनों, बाद में नियति ही हमको सिखाई कि हमारा मोयत पर मा तदैह
 किया जाने लता । अगर किया नेता के बारे में सुझाँ कता जाये । संतोष
 सेकतम को कहते थे या उ किता और कहते थे तथा दूसरे का नाम यदि
 हीटे टावर में हय जाये तो हमारा मोयत पर सदैह किया जाने लता ।
 तब मेरा दिव्य कर का और मैं अपने ली बौराई पर लड़ा पाया । जीवन-
 का एक रास्ता चुना जाये । ^{५३} एक दिन पाटो बाकिर में बैठकर
 रेंगु मुजिया का रहे थे जिस काम में मुजिया रता छुँ जो वह कामज और
 विदेही था, उसको ह्माई पड़ी उसमें ही लता में लिखी था - "जब की
 बादमी राजनीति और साहित्य दोनों पीछी में लाना हम ही काम कर

सकता ही बीर बबानक उसे फँसला करना पड़ जाये कि दोनों में वह स्त्री
 चुने ती माहित्य की चुनौती वाला व्यक्ति बुद्धिमान होता है। "मिक्षा
 बुद्धिमान हो हीना चाहिये बीर की राजनीति की तिलांजलि दे दो।
 राजनीति की तिलांजलि दो, यानी उन पाठियों की तिलांजलि दो,
 लेकिन जिन मूल्यों के लिए मैं पाठियों में जाया था, वे मूल्य मैं साथ रखे¹⁸
 उन्हें मूल्यों के प्रति अन्याय बास्थावादी होकर वे माहित्य रक्षक करने
 लगे। परन्तु जब देखा कि देश की स्थिति भयानक होती जा रहा है तो,
 रणु ने अपने बीर बास्था बारी-बारी विचारने लगा। माहित्य में जिन मूल्यों
 की लेकर जाये थे, वे छिपती नजर जाये, समाज में जहाँ कोई असर नहीं हो
 रहा है तो उन्हें फिर सोचने की बात होना पड़ा बीर जब स्थिति यह
 हो गयी कि उन्हें जल्द ही लौकिक या वे भी विचार छटने लगा। तब
 उन्होंने सोचा कि उन सब भाँफटों से प्य छुटकर क्यों न लेता। राजा लेकिन
 तभी जान चुका कि "क्यूँक्यूँ" विचार लेता भी तो नहीं कर सकता।
 क्योंकि उनके सामने वही समस्याएँ वहाँ भी जाँचो बीर वह वहाँ मा हीमान-
 वारी से वह नहीं कर सकता जो करना चाहता है। बाद, बीच ही नामी
 के लिए किसी नेता का आदमी बनकर रहना और वे किसी से बचकर रह
 नहीं सकते, यह उनका विवशता था। ऐसी में रणु का भुलाव न-नावाफियाँ
 की बीर हुआ। उन्होंने स्वयं लिखा है- "मेरी ही हताही से सटा हुआ होना
 है, जहाँ न-सतवाफियाँ के अभाव दबाये रकी बालों के लिए एक तरीका
 निकाला। उन तीनों में बहना शुरू किया कि यह हैती-प्रीती-प्रीती कुछ
 नहीं है। उस पर चुनौती भी वि-वास होने लगा। वे कहने लगे कि केन्द्र के
 कार्यों नहीं, केन्द्र के कार्यों परिवर्तन होगा तो वह भी मान लेने का मन
 करने लगा।¹⁹ एक विचार से पैसा की भीखी छु रणु बहुत दिनों तक

बोला कि क्या किया जाये- ऐसा स्थिति में । साहित्य से मन
 ऊब रहा था, राजनीति से डर रहे थे, क्योंकि राजनीति डौलुंगर तो
 साहित्य में जाये हो थे । आत्म-मर्दन करते रहे और एक दिन यह विचार
 बना कि 'क्या कहाँ काटता है, यह एक बार कुछ पढ़कर देखा जाय' ।
 और परिणामस्वरूप १९७२ में होने वाली विधान-सभा चुनावों में निर्द-
 लीय प्रत्याशा के रूप में लड़ना तय किया । 'क' पार्टी में अपने चुनाव-
 बिन्दु से चुनाव लड़ने का अग्रिम किया, लेकिन, रैणु ने उस सक्ती
 ठुकरा दिया और 'नाथ' का बिन्दु लेकर चुनाव लड़े । पुंजाधार चुनाव
 अभियान बना । नारे लिये गये- 'क दो नाथ-नाथ है, अब को उस
 चुनाव में, वोट की नाथ है- नाथ में भू-नाथ है ।' 'पी' के नेता, राज,
 आध्यापक उनके उपन्यासों, कहानियों के जोते-बानते पात्र उनके चुनाव
 कार्यक्रमों बने । पी के नेता, हर व्यक्ति, हर बच्चा ही एक भाव वाक्य
 और एक वोट देने की प्रार्थना को गयो । रैणु कई उत्साहित थे उन
 दिनों कि जिस पीछे की बसना सब कुछ किया, वहाँ से वोट तो मिली
 हो और हुआ यह कि 'जिस दिन वोट गिरे, उस दिन देखा कि फुलनी
 में जो प्रार्थना की फामि पर हुआ था, वह वहाँ व्यापक रूप से हो रहा है।
 नाथ के नाथ लोग जा रहे हैं, और वापस जा रहे हैं, क्योंकि साठों के
 यह लड़ा है। तब लगा कि नहीं, ये लड़ने ठीक नहीं हैं, यह बड़े पैमाने के
 जाये नहीं हो सकता, यह फैसला ही है, प्रस्ताव है। यह हमीयों का
 प्रस्ताव है ।

सन् १९७४ में आकर रैणु में पुनः राजनीतिक ज्वार
 बाया । १९७२ के चुनाव में हारने के फावते में कुछ अधिक संशय विद्यमान

फुटती है और लगता था कि जब पुनः राजनीति में मान लाने ली ।
 परन्तु १९७४ में ठोड़े शत्रु-बादीजन ने उन्हें प्रेरणा प्रदान की । यह बादी-
 जन गुजरात से उठा, रैणु को प्रसन्न थे, उन्हें विश्वास नहीं था। हाँ,
 विचार में कुछ हुआ तो वे नकलें लड़ी हो कर जाती हैं- ऐसा रैणु का
 विश्वास था और वही हुआ कि मुझसे ज्यादा जो उन नकलें लड़ेंगे का नक़
 समझा जाता था, जब प्रकाश नारायण ने वहाँ जाकर फैला भार था। और
 ऐसा मंत्र कूँका कि वे सब ठगवाया लड़ने उनकी शक्ति-हीना में भरती होने
 ली। रैणु को उस पर भड़ा आश्चर्य हुआ कि यह क्यों-क्यों जयप्रकाश नारायण
 नकलियाँ की लेकर आ रहे जा रहे हैं ? हालाँकि जयप्रकाश नारायण के ६
 विचारों के रैणु अनुयायी हो नहीं, मन्ता थे । उनके एक बहारे पर रैणु भारने
 की तैयार रहती, लेकिन यह राजनीति उनकी ही सम्मत में नहीं जा रही थी।
 तभी मुझसे ही एक पत्र जयप्रकाश को भे रैणु की मेजा , जिसे उन्होंने
 लिखा था - 'मेला बाँधल बाँध मो मेला है, थोड़ा पछी है ज्यादा फैल ही
 गया है और बाँधके मेला तेराक चुप है ।' जयप्रकाश को था यह तोला पत्र
 पाकर रैणु खिल-खिला उठे। उन्हें जब भी विश्वास नहीं ही था रहा था
 कि विचार में गुजरात कैसा कुछ ही सकता है। उसी समय उनकी मित्र लम्बी
 कोदेन जुगु शारदेय बाये और उन्हें फटना पलने की बाध्य किया , ताकि
 वहाँ की विनाय परिस्थिति की देख सकें । यह बात १८ मार्च १९७४ के बास-
 पास की है, जब फटना पर कसूर्य सब किया गया था और मरी पीपल्लो में
 जो राजबानो की सड़की पर पीड़ों के टाप, जीर्णों की भारभराष्ट और
 रातफालों की लक के अतिरिक्त कौनों-कन- रव सुनाई-नहीं फुटता था और
 लगता था कि सबकी जाँच संघ गया है, तो ली समय में रैणु फटना बाये
 और फटना को इस दुःखद स्थिति की देखकर उन्हें रौना आ गया । उन्होंने
 इस प्रभावशाली का फिर छोड़ी हुए लिखा है-- 'बारा रुहर बीरान । विडु-

मियाँ बायीं कुली हुई औरतें बरा-सी फाँसली हुई। कच्चे ऊपर बाहर
 जा रहे हैं तो डब्ला हाथ पकड़कर छोड़ती हुई माताएं । एक लोक चारों
 ओर हाथा हुआ था। बादमी कहां कमर नहीं बा रहे थे। चिकन लोहे को ००
 टीफियाँ और लंगानों पर घुब को कल । एक मीटरमाड़ी के मीड़ से
 गुजरता को और सेन्डों निरनों पर एक साथ रोहना बीच जाता था। सेन्डों
 सेलमेट कल जाती और नाइयाँ गुरातो हुई कल कल से निकल जातो ।
 ऐसी स्थिति रेंगु ने पटना की कमी कहां देखा था । रेंगु पुनः जाइते से
 मर उठे, उन्हे घम का ताकियकार और राखीति एक साथ फिर जो
 उठा और सदैव संघर्ष कर जाता रेंगु संघर्ष में कुल उतर जाया । जब एक
 फलमी पर बैठना बैठा ? इसी बीच कप्रकाश जो ने खिलाफिकारी की खिला
 था कि ८ अंश की एक मोन कुछ निरसना जाती हैं और यदि इससे तिर
 सरकारी बाता कहां भित्तो तो हम निजीबाता का उत्सर्जन करने की लाभ्य
 हानि । रेंगु की भी इसमें बाधिका विवा गया था। कुछ की रेंगु तेवार
 थे, लेकिन यह मोन मुँह पर पट्टी बांधि की ? " तो क्या क्रांत । मोन
 कुछ और उस पर भी मुँह पर पट्टी बांधकर । यह एक और लाता । और
 हाथ भी बाँधे की हानि। --- कम इपर-उपर खुलाने को चरत होगी, यह
 क्या हानि ? तो क्या पि नहीं, हाथ बाँधे रहे, की छु ।
 निरसता और उगमें शक्ति सीमा के मुँह पर बेरिया पट्टी बांधा था, हाथों
 में नारी के पट्टे थे, निन पर लिखा था- " कल बाँधे के लाता, हाथ
 हारा नहीं उठा । " कुछ गमा का पीपरी में तीन की शक्तिकारी मदान,
 कम कुर्त से रवाना हुआ और बार की तब हार के मुँह पागी का कल
 लगाकर बांधि लोटा । इस कुछ में जाक और बाजार रेंगु मुँह पर पट्टी
 बांधकर शक्ति छ ।

५ पुन १९७४ की व्यवस्था को के केन्द्रीय में ६०

तीनों का विचार -बहुल गरीबों-मैदान से निकला और राज-भवन पहुँच कर राज्यपाल के समक्ष लाखाँ तीनों के हस्ताक्षरों का वह संकेत दिया, जिससे बिहार को विधानसभा में करने का मार्ग मिला। रणु उस ऐतिहासिक क्षण में भी सम्मिलित हुए। भोजपुर गरीबों को उस दिन, पर रणु माथे पर लीटिया रहे, लगातार बसते रहे। इस तीसरे पूर्ण पुनः पर एक राष्ट्रीय विधानसभा के पर से नीतिगत बातें जिससे रणु बहुत सुपुत्र हुए थे।

इस दिन बाद रणु गरीब की गयी। उनके हस्ताक्षर में उस समय परकर काट बायीं कुं पों। वे इस शक्ति के साथ नरकराज, फारसिकानि के संकेतस्त दौध की स्थिति देखने पहुँचि और वहाँ काट पोड़ित सहायता टीलियाँ का नठन किया। राज-भवन के तत्काल ही शुरू कर दिया। तत्काल तक, फारसिकानि के मालीग से पञ्चोद स्वार लक्ष्मी सम्मिलित हुए और जीवजनों, सुभाषा, व्यवस्था, रम्भे जादि तीनों में पुनः तथा नवी यफ़ी, घाव की दवावर्ग, छुटा, फना, विद्यालय तैल, विद्यालयों को शिक्षिकाँ जादि सामग्रीयों का वितरण किया।

प्रति अधिकारी से सहायता की मार्ग हेतु रणु एक विचारत पुनः लेव प्रति नवालय वा रहे थे। इस क्षण में ही -बहुल-स्वार प्रदर्शनकारी सम्मिलित थे। सीतापाट पुन (रामोर्ण रौठ) पर पुनः से पुनः की रीति और रिक्ती पर बैठकर नारा लगाने वाले रम्भेकर नुका और रिक्ता-वाल्क बहुतो यात्रा की पुनः से छुटी तरह पोटा और रिक्ती में लेता चक्का किया कि रिक्ता नदी को अपाव नहर में निरन्तरित बसा। प्रशासन ने नारा १४४ लगा दी और जब पुनः नदी लक्ष्मी वा रहा था, ती पुनः से साठो चार्ज किया। ली में रणु ने पुनः से रिक्ती से

कहा कि "जाप हमें बाँडोबाँडो से मिलने नहीं मिली ? जाप नहीं देत
 रहे हैं कि कुल में बर्बरी बच्चे हैं, दुष्टियाँ हैं। हमसे जापकी क्या सत्ता
 है? ये सभी बातें पोहित हैं और उन्हें बाँडोबाँडो से कार्रवाई करना ही
 पुष्टि करोगा मैं कहा "जापकी नहीं मालूम है कि धारा १४४ लागू है।"
 "मालूम है। और जापकी नहीं मालूम है कि सारा इलाका बाढ़ से पोहित
 है ? हम तो बहुत तेज़ बाने बड़ी, जाप लाठी छतारों या नीलो।" ²⁶
 रैण्ड के कुल - मेरुव में कुल फिर भी बाने बड़ा तो ३०-४० मिमिट जाप
 में गुरुपम-गुरुयो कुँ और तत्कालात् बहुत बाने बड़ा। प्रसंग कायालेव पर
 जाकर बाँडोबाँडोरियों में कायालेव में ताता लाया गया। बाँडोबाँडो
 से मिलने रैण्ड अपने ६ साधियों के साथ गये और उन्हें बताया कि "बाढ़
 से सारा इलाका तबाह है और जाप सिकता रण्ड बाहरे मैमेटेन कर रहे
 हैं।" ²⁷ क्षेत्र में रैण्ड के साथ २०५ प्रसन्नकारियों की गिरफ्तार किया
 गया, जिनमें ३० और हैं (कुछ गरीबों में बच्चे लेकर) थीं। इन लोगों की
 दिनांक १-८-७४ को दिन के २-३० को गिरफ्तार किया और दिनांक
 १०-८-७४ को ४ को पूजाओं के पर्ववाया गया, इस बीच रीटो ली गया
 बच्चों तक की पाना भी नहीं भिन्न, सिवाय गालियों के। जब भी रीटो-
 पानो की बात को बातों ली गालियाँ ही भिन्न। रैण्ड के सब्दों में-
 "हम पर बार-बार बारटे और सब-सब बतारों लाया गया है। हमारे
 प्रचार करने बातों की फाटा गया है। लाउडस्पीकर होना गया है। रिक्ता
 पकृत किया गया है। रिक्तावाले की गिरफ्तार किया गया है।" ²⁸
 कुछ दिनों बाद क्षेत्र से हटते ही कैप्टन के जाहान पर पुनः पटना पहुँचे, इस
 समय रैण्ड में सासन फाटने की उपद्रव लातवा थे, उनकी फाँस सरकारी-
 बमन-बाढ़ के प्रति एक ज्वालामुखी फाटा पड़ रहा था।

४ नवम्बर, १९७४ की अवप्रकाश नारायण के नेतृत्व में निकाली गयी जुलूस में रैण्टू भी गयी। वहाँ अवप्रकाश जो पर छह बरस साठो बार्च के प्रत्यक्ष नज़ाबती की हो, साथ ही स्वयं भी फूँटत छू। हाताओं उन्हें कीड़े बाह्य पाव कीरह नहीं था, परन्तु लड़कियों में साफो छे को। ललिका जी के अनुसार - "कल हो तो जाये हैं अस्पताल है। लड़कियों चोट वास्तो है, रोक करने की नीला है, डम्पटर लीन।" ^{३३} और रैण्टू है स्वयं हिन्दू शिक्षा ने पूँजा तो रोक कर पनाय किया - "दरअसल बात ऐसी है कि पुलिस की साठो है एक हाथ का सिर फट गया। उस समय पुलिस वालों की माहक पर जादेश दिया जा रहा था माहक साठो बार्च का, जिसका मतलब होता है साठो जमर के नीचे लानो बाहिरे, और इधर कं लड़के छूते तरह पायल हो गये थे। उन्हें बचाने की अवप्रकाश जो भी अपनी जोध है हल जाये और में भी लपका। जिस लड़के है फिर में चोट जाया थी वह लड़क़ज़ज़र गिरने लगा तो दौरे बाने बहुर उठी बसो हाँलों में ते लिया। भी तार कपड़े जबै हल है तार ही गये। लीनों में उभरता - यह पैरा हो हल है। मैं तो छूती तरह पायल हूँ। छू मो हो, हल तो हल हो जाता है - पैरा ही बाहे किता और का। वह फुर्य यल पर जमा मो हल होत ठठता है।" ^{३४} रैण्टू ने सोने पर साथ रखकर तत्काल हो कहा - "मुझे देह है अधिक चोट फुस में लगी है, बहुत बड़ा चोट है यह।" ^{३५}

अवप्रकाश जो है प्रति सरकार द्वारा जिये गयी इस अमानवीय व्यवहार है रैण्टू बहुत दुखो में और आये "पद्मश्री" का अवसर विशेषता नहीं, एक पाप-या लज रहा था। उन्हें हर साजा यह नज़रस होता कि वह इस पाप को उतार फेंकना हो बख़्शा लीगा। लेकिन, वे एक बच्चे है पीले को त्तास में वे और एक-दिवस बीता: वह पीला सत्य हो आ गया।

१८ नवम्बर, १९७४ को गांधी मैदान में लोकनायक अभ्युदय को ने एक समावासीका की। साहसि छात्रों को समा में रैण्ड को एक सामान्य जीता की तरह मंच के निकट से बैठे थे। जब प्रचार को की दृष्टि रैण्ड पर पड़ी और उन्हें मंच पर वासीका किया एवं जनता की सम्पीका करने को की रैण्ड से कहा गया। रैण्ड ने इस विहाल-समा में तालिफ की महानुहाट के बीच जनता पर अत्याचार करमासी सरकार द्वारा फी नये 'फरपनी' और ४०० रुपय प्रतिमाह के कर्जों को लौटा दिया। बांधीलम अपने जोर-शोर से कहा रहा और रैण्ड अपने अत्यन्त-शोर को लेकर घर-घर में गिहल बताते रहे। बुद्ध, अवि सम्पत्ति, नारे, विज-प्रदर्शनो बताते रहे- और 'लोक-रक्षा-साहित्य मंच' को भी स्थापना की।

२५ जून, १९७५ को आपातकाल का घोषणा को गया।

२५ जून को उन्होंने रैखिमी को मर्हो बुला था, तब में धानी का हस्पेटर का कमरा और उसने बताया कि उनका पार्टी है। पर साथ ही अपना और से यह भी कहा कि 'यदि आप दो-दिन के मोरर गांव लौटें, तो गिरफ्तारों से बच सकते हैं। अन्यो और से इससे ज्यादा छुट देना संभव नहीं। रैण्ड को ने कहा, 'क्या तो मैं अभी लुंगी-मोजी में हा कहूँ। पर धीरी ही गया है, तब पास बिल्कुल ही कभी नहीं हैं। दो-दिन में दो कपड़े पहना लूँ। परछी जाना में कहूँ।' हस्पेटर ने कहा - 'ठीक है, मैं बाय में बाकंगा, पर आप ऊपर उहाँ मान सब छाली तो मान जाइये, दो दिन तक आपकी छुट है, नेपाल कम में है।' २५ नेपाल का नाम बताते ही कपन को तारी स्तुतिवाँ एक-एक करके उनको जातों के सामने बुल गया। अन्यो उस समय को मनःस्थिति से बचने करते हुए रैण्ड कहते हैं - 'सफुस, जब यह मातुल हुआ कि लिहने, धीलने, अपने को सारा

बाजायो घनाघा ही चुनो है, और उनके लीटने की जगह बाजा भी नहीं है, तो भी सोचा कि अब भारत में जोकर क्या होगा। जाने और सीने के तिर भारत मुनि हो क्यों आवश्यक है मुझे लगने लगा कि भाँ भर चुनो है, और हमारे यहाँ कहावत है, भाँ माय, पिछाये पीछो 'मैपाल' पीछो पीछो-- । ²⁰ रण्डू मैपाल को नवी । उन दिनों विशार है जो क' होकरलेय मैता मैपाल नवी है । रण्डू का मण्ड इतना दृढ़ हुआ था कि भारत के प्रति उनके मन में किसी प्रकार का मोह नहीं रह गया था। मैपाल की राष्ट्रियता की स्वीकार करने की उन्होंने सीधी, लेकिन, सीधे-सीधे कंधों से स्वीकार करने से मना कर दिया। लगभग एक माह रण्डू इसी उधेड़-धुन में ली रहे, अंततः राष्ट्रियता को मानना निश्चयाने हुए और वे गर्व लीट जाये। कुछ दिन फारसी का जीवन बिताया और फिर जुनू लार-केव से शास हुआ कि उन पर सिक' निगरानी है, वारंट नहीं। ²¹ इसा बोच पटना में बकूतपूर्व बाढ़ जायो। बाढ़ का वर्णन करते हुए रण्डू ने बताया - ²² जिस समय बाढ़ जायो, मैं बाकी हाउस के पास पहुँच तो रहा था कि पानी तमि की भाँ लीटता हुआ बाढ़ा आ रहा था। बड़-भु - दृश्य । मैं ली लीट गया ; पर पानी क्यों लीटे। पर तो पीछा कि क्या रहा। सुबह उठा तो पानी हो पायो। सब नजरबंद। जाना-पाना बंद। ²³

घोरे-घोरे बाढ़ तो उतर गयो, लेकिन रण्डू के मनी-मस्तिष्क पर हायो बापातकालीन विरोधी बाढ़ क्यों नहीं उतर पा रहा था। रण्डू के ये दिम बड़े से बाढ़ीर और सीम से व्याप्त है। रात-दिन उन्हें यही लगता कि कौन दिन ही कि अब सब स्वतंत्र वातावरण में

, की उस नारकीय बातना से मुग़ल मिली । मेरा यह पैदाई है,
 बार-बारों में वही रटे-रटाये वाक्य, वही झुम-नारी और मुसपुच्छ
 १८ उन लोगों के लिए जिनका देश के लिए निषिद्धता में योगदान नहीं है,
 रैण्ड इससे बहुत कीटित है । उन्होंने इस बीच एक कहानी "रॉड का पैदा
 रॉड" ^{२०} की लिखी जिसे किसी प्रकार के नाम से प्रकाशित नहीं किया ।

बीर कीतः वह दिन में जाया जब रैण्डों से प्रारण हुआ
 कि कुनाब रॉड । रैण्ड का मन प्रसन्नता से बड़ा उठा । उस रात रैण्ड के
 पोटिक-बत्तर में बीर अधिक कठिनार्थों उपस्थित का, वे बस्पात में मत्ता
 कर दिये गये । फिर भी अपने शरीर की शक्ति न का रैण्ड कुनाब की मुक्ति
 करने में व्यस्त हो गये । डाक्टरों ने कहा कि जब आपरेशन करा
 देना हो उचित है, लेकिन रैण्ड अपने आपरेशन से अधिक देश के आपरेशन के
 प्रति अधिक चिन्ता है । अस्पताल से प्यार वे काफी लम्बा भी जाती है ।
 ३० जनवरी के दिन नार्थ-मैदान में कैपी० की विशाल-सभा की सुनी गयी
 बीर पेटों एक समारोह से प्रीति की तरह लड़े रहे । पैरों पर प्रसन्नता कम
 कर ली थी । मिलने वाली वही समझते रहे कि संभवतः रैण्ड स्वस्थ होती जा
 रहे हैं । कैपी० स्वयं एक दिन अस्पताल जाये और उन्हें "कल्टीक (कल्टीक) करने
 का अनुमति दिया, जिसे रैण्ड ने विनम्र लक्ष्मी में गंवार किया । डा० शाही
 ने फिर आपरेशन की कहा, परन्तु रैण्ड आपरेशन से पछी करता और
 कठिन को लक्ष्मी का बीतम परिणाम देने की उत्सुक है । आपरेशन की
 तिथि निर्धारित नहीं की गयी और रैण्ड इस बीच पीछे एक स्तम्भ हत्यादि
 लिखते रहे । अस्पताल में कैपी० कीर्तना, बीर एवं रैण्डों पर समय बाँट

साहित्यिक और राजनीतिक व्यक्ति मिलने जाती रहे, रैणु हमो है इस प्रकार प्रसन्न होकर जाती करते कि बागमरुक नया एक समय के लिये यह मूल हो जाती कि वे अस्पताल को लेया पर बैठ एक लम्बा व्यक्ति से मिलने बायी हैं। वास्तव में रैणु की मो उद्योगिक-आन्द के अनुभूति होती। और वे अपने जारी बोझ को धुकर देश को वर्तमान स्थिति पर ध्यान बलव करते रहते। चुनाव का दिन आया और रैणु स्वयं अस्पताल से चलकर बाँट हातने गये।

२४ मार्च तक संपूर्ण चुनाव-परिणाम स्पष्ट हो चुके थे। २४ मार्च की रैणु-आपरीशन के लिए तैयार हो गये। और जब २४ मार्च की आपरीशन थियेटर में जान से पूर्व अपना अच्छी प्रकार तैयार किया, बहुत देर तक अपने लटकती बालों में खोते करते रहे। बावजूद उन्नी बेहरे पर एक बजीब प्रकार की प्रसन्नता भास रही थी, हाँसा नहीं और उन्को कण्ठ के धुरी तरह पराजित होने से रैणु अत्यधिक प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे। कुछ उठकर जीकाजीला पोने की इच्छा व्यक्त की, लेकिन सतिका ने स्पष्ट मना कर दिया, तब बोले कि बाव में कीडमंगा, आपरीशन के बाद, तैयार रहना। २४ मार्च जब तक की तौ उस दिन कुहस्पतिवार पड़ रहा था, रैणु लक्ष्म-विचारों की बहुत मानते थे कुहस्पतिवार की तौ वे खीर-गवा काम करते हो न थे, तौ सतिका ने याधि दिखाया कि उस दिन कुहस्पति-वार है, लेकिन उस दिन वही टाल गये। जीवन-भर जिस विचार की जाती रहे वीतम समय उसे अपने हो हाथों तौड़ दिया।

२४ मार्च १९७७ की आपरीशन हुआ। डाक्टर बाहाबान ने लेकिन दुभाग्य कि उस दिन के बाद उन्नी हीरु हो नहां आया, ताब प्रारतन थिये

डाक्टर ने । डा० साहो जिन पर रेंगु की पूर्ण विश्वास था, रेंगु की होठ में ताने में अटक रहे । कुछ दिन तक निरंतर स्थिति बिजुने पर फुलू शारक ने केन्द्र-सारकार से संपर्क स्थापित किया और तत्वात ही स्वास्थ्य मंत्री श्री राजनारायण ने दिल्ली से डा० बालमुखाट और डा० गीडे तथा कैलोर (ब्रिडाघ) से डा० रमन की, जिन्होंने फटना रेंगु को जाना को । फार हास्त में कोई सुधार नहीं हुआ । डा० रमन ने विस्तार से बताया कि "रेंगु की की कं रंग एक साथ ही उभर गये हैं। मस्तिष्क संज्ञास्थ हो गया है। अधिकांश हिस्सा अपना काम नहीं कर रहा है और पेटिष्टक बलार मजानक कैलर में अटक चुका है। मृत्यु से चार-पांच दिन पहले कैलर का हमरेव हुए हुआ। रक्त चढ़ता तो हमरेव से जल्दी बाहर आ जाता। बीच-बीच में नाड़ी की गति बंद होने लगती । रक्तवाप धन्य हो जाता । पीत से वह रही लड़ाई का यह अंतिम दौर था ।"

१९ दिनों की निरंतर कैलरी से साथ १९ अप्रैल, ७७ को रात ८ बजे उनके स्थिति और बिजुने की फटना मिडोअल बालेव बालेव के सज्जों विमान के प्रधान डा० यू०एम०डाहो और उनके सहायों चिकित्सक हेड फीट तब मृत्यु से संपर्क कर रहे रेंगु की बधाईभय सजायता करते रहे , परन्तु १-२० बजे उन्होंने सो अपनी हार नाम तो और तब अचानक रेंगु को मृत्यु के सामने कुछ न कह सके । जीवन में हर फल हर अन्याय का सक्षम विरोध करने वाले रेंगु आज अपने ऊपर होने वाले अन्याय का भी विरोध न कर सके । ऐसा कोई चीज भी नहीं सकता था। डा० साहो मौन और उदास हो रेंगु के कमरे से निकले तो वहाँ उपस्थित लोगों को जाती अचानक वह निक्का । तब ललितका जो बंदर नयां और कोकाकोला की पीतल सीस की हुईं उनके मुँह में गिरायां, लेकिन वे रेंगु के होठों से बाहर से

उपर-उपर वह क्यों और ११ दिनों तक रात-दिन काकर बध्ने लगा
क्यों कालो लतिका भी पड़ाऊ काकर वहाँ गिर पड़ा ।

लतिका को इच्छाकार पार्थिव-काया की प्रातः प्रथम
विहार स्थिति साहित्य सम्पन्न होती हुए ७ वीं समस्तान-पाट पहुँचाया
गया । लम्बाया में उनके साहित्यिक-श्रृंखला और जीवन-संगिनो लतिका
साथ रहें । रैणु के सत्संगियों, परिचितों, प्रसिद्धों और पाठकों का ध्यान
रखकर दो-दोहों से फूल-माताओं से इनको पार्थिव-काया जलित करने के
लिए रखी थी । प्रातः समचारकों और रैखियों से इस सुन्दर समाचार की
सुनकर लोगों की मोड़ बाँध-पाट पर उड़ पड़ी । विरवाविधात्म्य के हजारों
काम, कार के साहित्यकार, पत्रकार, शिक्षाविद् और सामारण नागरिक
सभी अपने लोकाकुल मन से ग्राह्य जीवन के कदम-निकोरे रैणु की अपनी
विश्व-व्यापकता और अंतिम प्रणाम निधीयत कर रहे थे । जब शरीर की
लकड़ियों से इनका जाने लगा तब लतिका की अंतिम दर्शन की लाया गया ।
पिछले डम्प्रीय दिन में पल्ला बार भी उनके पुंछ से रैणु के लिए आत्मिक-
पारिवारिक सम्बन्धन के सुन्दर सुनने की मिली- तुमि अनेक कष्ट पेशी ।
बाब--- तुमि---जा--- । "कौन कौन का जल उड़ी मोड़ से जलितों से
उतर आया था । किसी तरह लतिका की संगत कर मोड़ के एक किनारे
लाया गया । रैणु के जीवन्त पुत्र पद्म करम वीणु ने लगभग १० वीं वैदिक
मंत्रोच्चार के बीच किता की मुद्राग्नि दी । सभी एक सज्जन रैणु के ताड़
छुकेन मट्टाचार्य के हाथ में दो चूड़ियाँ बना गयीं— हात रंग की एक बाँध
को चूड़ी के साथ लोहे की एक दासी— "लतिका जो की है, किता में डाल
दोजीना और, इसी साथ ही लतिका जो मैं अपने सुहान की अंतिम बाण
भी अपने "जाजो" की समर्पित कर दी ।

बाँध-पाट पर त्वाहीं लोगी में क्वाँ पर वे घूमें नहीं
 पिल रहा वो जिन्हें रेंगु ने अपना सर्वस्व दे दिया था। वे आज यहाँ होते
 भी नहीं। वे तो अपने भविष्य को गद्दीदार कुआँ पर आसोन थे और उनका
 साथे रेंगु की लीला की ही थी क्वाँ लान्छर काम्माय और लीण्ड फल को
 सरकार का विरोध करता रहा, आज वहाँ लकड़ियाँ पर बिस्-न्ड्रा-भग्म
 हैं। लोक-बार धीरे परचात् वही सुनील व्यक्ति जिसे फूल से केवल बिड़ु को,
 स्वयं एक रात का डेर होकर रह गया।

नेपाली क्रांति-

रेंगु के जीवन का नकी महत्त्वपूर्ण पक्ष है, उसका क्रांति-
 कारी सम्मान। रेंगु शब्दों के माध्यम से परिवर्तन के लक्ष्य नहीं रहे,
 उनको बल ही क्रांति का प्रयोग करने लाते नहीं होते, वरन् जीवन-संघर्ष
 और युक्ति-संघर्षों में निरन्तर अग्रिम-विक्रम से विवाही बन्धन लड़ता उन्हें
 प्रिय था। इसीलिए वे रेंगु में एक जायतता है और यह जायतता स्वयं
 अपने प्राणों की उत्सर्ग कर अपनी उत्सर्ग की पाने को है। १९४२ में जेल में
 रहकर जीवन-संगिता अवस्था की लेकर वो रेंगु अक्टूबर १९५० में लीने वाला
 नेपाली-क्रांति के विरामत-वसी के विवाही बने। एक साथ में बल और
 दूसरे साथ में रहकत पाने रेंगु ने भी अवाधान कार्य नेपाली-जनता की
 राजाशाही लीण्ड से मुक्त करने के लिए किये, वह उच्च अविवरणाय हैं।

नेपाल क्रांति: सामंती-लीण्ड का विचार था। लिप्ता के
 नाम पर वहाँ केवल कुछ स्कूल थे जहाँ 'राजा - कुमारों' की ही लिप्ता
 कृष्ण करने का अधिकार था। उन किर्तों को भयानक स्थिति में देखकर स्वयं
 कृष्णप्रसाद कीराता ने राजाशाही के विराम क्रांति की पहली किन्तारी

कुलगाव"। इस संदर्भ में उनके एक उदार और मित्र का पत्र मिलेगा महत्वपूर्ण है, जिसमें उसने नेपाल के सरकारालेख "तीन सरकार" केन्द्र समीर की बलापूर्व राजा द्वारा इंग्लैंड में अपने सम्मान में आयोजित मीच का उत्तर देते हुए भाषाण का पत्र किया है। "तीन-सरकार" ने कहा था— "महानुभावों, आप लोगों ने हिन्दुस्तान के छह शहर में कालेज और छह गांवों में स्कूल खोलने की वधाय अनुमति दी थी और आप यह वादा भी रखी हैं कि हिन्दुस्तान के लोग "स्वराज्य" को प्राप्ति न करें— मेरे देश में देखिये। स्कूल-कालेज को बात दूर— एक पाठशाला तक खोलने की वधायका हम नहीं देते। मेरे देश में, मेरे परिवार वाली राजाजी के बच्चे का पढ़ाई के लिए स्थापित "दरबार-स्कूल" के बच्चा की वधायका तक नहीं—सुख और कम ही हासिल करना है तो प्रजा की भुक्ति बनाकर रखिये।" यह पत्र स्व० कीर्तिराज का बेहरा फाक उठा। उन्होंने जब अपना सम्पूर्ण जीवन बेलना-प्रकार के लिए पाठशालाएं खोलने के लिए खर्च किया कर दिया। इस संदर्भ में एक फा राजा की लिखा, लेकिन उसने इसका उत्तर भी देना ठीक नहीं समझा। इसका बदला लेने के लिए कुष्ण प्रताप कीर्तिराज ने बलहरा के जंगल पर, प्रत्येक वर्ण राजा की भोजी जाने वाला "स्वास्ति-हातो" की जगह "हातो" में रखवाया। तबसे वस्त्र के स्थान पर एक नदीच नेपाली का सङ्काक्षितनामा "सरपात" (नेपाली पाजामा) और स्वर्ण मुद्राओं की बेली में एक कानी नौड़ी भी नहीं। मात्र, कामच का एक कुर्ता जिस पर लिखा था— "महाप्रभु"। आपको प्रजा की एक फूट-फिट-बार मीच भी बख्तर नहीं। कपड़े के नाम पर, लज्जा-निवारण के लिए एक हाथ को लंगोटी तक नहीं— किया-बुद्धि ही हासिल है—।— सूरत सरकारी सुख बाया— इस पापल पंडित बम्पा की किछु में कंद करी— पहाड़ी रास्ते है साठमांडी

मेजी । मोमबान (हिन्दुस्तान) लौकर गेल । उसको सारी सम्पत्ति जप्त कर ली । ^{१९११} और तब विराट नगर के गवर्नर ने कुम्हारप कहा कि बाप रात में हिन्दुस्तान पाग जायें ।

कन्दु समीर ने परचातू मोम समीर प्रधानमंत्री छु ली सक्ती पहली उन्होंने गुप्ता प्रताप कीराला की स्वदेश वापस बुला लिया । और उन्होंने उन्हें लिखा-प्रहार की अनुमति हो नहीं, सरकारी सहायता का वकाल भी दिया । उसी बाद स्व० कीराला ने तबकी पहली, विराट नगर में बादर्श विधालय की स्थापना की और फिर पहाड़ और तराईयों में धूम-धुंकार पाठशालायें खुलाते रहे ।

इसी लिखा प्रहार का परिणाम है यह क्रांति । जिसमें मोर्चे के दो सौ हाथमारों के डेढ़ सौ इसी बादर्श विधालय में लिखा पाठ्य हुए जाते थे ।

अक्टूबर १९५०, यह ऐतिहासिक दिन, जब सधियाँ ने राजाशाही के जंम में कड़वी नेपाली जनता स्वतंत्रता का जयघोष कर उठी । देश के कोने-कोने में जाया उदासों और पराधीनता के जाली जाया जॉप-जॉप उठी । दोपायलो पर यह पल्ला बहार था कि दोपा-कली और फा-दूज दोनों एक साथ मनाये गये । उस बार दो-दिन पूर्व ही बहिनो ने पाठयों के टीका लगा दिये थे- विजय की है । और मुक्ति-संग्राम का यह प्रथम दिन भी आया, जब मुक्ति सेना के जहादुर-विधायिकाँ ने विराट नगर के कस्बागार की जाने कच्ची में कर, उसका सारा भास लूट लिया । अब मुक्ति-वीरिकाँ के पास रहफत और गीतिकाँ की बाँट कमी नहीं रही । लेकिन राजा उक्त विद्रुम के निवास स्थान के सामने जाकर

कैसे हो नीचा जाता, वैसे ही ऊपर से सर्व-साइट के साथ-साथ राजा-
शाही की प्रेमान भाग उमलने लगे। भुक्ति-धैर्य राहकर्ता के लक्ष पर
एक तक ठहरते, का: रिहोटी होना पड़ा।

इसी बीच भुक्ति धैर्य ने अपना शक्ति की ओर मुड़
लिया। भारत के प्रमुख सामान बाया और बाही तथा पटना में भारत
को छुने पुण्योत्सव जिले से 200 सौशक्तिक कार्यक्रम जारी तथा बांग्ला
बाया दर्शन। बनारस तथा पटना विश्वविद्यालय के छात्र भी इस कार्य में
पीछे नहीं रहे। सम अपना पर-भार छोड़कर नेपाली जनता को भुक्ति से
संग्राम में पड़े हैं और दूसरा बाहुमण्डल नवम्बर 1940 की, जिसमें बांग्ला
बांग्ला काया पर कब्जा कर लिया गया। राजा और उनके माह-मतोने
महाराजा प्रियुषन की जान से मार देना वाली हैं, इसलिए उन्हें भारतीय
दूतावास में शरण दी जाती है। दूतावास से एक भारतीय वायुसेना का
विमान महाराजा की भारत वापस ले जाता है।

ऐसी स्थिति में रैण्ड का महानि अधिस्तरणीय है। उन्हें
प्रचार-अधिकारी का कार्य सौंपा गया है और गुरिस्ता युद्ध की सारी रण-
नीति प्रचार-प्रसार पर ही आधारित है, जिसका रण की छाया-अपकाया
जाय उतनी ही जल्दी विजय मिलती है। इसलिए यह गुप्ततर कार्य रैण्ड
की सौंपा गया। रैण्ड के छपर-उपर से वायुसेना के द्वारा विजय के समाचार
मिल रहे हैं और वे उनके बाजार पर "स्टीरो" तैयार कर रहे हैं। बाजार
से तराश-अक्षत में वर्षों घंटों का काम भी रैण्ड ने किया। चूंकि तराश-अक्षत
में इतनी शक्ति पूजा मेकने का और माध्यम नहीं था, इसलिए वर्षों बिहार में

का कार्य भी रैणु ने लिया, जिस पर लिखा हुआ था— 'जनता विरार
रहे—' उनके नगर और गांव में मुक्ति-सेना होना ही पड़े रही है—
जनता का कार्य— महाराष्ट्र-विद्रोह की, राजाशाही के बंधन से मुक्त
नेपाल को पावन भरती पर राष्ट्र सम्मान वाक्य लेखना— अब सीपास ।
अब सीपास नरेश। - ३४

एक दिन बोरमज पर विजय और अब बंति लड़ाई विराट
नगर पर । जाम्नाय से नेपाली-राजेश ने पास किया कि यही समय है
विराट नगर को जीतने का । कारण कि, उस हजार विभिन्न भित्ति के
मजदूर मुक्ति-सेना के साथ हैं। गांव के किसान और विराट नगर को जनता
अब मुक्ति-सेना के नेतृत्व में जीतना कर रही है ।

रैणु ने एक गांधी-वासीन की प्रुष्ठ का समाचार सुनेटिन
भी निकालना बारम्भ किया जिसमें मुक्ति सेना को विजय, उसके कार्य-
क्षेत्रों और जनता की लड़ाई की और से किसी बाने वाली प्रुष्ठारूप कृष्णवार
से बचने के बारे में विस्तृत बातें होती । इस कार्य में रैणु की बहुत सफल
देना पड़ता । लेकिन अपने रात-दिन के परिश्रम के चल पर रैणु की कार्य
की बड़ी ही निष्ठा के साथ करते रहे । इससे साथ ही नेपाली-राजेश
को इस सामयिक सरकार के "प्रचार-विभाग" में "असिपद-विभाग" का रूप
ग्रहण कर लिया और तब रैणु "पाठ्यारोही" की गयी ।

"पाठ्यारोही" रैणु के दफ्तर में सर्वाधिक जनता लुहा
रहता । पत्रकारों से लेकर जितने भी आवश्यक कार्य होते उनको सूचना पो०
वारोही की देनी पड़ती, जो रैणु को व्यस्तता और भी पड़ती गयी ।
प्रत्येक विभाग में कार्य करने वालों के परिश्रम-पत्र भी यहां बन रहे हैं । भित्ति-

टरो गवर्नमेंट केम प्रसाद के हुमा से स्तान हुआ है- कल से बिना परिष्कार-
पत्र के हेलिपार्टर कोक पारबोवारी के रिहा भी धार में क्यो भी प्रवेश
वाने को रोक्टा करना अवश्य और विपणनक ही जायेगा । इसतिर
सभी विमान के अधिकारो अपने कार्यक्षेत्रों के बाहरे जाया रहे हैं। अतः
रेणु के कार्यालय में सधन पन्थमानम, कहर और कीतास्त है ।

अपने साधारण वायुरक्ष का रैंव बढ़ाने के सम्बन्ध में
रेणु ने प्रस्ताव रखा । जिसे कर्माधिकारियों ने मान लिया और नया शक्ति-
काली इंजनोटर लाकर "सर्ट केड" के ४२ मोटर केड पर "प्रवातम
मैपास रेडियो" का प्रसारण आरम्भ हुआ । रेणु की बड़ा अठिनहने एक
कीतने पंढली का पुराना हारमोनियम भिजा । लेकिन, रात के ग्यारह
वजे तक रेणु और इसका मित्र तारिणी प्रसाद "हुमा-नक्सा" की जीहो
की तलाश में जीवन्तो के बाजार में घटकी रहे । दूसरे दिन बाठ वी -
तारिणी प्रसाद हारमोनियम बजा रहे थे और रेणु हुमा पर ताब दे
रहे थे और वायुरक्ष- विमान में वी-सीन कार्यक्षेत्रों का रहे थे - "मैपासो,
मैपासो जगि बढ़ा, बढ़ी वात हाति मांडा है ।" तत्पश्चात् तारिणी
ने मैपासो माणा में समाचार सुनाये और रेणु ने लिखी दी । इस प्रकार
प्रवातम मैपास रेडियो से प्रतिदिन तीन बार - सुबह, दोपहर और शाम
को समाचारों में समाचार प्रकाशित किये जाते । समाचार के अतिरिक्त गान,
सौकीन, रिपीतार्ज और एकांकी का भी प्रसारण होता है। समाचारों
का मूल वस्तव्य "मैपास में खिचोई सेहमी बंजर की घूर कर- नया सुरुज
नया बिहान ला रहा होता ।

इस कार्य में रेणु की मिस्ट संकेतों का भी सम्मान करना
पड़ा । विराट नगर का घेरा डाले कई दिन हो गये और मुक्ति सेहमी

पर बस्त्र सामग्री समाप्त होने लगी, तब सेही मैं रीछियों राखूनीत
 जाता रहे, तो क्या लाभ ? लेकिन रैणु का मन क्या पराजित नहीं
 हुआ, चाहे जितने हो बड़े संकट क्यों न आये हों ? सेही मैं रैणु ने
 राजा का मनोवृत्त तोड़ने और येना एवं फला का मनोवृत्त ठाँवा
 करने के लिए निरंतर विषयों, खंय वीरव्याग के मायाग्य दिये ।
 जिसका परिणाम हुआ विराट का वीर करान- धनकुट्टा पर क्ताया-
 रण विजय । इस समय भी वोफा बापेटर लाबा हा नहों उस्टेन क्तापण्ड
 के वोफा वो०पी०भीरराता ने मो स्वीकार किया- " करान वीर धन-
 कुट्टा विजय का ये प्रतापत्र नेपल रीछियों को हो देना होगा । " ३५

१७ फरवरी , अन्वार, १९५१ । भारत सरकार को
 मध्यस्थता में एक समझौता हुआ जिसमें मोहन समीर - प्रानमंधा,
 बुने गये ।

लेकिन रैणु का मायुक्त-मन इस समझौते को मकर गी हा टूट
 गया । इतना ही बहादुर भी समझौता। एक-एक वीर का जान को कोमत
 क्या होता है, यह इत्यादी नहों जानती । रात-दिन भर-तक जिस
 स्वाधीन-नेपाल की प्रका-किरण की देखने का इच्छा मन में लगीये तासों
 नेपाती बिँतते थे, वह किरण समझौते के काले बादलों ने ठुँक ला है ।
 वो०पी०भीरराता क्ताप्रानमंधो हों और वह भी मोहन समीर के प्रान-
 मोक्ष में ऐसा किो ने सीबा मो नहों पा। दुःखो वीर बाह्य-मन की
 लेकर रैणु वो०पी०भीरराता के नाम एक पत्र लिखकर जिना भिँते भिँते
 बाये- " गान्धाप्यु बापेटे अनुपति भिँते जिना बापस जा रण हं
 दाया करि । " ३६

वैचारिक संघर्ष -

रेणु बनारस विश्वविद्यालय में अध्ययन करते समय समाज-वादियों के निष्ठ जाये। वे इसमें प्रभावित हुए कि उनका अध्ययन भी व्यवस्थित हो गया। समाजवाद विचारधारा में बाँटें वही रेणु पर राजनीति में अपना वासन जमा दिया। एक समाजवाद कार्यकर्ता के रूप में कार्य करते हुए रेणु स्वायत्तता-वादीतम से सोचै-सोचै जुड़ गये। राजनीति में एक बाने के कारण समाजवाद-रंग उन पर और भी अधिक प्रसार पड़ता जाता गया जिसका निष्कर्ष इन्होंने वास्तव में भी लिया है। रेणु १९७२ तक समाजवाद-विचारधारा से पूर्णतः प्रभावित थे। १९७२ में विधान-सभा का चुनाव हारने के पश्चात् उन्हें लगा कि अब इस प्रकार देश को इस कमन्सोय - व्यवस्था की नहीं बदला जा सकता। चोरे-चोरे रेणु पर नक्सलाब का झूठा सवार हुआ--- यह रैज केस्ट के जरिये नहीं हो सकता, यह केस्ट की है, प्रभाव है। यह हेमोफ्रेडी भी प्रभाव है।^{३७}

भारतीय समाजवादो-विचारधारा वैज्ञानिक-समाजवाद से न जुड़कर कार्लमार्क्स समाजवाद की स्थापना करना चाहती है। भारतीय समाजवादियों के पास कीर्ति ठीस वाधार ऐसा नहीं है, जिससे समाज में आमूल परिवर्तन उलट लाया जा सके। शीघ्रता को इस कमन्सोय परम्परा की समाप्ति करने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकार को समाप्त कर दिया जाये। भारतीय-समाजवादो इस अर्थ से सत्य नहीं है। उनकी मान्यता है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकार को समाप्त न करे वही पूँजीपतियों पर सरकारी नियंत्रण रहे। नियंत्रण कर सरकार

जो स्वयं भूखानो-भूमिपतिरों के किसान-संरक्षण का गुरु सैन्य संसद में पदासीन हैं। यह एक हास्यास्पद व स्थिति हो है ।

१९४४ ई० में कांग्रेस-सीरिलिस्ट पार्टी का स्थापना हुई ।
उसके संस्थापकों में थे जवाहरलाल नेहरू, बाबासाहेब आम्बेडकर, बंशीलाल पेंडारानी आदि । उन पर माकसवाद का बोलिखल प्रभाव था जो उस जमाने में माकसवादो-विचारधारा और कम्युनिस्ट बोलिखल के बहुत प्रभाव का प्रमाण था, किन्तु वे कम्युनिस्ट न थे, बलतः कम्युनिस्ट विरोधी थे। इसके संस्थापकों का पूरा उद्देश्य कम्युनिस्ट पार्टी को तरफ़ डालिखल नमयुक्तों के समानता की रीतिना था ।^{४०} अतुष्ट कांग्रेसी नेता बाबासाहेब भोपा० भुक्तानो के सहायि ने प्रजा-सीरिलिस्ट पार्टी का निर्माण किया गया । इस पार्टी का उद्देश्य था कि^{४१} "अपनी सांस्कृतिक बोलिखल धर्मों और बोलिखल समाजवादी सभा के आधार पर ड्रेड युनियनों, लेखिखल संस्थाओं और व्यवहारी संगठनों में आम जनता और कस्य वर्गों की लोखल किया जाय।^{४२} निरंतर बढ़ती हुए अंतर्विरोधों और संघर्षों की यह पार्टी को^{४३} नवान दिला दे सकने में संधाया असमर्थ रही । इसका कारण उसको स्पष्ट वैज्ञानिक समझ का न होना है । इसीलिए लखट कार्यक्रमों का एक बड़ा हिस्सा डा० लोखिया के नेतृत्व में इसी कलम ही गया और उन्ही एक कलम इस सीरिलिस्ट पार्टी जाफ़ बंखिया का स्थापना को ।^{४४} यह नवान दल मो भारतीय समाजवाद के माथे में फुल्ल अपना कलम सभा-भुक्तानो की ही बंठा । नाथो को विचारधारा इन्हें भा बखली लगने ला। नाथो का समाजवाद और इस्टोशिय जिर्म भोड्डियों की रचना का अधिकार संधिने या न्याय है, भारतीय मोड्डित अकता की की० रा० न दे सका ।

१९५२ के बाय-मुनावों में करारा पराजय के बाद जयप्रकाश नारायण राजनीति के त्याग, पतन, श्राम्भान और स्वयं कीर्तियों से सम्बद्ध हो गये। यह पराजय मात्र सोशलिस्ट पार्टी का ही नहीं था, बल्कि उन सिद्धान्तों को जो कि उन्हें लेकर ये समाजवादी एक और तो माकवादी का विरोध कर रहे थे और दूसरा और मूर्खा-बुद्धि का। इन सिद्धान्तों से प्रत्यक्ष न सही, परीक्षा रूप में पूजापात-भूखाभित्ति के हितों का संरक्षण हो रहा था। १९५२ से लेकर १९७४ तक जयप्रकाश नारायण राजनीतिक पटल से बाँधल हो रहे। सोशलिस्ट पार्टी को इस बीच निरंतर बदलते हुए परिस्थितियों के अनुसार न चल पाने और सही दिशा न दे पाने के कारण टूटती-फिरती रही। १९७४ को रैड छुत्ताल में पुनः सोशलिस्ट और समाजवादी-क्रान्ति की एक करने का प्रयास किया, जिसे जयप्रकाश नारायण को 'संपूर्ण क्रांति' के और भी मजबूत प्रमाण को। 'संपूर्ण क्रांति' के अन्वेषित इस रूप में देखा जा सकता है इस बाँधीलन में बढ़ती सामाजिक के खिलाफ संघर्षों में अपने माण्डे के नाचे पहली के बाँधीलनों के मुकाबले नहीं बल्कि यानी कहीं के संस्था में लोगों को सामर्थ्य दिया था। शीपाक-शासक वर्गों में पड़ती बार एक असल नमोर दरार पड़ो थी। कई व्यापारों, कई उपायों, कई के अकारशा-नीया शीपाक वर्गों के समान हिस्से की भागी में बंट गये थे, या तो वे प्रयत्नशील और उनके संघर्षों के साथ थे या फिर उनके विरोधी और '०' के समर्थक थे। शीपाक-शासक वर्गों के बाय का इस दरार से और इससे साथ हो 'संपूर्ण क्रांति' के नेताओं को प्राप्त समर्थन से, बग़िचा-निष्ठा को अपना बस्तित्व का सतरे में नजर आने लगा था। 'संपूर्ण क्रांति' अपनी समस्त बाँधीलीयों के बावजूद भी सामाजिक और समर्थ के विरुद्ध

एक बन्नात्मक जाँदीलन था। यद्यपि हमारे पीछे उच्च - वर्ग के कुछ विरोध हाथ हो थे। रैल-हड़ताल के समय में जी वामपंथी-रकता का नारा लगा था, उसे सो०पा०वा० ने तोड़ सा दिया। सो०पा०वा० ईरिदरा-वासन की प्रतिकूल और 'संपूर्ण' जाति' की कागिस्टो जाँदीलन मानकर वाम-रकता के विरोध में कार्य करने लगा। यह वास्तविकता है कि जे०पा० को 'संपूर्ण' जाति' एक बाध - परिवर्तन नहीं है। फिर भी तत्कालीन परिस्थिति में जी दमन और अन्याय का नग्न - मृत्यु हो रहा था, हमारे विरोध स्वयं यह आवश्यक हो था। पोर-दारी यह जाँदीलन दक्षिणापीर्णों के हाथों फल गया और तत्कालीन 'वाम - रकता' का यह प्रयास धूमिल हो गया। हमने प्रमुख हाथ क्यप्रकाश नारायण का भी मारा, वे स्पष्ट सम्पत्ति थे कि इस जाँदीलन के वामपंथियों के हाथों जाने का अर्थ है, एक स्वस्थ विप्लव। हमने कारण पूजापति और मुख्तार भाबदार' में जाते जोकि जे०पा० को सहायता कर रहे थे। जे०पा० के कम्युनिस्ट-विरोधी लक्ष्य ने भी इस जाँदीलन की राति पहुँचाया।

'संपूर्ण' जाति' जाँदीलन जिस उद्देश्य की लेकर फल था, वह बीच में ही छूट गया और उनका रकता उद्देश्य ईरिदरा गांधी का विरोध रह गया। एक कृष्ण के बाद कृष्ण द्वारा सारा हथियाना जाति नहीं होता। जाति है सबसे बड़ा फलपार व्यक्तिगत सम्पत्ति का लक्ष्य और संहारा का सारा हथियाना है। इसीलिए ईरिदरा जाति के बाद जमता और जमता के बाद ईरिदरा जाति वही है। जहाँ गया संपूर्ण जाति।

रैण्ट के संपूर्ण कथा-संग्रहित में वही भारतीय - समाजवादी विचारपारा कार्य कर रहे हैं। समाजवाद से प्रभावित होने के कारण रैण्ट

में वैचारिक प्रसरता नहीं है। उनके पास कम-जीवन है ज्योति अनुभव तो हैं, किन्तु एक वैज्ञानिक दृष्टि के अभाव में उनके निष्कर्षों का स्वरूप कम गरी हैं। 'मेला अंश' का तत्सोत्तराद विस्वनाथ प्रसाद एवं 'पारतो - परिकथा' का जिनम रैणु को रोमानो एवं समाजवादी दृष्टि के कारण बखली मारतोय-ग्राम का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाती। उनके द्वारा जिया गया हृदय-परिवर्तन, रैणु को दृष्टिहीनता और मायुक - अराजकता का ही परिणाम है। कम्युनिस्ट - विरोध ही उन्हें ग्राम-जीवन में जाया बनाधार, कम, लीजण और अराजकता के विरुद्ध जनदीप्तन सई करे ही रीकता है। रैणु का यहाँ अराजकता और 'सोशलिस्टा-मक्ति' उन्हें 'मेला अंश' से 'पलटू बाबू रीक' तक ले जाता है। जीवन के सतत अनुभवों से व्यक्ति यहाँ निरंतर अपना दृष्टि और वैचारिकता में परिवर्तन और संशोधन करता है, यहाँ रैणु निरंतर अराजक होती गयी, जिसका परिणाम उनके साहित्य में स्पष्ट परिलक्षित होता है।

संक्षेप

—

- १- राबिन सा पुष्प - रैण्टु संस्मरण और यद्वाजलि, पृ० १२०
- २- काशीरवाराय रैण्टु - -वही- पृ० १८७
- ३- -वही- पृ० १८८-८९
- ४- -वही- पृ० १८९-९०
- ५- डा० रैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव - -वही- पृ० ९३
- ६- रैण्टु : दृष्टी बिस्तरी सपनों का वास्तव, रविवार, स्वजास्त-
३ सितम्बर, १९७७, पृ० १०
- ७- राजेन्द्रनाथ : रैण्टु का वैष्णव महाभारत, पृ० १५
- ८- -वही- पृ० १४-१५
- ९- रैण्टु : दृष्टी बिस्तरी सपनों का वास्तव, रविवार-स्वजास्त-३सित०,
१९७७, पृ० १० ।
- १०- सतिष्ठा रैण्टु - रैण्टु : संस्मरण और यद्वाजलि, पृ० १४३
- ११- डा० रामकृष्ण राय - -वही- पृ० १४२
- १२- रैण्टु : दृष्टी बिस्तरी सपनों का वास्तव, रविवार, स्वजास्त-
३ सितम्बर १९७७, पृ० ९
- १३- -वही- पृ० ९
- १४- -वही- पृ० १०
- १५- -वही- पृ० १२
- १६- -वही- पृ० १२
- १७- -वही- पृ० १३
- १८- -वही- पृ० १३
- १९- -वही- पृ० १३
- २०- रैण्टु : लोक नायक के नाम एक पत्र, दि० १२-८-७४, 'सारािका'
रैण्टु जंक, पृ० ४१

- २१- -बहा- पृ० ११
- २२- -बहा- पृ० १२
- २३- हिन्दु सिन्हा - रैण्डु : संस्मरण और प्रदर्शित, पृ० ४०
- २४- -बहा- पृ० ४०
- २५- -बहा- पृ० ४०
- २६- डा० लैन्डनाथ जी वास्तव -बहा- पृ० १०१
- २७- -बहा- पृ० १०२
- २८- राजनी कति, -बहा- पृ० २३१
- २९- -बहा- पृ० २३१
- ३०- मृपेन्द्र बलीय - -बहा- पृ० १३२
- ३१- लखनारायण -बहा- पृ० १६१
- ३२- रैण्डु : मियाता कति कथा, पृ० ३६
- ३३- -बहा- पृ० ३७-३८
- ३४- -बहा- पृ० ३२
- ३५- -बहा- पृ० ८६
- ३६- -बहा- पृ० ९३
- ३७- रैण्डु : दूरी निहारती लपनी का वास्तव , रविवार, २८-अक्त-३३-३३
१९७७, पृ० १२
- ३८- अनीध्यामिह - भारत का मुक्ति संग्राम, पृ० ६२८
- ३९- लोकारोदय - भारत का राज्याद को अनुनातन प्रमाण, पृ० १४१
- ४०- -बहा- पृ० १४२
- ४१- लोकारोदय-निर्देशनाद - लपनालीन भारत : लपनालीन संग्राम, पृ० १०५-६

द्वितीय अध्याय

SECRET

स्वातंत्र्योपर ग्रामीण परिवेश

ग्रामीण-जीवन के क्लृप्त चित्र रैणु ने सम्पूर्ण साहित्य में वात्सलात् हाँ गये हैं। स्वाधीनता के भाव स्वयं करते हुए गाँव का जितना कारोबार ही रैणु ने निराशाण किया, उतना और चौड़े सम्काशों में लेकर कहाँ कर पाया। यही कारण है कि भूमि-सुधार, पंचायती राज और अन्य सरकारी सुविधाओं का प्रभाव गाँव में जितना रहा, जिस स्तर तक पड़ा। रैणु ने जो जो रूप में चित्रित किया है। सरकारों-अनुदानों और सहायता के नाम पर जितना हीनाण भारत में जनता का हुआ, संभवतः और कहाँ हुआ ही। रैणु का लेखी इस विवर्तित पर जनता को ही प्रतिबिम्बित व्यक्त करती है। वह और ही विकास के मोड़ नहीं गयी और दूसरी ओर विकास के नाम पर नरोको की और भी बढ़ावा दिया गया। स्वातंत्र्योपर तथा-अधिक भूमि सुधार और पंचायती राजों के तटस्थ मूल्यांकन के उपाय ही है। रैणु के कथा-साहित्य में वर्णित समस्याओं और वास्तविकताओं का अध्ययन-विवरितोणन सुगम होगा। रैणु का दृष्टि समाजवादी है, अतः उनके द्वारा उठाये गये समस्याएं प्राणिक अथवा स्थानीय नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारत की महत्वपूर्ण समस्याएं हैं।

देश के सम्पूर्ण विकास का मूल्यांकन इसी दृष्टि से किया गया है, जिससे रैणु साहित्य की सम्पन्नता में निरक्ष हो सुगम हो होगा।

भारत एक ग्राम महादेश है। हमने ८३ प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करी है और १७ प्रतिशत शहरों में। ग्रामीण जनसंख्या का मुख्य व्यापक प्रोत्त कृषि है। कृषि पर व्यापार। होने के कारण यहाँ जमा या सामंता श्रमियों और कुपारों प्रचलित हैं। स्वतंत्रता के २५ वर्ष बाद भी वास्तव परिवर्तन इस क्षेत्र के लिए अभी का जहाँ बना हुआ है। शिक्षा, परिवर्तन अवश्य हुए हैं, परन्तु वह भी सामान्य सिद्ध नहीं हो पाये। एक मर्यादक और असादपूर्ण जीवन - प्रशिक्षा का जारम ग्रामीण-जीवन के पीर-पीर में रम गया है। अक्सर मूल्यवान् वर्गों की ग्रामीण जीवन में घृणा का भाव रहता है। उनके पास समस्त भूमि का ६० प्रतिशत भाग है और उनका संख्या मात्र ५ प्रतिशत है। इस वर्ग ने समस्त ग्रामीण-विकास नाम कर लीड़ लिया है। उनके लिए अब कृषि में जमादारी तथा वे भी अधिक लाभ है। वह सरकारी सुविधाओं का सम्मान उपभोगिता बनकर रह गया है। संशुद्ध सरकारी तंत्र उनके दिनों की रक्षा का रक्षायें लेना है। कृषि के पूँजीकरण के उनके लाभ की और भी जोषित कर दिया है। एक और ग्रामीण जनसंख्या का अधिकतर भाग गरीबों को सामा-रैता के मोक्षे जीवनयापन कर रहा है। वे वहाँ दूसरों और यह दुधिया वर्ग बना सुविधाओं और अधिक धन-जमान बटोरने के कक्ष में निधन जनता का गला काटने में हिक्कत मा नहों। ऐसा कारण भूमि की असाधनता में और भी बृद्धि हुई है, लोको को कर रहा है। और आज समस्त भूमि सुधार के प्रयत्नों के बावजूद केवल १ प्रतिशत किसानों के पास कुल भूमि का २० प्रतिशत है, १० प्रतिशत किसानों के पास समस्त भूमि का ५० प्रतिशत और ८५ प्रतिशत किसानों के पास कुल भूमि का ३० प्रतिशत भाग है।

केवल सीमित वर्गों के बाँटों और सीटों कीर में ग्रामीण जाँटों से स्पष्ट है कि देश के ग्रामीण परिवारों में ४० प्रतिशत के पास कुल भूमि का

१ प्रशिक्षित से भी कम भूमि है और २० प्रशिक्षित परिवारों के पास भी
 बिल्कुल ही भूमि नहीं है। वस्तुतः यह क्षेत्र मजदूरों का वर्ग है। कृषि-
 उत्पादन में कुशलता का स्तर ऊँचा करने के लिये भी कार्यक्रम में इस वर्ग
 के लिये पर जोर देकर ध्यान नहीं दिया जाता। इस वर्ग के परिवारों के
 ऊपर न्यूनतम व्यय ही छोटे कृषकों का वर्ग होता है, जो सभी कृषक परिवारों
 के लगभग ३० प्रतिशत हैं। इनके पास प्रायः २ हेक्टेयर से छोटा जोत है।
 इनका कुल कृषि भूमि में भाग लगभग १२ प्रतिशत है। अन्य छोटे किसान
 बड़े किसानों से पट्टे पर भूमि लेकर कृषि करते हैं क्योंकि उनका अपना जोत
 परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अपर्याप्त होता है। परन्तु, कुछ
 ऐसे भी छोटे किसान हैं, जो बड़े किसानों से भूमि पर मजदूरी माँगते हैं।
 सभी संयुक्त किसान और जमींदार कुल कृषक परिवारों के १० प्रतिशत हैं और
 इनके पास १९६०-६१ में ५६ प्रतिशत भूमि थी। इसमें से अफेसकृत अधिक संयुक्त
 बड़े किसान कुल कृषक परिवारों के ५ प्रतिशत थे और उनके पास लगभग
 कृषि भूमि का ४१ प्रतिशत भाग था। २,९४ प्रशिक्षित परिवारों के पास २०
 हेक्टेयर से बड़ा जोत था और इनका कुल कृषि भूमि में भाग २८.४८ था।
 ये तथाकथित समाज को असमानता को ही प्रकट करते हैं, साथ ही
 गाँवों में विभिन्न वर्गों के सम्पुल आर्थिक अवस्था में किसी अधिक असमानता
 है जो सामाजिक समाजों के लिये करता है और विकास में बाधक बनता है,
 जो और भी सचेत करता है।

जमींदारों की व्यवस्था की समाप्ति पर पुराना जमींदार भूमि सुधार
 कानून बन जाने से पूर्वावादा कृषक कम गया है। समस्त भूमि सुधार भी इसी
 के लिये नहीं हैं। परन्तु १९४९ से केन्द्र में साम्यवादी सरकार द्वारा और

१९६७ में कंगाल को संयुक्त पीपै को सरकार द्वारा लिदे गये भूमि सुधार अन्य राज्यों में लिदे गये भूमि सुधारों से भिन्न थे। केरल में तथा राज्य में बाँटे हो सरकार ने ५८ फीट में सा वैदलता को जमीन घोषित कर दिया था। इससे अलावा केरल में बटाईदारों को भूमि प्राप्ति का अधिकार दिया गया। बटाईदार सुधारों के लिए १० एकड़ से अधिक भूमि बनने वाला नहीं रह सकता था। इस दृष्टि से केरल के भूमि सुधार अन्य राज्यों के भूमि सुधारों से भिन्न थे। विश्व कंगाल को वाम-पीपै सरकार द्वारा लिदे गये भूमि सुधारों को निर्देष्टता यह था कि वहाँ का वैदलता पर प्रति-बन्ध लगा दिया गया। सरकार ने बेनामी भूमि का पता जाया और उसे बेतुकर भूमि और निचले गुणवत्ता में बाँटा। १९६७ में सा २.५ लाख एकड़ भूमि इस प्रकार बाँटी गई। मालाबार को दो नई मा प्राप्ति ल बनाया गया और दो एकड़ तक भूमि को जीत पर खान सम्पत्त कर लगा गया। इस प्रकार स्पष्ट है कि जहाँ केरल को साप्ताहिक सरकार और कंगाल को संयुक्त पीपै सरकार ने नांव के भिन्न वर्गों के हितों को खान और भूमि सुधार करने का प्रयत्न किया, जहाँ अन्य सम राज्यों में लिदे गये भूमि सुधारों में भूस्वामियों और बड़े बटाईदारों के साथ सम्भोलायादा को ल था और भूमि सुधार दामून गांवों के संयुक्त वर्गों के पास में थे।^१

स्वतंत्रता-पूर्व जमदार छोटे किसानों को लगान और पट्टे पर जनाम देता था, परन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् बड़ा भूस्वामी छोटे किसानों से पट्टे पर भूमि लेता है, देता नहीं।^२ १९६१-६२ में लगभग ४० प्रतिशत भूमि किसानों ने पिछले पास ४ हेक्टर से छोटे जीते थे, पट्टे पर दा था। परिसर कंगाल में ती कारखानों के अंतर्गत समस्त भूमि का ५१ प्रतिशत उन किसानों ने पट्टे पर दिया था जिनकी जीते २ हेक्टर का अक्षा ४ से भी छोटा था।^३ बाजबल संवादित लेती करवाते बड़े किसान ४० लाख में

व्यक्तिगत है रहे हैं। ये प्रविष्टियाँ छोटे किसानों से भूमि पट्टे पर लेते रहे हैं और स्वयं से उनी कृषि भी करते हैं। कृषि से सुद-वर-हू बड़ी है कारण कि पट्टे पर तो गरीब भूमि उन्हीं को ही देकर रह जाये है। परिणामस्वरूप छोटे किसान यों-यों लैबिडर भूमि कृषि से प्रविष्टियाँ में हैं। १९५१-६१ के बीच कृषि प्रविष्टियों में १४ प्रविष्टि का वृद्धि हुआ है १९६१-७१ में ५ प्रविष्टि का वृद्धि। परन्तु इसी और १९६१-७१ में किसानों का संख्या में कमो जाये। इस समय एक ६४ प्रविष्टि कृषि प्रविष्टि परिवार का गुरुत हैं। विज्ञान कृषि कम जाये समिति का अनुमान था कि भारत में कृषि प्रविष्टि का बीजत परिवार ४-६ व्यक्तिगतों का है, जिनमें से अच्छे लोग ही काम करते हैं। उनमें से एक वर्ग पर में २७५ दिन नियमित रहते हैं। इन २७५ दिनों में मा ७५ दिन तो वे किसी कामों में संलग्न रहते हैं और तीन दिनों में मजदूरी पर कार्य करते हैं। प्रविष्टियों की वर्ग पर में केवल १३४ दिन का भिन्नता है और बच्चों की २०४ दिन। यह स्थिति वास्तविक प्रविष्टियों का है, जिनका संख्या दुः प्रविष्टियों का लगभग ८५ प्रतिशत है। इनसे स्पष्ट है कि कृषि प्रविष्टियों की वर्ग में बहुत कम समय काम भिन्नता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण से २५वीं छह में यह पता चला है कि कुल १९७० से पूरा १९७१ के बीच भूमिहीन प्रविष्टि को देना मजदूरी से प्राप्त बीजत वाय २ लाखों ३ पैसे को एवं सभी किसानों को देना वाय १ लाखों ८० पैसे को। कहने का अभिप्राय यह है कि छोटे किसानों को कम भूमि होने से कारण उन्हीं उत्पादन लागत को उन्हीं फिर पाले और पूरी मात्रा में सटने वाला परिवार रौंटी हेतु जन्म से फिर को दूरों का मुंह देखता रह जाये है। इसका परिणाम यह है कि भूमि तात्कालिक को मांसित नई किसानों पर रक्षित होता चला जा रहा है और छोटा किसान सर्वहारा की स्थिति में जाता चला जा रहा है।

असमानता जो उस जमा दौड़ में ही गरीब और मो गरीब होता जा रहा है और अमीर और मो अमीर ; के कारणों की ही व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा होगा। नियम जो रखा है, अब तक कहीं-कहीं ठीक तो बहुत पोट्टे गये हैं, अगर जो थोड़े झड़वाये गये, वे माथ कमजो थे, जो दौड़ने के नाम पर फाँटलों में केँद होकर रह गये जैसा थोड़े बहुत क्ले मो ली मू-सामो वर्ग के घर थे। इसका एक कारण यह भी था कि जिस वर्ग के अधिगारो सुधार है, व्यापक परिवर्तन और नशीपन कर रहे थे वे भी उसी वर्ग के झोत-दास थे, जो वर्ग छपाधारी था। मेडुर से मात जो रखा की जाह्ला कहाँ जो जा खरसी ।

ग्रामोण-जीवन में भूमि-सुधार के नाम पर व्यापक परिवर्तन है, सबेँ बार नियम बनाये गये, परन्तु उनका प्रभाव भी नकारात्मक रहा । सुधार करने के नाम पर उन्होंने स्थिति की और मो जटिल बनाया ; शीटे किसानों और सेतितर कसूरों के हितों के नाम पर मूलान्त-वर्ग का हित ही अधिक हुआ। इसका कारण नियमों में क्लों-न-क्लॉं कुछ के क्या झड़ना था, ऐसा कि झड़ना था, जिसमें हाथ भी पार ही जाये । जीत झोटा किसान निरंतर फिसलता चला गया । इन कम्पियों की देखने के लिए अब तक लिये गये संपूर्ण भूमि-सुधार-नियमों का विश्लेषण अवश्य-अवश्य आवश्यक है।

भूमि-सुधार-

भूमि सुधार सामाजिक न्याय की दृष्टि से भी आवश्यक है। सामंती उत्पादन सम्बन्धों पर आधारित ढाँचा कबो होता है । हममें भूमि पर कंद-जमाधारों का आधिकार्य तो होता था है, साम ही उनसे अन्धकारों को सम्मो झुंझता मो होता है। किसान और सेतितर अधिक जानी जो विज्ञ के लिए जमाधारों पर निर्भर रहती हैं । आर्थिक शक्ति के साथ राजनीतिक

हकिम का कैम्बोकरण मो जमादारों के हाथों रहता है। जमादारों और किसानों के मध्य सम्बन्धता का प्रश्न ही उठता ही नहीं, जमादार की दृष्टि में शासकवार बंधन है किन्तु किसान और शेतों के लिए आवश्यक फसलों में कोई बंधन नहीं होता। उनसे लिए दोनों का प्रेम उनकी अपनी बांधन प्रीति होता है। इस व्यवस्था में शासकवारों, बटाईदारों और शेत-हल-कर्मियों की स्थिति दयनीय होती है। कृषि में संपूर्ण उत्पादन उन्हीं कर्मों के द्वारा लिया जाता है और उन्हीं की स्थिति होन होता है। यह स्थिति अन्यायपूर्ण होने के साथ-साथ अनैतिक भी है। अतः सामाजिक न्याय की दृष्टि में भूमि उन्हीं के पास होना चाहिए जो उस पर पैदा करते हैं।

भारत में भूमि-सुधार कार्यक्रमों की लागू करने की दिशा में कार्य प्रारम्भ होने से पहले भू-धारण की तीन - प्रणालियाँ-- जमादारी, महासमाहो और रियासताहो थीं।

जमादारी प्रथा--

भारत में जमादारी-प्रथा का आरम्भ सयायी कम्पनीय त के नाम पर गवर्नर जनरल लार्ड कान्वालिस ने १७९३ में किया। उसी पहले भूमि पर मुन्डाई का स्वाभित्व था। लार्ड कान्वालिस ने ईस्ट इण्डिया कंपनी को धन्य बढ़ाने के लिए सयायी कम्पनीयस्त किया किन्तु व्यापार पर जमादारी की जहाँ एक और लाभ शक्ति करने का उपरदायित्व लीपा गया, वहाँ उन्हें अपने-अपने क्षेत्रों का स्वामी माना बना दिया गया। लाभ संपूर्ण बाम-दनी का ९० प्रतिशत नियत हुआ। इसकी एक बड़ी बात यह थी कि वह दिया किया पैसावह एवं बिना दिया अधिकार, अधिकृत के द्वारा दिया गया था। भूमि सम्बन्धी एक अधिकार बाहरी में स्थापित सम्बन्ध ही था

दलीलदारी सम्बन्ध, जमादारी में निहित कर दिये गये। दूसरा यह कि एक ही कानून से सब किसानों को सुफाई करने में जमादारी की स्वतंत्रता दी गई थी। यह किसानों से स्वतंत्रता के तहत शाही पर बन्दोबस्त की। शासकीय सरकार ने जमादारी (किसानों) के हित में कानून बनाने का अधिकार सुरक्षित कर दिया था, लेकिन वही ऐसा कानून नहीं बनाया गया, बल्कि प्रत्येक अधिनियम के द्वारा जमादारी के हाथ और गुंथ दिये गये। स्थायी बन्दोबस्त की बनावट से ताई कानूनानुसार ने यह विश्वास किया था कि जो जमादारी को मालजुमारी तर्ज के लिए नियत कर दो नसे है, वही जो जमादारी जमादारी के लानन तर्ज के लिए नियत कर है। किन्तु हुआ इसके विपरीत हो।

“जमादारी” शब्द का प्रयोग प्रथम बार जोजो शब्द “सम्बन्ध” के रूप में किया गया। इस प्रकार “स्थायी-बन्दोबस्त” के साथ-साथ बाधुनिक जमादारी और जमादारी प्रथा प्रारम्भ हुई। स्थायी बन्दोबस्त के पूरे राज्य और कुछ के मध्य बीच “मध्यवर्ती” नहीं था। ब्रिटिश सरकार ने वही जितनी भी सरकार ने यह मानने को मजबूत नहीं की कि कुछ मालजुमारी कसूली वास्तों को कभी पर भूमि पारण करें, या मालजुमारी कसूली की उपर में राज्य के हितों के अलावा धर्म के अधिकार हो। वही वही मालजुमारी कसूली की कमी या अधिक अधिकार प्रदान नहीं दिये गये जिससे कि किसानों की मारी जानि हो।

जमादारी-प्रथा से स्वतंत्रता के जितने दावों का जन्म हुआ, जितने बाद में स्वतंत्रता-संग्राम का डटकर विरोध करते रहे। १८५७ में जब जोजो राज्य में भिन्न किया गया। १८५७ में भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम हुआ। जब यह अधीनस्थ दबा दिया गया तो ताई कानून ने १८५७ में

में जो यह घोषणा की कि बसरायपुर के राजा दिग्विजय सिंह और पटुहा के राजा कुसंत सिंह को झोंडकर पूरे जयप्रांत का भूमि सम्बन्धी अधिकार ब्रिटिश सरकार द्वारा जब्त कर लिया जाता है, और जैसा उचित समझा जायेगा, वैसा मौखिक अधिकारों का प्रबन्ध किया जायेगा। इसके साथ ही उन तालुकदारों को भी जानोरी दे दी गई, जिन्होंने प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का विरोध किया और सदैव राजमन्त होने का वाक्यदा किया था। इस प्रकार जयप्रांत में जो जमादारी व्यवस्था लागू कर दी गई। तालुकदारों को यह जमादारी बनाम स्वयं मिला था, इसलिए उन्हें जो प्रमाण-पत्र दिये गये, उनमें यह भी लिखा गया कि यह वर्णित भू-भाग उन्हें और उनके उत्तराधिकारियों को मकसद के लिए दे दिये गये— तैयत इन शर्तों पर कि वे राजमन्त बने रहें और भूमि के सन्तान को जयप्रांत याथा सरकार की मासुजारी देते रहें।

चूंकि, सन्तान बढ़ाने का अधिकार तो जमादारी के राज्य द्वारा दिया गया था, परन्तु उनके द्वारा सरकार की मासुजारी में वृद्धि करना आवश्यक नहीं था, और कालांतर में किसानों पर सन्तान का बोझ बहुत अधिक हो जाने के बावजूद भी सरकार की मासुजारी से जयप्रांत में वृद्धि नहीं हुई।

ब्रिटिश शासकों का जमादारी प्रथा 3 विधाय में विभक्त था कि इससे जमादारी का भूमि में दित उत्पन्न हो जाने के कारण वृद्धि विराध होगी। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। जमादारी के अन्त २६ हो बात में निरीक्षा लायि थी कि उन्हें अपनी विस्तारों जीवन के लिए किसानों से अधिक से अधिक सन्तान की प्राप्ति हो। इसी का परिणाम था कि १८८० से दोस्रो राजवृद्धा के पार्श्वें इसके तक उत्पादन इतना हो मो मत से बढ़ा कि इस कथन में शीर्ष

वर्तमानोचित नहीं है कि इस बात में कृषि में पूर्ण रूप से गतिमानता था।

जमादारों द्वारा भी सरकार और कारखानों के बीच एकमात्र मध्यस्थ जमादार न होकर बहुत सारे मध्यस्थ होते थे। जमदार जमादारों ने ०००० पलोदार भूमि की शिफ्टो ले ली थी और वे जमीन अपनी से मोबे के लोगों की शिफ्टो दे डालते थे। इस प्रकार बहुत सारे मध्यस्थ उत्पन्न हो गये थे। काल में तो उनके स्थानों पर जमादारों और जमीन जीतने वाले कृषकों के बीच ५० से भी अधिक मध्यस्थ उत्पन्न हो गये थे। मध्यस्थों का यह संपूर्ण वर्ग लगान्शीली था और इसका उत्पादन कार्य से कोई सम्बन्ध नहीं था।

यह प्रथा मूलतः लीजण्ड पर आधारित थी। इसमें जमादारों की जिम्मेदारियों से सम्माना लगान कसूल करने का अधिकार था। एण्डेस माल्सीय के अनुसार देश में लगान की दर उत्पादन की ३४ से ७५ प्रतिशत तक थी। इसकी सीमा का निर्धारण है कि जितना लगान शुल्क कृषि उत्पादन का सम्मान २५ प्रतिशत रहा है। इस प्रकार १९४९-५० में कृषि क्षेत्र में उत्पन्न होने वाला ५००० करोड़ रुपये का आय में जमादारों का भाग १२०० करोड़ रुपये था।^५ राजस्व आय का इतना बड़ा भाग एक अनुपादक वर्ग द्वारा जिम्मेदारों का लीजण्ड कर छुप लेना अप्रत्याशपूर्ण भी था था, साथ ही यह पूर्वा-निर्माण तथा आर्थिक विकास के लिए निवेश की दृष्टि से भी अनुपयुक्त था।

महात्माजी प्रथा-

यह व्यवस्था विलियम बीटिक द्वारा बनाया गया था जिसमें लगान की गणना बाद में इसे मध्यप्रदेश और कर्नाटक में भी लागू कर दिया गया। महात्माजी प्रथा व्यवस्था में मालगुजारी की दृष्टि से संपूर्णा गति देखाई होना था।

बन्दीबस्त द्वारा गाँव के लिए नियोजित मात्सुजारी की राजकीय में जमा करने का दायित्व गाँव के मुखिया का होता था। मुखिया गाँव के सभी भूमिकारियों से लगान वसूल करता था। राष्ट्रीय भूमि सुधार समिति के अनुसार इस व्यवस्था में भूंपात्र का स्वामित्व सामूहिक अर्थात् सामाजिक था। महात्माजी प्रथा में बन्दीबस्त की जगह, मात्सुजारी का नियोजन इत्यादि भिन्न-भिन्न स्थानों पर चल-चलता था।^{१०}

रैयतवाड़ी प्रथा-

रैयतवाड़ी प्रथा दक्षिणी तमिलनाडु, महाराष्ट्र, बंगाल पूर्व पंजाब, मध्य तथा पूर्वी में लागू की गयी थी। इस व्यवस्था में रैयत (काश्तकार) की जमीन बेचने, खरीदने गिरवी रखने, शिक्का देने अथवा उपहार में देने का अधिकार था। राज्य और काश्तकार के बीच ज़िन्दा मो प्रचार का कौन्हीं मध्यस्थ नहीं होता था। जब तक वह मात्सुजारी देता रहता तब तक उसे कौन्हीं मो दखल नहीं कर सकता था। वह अपना भूमि का स्वामी होता था, जबकि यह अधिकारी जमादारी प्रथा में काश्तकारों की नहीं थे।

हमका अर्थ यह कदापि नहीं कि वहाँ काश्तकार अन्य श्रेणियों की तुलना में अधिक संतुष्ट थे। रैयतवाड़ी-व्यवस्था के अंतर्गत काश्तकार जितने वर्गों अथवा मूलों के कारण यदि मात्सुजारी न दे पाते तो वे स्थानीय महाजनों से लूट पर अर्पण होते और जितने वर्गों को कुण्ठित में उत्पादन न हुआ तो वे उन्हें ही हथकौती और अपनी भूमि महाजन की गिरवी रख देते। चोरी-चोरी वह भूमि महाजन को ही लीयर रख जाते और महाजन अन्य स्थानों की तरह जमादारी बन जाती। महाजन से जमादारी बनकर ये किसानों के ऊपर शोषण को कुल्हाड़ी मारते रहते और सरकार को कुछ लगान सही समय पर मिल जाता, वतः यह अपने किसानों की सुट्टी हुए देशकर भी शांति बैठा रहता।

जमादारी उन्मूलन-

सन् १९३५ ई० के सेशनमें जाफा कीछिया एक्ट के अन्तर्गत जब प्रांतीय विधान मण्डल के सदस्यों का चुनाव हुआ तो जमादारी के कर्ण का विधान मण्डल से हटाया ही गया। प्रांत में काँग्रेस मंत्रिमण्डल बनाया गया। इस मंत्रिमण्डल ने जमादारी का पुराना सुधारने तथा भूमि सुधार करने का प्रयत्न उठाया। जमादारी-समाप्ति का बहिर्मुख प्रारम्भ किया तथा शासकवर्गों को दस्ता सुधारने एवं उन्हें अच्छी हालत में रखने के लिए यू०पी० शासकवर्गों अधिनियम १९३९ पारित किया। यद्यपि काँग्रेस मंत्रिमण्डल ने जमादारी-प्रथा की समाप्ति करने का वकन किया था परन्तु वह श्रुत न हो सका। तिस्रो महायुद्ध के बाद सन् १९४५ ई० में जब विधान मंडल का चुनाव होने की था तो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस विषय की चुनाव-धीनता -पत्र में रखा। फलस्वरूप काँग्रेस ने ये राज्य में अपना मंत्रिमण्डल बनाया तो जमादारी प्रथा के उन्मूलन के लिए आवश्यक मांगें हा क।

इस बीच बिहार सरकार ने सर्वप्रथम सुझाव दिया। सन् १९४० में राज्य विधानसभा में तत्कालीनो किता रहकर अनेक परिवर्तन, परिवर्तन की संशोधनों के फलस्वरूप सन् १९४० से लागू कर दिया गया। इस विधे में बिहार सरकार ने जमादारी की उनकी रुढ़ बाय को ३ से २० गुनी रकम तक क्षतिपूर्ति में देने का प्राविधान किया।

उत्तर प्रदेश में जमादारी उन्मूलन हेतु एक समिति का निर्माण किया गया जिसे अध्यक्ष तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री गोविन्दवल्लभ पंत और सदस्यों में श्री कल्याणलाल श्रिवास्ती एवं श्री श्री कल्याणलाल प्रसाद थे। इस समिति का शिफारिशों की आधार मानकर सरकार ने भारत एक बिल तैयार किया गया

जौर ७ जुलाई १९४९ ई० की ३०३० विधान सभा में ३०३० जमांदारों-अन्वय एवं भूमि सुधार विधेयक को पारित किया गया। जहाँ अवस्थाओं में होता हुआ यह विधेयक संशोधित रूप में १० जनवरी १९५१ ई० की विधानसभा द्वारा १ जनवरी १९५१ की विधान परिषद् द्वारा पारित कर दिया गया। परंतु जमांदारों द्वारा इसके विरोध में न्यायालय में अपील की गयी अपील खारिज हुई और अधिनियम की धारा ४ के अन्तर्गत राज्य सरकार ने १ जुलाई १९५२ के ३०३० गजट में अधिसूचना प्रकाशित की और उसी दिन जमांदारों के सब आस्थान राज्य सरकार में निरस्त हो गये। अधिनियम से पहले ५४ प्रकार की क्लिष्ट एवं प्रसक्त जमींदारी व्यवस्था थी। अधिनियम ने जमांदारों-प्रथा के साथ-साथ इन जमींदारियों की भी समाप्ति कर इन्हें चार जमींदारियों में रखा- भूमिार, सोरदार, अधिवासी एवं कामो।

३०३० भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम १९५४ ने ३० अक्टूबर १९५४ से सभा अधिवासियों को सोरदार बना दिया। इस प्रकार ३० अक्टूबर १९५४ से भूमि विधि में केवल तीन ही जमींदार रहे- भूमिार, सोरदार और उस मो।

भूमिार किसान भूमि के स्वामी हैं। उन्हें भूमि में किसी भी बाजार पर छाया नहीं जा सकता, क्योंकि वह मालगुजारी सही समय पर देता रहे। वह भूमि की छेब और गिरवी रख सकता है। भूमिार कुण्डों की मालगुजारी। सोरदारों की मालगुजारी की बांधी है। श्री० बलभोज सिंह ने ३०३० में भूमि सुधार कार्यक्रम लागू होने के बाद की स्थिति का सर्वेक्षण किया है। उनका ज्ञान से प्रकट होता है कि उत्तर प्रदेश में एक प्रतिशत भूमिार पुराने जमांदार हैं^{१९} जमांदारों ने सुधार की व्यवस्था के अन्तर्गत अपने स्वामित्व को अधिवासी भूमि जाने हो अधिकार में रखा है।

सारदार व कारदार हैं, जिन्हें भूमि या स्थाया देने करने का अधिकार है। वे भूमि को नहीं देब सकते हैं और न गिरको रख सकते हैं। वे यदि कारें जो राज्य को लगान का दस गुना देकर भूमिदार के अधिकार प्राप्त कर सकते हैं। सारदारों को जायिने स्थिति प्रायः अच्छी नहीं है। अतः बहुत थोड़े सारदार भूमिदार बन जाते हैं। भूमिदार अथवा सारदार से जमीन लेकर उस पर डेरो करीवाली जमाती कहलाते हैं। इन्हें भूमि या स्थाया अधिकार प्राप्त नहीं होते और इन्हें वैयक्तिक छे से क्या भा देकर लिया जा सकता है। उपरप्रदेश में जमादारी उन्मूलन के पांच वर्ष बाद भूमिदारी के पास कृषि भूमि का ३१.२ प्रतिशत, सारदारों के पास, ६७.२ प्रतिशत, जमाया की के पास ०.६ प्रतिशत और अधिवानियों के पास ०.५ प्रतिशत था। जमादारी उन्मूलन के बाद ग्रामोपगो क्षेत्र में बनने वाली मस्वाभित्व का इस व्यवस्था पर टिप्पणी करते हुए क्लार्क लिखते हैं कि भूमिदारी से स्पष्टतः कृषि व्यवस्था में सीधे संस्थानत परिवर्तन नहीं हुआ है।

मध्यप्रदेश में १९५१ में हो एक अधिनियम द्वारा जमादारी, माल-गुदारी तथा बजारीदारी के अधिकार समाप्त कर सरकार ने जमा ४३ हजार ग्रामों की भूमि अपने स्वाभित्व में ले ली। इस अधिनियम के अंतर्गत जो भी कृषक भूमि या स्थायी अधिकार चाहते हैं, उन्हें भूमि या राज्य द्वारा नियमित पूरा मूल्य चुकाना होता है। राजस्थान में राजस्थान सरकारो अधिनियम द्वारा जमादारी और बजारीदारी व्यवस्थाएं समाप्त कर दी गईं। ये व्यवस्थाएं जमादारी व्यवस्था के अंगुष्प की थीं। इन्हें परंपरा जितानों का होना होता था। इन वर्गों को समाहित है सातेदार नामक जितानों का वर्ग उत्पन्न हुआ है, जिन्हें भूमि संबंधी अधिकार उपरप्रदेश के भूमिदारी के अधिकारों की ही हैं। बिहार में यद्यपि सरकार ने जमादारी से ४० सक्ड़ के अधिक भूमि ली है पर अधिकृत भूमि ली ले ली, परन्तु जमाया की भूमि पर

कोई अधिकार नहीं दिये गये। किंतु मैं सूझाएँ गुरुदास अधिनियम के अंत-
र्गत जमादारों की नीचे पाया सुधारण के लिए ६० एकड़ भूमि को हमें वापस
कर दिया गया। इसके लिए यदि आवश्यक हो तो जमादार जागीर को
बेदस्त कर सकता था।

जम्मू-कश्मीर की गौड़ण अन्य सभी राज्यों में जमादारों की सुझा-
पना किया गया। इस दृष्टि से जम्मू-कश्मीर का अधिनियम अन्य राज्यों से
अधिक प्रगतियुक्त था। जम्मू-कश्मीर में जो बटखंदारों तथा जो बामून
द्वारा सम्पादित नहीं किया गया। यह अवस्था ज्ञान समाजों में ज्ञानवान इन
जमादारों के जो जमादारों के दुर्गुणों का परिणाम है, जो स्वायत्तता
भित्ति पर रातों-रात कागजात बन गये और अपने प्रभाव एवं दबाव के कारण
विधान-समाजों की स्थापित करने में बाध पड़ गई। इसलिए इन बटखंदारों
में भूमि सुधार कानून का समाज का काम उठते हुए मासूम करतदारों को
बेदस्त कर दिया, जो कि स्वायत्तता का प्रथम सुधार था। इस प्रकार सु-
धारण के नाम पर जमादारों में जो भूमि अपने पास रखे हुए, उस पर वह बैरि-
स अधिनी अधिका बटखंदारों को सहायता से लेने करवाने ली। सामान्यता
के स्थापित प्रभाव में विकास के तारे मुहाने इन सौजन्यों का और कुल गये या
लौल दिये गये और सदियों का सौजन्यों को और कुल गये या लौल दिये गये
और सदियों का सौजन्य अब बार फिर को हथियारों ने कुल लूट कर ले लिया।
सरकार में जैव उठा का प्रभुत्व था, अतः सरकार को उठा के हिलों को रक्षाधी
कानून बनाती रही और तारी सरकारी मोमरो उसको अनुषर बनकर बायें करवा
रही।

जमादारों तथा समाज हीने के कारण २० करोड़ ज्ञानों का
सामंताव के जुलूस ही निकालकर सोमै राज्य के संघर्ष में जाया गया। यह बात

पुत्री और सुनने में बहुत प्राणियारो लाया है। परन्तु क्या वास्तव में ऐसा हुआ, जो सरकारी जमीनें बसा रहे हैं। जो गाँव में रह रहे हैं, जसा जिन्होंने गाँव का जमानदारों के साथ विरलैषण किया है, उनका विचार इनके एकदम विपरीत है। कारण कि सरकारी नियमों के द्वारा कमी मा इस प्रकार के परिवर्तनों से बात नहीं होना जाना चाहिए। जो वर्ग सदा-सम्पूर्ण और शक्तिशाली है, उसे इस प्रकार जमान-फाँस में समाप्त करना, एक कल्पना ही बनती है, वास्तविक नहीं। यहाँ कारण है कि आज जमानदारों के इस साल बाद मा सम्पत्ति पूर्ण रूप से समाप्त नहीं हुए हैं और यहाँ से कि हीनता ने यहाँ सफ़ियारों पर क़ाबूदा बार और धरा ला गई है, जिससे उनकी नी-कम में और मा निस्तार हुआ है। उनका कुणि भूमि में मा यहाँ कमी नहीं जाया है। विचार के प्राणियारो प्रदेस में ही कमी मा लाये जायें। केनियल धार्मिक वर्ग का प्रथम अध्ययन करने के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि ये विचार में जमानदारों सम्पत्ति के बाद मा ५००-७०० हा नहीं, १००० एकड़ से जमानदारियों साधारणतः हैं। इस प्रकार जमानदारों के सिले जायि-पत्य में बहुत अधिक जमीन हीड़ दो गई है।^{३३} उन जमीनों के सम्पत्ति के बलसे ही देश के सम्पत्ति की अधिक व्ययित भूमि-धारा नियमों को सम्पत्ति और उनकी सम्पत्ति प्रमाणिकरण पर विचारित नहीं कर लेगा।

सरकार ने जमानदारों सम्पत्ति के समान जमानदारों की कुछ विशेष सुविधायें दीं, जिसे उनका बस्तित्व यथावत् बना रहा। जबकि सरकार का मत था कि यदि ये इतने इन्हीं प्रकार में ही रहें तो यह वर्ग दिखालिया ही जायेगा। परन्तु वही हुआ जो होना था, दिखालिया हीने के स्थान पर इसने दूसरों की दिखालिया बना दिया। भूमि और सरदार का जंतर कर सरकार ने जमानदारों पर क़ाबूदा पूर्ण और जमानदार-हितैषी नीति का प्रयोग ही किया था, साथ ही उन्हें मुआवजा देकर गली में और भी सम्पत्ति बनाने का प्रोत्साहन दिया। इन्हें दिने

गये पुत्रावली का अनुमान रु० ६,४१०-०० मिलियन लगाया गया था, जिसमें से विनाय पंचायतों के नाम के अंत तक रु० २२५०-०० मिलियन का अनुमान किया गया। इस व पुत्रावली की दिये जाने का कुटुम्बता पर संतारों फ्रंट को गहरे हैं।^{१४} जमादारों के पास पहले से ही इतनी संपत्ति थी कि इसका उन्हें कीर्तन आवश्यकता नहीं थी और वह भी मारक जैसे गराव देते हैं, जहां का ज्ञान और मजदूर इनके अल्पावरो रूप में संधियाँ से फिर रहा था। उत्तर प्रदेश में जमादारा उम्पूहन के समय जमादार जास्तारों से रु० १९१ मिलियन की सन्तानि प्रतिस्पर्धा होती है। इसमें से ७१ मिलियन सफाया सरकार की लगान के रूप में देकर है। रु० १२० मिलियन की अपनी व्यक्तिगत आय के रूप में बचावर रहा होती है।

यहाँ यह साफ्ट पर देना और आवश्यक है कि जमादारों जमादारों के पास कम मुमि थी। इसलिए इसकी सन्तानिपूर्ति को कर्तव्य आवश्यकता नहीं था, क्योंकि, सरकार ने कृषि हेतु बाड़ा जमाने रखी का अनुमान इन्हें बैसा-निक-सिद्ध पर दो हो था। जहाँ एक ओर जमादारों का प्रश्न है, उनका संख्या मात्र १०० थी, जबकि उनके लिए यह पुत्रावली नामक में एक सूर्य की तरह ही सहायक रहा, परन्तु सरकारों लगानों पर इतना विपरीत प्रभाव पड़ा। यदि यही सफाया जमादाराओं के सिरों में व्यय होता है उन्हें भी तास्त-विक-स्वाधोभता को जो फल मासूम होती। उदाहरण के लिए उत्तर प्रदेश में जमादारों के अधीन कुल ४.१३ करोड़ एकड़ भूमि था, जिसमें से २.९ करोड़ एकड़ भूमि सरकार द्वारा सैने का निर्यात किया गया। इस भूमि की सन्तानिपूर्ति १५० करोड़ रुपये निस्तारों को गहरे। सन्तानिपूर्ति को रुद्ध का निरिण भूमि के रुद्ध भूत्यों का जाठ गुन्य निरिण किया गया। यहाँ जमादारों का संख्या लगभग २० लाख थी। उनमें से ९० प्रतिशत व्यक्ति की पैसल नाम की छ जमादार

१५, ज्योंकि वे २५ ५० वाणिज्य के मा कम लगान देते थे । केवल १,५ प्रोसेंट
 वर्षा २०,००० व्यक्ति २५० ५० से अधिक लगान चुकाते थे । ५-६ के मा
 १००० ५० एक वाणिज्य लगान देने वालों का संख्या, ५०० तथा १०,०००५० से
 अधिक लगान देने वालों का संख्या केवल ५०० थी । ये लोग इस बात को धुष्टि
 करते हैं कि सरकार का यह विचार सरासर भ्रामक है कि बिना मुद्रावला बिना
 जमादारों उन्मूलन जमादारों के लिए गंभीर सामाजिक एवं आर्थिक समस्याएं
 उत्पन्न कर देगा और सामाजिक समता का धुष्टि से पूर्ण जमादारों की
 मुद्रावला नितना आवश्यक है, अन्यथा वे विवाधिता ही जायेगी ।^{१५} एक मुद्रा-
 वला का सांख्यिकीय लाभ यह हुआ कि जमादारों ने इस बड़ा हारि के धुष्टि
 का संश्लेषण कर लिया और ग्रामीण धुष्टि में पूंजीवाद विचार का प्र-
 पाल किया । धुष्टि के संश्लेषण के मांस का लेखिए -अर्थिक जाविना-विशाल
 हीकर शहर की और गया, लेकिन वहा भी उसे जहाँ लाभ नहीं ही गया ।
 इसका कारण स्पष्ट था कि पूंजीवाद -विचार में यह अकूल प्रतिक्रिया करना
 योगदान नहीं कर सकता था , जिसका कुल प्रभाव । परिणामतः ग्रामीण
 प्रतिक्रिया को आर्थिक -स्थिति निरन्तर गिरती गयी । बड़े मूल्यवादी-वर्ग ने स्वतंत्र
 भारत के विकास का भरपूर लाभ उठाया । वह सिद्धांत था, सरकार का प्रस्ताव
 उसका सेवा से प्रसन्न था, अतः संश्लेषण सरकारों-सहायता का लाभ उसे है, जिसका
 और ग्रामीण -वृष्टि हाथ पर हाथ रखे निराश बैठा रहा । परम्परागत धुष्टि
 करने के कारण उसकी आर्थिक स्थिति गिरती गयी । उन्मूलन बाज और संश्लेषण
 करने के अभाव में उसका उत्पादन क्षमता बहुत नहीं गयी, सिंचाई के साधनों
 के न होने से वृष्टि प्रकृति पर ही निर्भर रहा और अग्रस्त होकर अपना भूमि
 से भी लाभ नहीं बैठा । इस प्रकार जमादारों-उन्मूलन के उपरान्त ग्रामीण-वर्ग
 में एक नया वर्ग उभरकर आया जो प्रमुक्त सम्पन्न था एवं ग्रामीण वर्ग में
 पूंजीवाद विचार का प्रतिनिधित्व करता था ।^{१६}

ककन्दो-

जब एक जिता सम्राट में सत्कारा गया सामूहिक दूधि की
 श्रावण रूप में नहीं लिया जाता, उसका समय तक अपरिणत की समया का
 एकमात्र हल ककन्दो है। ककन्दो वह व्यवस्था है जिससे किसानों के विभिन्न
 मार्गों में किसी एक से उन्हें एक ही स्थान पर मिल जाते हैं। भारत में दूधि
 नीली या जाकार बहुत छोटा पाया जाता है। विदेशों में जहाँ नीली का
 जीवित जाकार न्यूयॉर्क में ४०० एकड़, अमेरिका में २०० एकड़, ब्रिटेन में
 ६० एकड़ है, वहाँ भारत में ६.२ एकड़ है। एक बी १५ फुट लंबा और १२ फुट
 चौड़ा का ४४ प्रतिशत और ५ फुट चौड़ा कम पाया जाता है। एक छोटी नीली
 के होते हैं जो दूधि का सर्वाधिकारण किया जा सकता और न ६० पासी
 हाथों की आवश्यक चीजों को व्यवस्था की जा सकती। इसलिए भारत में कक-
 कन्दो की आवश्यकता को बहुत बढ़ा दिया गया है। कार्यक्रम
 १९२० में शुरूआत में ककन्दो अभियान प्रारंभ किया गया था। पहली योजना
 भारत छोड़ो से शुरू होकर उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, महाराष्ट्र राज्य
 और हिमाचल में ककन्दो प्रारंभ करने का कुं है। इसका लगभग सभी राज्यों
 में ककन्दो प्रारंभ करने का कुं है। भारत में ऐच्छिक ककन्दो का प्रारंभ
 को फल, अगर वह सफल नहीं हो सके। कारण कि, यदि गांवों में ककन्दो
 नहीं हो सकता था। इसलिए कई सुझावों, जिस पर गांवों का सर्वोच्च उत्पा-
 दक भूमि था, इस ऐच्छिक ककन्दो के सफल होने में बाधक बने। भारत-
 में इसकी आवश्यकता के सफल होने पर अन्य राज्यों में ककन्दो प्रारंभ होने
 नियम बनाये जिससे सरकार की ककन्दो सम्बन्धी योजना बनाकर उसे प्रार्थ-
 नित करने के लिए प्रभाव अधिकार मिले। इस समय कुछ राज्यों में जहाँ
 अनिवार्य ककन्दो नियम हैं, की छोड़कर अन्य राज्यों में इस जनशक्तिवारा कार्य
 का प्रतिभाषा नहीं है। इस कार्य में अग्रणी भूमिका की है हा, साथ

हो वह अधिकारी-वर्ग का है जिन्होंने येन-येन प्रकारेण बहुत का भूमि एकत्रित कर ली है, और उसका मालिकाना साम उठा रहे हैं। इसलिए दूसरी योजना के समाप्ति होने तक केवल एक करोड़ ४५ लाख सात हैक्टर भूमि पर कब्जा ही नहीं है। तीसरी योजनाबद्धि में अतिरिक्त २० लाख हैक्टर भूमि पर कब्जा का गर्ह है। चौथा योजना का समाप्ति तक ३ करोड़ ९० लाख हैक्टर भूमि पर कब्जा कार्य पूरा हो गया था, मगर वह नहीं हो सका। अभी तक तमिलनाडु, केरल और आंध्र प्रदेश में योजनाओं के कब्जा के नियम नहीं बनाये गये हैं। गुजरात, मध्यप्रदेश और परभम क्षेत्र में ऐच्छिक कब्जा और अन्य राज्यों में अनिवार्य कब्जा का व्यवस्था है।

विभिन्न राज्यों में कब्जा कार्य की प्रगति अब तो नहीं है। पंजाब और हरियाणा में कब्जा कार्य पूरा हो गया है। उत्तरप्रदेश में प्रगति अच्छी है और महाराष्ट्र तथा सिक्किम प्रदेश में थोड़ा कार्य हुआ है। अन्य राज्यों में इस सम्बन्ध में अधिक कार्य नहीं हुआ है।^{१०}

कब्जा कार्यक्रम के अन्तर्गत होने पर भी वांछित सफलता का न मिलना, किंमोय स्थिति है। सरकार भी इस विषय में दुःख है। इससे यह स्पष्ट है कि जापसता का एक कारण सरकारी नीति का दुरुपयोग भी है। और दूसरा कारण है, जिनमें सरकारी अधिकारियों का भ्रष्ट होना, अहिंसा का प्रभाव और पूर्णों का जमान है प्रगति अतिरिक्त नहीं है। सरकार अधिकारियों की स्थिति यह है कि गांव में रहकर कब्जा करने वाला २० लाख बी० भू-स्वामी के घर उल्लास है, उसी के लाना लाता है और उसी के इशारे पर कब्जा के उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य की करता है। इससे ही यह स्पष्ट है कि भू-स्वामी गांव में पन एकत्रित करने में दलालों का कार्य करता है।

और वह झारा घन बाका में बाँट लेते हैं। बैबारा निम्न-स्तर के किसान जिस पर देने के नाम पर कुछ नहीं है, उसे सभी खराब भूमि दे दी जाती है। वह हमारे विरुद्ध युद्ध कर भी नहीं पाता। ऊपर से तीन हरिकैंठ हैं। यहाँ अगर काम ५०० ५० में होता है, तो सो०बी० १०००५० में कर देता है। उस कार्य में मोबेरी लेकर ऊपर एक इतना पाँचला है कि जमीन जंगल ठेलिया दीनी कम पड़ने वाली स्थिति है। साथ ही बाबाओं के गाँव में एक जमीन जंगल की तात्काल दे दिया गया। कारण यह था कि पटवारों ने पमावर में उसे लेत लिया था। २०सो०बी० पीड़ो पर चढ़कर पूरा जाये थे- देखने और सर्वेक्षण के नाम पर। इस जमीन कावित में जिला स्तर तक इसको अपील की, मगर हुआ कुछ नहीं। उस जमीन के यह कहने पर कि सरकार यह मामला दो जमीनों का है- एक मेरा और दूसरा २०सो०बी० साहब का। तो अधिकारी ने यह कहकर जंगल खारिज कर दो = तोमरा जंगल में हूँ। जागे अपील करिये। लेकिन यह निस्सहाय अपील क्यों कर सकता था, सो नहीं की और आज भी उस तात्काल में खोले के नाम पर धारें गाँव का गंदा पानी पड़ा रहता है।

कम्बंदो के नाम पर अधिकारियों ने सार्थी लक्ष्मी बनाकर उल्टे-सादे कर काटे, जिनका प्रायश्चित्त बाज भी वे गरीब किसान कर रहे हैं, जहाँ कम्बंदो ही कुंठे हैं। छोटे किसानों की भूमिहीन बनाने में यह असफल योजना भी सहायक रही। दूसरी, कम्बंदो में हीड़ो गरीब अधिकारित जमीन, जिसका बाबंटन भूमिहीनों में निःशुल्क किया जाना चाहिए था, वहाँ स्मार्थ लक्ष्मी लेकर पटवारों और प्रभारों में पट्टे कर लिये। हमारे विरुद्ध यदि समाज स्थान पर अपील भी को नहीं हो, रिस्का लेकर वह भी खारिज कर दो नहीं। फलतः कम्बंदो-योजना जिसका उद्देश्य अपराधिता भूमि की रक्षित करने कृषि का विनाश करना था, टाँप-टाँप फिस्त होकर रह गया।

हरित क्रांति-

जब कृषि नीति की कभी तीसरी परीक्षा या योंना के पहले वर्ग में अपना लिया गया था परन्तु इसका व्यापक स्तर पर कार्य १९६४-६५ में ही आरम्भ हुआ। इसके कारण भारतीय किसान क्यो तक मोह और उतरी निम्नो विभिन्न प्रकार की समस्याओं का प्रयोग करिष्क करने लगा। हालांकि यह प्रभाव भी केवल बड़े और मध्यम पैमाने के किसानों पर ही पड़ा, निम्न अथवा गीटा किसान समस्याओं के समापन में इसका प्रयोग करने में असमर्थ रहा। इतना ही माना ही पड़ेगा कि उतने भी परम्परागत तरीकों की होड़कर क्यो तकनीक के प्रति अपना सोभाव्य में रत्नर लाचि ला है। बड़े और मध्यम पैमाने के किसानों ने नस्लुप लाकर संकर बीजों, रासायनिक उर्वरकों और जट-नाशक औषधियों का बड़ी मात्रा में प्रयोग आरम्भ कर दिया है। फलतः कृषि व्यापार का स्तर पाता जा रहा है। लेविन्स्की का कहना ही यह है कि "हाल के तकनीकी गुणों के विषय में तथी उत्पादकों के बात यह नहीं है कि उन्ही उत्पादन बढ़ा है, बल्कि अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि किसान अब जोखिम उठाने की तैयारी हैं और वे इन्पुटों का उपयोग बढ़ा रहे हैं।" १९६१ में रासायनिक उर्वरकों की उपलब्धता केवल २ लाख टन थी जबकि १९७४-७५ में २५.८ लाख टन उर्वरकों का प्रयोग हुआ। इस अवधि में अधिक उपज देने वाले बीजों के अन्वेषणों की २० लाख हेक्टर से बढ़कर २ करोड़ ७१ लाख हेक्टर हो गया। नस्लुपों और टैगटों की संख्या में असाधारण वृद्धि हुई है।

इस असाधारण वृद्धि की देखकर हमें यह प्रम हो गया कि हमारे देश में हरित-क्रांति सफल हो गई। परन्तु हरित-क्रांति के दूसरे वर्ग में ही उत्पादन कम हो गया। १९७०-७१ में मीठम अनुसृत होने पर साधानों के उत्पादन में पुनः वृद्धि हुई। लेकिन यह वृद्धि हरित क्रांति के

कारण नहीं था, क्योंकि हाल में वहाँ में उत्पादन पुनः कम हो गया।
तथाकथित हरित-क्रांति की अवधि में साधान्नों के उत्पादन में वाणिज्यिक
वृद्धि २.६ प्रतिशत थी, जबकि १९५०-५१ से १९६४-६५ तक साधान्नों में
वृद्धि की दर ३.२ प्रतिशत प्रविष्ट थी।

हरित क्रांति के समय में साधान्नों का उत्पादन २.६ प्रतिशत
वाणिज्यिक दर से स्थिर रूप से बढ़ा रहा है। वस्तुतः, १९६५-६६, १९६६-६७
तथा १९७२-७३ वृष्ण उत्पादन का दृष्टि से बहुत श्राव्य थे। परन्तु इस
संपूर्ण ग्रास में जनसंख्या में २.५ प्रतिशत वाणिज्यिक वृद्धि हुई। अतः तथा-
कथित हरित-क्रांति के सभी वर्षों में प्रति व्यक्ति साधान्नों का उपलब्ध
१९६५ के तुलना में कम था। १९६५ में जहाँ प्रति व्यक्ति साधान्नों की उप-
लब्धि ४८० ग्राम थी, वहाँ १९७१ में जबकि रिबाई उत्पादन हुआ प्रति
व्यक्ति साधान्नों की उपलब्धि केवल १६९ ग्राम हो गई। इस प्रकार यह
स्पष्ट है कि तथाकथित हरित-क्रांति की अवस्था में साथ स्थिति में कोई
सुधार नहीं हुआ है। जब तक नया उत्पादन विधियाँ व्यापक स्तर पर नहीं
बिनायी जाती, जब तक न ही साथ स्थिति का स्थायी समाधान होगा और
न ही वृष्ण क्षेत्र में प्रगति होगी। व्यापक स्तर पर परम्परागत वृष्ण के
बोस आधुनिक वृष्ण के बीतसिद्धि का निर्माण हरित-क्रांति नहीं कहा जा
सकता।

हाल में ही मिले गये सर्वेक्षणों से यह पता चला है कि नयी
बाँधी का उत्पादकता में मोड़ आया है। पिछले वर्षों के तुलना में
फंजाव और हरियाणा में यह कहा देखा गया है। रीफ़, संगर और
पटियाला जिलों में उत्पादकता सामान्य स्तर से १० से १५ प्रतिशत कम हो
पायी है। गुजरात में मोड़ का उत्पादन प्रति हेक्टर ५० पिण्ड से

वै पट्टर 30 मिनिट्स रह गया। इंछियन कीसिल जाफ एगो क्वार्टर रिपर्स द्वारा प्राप्त तथ्यों से इसको पुष्टि होी है।²⁹ इसके मुख्य कारण साधारण कृषक का व्यक्ति मात्रा में उर्वरक जुटा सकने में असमर्थता और सिंचाई की निरिक्त सुविधाओं का अभाव ही सके हैं। इस तथ्य की हमें ध्यान में रखना चाहिए कि जब तक भूमि सम्बन्धी की बदलकर साधारण स्थिति वाले कृषक का व्यक्ति स्थिति में सुधार नहीं किया जाये, उस समय तक किसान के लिए बांझित मात्रा में इन्पुटों का प्रयोग कर पाना संभव नहीं होगा और प्रति हेक्टर फेदावार में स्थायी रूप से सुधार नहीं होगा।

इस नयी कृषि नीति का एक वैधान्मिक दायन यह है कि यह नसत माम्यता पर आधारित है कि कृषि विकास के लिए संस्थागत सुधारों का कोई महत्व नहीं है और केवल तकनीकी परिवर्तनों के द्वारा उत्पादन में वृद्धि कर सकना संभव है। निःसंदेह उत्पादकता में सुधार करने के लिए विविध प्रकार के तकनीकी उपाय करने होंगे, परन्तु ये उपाय व्यापक स्तर पर उसी समय किये जा सकेंगे, जब पहले भूमि सुधार कार्यक्रम पूरी किये जा चुके हों। यदि बिना संस्थागत परिवर्तनों के कृषि क्षेत्र में तकनीकी उपचारों की योजना का प्रयत्न किया जाता है तो इससे परंपरागत कृषि का स्वरूप बदलकर आधुनिक नहीं हो सकता। कैमरोराज का हो यहां तक कहना है कि इससे कृषि क्षेत्र में विविधता उत्पन्न हो गता है। दूसरी दृष्टि से, एक और ती बड़ी संख्या में छोटे किसान परम्परागत ढंग से कृषि करते हैं और दूसरी और कहीं-कहीं आधुनिक पंजीकृत कृषि होता है। इस प्रकार देश में अंतर्देशी कृषि व्यवस्था का विकास होता है।³⁰

इससे असमानता बढ़ता है विकास के मुद्दामें बड़े और मध्यम पैमाने के किसानों को और सुलझे हैं और छोटा किसान निरंतर पिछड़ता

क्या जाता है। हरित क्रांति को जाफ़ेक़े बामान्ताओं या विस्तेषाण करने के लिए जैसे कई अफ़ेक़ेस्त्रियों ने व्यापक सर्वेक्षण किये हैं। जो ७७०० सेना ने फ़ारोअपुर और मुलफ़ुकरनार में हरित क्रांति के प्रभावों का सर्वेक्षण कर यह निष्कर्ष निकाला है कि "दीनों ज़िती में हरित क्रांति से घना और निम्न ज़िती में बाब साधे द्यो है।" ४६

हरित-क्रांति को तथाकथित क्रांति में निधनेता के मान में मयम्नता के दोष बन गये हैं। इस नया दृष्टि को है कारण यह असमानता का दौर लम्बी समय तक चले, इससे पहले हा हमें एक दुट्यो की दूर कर दृष्टि-दीन में समानता लाने हेतु व्यापक परिवर्तन करने होंगे। और यह परिवर्तन स्वाध्यायता के बाद हृदय क्षुब्ध-भुधार ज़ितीलनों का हमान्दारा से मृत्योअन करने पर हो संभव ही नहीं।

मुख्य-भुधार के नाम पर अब तक जितने भी नाटक किये गये हैं, उन्हीं मू-स्वामी-बन के व्यापक हितों की हो लाभ हुआ है। सरकार को और से निर्न्तर वैधानिक स्तर पर ऐतिहासिकों की छोटे ज़ितीलनों के हितों को सुरक्षा हेतु कार्यवाहियों को जाता रहा है, परंतु वह जमाना हम सभी बलग हो रहा है- अपना जान-बूझकर रखा सबकुछ नया है। कारण कि "भारतीय वैधिक व्यवसाय में प्रकृतिगत में राज्य सरकार की ऐसी जान बूझने में सहायता पहुँचाए है जिससे स्वाध्याय या ज़िपव रिफ़र से तो प्रतिबन्ध लग गयी, परंतु साथ ही दूसरी व्यवस्थाओं द्वारा वे प्रतिबन्ध हटाने भी हो गये। अतः, सरकारों नीति के अमुकप उन्काम मांमा निधारीण सार्वजन्यी काबून मा बन गये परन्तु उन्हीं उद्देश्यों से सफ़ाई से बचा मा जा सगा। मृत्योअनियों के अधिनियमों में बचाव के रास्ते खोजने का आवश्यकता महसूस हो, क्योंकि वे नियम तो उन्हीं हा प्रभाव में राज्य विधान सभाओं द्वारा

पता चली गयी थी और उन्होंने यह देख लिया था कि पान्ना व्यवसायों में उम्मीद बचाव के रास्ते हैं। उच्चतम सामाजिक विचारों सम्बन्धी पान्ना व्यवसायों में अब तक १०.७५ लाख हेक्टर भूमि बंटाई जा चुकी है, जो समस्त कृषिगत भूमि का ०.७५ प्रतिशत है। इससे तो अब तक ५ लाख हेक्टर भूमि का वितरण संभव हो गया है। इससे एक ही यह निष्कर्ष निकलता है कि भूमि वितरण में सरकारों कायें किस लापरवाही के साथ हो रहा है, और कब वहाँ वितरण हो पा गया है, वहाँ जाकी सम्बन्धित व्यवस्था हेतु कड़ी मायबोही नहीं हो गई है। जिसका परिणाम यह निकलता है कि जिन सामान्यजन लोगों का भूमि मिली है, वह भी सामान्य के अभाव में बेकार हो रहा और धीरे-धीरे भूस्वामी वर्ग ने अक्सर का साम उठाकर उसे पुनः पुनः बंटा दिया और वह बेकार गरीब जिसके नाम है जागी सरकारों के अधिकारों में अक्सर मिली गयी थी, पुनः भूमिहीन हो गया। सरकार ने इस संदर्भ में कड़ी मायबोही करना तो दूर अक्सर भी नहीं दिया। हाँ, इस भूमि वितरण का आवश्यकता की दृष्टि से लिए इससे ठीक भूट गये कि सुनने वालों के काम में अक्सर हो गये और चिन्नी भूमि मिलनी थी, जो अक्सर वास्तविक-ताम था, वह इस नाटक की एक अक्सर की तरह मौक होकर देखता रह गया।

भूमिहीन व्यक्तियों का कम भूमि आवंटित करने से उनका कहां हित नहीं हुआ सिवाय अहित के। उस आवंटित भूमि में कृषि करने का हित भी उसने भूस्वामी से कृण लिया और आज ही लाख सरकारों समिति से। परंतु, वर्णों से अक्सर पड़ा भूमि में उचित बंटवारे एवं पानों के भित्ति के कारण वह काम में बेकार हो गया। लेकिन भूस्वामी और सरकारों समिति का कृण बढ़ता हो गया- भूद-दर-भूद। और स्थिति उनका भूमि बिकने से हो शांत

नहीं छुड़े, वरन् उगने पर-मर्त्य भी नीलाम ही गयी। इस भयावह परि-
 वर्तन से वह निरा तबहारा बनकर रह गया। जब उसके पास न अपना भूमि
 था और न अपना एक स्थान। अतः वह सरकारा और मूखाना वर्गों के पुणित
 जहल्यार्थों से घिरकर रहने का और मराने की विचार हुआ। कहने का अभिप्राय
 यह कि स्वाधीन भारत में गरीब ग्रामाज-वर्ग, जिसकी संख्या भी अधिक है,
 की दुर्दशा संघर्ष करना पड़ रहा है। जो और अपने गाँव के मूखानों से
 और दूसरी और सरकारा-जन्मी से। सामंती युग में यह संघर्ष केवल एक मू-
 खानों के का हाँ था। लेकिन, जब यह स्थिति कड़ी बिगड़ गई, सामंती
 के दोनों पार्टों ने दोनों पक्षों पर तबहारा-वर्ग बनाने की कोशिश
 में हथ-उपर बलवाज हीज भाग रहा है। गाँव से रह कर जहाँ भी जाता
 है, वहाँ उसे शोषक के तुरा पैसे का लेते हैं, और वह संघर्षरत जिनके
 जादामा की कड़े गलीने और तुलावने स्वप्न दुने थे — स्वाधीन के, जा-
 राज्य के, छूट कर बिखर गये।

पंचवर्षीय योजना-

सचिवों ने प्रधान भारतीय-जनता ने १५ जनवरी १९४७ को
 प्राधान्यता को बैकियाँ तौड़कर स्वाधीन भारत में खुला उल्लेख। इससे
 तिर उठी भारी-बलियान भी करने पड़े, परंतु वे जीवों का कदरे जयबोहारों
 का निरंतर विरोध करने लगे और जब स्वाधीनता मिली, तो भारतीय
 जनता अपने स्वाधीन होने का उम्मा में अपना विशेष लो डेटो। जिसका कारण
 यह हुआ कि नेतृत्व गलत हाथों में चला गया। जयनेतृत्व गलत हाथों में चला
 बबल जाता है, अब उनका गलत नीतियों का परिणाम केवल वही पादो नहों
 योगता, वरन् जाने जाने वाली पादो भी योगता है। कारण कि देश की

उपस्त योजनायें उसी से बनायी जाती हैं, जिस पर मोविण की नांव रखी जाती है। नांव ही जहाँ सराबरी है, वही उस नांव पर जायदाद मजबूत है स्थापित पर जिसका भी विश्वास नहीं ही करता, बाहे ऊपर से उन्हें बिलाल भी मंगया जाये। स्वाधीनता के उपरांत हमारे देश के विकास का नांव भी ऐसा ही मजबूत रखी गया, जिस पर जल्दी मजबूती बना दिये गये, परंतु वे स्थायी नहीं ही सकते। आज ३५ वर्षों बाद यह स्थिति और भी स्पष्ट हो जाती है, जब हम देश की वर्तमान स्थिति का तटस्थ भाव से मूल्यांकन करते हैं।

स्वतंत्रता से पूर्व ही भारतीय पूंजीपतियों और राजपूतवादी राजनीतिज्ञों की यह स्पष्ट हो गया था कि भारत में इंग्लैण्ड, जर्मनी और फ्रांस की भांति परम्परागत ऊँची विकास का संभावना नहीं है। जर्मनी और जापान के विकास का रास्ता इंग्लैण्ड और जर्मनी के विकास के ऊँची जल रहा है, जहाँ इंग्लैण्ड के आर्थिक विकास में राज्य का भूमिका बहुत पीछे रहा है, जहाँ जर्मनी और जापान में सरकार के विशेष प्रयत्नों के कारण ही औद्योगिकीकरण हुआ है। भारत का पूंजीपति वर्ग अपना बर्माही से फल-फाँट जलगत था, जतः उसने सरकारों सहायता का भाग लेना। परंतु, यह वर्ग प्रारंभ से ही समाजवादी आर्थिक नियोजन का प्रयत्न विरोधी रहा है और हमारे वर्ग के प्रयत्न विरोधी के कारण, देश में राज्य-पूँजीवाद का गलत नांव रखी गयी। जिससे सारी विकास योजनायें बीपट होकर रह गयीं और जलपान विकास की फुटदीह आरंभ हुई। यद्यपि जलक अधिकांश ही निहित अधिष्ठाता और आर्थिक योजना-आयोग तथा भारत सरकार "समाजवादी-समाज" भी रहते हैं। परंतु वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने पर हमें राज्य-पूँजीवाद कहना ही ठीक रहेगा। राज्य पूँजीवाद में उत्पादन के दो चीज होती हैं— प्रथम किसी चीज में जिसमें उत्पादन के सभी सामान पूँजीपतियों के अधिकार में रहते हैं और उपभोक्ता को मत

यंत्र का सहायता से उत्पादन सम्पन्ना कियाये लेंगे हैं। विनाय, सरकारों की तरफ से उत्पादन के साधनों पर केवल सरकारों की निर्भरता होती है, वरन् उन पर सरकार का आभित्व भी होता है। इस प्रकार के आभित्व वाले हैं चूंकि राज्य को सत्ता पर पूँजीपति वर्गों की निर्भरता होती है, इसलिए वह वर्गों को राजस्विक बंधन सरकारों की तरफ से हमेशा उत्पादन के स्वतंत्र और उनकी भावना को भी प्रभावित करने में काममें होता है। पूँजीपति वर्गों के ने समस्त उत्पादन-साधनों का स्वामता होता है और देश की तथाकथित प्रजातन्त्र - सरकार उससे हिलों का रक्षा करने का एक सक्षम दल। वह देश के कल पर भी लेकर विवेक तान की प्राप्ति होता है और फिर, तारा देश उसकी मुटुओं में बंद रहता है।

पंचवर्षीय योजनाओं के निर्माण के सम्बन्ध में हम स्वतंत्रात्मक कार्य कर रहे थे जिनका परिणाम उपर दिया गया है। इसीलिए पंचवर्षीय योजनाओं जिनका प्रेरणा सौम्यता संघ के आभारणा दिग्दर्शक ने भिन्न, आकाश होकर रह गया। इसके कारणों पर प्रकाश डालते हुए प्रसिद्ध प्रा-सोसो बंधनकारी बोर्डल हाइम ने लिखा - 'भारतीय पंचवर्षीय योजनाओं के सम्बन्धित राजनीतिक, नौकरशाही तथा तकनीकियों में के जिनके ने मा-मस्तिक में कोई स्पष्ट सिद्धान्त नहीं था। भारतीय योजनाओं अनुसंधानित हैं : उनका उद्देश्य किन्हीं अति सुलभता के जाने वाले समस्याओं का हम योजना और जिन्हें आशाओं तथा आवश्यकताओं की दृष्टि माना है। संतुष्ट हैं, जब यो योजनाओं के सैद्धान्तिक आधार पर परिभाषा की गई, तो आभित्व निर्माण पर अतिशुल सहमति नहीं था। कुछ विचारों ने जहाँ इसी व्यवस्था और भावना-वाद का और संकेत दिया तो कुछ दूसरे लोगों ने केवल तथा पाण्डु के सिद्धान्तों के आधार बनाना चाहता और कुछ अन्य विचारों ने केवल सामाजिक गुणों पर धारणाओं के आधार पर आर्थिक नियोजन के नांव डाला उचित सम्पत्ता।' ^{३२}

प्रथम संवर्धनयोजना (१९५१-५६)

प्रथम संवर्धनयोजना का प्रारम्भ जुलाई १९५१ में प्रस्तावित किया गया था और दिसम्बर १९५२ में इसे अंतिम रूप दिया जा सका था। जबकि इस योजना को अप्रैल १९५१ में मार्च १९५६ तक था। इस योजना का निर्माण जिन्होंने महत्त्वपूर्ण एवं ठीस बांधारों को लेकर नहीं हुआ, परन्तु १९५०-५१ में ० दिन परियोजनाओं पर कार्य हो रहा था, उन्हें फिर निवेश का व्यवस्था करना पड़ा था। इसलिये इस योजना से भविष्य में और अधिक लाभ प्राप्त करने में नहीं हो सका। यह फलतः योजना ग्रामीणों के लिए लाभकारी नहीं थी। इसका कारण प्रत्यक्ष जनता के बीच में निवास करता है एवं ७० प्रतिशत जनता कृषि पर निर्भर है, जतः कृषि क्षेत्र का व्यवस्था में परिवर्तन अत्यावश्यक था। लाभान्वितों में कृषि-यवस्था अत्यन्त विकृत थी। भूमि और जल का उत्पन्न करने में लगभग सभी कम थे, लाभान्वितों का विदेशों में बहुत बड़ा भाग जायात किया जाता था। इससे इस योजना को ग्रामीणों के लिए बनाया गया।

इस योजना में कुल अनुमानित व्यय २०६९ करोड़ रुपये ही था। बाद में इसे बढ़ाकर २३२६ करोड़ रुपये पर दिया गया। परन्तु, के. को लालपुराणाहा जिस पर औरों का सुझाव मान्यता प्राप्त था, ने १९६० करोड़ रुपये ही व्यय होने दिया। फलतः ३९६ करोड़ रुपये को बढ़ा रुपये का उपयोग न हो सका। जबकि इस समय में और अधिक रुपये व्यय करने का आवश्यकता थी, जिसे निवास भागों में अधिक धन-व्यय करने परदेता उपेक्षित ग्रामीण-क्षेत्र का विकास किया जा सकता। जतः केवल १५ प्रतिशत का कृषि और सामुदायिक विकास कार्य पर व्यय किया जा सका, जिससे परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में १८ प्रतिशत वृद्धि हुई। लाभान्वितों का उत्पादन ५ करोड़ टन से बढ़कर ६.५ करोड़ टन हो गया।^{२४}

जीपीगिक कीम में प्रथम पंचवर्षीय योजना में सबसे अधिक कीम पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। फलतः व्यक्तिगत उद्योगों की समस्याओं को नजर में नहीं रखा गया। इस योजना में समा प्रसार के उद्योगों पर ही प्रत्येक ध्यान दिया गया। इससे जीपीगिक उत्पादन में ११ प्रतिशत वृद्धि हुई। जायोजनों ने यदि विधिक ने कार्य किया होता तो यह निम्न कीम को नज़र में न पड़ती और भी जाय निम्न है, वह तो निम्न हो नहीं होता।^{२५}

इस योजना-काल में १५ लाख आय में वृद्धि का लक्ष्य ११ प्रतिशत रखा था जबकि राष्ट्रीय आय में वास्तविक वृद्धि १८ प्रतिशत हुई। अतः प्रति व्यक्ति आय में औसत ७ प्रतिशत की वृद्धि हुई। फलस्वरूप जनता के उपजीव्य स्तर में निश्चित प्रभाव हुआ था।

प्रथम पंचवर्षीय-योजना के बारे में हमें यह ध्यान देना चाहिए कि यह योजना भविष्य की योजना में दूसरी तैयार की गई थी। वस्तुतः इसका उद्देश्य सामान्य तथा विविध कच्चे पदार्थों का अभाव दूर कर अर्थव्यवस्था की स्थिरता प्राप्त करना था। विविध कीमों में विकास के लक्ष्य इसमें कम रखे गये थे कि उन्हें जानना ही पूरा कर दिया गया। इससे हमें यदि बड़ा उपलब्धि तो, सामान्य उपलब्धि में भागना मुश्किल हो गया। यह तो विकासक्रम का ही परिणाम था। सामान्य के कारण ठीक समय पर वृद्धि होने से वृद्धि कीम में जाय ने अधिक सफलता मिली। उत्पादन के अन्य कीमों में फलतः समता का प्रयोग कर उत्पादन बढ़ाया जा सका। लेकिन, हमें यह नज़र में रखना चाहिए कि देश बाह्य-विकास के सुदृढ़ मार्ग पर चल रहा है। इस संदर्भ में साल २० बदन का फल उल्लेख है- "पिछले कुछ वर्षों में वृद्धि के आधार पर हम निष्कर्ष पर पहुँचना कि देश बाह्य विकास के पथ

पर निरन्तर ऐसा ही साथ हीमाता प्रगति को दिशा में पहुँचा गया है, बढीको दृष्टिजीण हांगा । प्रथम पंक्कणाये योजना के बाद है वर्णा में अरोसाकृत अधिक सकलता प्रामतः दो आधाराण रूप से अच्छी फायलों के कारण उनके भुगतान संतुलनों, अच्छे फायलों का उत्तमवृधि इत्यादि पर अनुसृत प्रमायों के कारण मिल सका था । प्रथम योजनावधि में निम्नलिखित क्षेत्रों में साधारण वृद्धि अर्थात् किसी अन्य सरकारी उपायों की इस सीमाओं के लिए देय नहीं दिया जा सकता । - २७

द्वितीय पंक्कणाय योजना (१९४६-४९)

द्वितीय पंक्कणाय योजना मुख्य में प्रथम पंक्कणाय योजना से बहुत भिन्न था । प्रथम योजना के अन्तः कृषि विकास का योजना था, जबकि द्वितीय योजना में मारा उद्योगों के विकास और सावजनिक क्षेत्र के विस्तार पर अधिक ध्यान दिया गया । इस योजना पर कुल ४८०० करोड़ रुपये व्यय करने का आयाजित था, परंतु प्रथम योजना की भांति यहाँ भी सरकारी मशीनरी के लापरवाही के कारण ४६०० करोड़ रुपये ही व्यय हो सके । अर्थात् २०० करोड़ रुपये का धराशायी विकास कार्यक्रमों में लाने से बचा लिया गया ।

द्वितीय योजना में औद्योगिक विकास की सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई और समस्त योजना को २० प्रतिशत धनराशि वृद्ध उद्योगों एवं तकनीकों के विकास पर व्यय करने का प्रावधान किया गया । कृषि को इस योजना में गौण स्थान पर रखा गया और मात्र ११ प्रतिशत व्यय किया गया । साधन उत्पादन का लक्ष्य ८.१८ करोड़ टन निर्धारित किया गया

था जो प्राप्त कर लिया गया। लेकिन औद्योगिक उत्पादन में इतनी बड़ी मात्रा में पूंजी निवेश करने के काम में विविध उद्योगों के उत्पादन सम्बन्धी लक्ष्य जघ्नी रह गये। सार्वजनिक क्षेत्र में बिस्वासे, एअरक्रैफ़ तथा युग युग में लीरे व इस्पात के विस्तार कारखानों का स्थापना ही हो गई, परन्तु, १९६०-६१ में इस्पात का उत्पादन केवल २४ लाख टन हुआ जबकि लक्ष्य ४४ लाख टन रखा गया था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना निम्नलिखित स्वरूपों में काम के कारण असफल सिद्ध हुई। जिस उद्देश्य की तैयारी यह बना था, वह निर्दिष्ट मात्रा में हो पूर्ण हो पाया। इतनी विस्तार योजना के लीरे हुए भी राष्ट्रिय आय में केवल ५ प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य रखा गया था, वह भी पूरा न ही सका। इससे अधिक इस योजना की असफलता का प्रमाण और क्या हो सकता है।

४८०० करोड़ रुपये की योजना बनाने वाले आयोगीजों ने ४४०० करोड़ रुपये के विधेय माथनों के प्रति योजना के फाँदे में स्पष्ट किया थे। यह तथ्य योजना आयोग के आयोगीजों की भी स्पष्ट नहीं था कि ४०० करोड़ रुपये की इतनी भारी भाराशि के प्रति क्या हैं ? व के अतिरिक्त योजना काल में धीरे धीमे में लगभग २२ प्रतिशत वृद्धि होने के कारण योजना पर पीट्रिक कम ४६०० करोड़ रुपये होते हुए भी वास्तविक व्यय काफी कम रहा।

प्रितीय योजना की सबसे बड़ी खूबाई यह थी कि यह योजना तथ्यों के अभाव में गलत माथ्यताओं के आधार पर तैयार की गई थी। जिस समय यह योजना तैयार हो रहा था, उस समय देश में पूंजी-उत्पादन

अनुपात गणितों से तय नहीं था। जहाँ यह २ : १ माना गया, जबकि वास्तविक उत्पाद अनुपात लगभग ३.८६ : १ था। ऐसा स्थिति में योजना के अंतर्गत जिन गरीब किसानों से जाय में बासागुल्ल वृद्धि न होना और कारखानों का जाल नहीं है।

तृतीय पंचवर्षीय योजना - (१९६१-६६)

तृतीय योजना के निर्माण-काल में जायिकों का विचार यह रहा कि प्रथम और द्वितीय पंचवर्षीय योजनाएं देश का स्थिर अर्थ-व्यवस्था की गति प्रदान करने में सफल रही थीं। इनके अतिरिक्त देश में एक ऐसा बड़ा बाजार भी तैयार हो गया जिसके कल पर भविष्य में तेजी के साथ विकास किया जा सके। तृतीय योजना उमा बाजार पर तैयार का गठन थी और इसका लक्ष्य अर्थव्यवस्था की तेजी से स्वात्मिक विकास का और है करना रखा गया था।

तृतीय योजना में विकास की समस्याओं के धार में व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया था और विकास के लिए विशेष प्रयत्नों पर जोर दिया गया था। इसको मूल नीति के अनुसार कृषि अर्थव्यवस्था की दृढ़ बनाना, उद्योगों का व्यापक स्तर पर विकास करना, अजारे तथा बाजार-यात के साधनों का विस्तार करना, योजनाओं में मानाकरण की प्रक्रिया को करना, सभी क्षेत्रों में युवकों के लिए रोजगार की व्यवस्था करना और सभी व्यक्तियों को समान अवसर देने का प्रयत्न करना इस योजना के प्रमुख कार्यक्रम थे।

तृतीय योजना में सावजनिक क्षेत्र में प्रस्तावित व्यय ७५०० करोड़ रुपये था। इस योजना पर वास्तविक व्यय ८५७७ करोड़ रुपये हुआ। यहाँ यह दृष्टव्य है कि इस योजना में जहाँ वास्तविक व्यय अनुपात

व्यय भी अधिक हुआ, वहाँ कृषि के क्षेत्र में १४ प्रतिशत व्यय करने का प्राविधान योजना के फाँदे में था, परन्तु वास्तविक व्यय १२.७ प्रतिशत हो हुआ। इससे स्पष्ट है कि अधिकारियों के विद्वान्त और अवाधार में अंतर था। अधिकारा-का का समय यदि फाँदे के निर्माण में अंतर्गत होता तो वे कृषि-कार्य के लिए और भी समय बचाने की व्यवस्था करते, लेकिन, यह संभव नहीं था, अतः योजना के कार्यान्वयन के अवसर पर वे कृषि-कार्य हेतु प्रस्तावित धन में निरंतर कटौती करते रहते। इस तथ्य की श्रद्धांशुता से है।
 यहाँ सेना बाहिर कि अधिकारी वर्ग का सम्मान शहर और उपग्रामों को और विशेष रूप में रहा है, वरन् इस गंभीर समस्याका निदान भी मौखिक बाहिर। देश के आधुनिक विकास में ग्राम और नगर का निरंतर बढ़ता अंतर का एक मुख्य कारण है और इसीलिए समस्त उपायों के बावजूद ग्रामीणों की जीवन-वृद्धता हो जा रहा है।

तृतीय योजना के समय समाज तथ्य अचूक रह गये और अर्थव्यवस्था गंभीर संकट में फँस गया। बाह्य स्थिति इतना खिड़ गया कि तीसरी योजना को समाप्ति के पश्चात् चौथी योजना पर कार्य करना संभव नहीं हो सका।

चतुर्थ योजना के अंतर्गत राष्ट्रीय आय में ३० फीसद वृद्धि का लक्ष्य रखा गया था। यह लक्ष्य पूरा नहीं किया जा सका। राष्ट्रीय आय में केवल १४ प्रतिशत वृद्धि हुई।

इस काल में (१९६१-६६) जनसंख्या में वृद्धि का दर भी लगभग २.५ प्रतिशत बाह्यिकी को और चूँकि राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि का दर यही रहा इसलिए परिणाम यह हुआ कि १९६१-६६ में प्रति व्यक्ति आय २२५ रुपये हो गई जो जोड़ि विकास योजना के अंतिम वर्ष में भी था। इस अवधि

में कृषि-विकास के स्थापित उद्योग-गृहों के पास पूंजी में वृद्धि हुई और नाले का के लोनों का प्रति व्यक्ति आय वित्तिय योजना के लिए से का नाला हो गई। यह रही सबसे बड़ा उप-प्रति प्रति गरीब और न गरीब हुआ। प्रतिप्रति यह कि गरीब नागरियों के कारण विकास अवसर हा नहीं हुआ, प्रति हा जहाँ से, वहाँ से मो साके हट गये। विकास के नाम पर सारा पूंजी का उप-प्राप्त केंद्र-उद्योग-विकास हो गये रहे और काम जनता के हाथों से उधर एक ही हो मो शिष्ट गयी। यह नेहरू जी के रजिस्ट्रार के समाजवादी का एक ही महान् उप-प्रति हो कि गरीब के साधन और-और से गायो जा रहा है।

तीन वाणिज्यिक योजनाएं- (१९६६-६९)

तृतीय योजना समाप्त होने के समय देश में वाणिज्य बाधित संकट की स्थिति था, जिसका सामना करने के लिए वाणिज्यिक योजना का आवश्यकता था। परन्तु, सरकार ने ठीक इसी विपरीत कार्य किया। वस्तु योजना स्थगित कर दी गई। ६ जून १९६६ को भारत सरकार द्वारा लक्ष्य का अवमूल्यन किया गया। अवमूल्यन विश्व बैंक के दबाव के कारण किया गया था।

तीन वाणिज्यिक योजनाओं में वृद्धि पर १४.६ प्रतिशत व्यय करने का अनुमान लगाया गया और उद्योगों पर २२.८ प्रतिशत। और उद्योगों में व्यय को प्रभावित करने में हा इन योजनाओं का वाणिज्यिक संकट ही जाता है। इनका मुख्य उद्देश्य उद्योगों से बढ़ावा देकर सारा है अनुमान विकास में सहाय्य करना था जिसका परिणाम सामने है। इन योजना-वार्तों में राष्ट्रीय आय में वृद्धि, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि और वृद्धि और उद्योग क्षेत्र में उत्पादन कम कम और कम अधिक रहा। परन्तु, संपूर्ण रूप से देखा जाय

तो कम हो रहा और इस प्रकार से तीन वर्णों में देश का अर्थव्यवस्था को गड़बड़े में धकेलने में सहायक हो रहा। पिछली योजनाओं के विकासवादी के कारण से जोड़े सके नहीं जाते। कालखण्ड पर वर्णों के काम जमता निरन्तर गरीबी का नाया-देता से नीचे गड़बड़ती रहा।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना - (१९६९-७४) -

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना पर मार्च १ अप्रैल, १९६९ से प्रारंभ हो गया था। परन्तु राजीव विकास परिषद के उस पर अभी स्वाकृति मार्च १९७० में था। तत्पश्चात् २४ मार्च १९७० को योजना का प्रारंभ संसद में सहायक रहा गया और इस पर विचार-विमर्श के बाद संसदीय प्रलेख मार्च १९७० में प्रारंभित हुआ। इस योजना का अवधि १ अप्रैल, १९६९ से ३१ मार्च, १९७४ तक था।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के प्रलेख में यह स्थापना किया है कि तीन वार्षिक योजनाओं में आर्थिक प्रगति में स्थिरता नहीं थी। परन्तु योजना आयोग अपने सम्पूर्ण विस्तारण में एक बहुत बड़ा झुटि पर बैठा कि इस अवधि में के राष्ट्रीय उत्पादन में अस्थिरता और उभार रहा। हम यह मानते हैं कि राष्ट्रीय उत्पादन पर देश का अर्थव्यवस्था निर्भर रहते हैं, परन्तु प्रश्न यह है कि क्या अभी योजना आयोग के अर्थव्यवस्था और सरकार के राष्ट्रीय उत्पादन में स्थिरता लाने के लिए क्या है कार्य किया? क्या कारण है कि आज भी राष्ट्रीय-उत्पादन माफ़सूरों पर निर्भर है? क्यों नहीं हमें विकास हेतु कठोर उद्देश्य उठाये गये।

तीन वार्षिक योजनाओं में औद्योगिक क्षेत्र में भी उत्पादन का स्थिति अच्छी नहीं रहा। बड़े-बड़े उद्योग मात्र ०.२ प्रतिशत

उत्पादन में वृद्धि कर गये। इनके कारण भी बाजारों में तेजी लगी—
बाँटें, टिपें, बिनात हाफ्ट होने से जीवना और उत्पन्न गयी।

योजना जायगी के हाफ्ट हफ्ट में यह बाजारों में
चतुर्थ योजना प्रारम्भ होने के समय जाय और सम्पत्ति के विवरण में विष-
मता कम होने और सम्पत्ति का सन्निपन्ना घटने का मौखिक ज्ञान नहीं है।
इनके साथ बैरौजगारों का बाजारों में बिगड़ता गये।

चतुर्थ योजना में अनुमानित आय १५८८२ करोड़ रुपये रखा
गया था। इसमें से १५९२० करोड़ रुपये सामंतिगत क्षेत्र में और ८९८०
करोड़ रुपये निजा क्षेत्र में। मुम्बई का सामंतिगत विकास के लिए १७.१
प्रतिशत और उद्योग व खनन के लिए २१ प्रतिशत आय दिया गया। यातायात
पर तुल्य योजना में भी जीवना का राशि आय का गये। परन्तु, परिवार
नियोजन पर क्या होने वाले आय में बढ़ोतरी कर दी गयी। तुल्य योजना
में इस फंड में वहाँ केवल २५ करोड़ रुपये आय मिली गयी थी, वहाँ चतुर्थ
योजना में ३३० करोड़ रुपये आय करने का प्रावधान रखा गया। यह देश
में जहाँ का विकास के गंभीर विषयों पर ध्यान देने के कारण है।
प्रमाण है।

चतुर्थ योजना में राष्ट्रीय आय में वृद्धि का लक्ष्य ५.५ प्रति-
शत वाणिज्य रखा गया था। किन्तु, इस भित्ति पर यह वृद्धि ३ प्रतिशत हो
रही। इस स्थिति का चिन्ताय आस्था के कारण फलतः वे नहीं हैं, जो
जायोजक कह रहे हैं, अब अपितु वह उनका नियोजन क्षमता को जाकसता
है। मन् १९६०-६१ से १९६०-६८ के बीच कुल उत्पाद अनुसार २.६ था,
राष्ट्रीय आय में ५.५ प्रतिशत वृद्धि के लिए निवेश को दर राष्ट्रीय आय
को २० प्रतिशत होने का हिस्सा था, परन्तु योजना जायगी केवल कुंजी निर्माण

को १९५१ से १९५२ प्रसिद्धित की है। कारण हा इस समय को प्राप्त करने का
 जाया जाता था। इस हायासक एवं किन्नीय रिधित पर टिप्पणी
 करते हुए बा० एम. डाकिर तथा नाज्जठ एम ने उक्त हा हा है।
 'जायासो' का के लिए योजना जायासो का परिशेष पिछले दशक के अनुभूति
 पर आधारित नहीं है। पिछला आकलनाओं के प्राप्त जालें बंद कर लेने का
 स्पष्ट इच्छा दिखाए देता है और वस्तु इच्छाशक्ति बाधा हा है कि
 मविष्य जियो प्रकार भूत है भिन्न होगा।

गुणि उत्पादन का समय भी भूत न ही सदा। कारण
 सुखा का बताया गया और नुस्ते का उपाय सरकार के पास जमा तो नहीं
 है। इसलिये योजना जायासो पर एक साधा-सा कहाना है- मायूम को
 प्रतिबलता। लेकिन, यह कहाना कब तक चलेगा, इस बारे में कुछ नहीं हा
 जा सकेता क्योंकि भारतीय एक ही निष्कर्ष के कारण और दूसरे,
 अस्थिरा के कारण पर-परगत मायमाओं पर विचारम करता है, विषय
 मूलमंत्र है-- मायमाद। इसलिए वह वणों, जीना, बाढ़ एवं भूत जैसा
 मयावह स्थिति जी को 'मायम' में लेता हा था 'कहर' महान कर लेता है
 और उक्त मायम-विधाता इसे 'प्रिय' में फंसाकर के का बंधा बना रहे
 हैं।

पंचमपंचवार्य योजना - (१९७१-७८)

इस योजना का निर्माण बांधायायोजना का अस्थिर एवं
 आकलन आर्थिक परिस्थितियों का पुष्टभूमि में हुआ। जब तक है नियोजन
 ने देश का अर्थ-व्यवस्था को स्थिर-स्थिर करे आशान विकास का नांव
 रखा है। एक और सबसे-यम पर जायु समतिर-अर्थव्यवस्था जायम का है,

तो दूसरी ओर गराबों के हाथ ने उनको रौंटा का टुकड़ा भी झोन लेने का जोशिल का है। इसलिए जायोजर्जी को इन सब असफलताओं के प्रति सज्ज रह कर निश्चिन्ता की पूर परी का प्रयत्न करना चाहिए था, परंतु जो उसपरि नहों ही था कि देश में विरंतर बढ़ते हुए निर्धनता का बोध नहों चाहते थे कि ग्रामीण-जीवन में भा विनाश ही। क्योंकि अब विनाश ही है तो कैसा भा विनाशित ही है, और कैसा ही का वास्तव जीवन के पिछाड़ संगठन। अतः चतुर निहित स्वार्थों को न जायोजर्जी की रूप कर बनाना सम्भवानी की, जिसने देश में असमान विनाश हुआ।

पाँचवाँ योजना में कुल परिवर्धन ५३४९१ करोड़ रु. की निर्धारित किया गया। इसमें से ३७२५० करोड़ रु. की सामाजिक क्षेत्र में लिए और १६२४१ करोड़ रु. की निजी क्षेत्र में लिए। विकास योजनाओं की प्रतिशत इसमें भी कुल के लिए १२.७ प्रतिशत घनराशि को गढ़ों और उद्योग की २४ प्रतिशत। राष्ट्रीय आय में वृद्धि का लक्ष्य ५ प्रतिशत रखा गया परन्तु यह भी सम्भव न हो सका और वास्तविक वृद्धि ४ प्रतिशत रहा। इन्फ्लेशन को वाणिज्यिक वृद्धि का लक्ष्य ३.५४ रखा गया और यह पूरा भी हो निया गया, लेकिन उद्योग-क्षेत्र में इन्फ्लेशन कुमो घनराशि कम करे माफूसी-सा ३.९२ प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य भी पूरा न हो सका।

छठे पंचवर्षीय योजना से भा किता प्रारंभ के परिवर्धन को अपेक्षा करना, भूल हो होगा। इस योजना में जो बड़ा पुराना रचना अफसोस गया है और राष्ट्रीय आय में वाणिज्यिक वृद्धि का लक्ष्य ४.७ प्रतिशत, रखा गया है। इन्फ्लेशन क्षेत्र है वही ३.५४ प्रतिशत घनराशि निर्देश है दो गढ़ों है। अतः इस योजना का और टकटका लगाने से कोई लाभ नहों होगा।

मूल्यांकन -

अप्रैल १९५१ से देश में नियोजन कार्य आरम्भ हुआ। ६ के साथ ही यह जाला भी दुर्ग छुई कि सदियों से गुलामों की आँखों में लड़ भावनाय

वन्ता का विकास ही गैना सेमिन घारे-घारे यह बाधा घुमिस्त होनी गई। स्थापना के पिछले २५ वर्षों में विकास का न्यो-न्यो योजनाएं बनो? कुछ पर बन्त हुआ और कुछ कारखानों में बंद गूटकर पर गया। एक में एक बड़ा कारखाना तैयार किया गया, हरित-शक्ति छुं सेतो का उत्पादन बड़ा और हमने साथ ही बड़ा सगल राष्ट्रीय आय और फते-शुले नव यन्त्राय किन्तु देशांत में मूल्यापे कर्। साधारण जन की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। आय ६० प्रतिशत लोग गरीबों की गोमा-रेखा में नीचे जायक्यापन कर रहे हैं, जो दूसरी और बड़े पूंजीपति व्यापारी वाले घन ने पहाड़ पर पहाड़ लाते जा रहे हैं। संपूर्ण र राष्ट्रीय आय (२०,००० करोड़ रुपये वार्षिक) का लगभग २५ प्रतिशत भाग गरीब घन बन जाता है। गरीबों की संख्या और भी अधिक बढाई जाती है। गरीब घन बढाने की रफ़्तार राष्ट्रीय आय की गति में बढाई अधिक है। कहा जाता है कि एक व्यापारी उत्पादनों पर खेप्टों से प्रसिद्धन ५ लाख रुपये घमाता है। यह भी बर्बा है कि एक बन्धु व्यापारी ने हाल में एक महत्त्वपूर्ण राबनेतिक नेता की एक करोड़ रुपये दिये। यह घन गरीब घन की ही महिमा है। तिलक हंडस्ट्रो के बारे में कहा जाता है कि यहाँ २०,००० करोड़ रुपये गरीब घन के रूप में है, जो राष्ट्र का संपूर्ण वार्षिक आय के बराबर है।

योजनाओं के नाम पर हमने पनरालि ६ आय करने के बाद में हम प्रति व्यक्ति आय में बढावरी नहीं कर पाये। यद्यपि राष्ट्रीय आय में बाधातोत वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो विद्वान्ततः विकास का मानकण्ड होती है, परन्तु यहाँ हमका उल्टा हो हुआ। ज्यों-ज्यों राष्ट्रीय वषय आय में वृद्धि हुई, ज्यों-ज्यों वाम बाधनों की आय में वमा होता चली गया। इसका स्पष्ट कारण है-- वार्षिक असमानता। वार्षिक असमानता की स्थिति यहाँ तक जा पहुँची है कि ६० प्रतिशत व्यक्तिगर् की ६०रुपी प्रतिमाह मो नहीं मिल पाते और दूसरी और बड़े उपभोगपति निरय न्यो-न्यो

जल कारखाने स्थापित करे जा रहे हैं जिससे देश की अर्थव्यवस्था का गला
 फूटता जा रहा है, और सरकार उसकी इस भारदारपक भूमिका में प्रसन्न भुज्जी
 साथे है। बड़े उद्योगपतियों का इतिहास इस बात का साक्ष्य है कि उनका विकास
 मुख्यतः महाजमीन के द्वारा हुआ और जो व्यावसायिक प्रक्रम में इस दृष्टिकोण
 की अब भी अवगाहें हुए हैं। कुछ बम्पार्सों की हाईड्रल अपिबॉल सफल उद्योग-
 पतियों में बराबराती में गड़बड़ो करने, सरकारी नीतियों एवं नियंत्रणों की
 प्रभावित करने जिससे कि परिचित बाजार मिली रहे और जंघारियों का अस्तित्व
 कर अपनी परिवार की संरक्षि में वृद्धि करने का जम्पकात प्रयत्न है। विदेशी
 पूंजी ने भी प्रतिकूल प्रभाव हो हीड़ा है। अब तक के अनुभव के आधार पर यह
 कहा जा सकता है कि विदेशी पूंजी जहाँ भी आया है उसमें भारतीय अर्थव्यवस्था
 का हाँबा लगा हो गया है। लेकिन यह देश का दुर्भाग्य ही है कि स्वतंत्रता के
 बाद भी विदेशी पूंजी में क्या नहीं हुई, अपितु पक्षी से और अधिक बढ़ी है।

२१ मार्च १९७० की विदेशी (२१ देशों का) ५६१ कंपनियों भारत में व्यापार
 कर रहा था जिसमें ३२१ फ्रिटेम का था। अमेरिका ८४, जापान को १८ और
 पश्चिमी जर्मनी को कंपनियों की संख्या १३ थी। १९६९-७० के बहाजमानों
 और उद्योगों के पीछे जोड़ हीं तो भारत में ३३ लाख कंपनियों का पूँजी
 बाठ अब तेजसे बढ़ रहा है और जर्मनी की कंपनियों की पूँजी की अब
 तीसरी बढ़ रही है जबकि सब विदेशी कंपनियों की कुल पूँजी १२ लाख ८६ करोड़
 रुपये बढ़ी गयी थी। इस पूँजी का लगभग ५० प्रतिशत वाणिज्य व्यापार में
 और शेष बाय-बायान, तेल उद्योग आदि में लगा हुआ था। सिगरेट उद्योग पर
 तो विदेशी कंपनियों का लगभग पूर्ण आधिपत्य था। लगभग ८० प्रतिशत कंप-
 नियाँ (मुख्यतः जर्मनी की) स्वतंत्रता के बाद भारत आयीं हैं। १९७० में इन
 विदेशी कंपनियों को सामरानि ३२ करोड़ रुपये थी। इनके अतिरिक्त अपनी
 सहायक कंपनियों के द्वारा कमाये गये मुनाफे अलग थे। इन विदेशी लोगों की

और देशी मार्गों से रहती, जाम-आदमी का की उधार होना, यह एक भिन्नोद्यम विधायक है।

देश में असमान विकास के कारण कृषि का संकटाकरण हो रहा है, जिसके कारणों में हम उद्योगपतियों का जन्म होता है, साथ ही ग्रामीण-स्तर पर एक ऐसी वर्ग का जन्म होता है जिसमें कर्मों का निष्पूरता और कृषिपतियों का बालाकापूर्ण श्रम दोनों का सम्मिश्रण होता है। हम वर्ग में ग्राम्य-जीवन का संगठ और सामुहिक विद्वानों में विचार घोल दिया है जिसके कारण वहाँ अत्यन्त तनाव का स्थिति उत्पन्न हो गया है। अक्सर बुद्धि और मूर्खता दोनों के कारण सामान्य कृषकों से भूमि हथी हो रही है। इस भूमि की यह ग्रामीण नव-जन्म वर्ग अपने कष्टों में लेकर कामों का लक्ष्य में आयुक्त तकनीक से कृषि कर रहा है, जिसके कारण कृषि का व्यापारीकरण हो गया है। एक और मानकमा ग्राम्य-जीवन में पंहुचे लोगों की परेशान कर रहा है-- वह है शहरों उद्योगपति द्वारा काले घन का समावो पर कृषि भूमि हथ कर उसमें मजदूरी पर कृषि कराना। हमने उद्योगपति का काला घन स्वीकृति में कृषि उत्पादन के नाम पर गतिवर्ति हो जाता है और काले घन के रह-रहाव से भी उसे मुक्ति मिलती है। यहाँ यह भी दृष्टव्य है कि औद्योगिक क्षेत्र में जितने कर हैं, उतनी कृषि-क्षेत्र में नहीं, अतः वह हमसे जहाँ को शीरो भी जासानी से कर लेता है। यही कारण है कि आज विहृता पर 6800 एकड़ जमान है। हमका ज्ञात यह कि आजकल का कृषिपति हा बहुत मरनामो है। देश के प्रत्येक उद्योगपति ने अपने-अपने विस्तार कृषि फार्म हैं, जिनमें उत्पादन और कृषि निवेश के मत पर वे जहाँ को शीरो कर रहे हैं और सरकार चुन है। सामान्य-विज्ञान सर्वद्वारा होकर कार का और

राजा को तख्ताह में मान रहा है। 'विन मार में कुल भक्ति के जाने
 बहुत भक्तों की कीर्तन में चला, जतः वहाँ भी उसका शीघ्रता होता
 है, और जब तक वह जाता है, तब तक शीघ्रता उसका पोछा नहीं छोड़ता।
 कुल भक्तों में निरंतर वृद्धि किता का विषय है, जिसका और सम्म रही
 ध्यान दिया जाना परमावश्यक है ।

संदर्भ - ग्रन्थ -

- १- पी०एच०शर्मा - सूक्ष्मरत्न एण्ड टेम्पोररिक्ल वास्पाट्स बाफ एल
इकानामो, इंडियन जर्नल बाफ एग्रीकल्चरल इकानोमी-
मिन्स, जस्टिस-पब्लिशर १९५६, पृ० ६०
- २- वात्स बोद्धहासम- इंडिया इन्फोर्मेट, पृ० २२१
- ३- सी०एच० लुमं राव- टेम्पोररिक्ल कैं एण्ड डिस्ट्रीब्यूशन बाफ गैस
इन एग्रीकल्चरल, पृ० १६३-६४
- ४- इंडिया- १९५६, पृ० ३४२
- ५- बार०बार०नीय- उधरप्रदीप भूमि विधियां, पृ० ११
- ६- ममानो सेन - एसाय्युन बाफ एग्रीरियन रिलेश इन इंडिया, पृ० ६६
- ७- डेनियल यानर- दि एग्रीरियन प्रोस्पेक्ट इन इंडिया, पृ० १२-१३
- ८- हणदेव मालाव- लैंड रिकाम्स इन इंडिया, पृ० २५०
- ९- ममानो सेन - एसाय्युन बाफ एग्रीरियन रिलेश इन इंडिया, पृ० १३१
- १०- कै०एच०मिन्स, बलरणा मुखर्जी द्वारा उद्धृत, लैंड रिकाम्स, पृ० १६
- ११- बलरणा मिन्स - मेकस्ट स्टेप इन विलेज इंडिया, पृ० ७५
- १२- -बहा - पृ० ७५
- १३- डेनियल यानर - एग्रीरियन प्रोस्पेक्ट इन इंडिया, पृ० ३४
- १४- एम०प्रसाद राव - मिन्स बाफ डिप्ट, रिपोर्ट बाफ दि कमेटी बाफ
दि साइज बाफ होल्डिंग्स, १९५६, प्रिंटेड इन रिपोर्ट्स,
१९५४, पृ० १६४
- १५- रिपोर्ट बाफ यू०पी० जमादारा एबीसीशन कमेटी, १९४८, पृ० ३९९
- १६- वात्स बोद्धहासम - इंडिया इन्फोर्मेट, पृ० १८५
- १७- योनिमा जयान, झाकट निकय काहम येर प्लान, १९७४-७९,
मिन्स मिनीय, पृ० ४३
- १८- युका लेमिन्सो- हाउ ग्रोन इन दि इंडियन ग्रोन रिबोल्यूशन,
इकानोमिक्स एण्ड पॉलिटिक्स बाक्ली, मिन्स-८, जंक ५२,

- १९- हकानोफि एण्ड पोलिटिक्स बोक्सी, ६ सितम्बर १९७३
- २०- कै०रामराय - सप्त खैरकां संगीनि ग्रीम हांसफार्मिण एण्ड
प्लीनिं जाफा एगोक्ल्लास इन डेवसर्किंग बंदीज,
जनरल जाफा डेवसर्किंग प्लीनिं, जंक-१ (१९६९)
- २१- जो०आर०वी० - ग्रीम रिवाल्सुन एण्ड पि डिस्ट्रीब्यूशन जाफा कागडे
हकानोफि एण्ड पोलिटिक्स बोक्सी, २७माघ
१९७६, पु० १७-२ २१
- २२- डी०रोन वेरिनर - लेण्ड रिफार्म इन प्रिंसिपल एण्ड प्रैक्टिस, पु० १७१
- २३- जाली बोक्स हाउस - हंडिया हंडिपेन्ट, पु० १४६
- २४- जोर्जोस भिन् - भारतीय अर्थव्यवस्था जीर उदका विकास, पु० १४०
- २५- -बहा - पु० १४९
- २६- -बहा - पु० १४९
- २७- पास २० ब्रान -दि पाटि टिक्स हकानोफि जाफा ग्रीम, पु० २६६
- २८- जोर्जोस भिन् - भारतीय अर्थव्यवस्था जीर उदका विकास, पु० १४३
- २९- -बहा - पु० १४७
- ३०- -बहा - पु० १४८
- ३१- -बहा - पु० १७३
- ३२- का०राम दडिक् री नोसकंड रथ - बाबटी इन हंडिया, पु० ३९
- ३३- डी० कृष्णाविहारो भिन् - बायुनिक सामाजिक बांदीलन जीर बायुनिक
हिन्दो माहिरण, पु० ३६-१९

द्वितीय अध्याय

राष्ट्रीय परिषद : नागरी एवं पृथिवीय व्यवस्था

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100 101 102 103 104 105 106 107 108 109 110 111 112 113 114 115 116 117 118 119 120 121 122 123 124 125 126 127 128 129 130 131 132 133 134 135 136 137 138 139 140 141 142 143 144 145 146 147 148 149 150 151 152 153 154 155 156 157 158 159 160 161 162 163 164 165 166 167 168 169 170 171 172 173 174 175 176 177 178 179 180 181 182 183 184 185 186 187 188 189 190 191 192 193 194 195 196 197 198 199 200 201 202 203 204 205 206 207 208 209 210 211 212 213 214 215 216 217 218 219 220 221 222 223 224 225 226 227 228 229 230 231 232 233 234 235 236 237 238 239 240 241 242 243 244 245 246 247 248 249 250 251 252 253 254 255 256 257 258 259 260 261 262 263 264 265 266 267 268 269 270 271 272 273 274 275 276 277 278 279 280 281 282 283 284 285 286 287 288 289 290 291 292 293 294 295 296 297 298 299 300 301 302 303 304 305 306 307 308 309 310 311 312 313 314 315 316 317 318 319 320 321 322 323 324 325 326 327 328 329 330 331 332 333 334 335 336 337 338 339 340 341 342 343 344 345 346 347 348 349 350 351 352 353 354 355 356 357 358 359 360 361 362 363 364 365 366 367 368 369 370 371 372 373 374 375 376 377 378 379 380 381 382 383 384 385 386 387 388 389 390 391 392 393 394 395 396 397 398 399 400 401 402 403 404 405 406 407 408 409 410 411 412 413 414 415 416 417 418 419 420 421 422 423 424 425 426 427 428 429 430 431 432 433 434 435 436 437 438 439 440 441 442 443 444 445 446 447 448 449 450 451 452 453 454 455 456 457 458 459 460 461 462 463 464 465 466 467 468 469 470 471 472 473 474 475 476 477 478 479 480 481 482 483 484 485 486 487 488 489 490 491 492 493 494 495 496 497 498 499 500 501 502 503 504 505 506 507 508 509 510 511 512 513 514 515 516 517 518 519 520 521 522 523 524 525 526 527 528 529 530 531 532 533 534 535 536 537 538 539 540 541 542 543 544 545 546 547 548 549 550 551 552 553 554 555 556 557 558 559 560 561 562 563 564 565 566 567 568 569 570 571 572 573 574 575 576 577 578 579 580 581 582 583 584 585 586 587 588 589 590 591 592 593 594 595 596 597 598 599 600 601 602 603 604 605 606 607 608 609 610 611 612 613 614 615 616 617 618 619 620 621 622 623 624 625 626 627 628 629 630 631 632 633 634 635 636 637 638 639 640 641 642 643 644 645 646 647 648 649 650 651 652 653 654 655 656 657 658 659 660 661 662 663 664 665 666 667 668 669 670 671 672 673 674 675 676 677 678 679 680 681 682 683 684 685 686 687 688 689 690 691 692 693 694 695 696 697 698 699 700 701 702 703 704 705 706 707 708 709 710 711 712 713 714 715 716 717 718 719 720 721 722 723 724 725 726 727 728 729 730 731 732 733 734 735 736 737 738 739 740 741 742 743 744 745 746 747 748 749 750 751 752 753 754 755 756 757 758 759 760 761 762 763 764 765 766 767 768 769 770 771 772 773 774 775 776 777 778 779 780 781 782 783 784 785 786 787 788 789 790 791 792 793 794 795 796 797 798 799 800 801 802 803 804 805 806 807 808 809 810 811 812 813 814 815 816 817 818 819 820 821 822 823 824 825 826 827 828 829 830 831 832 833 834 835 836 837 838 839 840 841 842 843 844 845 846 847 848 849 850 851 852 853 854 855 856 857 858 859 860 861 862 863 864 865 866 867 868 869 870 871 872 873 874 875 876 877 878 879 880 881 882 883 884 885 886 887 888 889 890 891 892 893 894 895 896 897 898 899 900 901 902 903 904 905 906 907 908 909 910 911 912 913 914 915 916 917 918 919 920 921 922 923 924 925 926 927 928 929 930 931 932 933 934 935 936 937 938 939 940 941 942 943 944 945 946 947 948 949 950 951 952 953 954 955 956 957 958 959 960 961 962 963 964 965 966 967 968 969 970 971 972 973 974 975 976 977 978 979 980 981 982 983 984 985 986 987 988 989 990 991 992 993 994 995 996 997 998 999 1000 1001 1002 1003 1004 1005 1006 1007 1008 1009 1010 1011 1012 1013 1014 1015 1016 1017 1018 1019 1020 1021 1022 1023 1024 1025 1026 1027 1028 1029 1030 1031 1032 1033 1034 1035 1036 1037 1038 1039 104

राष्ट्रीय परिवर्त : सामन्तो एवं पूंजीवादों की व्यवस्था

सामन्तो धर्म से जो पूंजीवाद का निर्माण होता है। यह एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है। सामन्तो समाज को पूरा एवं पारंपरिक यातनार्थ और हीनता के हथियार यद्यपि पूंजीवादों समाज में नहीं रहते, परन्तु हमका आशय यह नहीं कि हमने स्थान पर और भी हथियार न बताते हैं। पूंजीवाद अपने हथियार स्फूर्ति तैयार करता है और ये हथियार सामन्तो हथियारों से अधिक वेने अधिक पारंपरिक और अधिक शक्तिशाली होते हैं। पूंजीवादों -हीनता सामन्तो-हीनता से वहाँ अधिक अटल, सुदृढ़ और अमानवीय होता है परन्तु हीनता करने के उन बड़े साधन-धर्म और संरक्षित होते हैं। सामन्तो-समाज के पारस्परिक-सम्बन्धों का स्थान धर्म-व्यक्तिवाद और स्वार्थ परता से लेता है। कारण कि सामन्तो-व्यवस्था में जहाँ लोगों के रहन-सहन, काम-पान और अन्य दैनिक-जीवन में धर्मों और देवता नहीं रह पाता, वहाँ पूंजीवादों व्यवस्था में देवता का मुख्य रहता है। जाफ़ो देवता और मनी-मासिक्य जितना बढ़ जाता है कि समुदाय को एक दीवार बाध में खड़ा हो जाता है और जाफ़ो सम्बन्ध विंचित मात्र भी नहीं रह पाते। सामन्तो-व्यवस्था में एक जुड़ता को स्थिति रहता है, वह पूंजीवादों-व्यवस्था में वह नहीं टिक पाता। और पूंजीवादों-व्यवस्था जुड़ता के स्थान पर निर्ंतर गतिशीलता को जन्म देता है।

उत्पादन के साधनों का अक्षानोक्षण होता है, तब का महत्त्व स्थापित होता है और सधियाँ से जमा जड़ता का भार हट जाता है।
 संसार-व्यवस्था और यातायात के साधनों के माध्यम से दूरियाँ कम होती हैं, एक-दूसरे की सम्यक्ता और संस्कृति से जगत होकर, एक नवीन संस्कृति का उद्भव होता है जो पूँजीवादो-संस्कृति बहती है। उस संस्कृति का एक-मात्र उद्देश्य- अर्थ-प्राप्ति है। अर्थात् अर्थ इस नवीन संस्कृति का धुरो है होता है और संपूर्ण मानव-समुदाय इसका प्राप्ति हेतु दिन-रात चक्कर काटता रहता है।

भौतिक उत्पादन को सामाजिक विकास का आधार है, इसीलिए समाज का इतिहास एक पद्धति का दूसरे विवक्षित पद्धति और दूसरे का तीसरे अधिक विवक्षित पद्धति द्वारा नियम-नियन्त्रित स्थान ग्रहण करने का इतिहास है। इस संदर्भ में ही सामाजिक-विकास का वैज्ञानिक अध्ययन किया गया है।

इतिहास में उत्पादन का पाँच प्रवृत्तियाँ रही हैं-
 आदिम सामुदायिक, दास-प्रथा, सामंतीवाद, पूँजीवाद और समाजवाद।

आदिम समाज में सामाजिक उत्पादन में कोई समुदाय के सभी सदस्यों का स्थान एक-सा था ; वे मिलजुलकर अपने जीवन-निर्वाह के लिए आवश्यक साधन तैयार करते थे, एक-दूसरे की सहायता और महारा देते थे और उत्पादित भौतिक सम्पदा का मिलजुलकर उपयोग करते थे। १८४० १८४५ ईसवी के इतिहास था कि उत्पादन सामान समाज के सभी सदस्यों को

सम्पत्ति है। उत्पादन शक्तियों के अत्यल्प विकास ने सामाजिक स्वातंत्र्य की जन्म दिया। इस अवस्था में शोषण को नहीं था। काम करने वाला अपने जीवन-निर्वाह के लिए आवश्यक मात्रा से अधिक उत्पादन नहीं कर पाता था। गाँव समुदाय में अधिक सखीम के सम्पर्कों का बोलबाला था। उत्पादन सम्पत्त्य उत्पादक शक्तियों के विकास-स्तर के अनुकूल है।

घोरे-घोरे उत्पादन की प्रगति ने इन सम्पर्कों के प्रास को अपरिहार्य बनाया। अधिक उन्नत औजारों के प्रयोग ने उत्पादित मालों की मात्रा में बहुत बड़ा दिया। उनके उत्पादन के लिए सारे समुदाय का मिल-जुलकर काम करना आवश्यक न रहा—कल-कल परिवार में अब उन्हें पैदा कर सकते थे। इनके साथ ही उत्पादन साधनों का स्वाधित्व और उतने साथ ही जायिक असमानता की उत्पत्ति हुई। असमानता का मुख्य कारण यह था कि गाँव और समुदायों के मुखिया समूह बनाने के लिए अपनी स्थिति को हस्तान्तर करने लगे थे। जो कम के साधनों को अधिकतम बसाकर अपने जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक मात्रा से अधिक मालों का उत्पादन करने लगा। मान्य धारा मानव का शोषण शुरू हुआ, धन-काम निर्धन है, विजयो विजितों की दास बनाने लगी। जादिय अवस्था का स्थान दास-अवस्था ने लिया।

दास-अवस्था में उत्पादन साधन दास-स्वाधित्वों का सम्पत्ति बने। वे ही आभागी (दासों) के माँ स्वाम है, जिसका पना "नीलती कम के औजारों" के अधिक न था। दास-अवस्था के प्रारम्भ में उत्पादन-संघर्ष उत्पादक शक्तियों के विकास-स्तर के अनुकूल है। स्वाधित्वों

के अत्याधिक हीनता के कारण पास निरंतर दास बने रहते और स्वामी-
वर्ग उनके कम-हीनता के अपना स्थिति मजबूत बनाता गया । उसी से
उत्पादन का विकास हुआ । अब शारीरिक कम और शैक्षिक कम में
स्पष्टतः अंतर हो गया ।

उत्पादन शक्तियाँ उत्पन्न विविध होती रहें, जैसी
के तराई में सुधार जाया, धातुओं और धातु के औजारों में उत्पादन
में बड़ी-बड़ी सफलताएं पायी गयीं और कारानगीरों को कुशलता बढ़ी ।
दास-गृहपदमक उत्पादन सम्बन्ध उत्पादक शक्तियों के विकास में उत्पन्न
बाधा बनी गयी । दास की अपने काम में रुचि नहीं होती, वह जोड़े
लाने के बाद ही काम करता । इसलिये उसका कम कार्यक्षम उत्पादन है ।
दास-गृहपदम और-और पैसाताता बन गयी और उसका सम्बन्ध सामंती
सम्बन्ध लेती लगी ।

सामंती समाज में उत्पादन के मुख्य साधन सामंती भूमि-
पतियों के अधिकार में होती हैं। किसानों के पास अपना कहने के लिए कुछ
झोटा-पीटा कार्य हा होता है, जिसको मजदूरी के रेट जीतती हैं और
मजदूरी पाती हैं । इस बात से ताम उठ कर कि किसान के पास अपना
काम नहीं है, आंदार उसे पूजा बनाता है और अपने लिए कम करने की
उसे बाध्य करता है। वह उसे काम का झोटा-सा टुकड़ा देता है, किन्तु
बदले में फायदा का एक हिस्सा देने और उसका काम जीतने की विवश
करता है ।

कारण में ही नये उत्पादन सम्बन्ध उत्पादक शक्तियों के
स्तर के बहुत होती हैं, और उनके निरंतर विकास को प्रकृति को रु
करते हैं । पूजा की अपने कम के परिणामों में रुचि होता है, पैसा-

कार का एक हिस्सा उसे भी मिलता है। इसलिए वह अधिक परिश्रम से कार्य करता है और हम के बीजारों का कारगर जंग से प्रयोग करता है।

चूंकि विकास एक प्रक्रिया है, अतः साम्यवाद के गर्भ में नवी उत्पादन तकनीकों का जन्म होता है। कार बढ़ते हैं और उत्तम वायु शिल्पकों का भी विकास होता है। हम का विमानन महान बनता है, विमान्य का प्रसार होता है और क्रमशः राष्ट्रीय मंडियों का आविर्भाव होता है। मातृ विधेय सम्बन्ध साम्यवादी-व्यवस्था को अंदर से तोड़ना शुरू करते हैं। हम बीच विकास आगे बढ़ता जाता है। मनुष्यों का आविर्भाव होता है। वह दस्तावेज-कारों का स्थान लेता है। मशीनें प्रबल होती हैं और कारखाने और फ़ैक्टरियां स्थापित होने लगती हैं।

नवीन तकनीक पूंजीवादी पराधीनता के मुक्त और जोड़ाया मुश्किल कामगारों को आवश्यकता पेश करता है। साम्यवाद व्यवस्था सामाजिक प्रगति में बाधक बनती है और अंततः पूंजीवाद - व्यवस्था उसका स्थान ले लेता है।

पूंजीवाद के अंतर्गत उत्पादन-साधन पूंजीपतियों के हाथों में सकेन्द्रित होते हैं। उत्पादनकर्ता कामगार के पास उत्पादन साधन नहीं होते, इसलिए वह अपनी श्रम-शक्ति पूंजीपति को बेचने के लिए बाध्य होता है।

पूंजीवादी उत्पादन प्रगति तथा हमारे अविच्छेद-पूंजीपति वर्ग को ऐतिहासिक भूमिका भी उत्पादन के किसी एक कोटे का धर्म का

पकेन्द्रण और सम्बन्धों तथा उ का उत्पादन के महत्त्वपूर्ण साधनों में स्वतन्त्रता । पहले, करों और धन का स्थान गतार्थ मूल्य, संशोधित करों और वाष्प-धन में ले लिया । संसुर्गों और हानियों पर धर्म के संयुक्त प्रेम को प्रेरणा करने वाला बड़े को-ऑपरेटिवों में लीटो-हीटो सम्बन्धों का स्थान ले लिया । उत्पादन में अब बिली टुए, जंग-धन्य कार्य जहाँ बलि के सामाजिक कार्य सम्मिलित थे और उत्पाद अलग-अलग व्यक्तियों के उत्पादन न रहकर सामाजिक उत्पाद बन गये । सामंतिवादो व्यवस्था के जंगलों जहाँ किसान खुद सब पैदा करता था और सब हथका विक्री करता था तथा हथके हुए, कपड़ा और परिधान तैयार किया करता था, वहाँ अब उसका उत्पादित सब पूँजीपति की शक्ति में जाने लगा, जहाँ सभी बुनियादी कार्य-निर्माण, भूतल-मुनाई, लकड़ों तथा कपड़ा बनाने आदि का काम-मशीनों द्वारा होने लगा ।

पूँजीपति ने इतिहास में उत्पादन पद्धति के माध्यम से विकृत विकास किया । देशों की रहरों के अभाव किया । उनमें बड़े-बड़े हथकाये और देशों को एक बहुत बड़ा सम्बन्धों की रहरों में लाकर उसे रक्त किया और उससे जड़ता सीढ़ी । जिस तरह पूँजीपति वर्ग ने देशों की रहरों का अधिक बना दिया है, उसी तरह उनमें बड़े और जड़े बड़े देशों की सम्य देशों का, दुर्लभ राष्ट्रों को पूँजीवादो राष्ट्रों का, पूरे को परिचय का अधिक बना दिया है ।

पूँजीपति-वर्ग को सब देन देर भी रहो कि उनमें अत्यन्त मायुष्य और परस्परित-सम्बन्धों की कृ ही लीद डालता, उनमें सम्पूर्ण सामाजिक दुर्घा घटता गया और सामंति-सम्बन्धों का हत्या हो गयी ।

मांस के लम्बूनों में पूंजापति का है, जहाँ पर भी उसका पतझड़ा पारा हुआ, वहाँ सभी सामन्तों, पितृव्यारम्भ और मातृव्यारम्भ सामन्तों का अंत हो गया। उसने मनुष्य को अपने स्वाभाविक बुरों के साथ साथ रहने वाले माना प्रकार के उपायों सामन्तों की निम्नता में लौट डाला, और कम स्वार्थ है, मेकद जैसे कीड़ों के हृदय-हृत्त जगत्त के सिवा मनुष्यों के सब और बड़े दूसरा सामन्त काका नहीं रहने दिया। पारिके पट्टा के स्वयंविष आत्मन्दातिरिक्त को, बोरौकि उत्साह और दूरा मंजुता-पूर्ण मावुता की उसने जाना-प्राप्त के स्वाधीन हिमा-किता के बकाते पानों में दुकी दिया है। मनुष्य के वैयक्तिक मूल्य को उसने विनिका मूल्य बना दिया है, और पक्षी के अनगिन्त अनपहरणाय अविहार-अकार प्रदत्त स्वातंत्र्य का जगह अब उसने उस एक अंतःकरण शुन्य स्वातंत्र्य का स्थापना का है जिसे मुक्त व्यापार कहते हैं। संदीप में, पारिके और राज-नातिक प्रमजाल के पाई द्विने लीलाणा के स्थान पर उसने नग्न, मिश्रण, प्रत्यक्ष और पारिवि लीलाणा का स्थापना का है। जिन पैरों के सामन्तों में अब तक लोगों के मन में बाध और बहा का भावना था, उस सबका प्रमा-मण्डल पूंजापति-मन ने हान लिया। डक्टर, बकात, मूर्खित, कवि और वैज्ञानिक, सभी को उसने अपना उरता बना दिया है।

पूंजापति-मन समाज के हितों का चिन्ता जिये बिना अपने स्वार्थों की पूर्ति में लगा रहता है। फलतः अध्यापन तथा निमेष लीट के कारण उत्पादन क्षीण होता जाता है। पूंजापति अपना पुताफा बढ़ाने के लिए बैतन पटाने, काम के अधिक घंटों को बकाते रहने और अपने

मजदूरों के काम करने तथा जीवन-निर्वाह का विचारपूर्वक हो हीनताय
 बताते हुए रूप लम्बे करने का जोशिली करता है। इस कारण देशतकालों को
 ज्ञान-दायता का जैसा मात के उत्पादन का बुद्धि ज्यादा तेजा से होता है
 और उसके फलस्वरूप उत्पुष्टपादन, मात को बहुतायत, जाधिक संकट और
 उत्पादन में गिरावट पैदा हो जाता है। कारखानों की बंद कर दिया जाता
 है और बहुत बड़े संख्या में मजदूरों को बंटना कर दो जाता है। हमारे पूँजी-
 वाली बर्गज्जातो का महम अंतर्विरोध-उत्पादन के सामाजिक चरित्र और
 स्वाभिव्य के पूँजीवादो-स्वयं का अंतर्विरोध सामने आता है। यह पूँजी-
 वाद का बुनियादी अंतर्विरोध और समाजवादो क्रांति का वस्तुगत आधार
 है। और जिस हथियारों से पूँजीपति-वर्ग ने सामन्तवाद को मार गिराया
 था, वे ही अब पूँजीपति-वर्ग के खिलाफ मोड़ लिये जाते हैं। इसी जागे
 माका उस वर्ग के बारे में भा स्पष्ट हैं, जो पूँजीपति-वर्ग को मार कर समाज-
 वाद को स्थापना करेगा। उनका कहना है कि पूँजीपति-वर्ग ने ही
 हथियारों की छ मही गढ़ा है जो उसका अंत कर देगी, बल्कि उसने ही
 आदमियों की मो पैदा किया है जो इन हथियारों का हस्तीगत करेंगे -
 आधुनिक मजदूर-वर्ग - सर्वहारा-वर्ग।⁴ एवं पूँजीपति वर्ग सामोरे अपना
 कड़ लोदन पैदा करेगा है। उसका पतन और सर्वहारा-वर्ग का विजय
 दोनों समान रूप से अनिवार्य हैं।⁵

पूँजीवादी-व्यवस्था के विभिन्न अंतर्विरोधों के विरोध में
 सर्वहारा - वर्ग एकजुट होता है और वह इस अमान्यताय व्यवस्था को हल-
 पूरे उसने की वृत्त-संस्कृत होता है। इससे लिए सर्वप्रथम वह अपने कार्य के लोगों
 को एक करता है और इस जीभवादी व्यवस्था को समाप्त करने के लिए
 उन्हें प्रेरित करता है। देशतकाल कारों में सर्वहारा नयी अधिक संकेत हो नहीं

तक़्तें संगठित कीं जाँ हैं। पञ्चद्वय कस-कारखानों में काम करते हैं, जहाँ स्कॉच जम-मुहैया उन्हीं संयुक्त प्रयामों पर निर्भर होती है, जहाँ हर चीज़ ज़ाने से न साधों का सारा अनुभव करने का ज़ादा बनता है और ज़ाने की ज़ाने हो की मेहनतकारों का क़िस्मत-सेना का ज़ाने अनुभव करता है। क़ुल्लालों में मान लेने के अनुसार वे सर्वहारा की विश्वास ही जाता है कि एकजुटता और संगठित लड़कालियाँ करने की शक्ति क़ामों से उन्हीं के विश्वास संघर्षों में उससे कारगर संधिगत हैं।

समाजवाद-क्रांति सभी ग़लत सामाजिक क़्रांति है, जिसका लक्ष्य उत्पादन साधनों पर निजी स्वामित्व और मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का अंत करना है। जब सर्वहारा समाजवादो क़्रांति करता है, तो वह ज़ाना मेहनतकारों और सारे समाज के हितों में मुक्ति का संदेश लाता है।

समाजवाद-समाज में अस्त उत्पादन के साधनों पर व्यक्ति का अधिकार समाप्त हो सर्वोच्च समाज का अधिकार लागू होता है। निजी स्वामित्व का उन्मूलन समाजवादो समाज की पक्षी स्त है।

समाजवाद एक ऐसा व्यवस्था है, जिसका आधार उत्पादन-साधनों पर सामाजिक स्वामित्व है। समाजवाद में यह आवश्यक है कि शोषण से मुक्त लोगों के बीच सहयोग के सम्बन्ध, सारे समाज के हित में ग़ौज़नामक ज़ाधिक तथा सामाजिक विकास, सामाजिक उत्पादों का काम के अनुसार वितरण, पञ्चद्वय-वर्ग के भेदत्व में समाज की राजनीतिक तथा भौतिक एकता का सुदृढ़ीकरण, राज्य का मेहनतकारों को सारा के साधन में

परिवर्तण, समाजवादी जनवाद का विकास और व्यक्ति के पतन तथा सर्वोच्च मुक्त विकास के लिए अनुकूलतम परिस्थिति का निर्माण हो।

सामाजिक विकास की ऐतिहासिक प्रक्रिया की जानकारी समझ लेने के बाद अब हम भारतीय सामंतवाद का उद्भव और उसका विकास एवं पूर्वावाद के इतिहास विकास पर बर्त करेगे। भारतीय सामंतवाद यूरोपीय सामंतवाद से भिन्न था। यूरोप में सामंत भूमि का स्वामी होता था, लेकिन भारत में ऐसा नहीं था। ब्रिटिश-पूर्व भारत में ऐसा कोई जातिजात वर्ग नहीं था, जिसका भूमि पर अधिकार हो। न जिसका राजा ने ही प्रत्यक्ष हो किया, किसी कि जमादारों के पास कोई अनुवादक-वर्ग उत्पन्न होता। लगभग बहुत करने वाला तख्तदार सामंत नहीं होता था। गाँव को भूमि राजा का सम्पत्ति न होकर गाँव-वृ. समुदाय का सम्पत्ति होता था। राजा तख्त के किसी निर्धारित क्षेत्र का ही अधिकार होता था। लेकिन अंग्रेजों के आने पर इस व्यवस्था में बड़ा परिवर्तन हुआ। नई लगान व्यवस्था लागू की गई, जिसने गाँव का समूह पर लोगों को जमावे से आता जा रही भिन्नभिनत तत्त्व पर उसका जगह भूस्वामित्व के रूप में वही जमा दिया। देश के कुछ भागों में जमादारों और अन्य भागों में किसान को बिना भिन्नभिनत। पहले 1793 ई० में ब्रामहमिस में कोसल, बिहार और उड़ीसा में जमान के स्थायी बंदीकरण के अखिरे भारत में जमादारों का सुजन किया। अंग्रेज-शासन के राजनयिक स्वाधिकारियों ने इन प्रांतों में जिन तख्तदारों को समूह के बाजार पर भूमि-रू. का बहुत का अधिकार किया था, उनमें में ही जमादारों के इस नये वर्ग को सृष्टि हुई। पहले के जितने ही तख्तदार थे

वे रणायो बंद विस्त में जमांदार हो गये । बंदीवस्त का जहाँ के अनुसार
जब उन्हें हस्टे हडिया कमाना को सरकार की निरिक्त रूप देना होना
था । १११

म. रणाय कृषि-व्यवस्था पर जेजों का यह पक्षी बगारी
बोट था । इसके कारण थे, जिन्हें लिए जेजों की यह बहुत बड़ा बदन
उठाना पड़ा । पक्षी तो यह कि, भारतय व्यापक कृषि व्यवस्था का
कृषि व्यवस्था ने फलतः फलित हो और यह बात जेजों का उपनिवेशवाद-
मनीषि के प्रकृत था । बहरा यह कि छोटे-छोटे किसानों से लान कला
काने में जेजों का जो बदन और पन बदन होता, उसका बदन है, यह और
म. वापसक था । तीसरे, जेजों की जमांदारों के रूप में एक ऐसा गुनाह-
बन मिल गया, जो जेजों राज्य का रक्षा और उनके सामाजिक-राजनीतिक
अनितक को बसाये जाने के लिए प्रतिक्रिया था क्योंकि उसका जमांदार जेजों
का कृपा पर थे, न कि उसका नीचता पर ।

जब जमाने काय वस्तु हो गई जिसे गिरवा रखा था सज्जता
था और उसका ज्ञ-विज्ञ मा हो सकता था । ११२ यह तरह जेजों को भारत
विजय ने देश में एक कृषि क्रांति हुई । जमाने को निज भित्तिगत को प्रया
हूँ का जेजों ने कृषि के पूंजीवाद विस्तार को वापसक हस्तों का सुष्टि
का । वाणिज्यिक एवं अन्य को वाणिज्य तत्त्वों ने गांधी की स्वकांति
कारमनिर्भरता को बड़े लिला दां । भारत को प्राग्-पूँजीवाद सामंती बंध-
तंत्र के पूँजीवादो रूपान्तरण के कारणों में मुक्ति-पथकों का परवर्तन
वर्षी प्रमुख है। भारतय सभाज के इस नीति रूपान्तरण ने समाजिक,
राजनीतिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक ११३ स्तर पर म. बसा प्रभाव
उठाता ।

ब्रिटिश -पूर्व भारत में उत्पादन का उद्देश्य नाब के आवश्यकताओं को पूरा करना होता था, लेकिन ब्रिटिशकालीन भारत में यातायात के साधनों में वृद्धि और पूँजी के व्यापक प्रभाव के कारण किसान के लिए बाजार का सुविधा उपलब्ध हुई और यह जब बाजार का दृष्टि से मात-उत्पादन करने लगा । इसलिए कर्नाटकों का व्यापार में बंध रह ही फसल उगाई जाने लगी ।

औरों ने कृषि-भूमि पर ही सामूहिक-स्वतंत्रता समाप्त किया हो , साथ ही सभी प्रकार के भूमि और वनाह के मुक्त और निःशुल्क उपयोग पर भी पाबन्दी लगा दी । इस भूमि पर भी सारी नाब का अधिकार था । इसने न केवल किसानों को सड़ों और पशु-चराने का काम बन्द कर दिया। संपूर्ण नाब के तीन चौथाई से सड़ों से जाती और उनके पशु इस भूमि में चरें, जिससे सामूहिकता को भावना का पीछा होता । किन्तु औरों द्वारा इस पर पाबन्दी लगा देने से यह भूमि या तो व्यभिचार की गद्दी बन गई । परिणामतः ग्रामीण-समुदाय के सामूहिक स्वार्थ और जातिके सहयोग पर आधारित पारस्परिक सम्बन्ध-युक्त विनष्ट हो गये । इन जातिके कार्यो का सम्पादन नाब-समुदाय करता था, वे इस कानून से केन्द्रिय सरकार के हाथ चले गये । इससे सामुदायिक जीवन और पारस्परिक सहयोग पर आधारित स्वायत्त-शासी नाब समाप्त हो गयी । जिसका सम्पत्ति और बाजार ने भी पूरा ना बर्धनवस्था पर टिके सहयोगी सम्बन्धों के क्षेत्र में डोले कर दिये और क्षेत्र : उन्हें समाप्त कर ही डाला ।

नाब में व्यापाराकरण को प्रक्रिया तब ही शुरू हुई । प्राक्-ब्रिटिश भारत के पूरे पूरे पारस्परिक सहयोग और सामूहिकता का स्थान

व्यक्तिगत स्वार्थों से ही किया और तीनों से राजनीतिक उन्नत-युवा
 ही जल्दी गांव में फैलावा का लक्ष्य दोड़ो, जिसके कारण गांव में व्याप्त
 सर्वोत्ति सभापत हो गया । एकात्म इस क्रांतिकारी परिवर्तन ने ग्रामीण-
 पाक की माकफीर डाला । सम्पूर्ण गांव का सामुहिकता जल-व्यस्त
 ही गह । इस परिवर्तन से हालांकि पुराने विचारों के लोगों की दुष्ट मी
 ही, " किन्तु जात्म निर्मा गांव और उनके लोगों के सहयोगी जीवन का
 विनाश ऐतिहासिक तौर पर भारतीय जन के जाधिके, सामाजिक और
 राजनीतिक एकाकरण के लिए आवश्यक था । यह इतिहास सिद्ध है कि
 प्रगति ऐतिहासिक दृष्टिकोणों के भेदिकेतर एक किया-कलाप से जाता है । यह
 महं भूलावा चाहिए कि गांव सामाजिक निष्क्रियता और कीदिक अज्ञान के
 दुर्ग थे, और यहाँ तक एक हा प्रकार के अस्तित्व की प्रतिपादित करती रहे ।
 हमने कलौ भारत के एकाकरण के रास्ते में रुकावटें जाती रहाँ उ ने अज्ञान
 पर हमें जाँचू बहाने के भारत महं । ^{१५५}

भारतीय उपनिवेशों से पाली इतना उन्नत था कि उनको पाक
 धारें यूरोप में थे । उनका माल का निर्यात बल निर्यात का एक निर्यात
 एक लोधाव था । वेन ने अपना पुस्तक " हिस्ट्री आफ़ दी वाटम मेन्चुफ़ीकचर "
 में लिखा है कि " १७५० ई० तक सुता कपड़े बनाने के लिए जी म्हामें इस्तेमाल
 का जाता था, वे लगभग उतना ही साधारण था जितना भारत " इस्तेमाल
 का जाने वाली म्हामें । (पृ० ११५) ^{१५६} लेकिन ज़ोर्ज ने इन भारतीय
 उपनिषों पर पाबन्दो लगा दी, जिसे कि इनको रिगति निरंतर अिद्धता
 गह । कंफो भारत की गह इन कारवेडियों का एक मात्र " उद्देश्य ही यह
 था कि प्रतिक्रिया व्यापारियों की रास्ती से हटाकर भारतीय मंडा पर
 एकदम राज्य स्थापित कर दिया जाय । फलस्वरूप भारतीय इस्तित्व की

ब्रिटिशों के लिए देशों का जार प्रायः नष्ट हो गया। यह भी ज्ञात है कि १८१३ तक इंग्लैण्ड में वहाँ के औद्योगिक वर्ग राजनीतिक तौर पर समर्थ हो चुके थे। १८१३ के बाद में इस्ट इंडिया कम्पनी के स्वायत्तता की समाप्ति पर भारत की औद्योगिकी के निर्माण का जार के लिए प्रेरित हो गया। ये नये औद्योगिक शक्ति-संस्थाएँ जो में जाते वाले पुराने औद्योगिकी से भिन्न थे। ये नये औद्योगिक भारत में निर्मित सामान सरोदनी नहीं, बल्कि इंग्लैण्ड की शक्ति में बने सामान बेचने और इन मिलों के लिए कच्चा माल ले जाने जाये थे। इस्ट इंडिया कम्पनी अब मुख्यतः इंग्लैण्ड के औद्योगिक वर्गों के राजनीतिक स्वार्थों को अनुसरण थी। १८१४ के बाद औद्योगिकी के लिए आवश्यक कच्चा माल का आयात-निर्गत हो इनकी मोतियों का भूत उद्देश्य रहा।^{१५}

भारतीय मछियों पर एकत्र राज्य स्थापित करने के लिए यह आवश्यक था कि वहाँ के हस्तशिल्पों को विनष्ट किया जाये। कानून के १७९३ के ऐक्ट की कानून बनाये गये, जिससे हस्तशिल्प के^{१६} कारोबारों को विनष्ट और उनके कार्य पर घातक प्रभाव पड़ा। कुतार्थों के हजारों परिवारों में अपना पैसा खोना शुरू किया। बौल्ड्विन ने कहा है, कुतार्थों के साथ जो वे भी अधिक परिवारों में कानूनबाही के उद-गिर के हस्तार्थों में दमनात्मक कारोबारों के कारण अपना पैसा खोना शुरू किया।^{१७}

अपना व्यापार बढ़ाने के लिए ब्रिटेन ने जो प्रणाली अपनायी, उनका अंत बहुत दुःख रहा। १८३४-३५ में नवंबर जारस ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि "उनका दुःख-दर्द व्यापार के समूचे इतिहास में अत्यन्त ही है।"

ब्रिटिश हुनगरी को अस्तिथि से भारत को भरती करीब ही गये है। - १७
 भारतीय "ग्राम व्यवस्था का निर्माण" कृषि और उद्योग सम्बन्ध
 व्यक्तियों को प्रोत्साहित करने के लिए किया गया। "कृषि और उद्योग" नाम
 भारतीय समाज का पुराना है। लेकिन "अंगरेज प्रोत्साहनों" ने भारत के कृषि
 की तरफ ध्यान और धन की नष्ट कर दिया। "उस प्रकार ब्रिटेन ने" एक
 महानतम और यदि सच-सच कहें तो ऐसी सामाजिक क्रांति कर डाला जो
 इस्लाम में पकी रूप में नहीं सुनी गयी है। उस क्रांति ने न केवल पुराने
 बीबीनिक कार्यों की नष्ट कर डाला और उन कार्यों में रहने वाले लोगों की
 गांवों में लौट कर आने के लिए गांवों के आर्थिक जीवन का संतुलन में बिगाड़
 दिया। यही है जो "मोक्ष" दवाब से हुआ भी आज तक निरंतर
 बढ़ता जा रहा है। उसके साथ ही अत्यन्त गैर-समाज के साथ किसानों से अधिक
 से अधिक कर कसता गया और सबसे में उनका क्षेत्र में आवश्यक विस्तार के
 लिए उन्हें कुछ भी नहीं दिया गया जिससे कृषि के क्षेत्र में विकास एक
 गया। (१८५०-५१ में लगान के रूप में कसते गये १९,२००,००० पाउंड में से
 १९६,२१० पाउंड या कुल हस्त का मात्र ०.८ प्रतिशत हिस्सा तरब के सामा-
 जिक निर्माण कार्य पर व्यय किया गया।

ब्रिटिश उद्योग निर्माण भारतीय हुनगरी की रक्त-सिक्त
 पूंजी के आधार पर हुआ। जोर्ज ने भारतीय उद्योग की नष्ट करने के लिए,
 जो कुछ किया, वह एक इस्तेमाल सरकार ही कर सकता है। ब्रिटेन जाने वाली
 सुनी परधर्मी पर सरकार ने निर्माण कर लगा दिये जिससे भारतीय मानव रूप से
 रूप मात्रा में पहुँचे। "प्रधानों" ने यह बतलाया गया था (१८९३) कि
 उस अवधि तक भारत में बने सुनी और रेशमी उद्योगों की अंग्रेज में की उद्योगों

को तुलना में ५० प्रतिशत से ६० प्रतिशत कम कीमत पर ब्रिटिश बाजार में बेचकर मुनाफा कमाया जा सकता था। फलस्वरूप यह जगह ही गया था कि इंग्लैण्ड में बने कपड़ों की उन्नी धूल्य पर ७० और ८० प्रतिशत शुल्क या सुनिश्चित निजीय लाकर कमाया जाये। यदि ऐसा न हो होता, यदि ऐसी निजीयारमक शुल्कों और सरकारों बादेरों का अस्तित्व नहीं होता तो ऐसी और मानवैटर के कारखाने हुए हैं तो ठण्डा हो जाते और आपकी दक्षिण से भी हायद हो दुबारा बाबू हो पाते। हमका निर्माण भारतीय निमाताओं के बलिदान से हुआ। (एकरकापितन : हिस्ट्री ऑफ़ ब्रिटिश इंडिया, खंड-१, पृष्ठ ४८५)।

इस प्रकार भारतीय मंडियों में ब्रिटिश निमाताओं का प्रभुत्व कायम करने और भारतीय कारखाना उद्योग को नष्ट करने में प्रधान उद्योग की तकनीकी ज्ञेयता और कुशलता का हो साथ नहीं, बल्कि सच्ची महत्त्वपूर्ण है, ब्रिटिश सरकार द्वारा एक लाख ब्रिटीश नये निजीयारमक शुल्क और एकरकापितन सरकारों बादेरों। सरकार ने ब्रिटिश सामान को भारत में एकदम निःशुल्क या लगभग निःशुल्क प्रवेश की आज्ञा दी, साथ ही भारतीय माल की ब्रिटिश के बाजार में ले जाने पर सीमा-शुल्क लगाया तथा नौ संवाहन क्रमों या नौ नौवारीयन स्वयं के जरिये युरोपीय देशों या अन्य देशों के साथ भारत के व्यापार पर नौ रोक लगा कर ब्रिटिश सरकार ने भारतीय मंडी को तहस-नहस करने में पूरी जोर-शोर बांधे न रखा। इतने परिणामस्वरूप १८१४ और १८३५ के बीच इंग्लैण्ड में बने सूती कपड़े का भारत में सफा १० लाख गज से कुछ कम से बढ़कर ५ करोड़ १० लाख गज से भी अधिक हो गई। इसी अवधि में ब्रिटिश के बाजार में जाने वाले भारतीय

सूता कपड़े के कटघोसों का संख्या साढ़े बारह लाख से घटकर २ लाख ६ हजार हो गई और १८४४ तक तो यह संख्या मध्य ६३,००० तक रह गई। निर्यात की गई भारतीय सूता कपड़े का मूल्य १२ लाख पाँचहत्त से घटकर १ लाख पाँचहत्त हो गया अर्थात् सत्रह वर्षों में व्यापार में १२।१२ का नुकसान हुआ। इस अवधि में ब्रिटेन से भारत में जाये सूता कपड़े का मूल्य २६,००० पाँच से बढ़कर ४००,००० पाँचहत्त हो गया अर्थात् १७ गुना वृद्धि हुई। १८५० तक स्थिति ऐसा हो गयी कि भारत की कच्ची वस्त्रों से सम्पूना दुनिया की अपना कपड़ा पैदाता बन रहा था यह निर्यात की जाने वाला कुल ब्रिटिश सूता कपड़े का एक चौथाई हिस्सा अपने यहाँ फँसने लगा।^{२०}

ब्रिटेन ने एक और तीक्ष्ण शस्त्र कपड़ों को विपुल मात्रा में भारतीय बाजार में भारभार से भारतीय दुकानों की समाप्त किया और दूसरे और क्लोन के की मूल में भारत के सूत काती वालों की उन्माद दिया। १८१८ से १८३८ के बीच भारत में इंग्लैण्ड के बने सूत का निर्यात ५२०० गुना हो गया^{२१}। यही हाल रेशमी कपड़ों, ऊनी कपड़ों, लोहे, बत्तन, काँच और कागज के मामले में भी हुआ। इनकी भी अच्छी प्रकार से बरबादी हुई।

हमारे देश के इस व्यापक विनाश ने अर्थ-व्यवस्था की गुरी तरह मात कर दिया। इसी विनाश के पाठ पर सवार होकर ब्रिटेन ने जापानिक युद्ध में जायाँ, लेकिन भारत में यह सब नहीं हुआ। भारत को भारी सम्पत्ति खोकर ब्रिटेन बला गयी। भारत को यह स्पष्ट विश्व-इतिहास में एक अमूल्य घटना है। ऐसा कहा देश में कभी नहीं हुआ कि एक विकसित देश का सारा उद्योग और उत्पाद-शक्ति की समाप्त कर अपनी देश को

तकनीक ब्राह्मणों ही और उन देशों की संपूर्ण विकसित वस्तुओं की तहस-नहस कर डाला है। "संभवतः जब ही दुनिया के सुखात हुए हैं किन्हीं कूँबा जिनमें मैं इतना कवरदस्त मुनाफा कमा नहीं हुआ जितना मुनाफा भारत की सुट में इंग्लैण्ड की हुआ।

इस सुट के कारण भारत की वित्तना धानि हुई, इस पर संभवतः और भी कमा लीया हो नहीं। यहाँ सभा औपनिवेशिक नगर, जिनमें कभी बाबादों निवास करता था, उमड़ गयी। "पुराने और पना बाबादों वाली औपनिवेशिक नगर डाला, मुस्लिमबाद जिसे अलाहद में १७५० में "लंदन जितना हो विस्तृत, उतनी हो अधिक बाबादों वाला और उतना हो समृद्ध बना था), मृत बादि "स्ट्रेन को कृपा से देखी ह देखी से उकाड़ ही गयी कि मौज्जातम युद्ध होने पर या विदेशी विजेताओं के हिकार लीने पर भी उनको कैसा करा नहीं होता। सर बाल्ड्विन डेविलन ने १८४० में संसदीय जांच की बताया कि "डाला शहर की बाबादों १५०,००० से ऊपर ३०,००० या ४०,००० हो गई और एक जमाने में भारत का मेनबेस्टर समझा जाने वाला यह शहर अब ऐसा ही जाल बनता जा रहा है और मीरिया का हिकार की रहा है। अत्यन्त समृद्ध नगर से ऊपर इसकी स्थिति अब अत्यन्त गरीब और लीटे नगर की हो गई है। निस्संदेह उसका परावर कृति हुई है। "३३ १८९० में सर हेनरी काटन ने लिखा- "बाज से ली ली भी कम वर्ग पहले डाला का मुल जायार अनुमानतः १ करोड़ रुपये का था और यहाँ की बाबादों २००,००० था। १८८७ में ३० लाख रुपये मूल्य की डाला की मसफा इंग्लैण्ड भेजी गयी, १९१७ में यह बरफुल बंद हो गया। अंत्य और औपनिवेशिक बाबादों की रोजगार देने वाली मसफा और दुनाहों को असा अब मुम्त

ही मजोरी परिवार पहले समुद्र के ऊपर जब कमरू और सहरों की लड़ना पड़ा है और मजोरी में जाकर अपनी जीविका का कोई प्रबन्ध करना पड़ा है।— पहले तो यह स्थिति हुआ कि जो वहाँ बल्लि सभी जिलों में है। ऐसा नहीं था वहाँ मजोरी कातता जब कमरू और जिलों के अधिकारों इस बात के और सरकार का ध्यान न बाधित करते हैं कि देश के समस्त हिस्सों में उद्योग-धंधों की रोज-रोटी कमाने वाला वर्ग कौनसा होता जाता था रहा है। ^{२४}

इससे भारतीय-मजदूर मुक्त करने लगा और ज़ोरों से जाने माल से भारतीय फंडों की पाट भर रहा था। भारत का कच्चा-माल एंग्लैण्ड पहुँचा रहा और वहाँ का थियर माल भारत जाता रहा। यदि ज़ोरों की तुलना वहाँ तक लाते रह जाते, तब भी कुछ ठीक था, किन्तु उन्होंने भारतीय जनता की मुक्त मारने का एक और ठोस बात कहा, वह यह कि वहाँ से लाया माल बाहर भेजा गया। "उस भारत से अधिक से अधिक माल बाहर भेजा जाने लगा जहाँ लोग खुद मूल से ग्रस्त थे। १८४९ में ८ लाख २५ हजार पाउण्ड का कोमत का अनाज बाहर भेजा गया था। १८५६ तक ३८ लाख पाउण्ड का कोमत का अनाज बाहर भेजा जा चुका और १८७७ में ५५ लाख ७९ लाख पाउण्ड, १९०१ में ९४ लाख पाउण्ड और १९१४ में १ करोड़ ९३ लाख पाउण्ड हो गया अर्थात् इसमें २२ गुना वृद्धि हुई।" ^{२५} यहाँ यह ध्यान दे, कि समय जब ज़ोर भारत का लाया माल बाहर भेज रहे थे, तब भारत में निरंतर अनाज पड़ रहे थे। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में तो २४ बार अनाज पड़ा। इससे मरनेवालों की संख्या १८४७-७१ तक पचास लाख और १८७५-१९०१ तक एक करोड़ पचास लाख ^{२६} है। ज़ोरों के द्वारा और अत्यावृणों कार्य-स्तापों के कारण भारतीय जनता अनाज में निरंतर मरती रह, क्योंकि उनके पास

बुद्धि है ज्ञाता और कोई साधन नहीं है, यदि वही उपाग मा लीते, तो मने वालों को संख्या में कुछ कमो अवश्य आती । परन्तु, कौन भारत में हल पाने जाये है, न कि भारतीयों की पानो पिलाकर बिंदा हामी ।

१८५३ में ब्रिटिश सांसदों ने भारत में रेल का निर्माण आरंभ किया । इसका प्रमाण उपर्युक्त भारत के कच्ची माल की जंगल के हिस्सों में बंदरगाहों तक पहुंचाता और ब्रिटेन से जाये तैयार माल की बंदरगाहों से देश के जंगल के हिस्सों में ले जाता था । भारत के गवर्नर जनरल (१८५८-५९) लार्ड क्लाइव्स ने रेल पथ के निर्माण की आवश्यकता के बारे में लिखा है- "उनके बन्ने से भारत की जो एक आर्थिक और सामाजिक लाभ हानि, जल्द अनुमान कमो नहं लगाया जा सकता । --- इंग्लैण्ड का पूरजोर जाहू-वान कर रहा है जिसे भारत कुछ हद तक फेदा कर रहा है और जाफा बढ़िया तथा प्रभु भावना में हल पेंदा करना, अगर दूर के स्थानों के बंदरगाहों तक, जहाँ से जहाजों पर लाद कर वह भेजा जा लये, सिर्फ उसे पहुंचा देने के साधनों की उचित व्यवस्था कर दा जाये । व्यापार का सुविधाओं का प्रत्येक बुद्धि के साथ, जेता कि हम लोगों ने देता है, यूरोप में हमें माल के मार्ग में बुद्धि भारत के सबसे दूर के बाजार में छु है । भूखण्ड के इस तरह के हिस्से में नयी बाजार हमारे लिए सेवा हाततों में पुन रहे हैं कि बुद्धिमान से बुद्धिमान आदम का दुरुवर्तित मो उनके भविष्य का सोचा का गणना महं कर सकता । " ^{३७} इससे यह स्पष्ट हुआ कि भारत में रेलों का निर्माण भारतीय जनता के हितों की ध्यान में रखकर नहीं किया गया । लेकिन जिस देश के पास तीहा और कीयता है, उपाग-बन्धे के अन्य साधन हैं, उस देश के नागरिक हमजा भरपूर लाभ उठाने से कुछ महं सखी । याले माधम

ने इस संदर्भ में कहा है कि - "मैं जानता हूँ कि अंग्रेज उद्योगपति ऐसा इसलिए भारत में रहें जिज्ञाना चाहते हैं कि वे सब बीर अन्य अच्छा मात सभी कारखानों के लिए कम सब पर प्राप्ति कर सकें। अगर बिना के ही सीधा बीर मिलता ही, उनके यातायात के साधनों में अब बाप एक बार मशीनों की ही जाती। तो उसे कुछ मशीनों बनाने से बाप नहीं रहने सके। यह नहीं ही मकान कि बाप एक मिला देते हैं रेलों का जाल बिछाते हैं बीर उन औद्योगिक प्रक्रियाओं की वहाँ शुरू न होनी दें, जिनके बिना रेलों की वास्तविकता जरूरी की पूरा नहीं किया जा सकता और जिनके परिणामस्वरूप लोगों का प्रयोग उन प्रयोगों में भी शुरू ही आया किना रेलों के साथ की साधा सम्बन्ध नहीं है। इसलिए रेल यातायात भारत में बाधुनि उद्योग का समता समता। यह इसलिए बीर भी निरुद्ध है कि अंग्रेज अधिकारी सब जानते हैं कि भारतीयों में अब की मिले हुए की उंग के बाप के अनुसार हाल लेने और मशीनों की मशीने के लिए आवश्यक मान-कारण शामिल कर लेने की विशेष योग्यता होती है।"

प्रत्युक्त बिंदु और युग प्रत्येक काले मानसिकता यह क्या कुछ बदलते: सत्य प्रमाणित हुआ और रेलों के आगमन से भारत में की उद्योग की नांव पड़ी। पहले बड़ा भिन्न १८५४ में लंडन नामक एक अमरीकन के लंडन में मिला। प्रमाण: उसी समय बम्बई के भारत में बाधु नामक एक पारसी ने एक बीर अन्य उपद्रव भिन्न होता। पारसी-पारसी इनकी संख्या बढ़ती गई। हालांकि इन बिंदुओं में काम करने वाली मशीनों की संख्या भी निरंतर बढ़ गयी। इसके साथ हीना यह कि बिंदु पा कि दुनिया में बहुत कम हीना, लेकिन ऐसा हुआ नहीं। इसका कारण भी स्पष्ट है कि बिंदु का कारखानों के मात के साथ के लघु-उद्योगों का काम लौट दो। उनमें तो लाली-करीड़ों

बमिब बेरोजगार हुए और अपना जीविकपन के लिए उसी दुष्णि को अपना
गये जहाँ गली में ही प्रखण्ड बेरोजगारों कीबूद था ।

औरों ने भारत में जल्द अपने मातृ की अपत और वहाँ में
कच्चा मातृ अपने वहाँ में जाने के लिए भारतीय विद्यार्थियों का दलाली
और गुणवर्ती का एक नई पैदा किया का कालक्रम में कुछ व्यापारों में गये।
भारत में ही ब्रिटिश साधारण और ब्रिटिश व्यापारों पर धर्म की वक्तों और
बन्धन बंधनधियों को भारत था । उन्नीस वहाँ भारत इस तरह बूँद रही थी
कि इंग्लैण्ड में वही गूँदा अपना संभव था । इतिहास वहाँ पर औरों के दलाल
बारम्बार था गये । एक ही भारतीय कुँदा नर्म का लोभाले का दे बूँद लगा।
अन्तर्गत जमींदारों का विजोक्तों और व्यापारियों के परों में वहाँ उन
विजित लोभों में उन्नीस, बजात और विदाक के पैरों पर बूँदा कर लिया।
उन्नीस अपना मातृ गली जमान में लोभाले और बाद में उन्नीस-बन्धनों में ।
कालक्रम में ही कुँदा-नर्म के प्रविधिधि और प्रवर्तन बन गये ।

ब्रिटिश सरकार ने विरोध और विरोधवाचक रुख के लोभों
हुए को भारतीय कुँदाधियों को पर लुब्धक करने रहे और उन्नीस के पैरों में
अन्तर्गत व्यापारिक स्थानित करने के लिए सरकार नीतिधियों के विरोध में
लंघन करने रहे । आधुनिकयुग का बारम्बार हाताधिक १९१७ को पौण्ड - १
हो माना गया का १९२०, ऐतिहासिक वहाँ का बारम्बार १९१४ के एकदम
गली में वक्तों में पौण्ड मिंटो सुधारों के साथ हुआ । १९१९ में १०२५०००००
बारम्बार स्थापित लोभ और इस्मात उन्नीस एक बहसपूर्ण दुष्कार था । ऐतिहासिक
१८९५ और १९०५ के बीच भारतीय उन्नीस, गायर गूँदा उन्नीस को गति

बाफो घामो रहो । इसी दो कारण से एक तरफ लगातार बढ़ती बुद्धिमत्ता और दूसरी १९०२ में अमरावत बंदूकबाजों के कारण छवि की कोमल वस्तु बड़ गई । इन दोनों प्रतिकूल परिस्थितियों ने भारतीय युद्धोपयोग का अपना घुटा बर डाला । योंकि, उस बीच तक भारतीय फौज गति अपने स्थिति सुद्ध कर चुके थे, जतः उन्होंने संघर्ष का मार्ग अपनाया और भारतीय राष्ट्रिय भाँति के आध्यम से विदेशी कदों का विरोध करने हेतु स्वदेशी आन्दोलन को सुजात की । किन्तु सतप्रतिष्ठा नाम उन्हें हुआ और फलतः १९१२-१४ में जाटन भित्तों को संख्या बढ़कर २६४ हो गई या और कुट भित्तों को ६४१, जियला उन्नीस लगातार बढ़ता ही रहा था, और १९१४ में कुल १,४१,४७६ लोग जियला खदानों में काम कर रहे थे ।

भारतीय उपनिवेशों के अपने विकास के लिए एक और अकार भित्त, जब प्रथम विश्व-युद्ध हुआ (१९१४-१८) । उगाता कारण यह था कि युद्ध के समय विदेशी सामान्य के आयात में बाफो बम्बो छुं, साथ ही युद्ध सम्बन्धी उपकरणों और सामग्रियों के उत्पादन का तात्कालिक आवश्यकता भी बा ल्हो छुं । इन कारणों ने उस अवधि में भारतीय उपनिषों का विकास हुआ । इसलिये १९१४-१८ के युद्ध ने और ठाके बाद के वर्षों में इस प्रक्रिया को बहुत तेज किया । भारत के बाजार में ब्रिटेन का हिस्सा दो तिहाई से घटकर एक तिहाई से घोटा हो अधिक रह गया । सामा दुल्हों और ब्रिटेन के सामानों के प्रति अहिंसक है बावजूद बाप न, अमरावत और जतः नवीकृत जर्मन सामानों को प्रति-योगिता तेजो से सामने आठे । भारतीय औद्योगिक उत्पादन ने तासतौर से हल्के प्रयोग के हीन में बाफो प्रगति का है ।

इस समय फ्रिटेन, जर्मनी और जपान में बड़े उद्योग
 विकास पर थे, हमारे देश में है कि भारत में मा बड़े उद्योगों को
 आवश्यकता थी, परन्तु वह पूरी नहीं हो सका। इससे कारण मा स्पष्ट
 थे, पहला तो यह कि भारतीय पूँजी ही बहुत कम थी, अतः उद्योग विकास
 उद्योगों को स्थापना ही हो नहीं सके थे, दूसरे भारतीय पूँजीपति
 अणु देने में अधिक विश्वास रखता था, उन्हें उसे मुद्र का लाभ को अधिक
 था और यह कार्य निरापेक्ष मा था। इन कारणों को प्रमुखता से बताया
 एक और कारण था- ब्रिटिश सरकार का निरन्तर कालापीन। यह
 ब्रह्मचारी इस सोचा था कि सरकार ने एक और १९२७ में टाटा
 बायरन एण्ड स्टील को फिना नया अनुदान वापिस ले लिया और दूसरे
 और प्रत्यक्ष विरोध है बावजूद भारतीय लक्ष्य का अपमूर्त्यन पर, भारतीय
 उद्योग का कम हो लौड़ दो। हमारे भारतीय अर्थ-व्यवस्था को एकदम
 म्यानक काटका लगा और उसका प्रभाव केवल कारों तक ही नहीं, गांवों में
 भी पहुंचा और गांव का अर्थ-व्यवस्था भी को हमने हिमन-हिमन कर डाला।
 भारतीय कृषकों के पास जी संचित स्वयं था तो देखी है और है बाध्य
 हुए। १९२७ से १९३० तक चलने वाली इस वार्षिक संकट ने देश के सामने
 विफलता का नीला नृत्य करा दिया। हमारे भारतीय जनता आदि-आदि
 कर उठा। १९३१ से १९३५ के बीच इंग्लैंड ने भारत में कम से कम ३ करोड़
 २० लाख जींस चीना रेंड किया जब जिसका मूल्य २० करोड़ ३० लाख पाँच
 बाँका गया। अर्थ संकट से गली फ्रिटेन के सुरुदित चीन में कुछ जिसका
 चीना था, यह मात्रा उन्नीस में अधिक थी। १९३६ से १९३७ के बीच
 भारत से ३ करोड़ ८० लाख पाँच मूल्य का चीना इंग्लैंड भेजा गया। इस
 प्रकार १९३१ से ३७ के छत वारों के दौरान कुल २४ करोड़ १० लाख पाँच

के धृत्य का सीना हंगेरी में रखा गया। यह सीना देश को गरोम और
 स्थिति जनता को परम्परागत तरीके का स्तोत्र था। यह सीना ^{३४} की
 भारत का स्थिति जनता को माफ़ी देता था, हंगेरी कहें गए।

१९३९ में तिस्रो महायुद्ध आरम्भ हुआ और भारतीय उपमहा-
 की दुर्गम का अक्षर पिता और उन्होंने इस युद्ध कात में अपनी माफ़ी
 प्राप्ति का। यहाँ यह कहें महत्वपूर्ण बात है कि एक और पूँजीपति बापू
 पूँजी निरन्तर बढ़ता जा रहा था और दूसरे और जमादार। कात को
 जनता की पूँजीपति कुं रहा था और गाँव को जनता की जमादार जनता
 है इन दोनों शीशों के स्वार्थ एक-दूसरे से जुड़े थे। पूँजीपतियों ने
 क्या था भूतभूत दुष्टि सम्बन्धों सुधारों को बात नहीं को। इसका कारण
 था कि "जमादारानि उद्योगों और बाँटों में पैसा लगाया और फेंक और
 उद्योगपतियों की से जमात कायदा दो।" ^{३५} पूँजीपतियों और जमादारों का
 पैसा गाँव से रहे थे और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को अधिकारित सम्बन्ध
 नातियों इन दोनों शीशों का कौन से हिस में होता था। पूँजीपति और मज-
 दूर सम्बन्धों के बारे में गाँव ने कहा कि "पूँजीवाद पिता है, मजदूर
 उसका संतान।" ^{३६} गाँव की इस सम्बन्ध में पूँजीपति द्वारा मजदूर का
 पकड़ाना शीशों का करने को प्रवृत्ति साफ़ सातक रहो थी, यन्त्र, वे थे ही
 इसी का है प्रवृत्ति। जतः वर्ग-संघर्ष को राह से हटाने के उन्होंने यह
 प्रमत्तों द्वारा किया और १९३७ में उनकी ^{पूँजीपति =} ~~पूँजी~~ साज्जहों द्वारा मजदूर और
 मजदूर-नेताओं का फाँक दमन कातर पूँजीपति-वर्ग की अपनी जमादारों
 का परिक्षा दिया।

बमोबदार वर्ग के पूंजीपति वर्ग की तरह हो निर्गुण शोषण के अपनी शक्ति खूब खर रहा था और वह कांग्रेस उसका भी सम्मेलन कर रहा था । १९३७ में नई संविधान के आधार पर प्रांतीय प्रियायिका समार्यों के लिए होने वाली चुनाव से पहले कांग्रेस ने एक चुनाव घोषणापत्र प्रकाशित कर नागरिक स्वातंत्र्य सम्बन्धी प्रांतों और किसानों की स्थिति में सुधार का मार्ग प्रमुख रखे । किसानों की इसी मांगों का ध्यान और महान में कांग्रेस उभर कर आयी । लेकिन, कांग्रेसी सरकारों ने किसानों का हित धरने के स्थान पर उनका निर्गुण दमन किया । इससे फलस्वरूप किसान-संगठन बने । १९३८ के समूचे वर्ष में भारत के सभी सुर्खों में किसानों के बड़े-बड़े संघर्ष हुए और लगान वृद्धि, वैदलता, जबरन मजदूरी तथा लगान को नैर-व्याप्तता कहला कर नौकरियों के किसान तथा लगान को दर में बमो बने के लिए अनेक मार्गों में उन्हें बाधित सफलता मिली । इससे साथ ही किसानों के बहुत बड़े-बड़े जुलूम निरस्त और समय-समय पर हितस प्रदर्शन हुए । १९३७ और १९३८ समार्यों, सम्मेलनों में किसान नेताओं को निर्गुणकारी, किसानों का समार्यों पर प्रतिबन्ध और साक्षर गिराव में किसानों की विलम्ब पुस्तिक को ताकत के प्रयोग हुए, इससे किसानों के संघर्ष और भी तीव्र हुए। पदिनापंथी-कांग्रेसियों की इस सरकार ने धाने हो वर्ग का हित-क्षोभन किया, परिणामस्वरूप १९३९ ने अग्रेस्त तक किसान संगठनों को संख्या ८ साक्ष तक पहुँच गयी थी ।

किसानों की भाँति मजदूर-वर्ग ने भी १९३७ के चुनाव में कांग्रेस ने उनमें हितों को सुरक्षा करने का काम किया और मजदूर-वर्गकी माँगों एकता और दाम्पत्य के साथ चुनाव में सहयोग किया । लेकिन, हमने साथ में वही अवसर हुआ जो किसानों के साथ हुआ था । कांग्रेसी सरकारों ने

उनका हाथ हो मोह में हुआ। उनकी स्थिति सुधारने के लिए सरकारों ने कुछ नहीं किया, वरन् काफी बड़े डिस्ट्रिक्ट एक्ट जैसे अधिनियमों के द्वारा पूंजीपति-वर्ग के विरोध बनाये। बम्बई में एडुकाटिवी पर लगे हुए करों, मसूरों के सभाओं पर प्रतिबन्ध लगाये और मसूर-नेताओं को गिरफ्तार किया। इससे मसूरों में दारिम और क्रोध की लहर गान्धी जी की और स्वतंत्रों के संस्था निरन्तर बढ़ती गई।

इस प्रकार किसान और मसूर अपनी लड़ाई लड़ रहे थे, इनका लड़ाई एक और उपनिवेशवादी औद्योगिकी से थी जो दूसरी और जहाँ हो देश के समाजदार-पूँजीपति वर्ग से। कांग्रेस और उसके सर्वोच्च नेता गांधी - इन दोनों लड़ाई का साथ दे रहे थे। गांधी का लड़ाई का समाज उद्देश्य इन शीघ्र - कार्रवाई का साम करना तथा जिसके फलस्वरूप देश को अर्थ-व्यवस्था पर कंधे नागों से अपना बंधन धार लो। इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका आदि देशों में जापान के विकास के परवर्ती चरण में पूँजी और उद्योग का केन्द्राकरण हुआ, फलस्वरूप भारत को स्थिति खूबसूरत बन गई। यहाँ के उद्योगों की स्थापना के बाद कृषि वर्गों के अन्दर हाँसा केन्द्राकरण हो गया जिससे व्यावहारिक परिणाम आज तक मोनने पड़ रहे हैं। इस केन्द्राकरण के कारण व्यापार और लम्बे दौनों विश्वव्यापी में उद्योग का सम्प्लितन हुआ और व्यापार-संघों की स्थापना हुई। देश के जापानि जीवन के बहुत बड़े क्षेत्रों में इन व्यापार संघों का अधिकार था। १९४० में लगभग ४० व्यापार संघ लगे थे जिनका ४५० कारीबारों पर अधिकार था और जिनमें लगभग ११०० मिलियन रुपये का पूँजी लगा था। हर प्रकार के जापानि उद्यम पर इन व्यापार-संघों का अधिकार था। उदाहरणार्थ-टाटा के जिनमे कुल ४२ कारीबार थे : चार सूती कारखाने, चार कपड़ों के कारखाने, चार लकड़ी

कम्पनियाँ, एक लीहा बीर हस्तात का कारखाना, एक वायु परिणमन
कं०, एक तैल कारखाना, एक बोया कम्पनी और एक होटल। इसी कृष्ण
प्रकार संयुक्त एण्ड कम्पनी, जो पूना हिन्दुस्तान बैंक में काम करता था
४२ कारीबारों पर अधिकार बनाये हुए था। इन उद्योगों से होने-जाने
व्यापार संबंधों के व्यापक विस्तार-विकास और लोगों के आर्थिक जीवन पर
इनके प्रभाव का अनुमान किया जा सकता है।

इन व्यापार-संबंधों में भी तथा उन डाइरेक्टरों के हाथ में
था जो बहुत-बहुत जगहों पर बैठे थे। संभाजी डाइरेक्टरशिप का प्रभाव
भी काफी प्रचलित था और इसके कारण कुछ डाइरेक्टरों के अधिकार में
और वृद्धि हुई। अतीव वेदता ने १९४० में लिखा— "हमारे देश के प्रांच
की प्रमुख औद्योगिक कारीबारों का प्रबन्ध केवल २००० डाइरेक्टर करते हैं।
इनमें भी कुछ डाइरेक्टरशिप केवल ८५० व्यक्तियों के हाथ में हैं, और एक
हजार डाइरेक्टरशिप के मालिक महज ७० व्यक्ति हैं— इस प्रकार के
शीर्ष पर का बादम हैं जो २०० डाइरेक्टरशिप के मालिक हैं। इस व्यक्ति
हमारे देश के औद्योगिक वर्षा तंत्र के माध्य विधाता है।" ^{४०} उदाहरण तथ
वर गुलजरीलालदास ठाकुरदास ४२ कारीबारों के डाइरेक्टर थे। ^{४१}

भारत का यह दुर्भाग्य हो रहा कि यहाँ पूँजीवाद सेो
स्थिति में आया, जब यहाँ का अधिकतर जनता गरीबी का सोमा-दस्ता के
नीचे कावन याकन कर रही थी, जिसे सिवाय रीटा के और कुछ सुका
हा नहीं रहा था। इस जनता के प्रतिनिधि जिन्हें कि उसके हितों को
रक्षा करना चाहिए था, उसके हित समर्थक-पूँजीवादि-वर्ग के साथ जुड़ गये

और हमोस्तिर उन्होंने इस गरीब जनता को समस्याओं को तत्काल ध्यान
 से नहीं दिया। जो किसान और श्रमिक संघर्ष कर रहे थे, उन्हें
 उन्होंने बुरी तरह दबक दिया। फलतः पूँजीपति-बर्ग निरन्तर प्रगति
 करता रहा और यह गरीब जनता और भी गरीब होती चला गया। हालांकि
 पूँजीपति-बर्ग को अबाध प्रगति में ब्रिटिश-सरकार ने अवरोध प्रकट मिले,
 पार्लटू पूँजीपति बर्ग के सबसे बड़े शत्रु और श्लेषणों के गांधी ने जहाँ उनकी
 हानि होती देखा वहाँ संपूर्ण जनमानसों की उन मुठठो पर लोगों का
 सुरुजवा है। बलिदान कर दिया। रजनी पानदेव गांधी, इस नकारात्मक
 भूमिका को अनावरण करते हुए कहती हैं कि "गांधी ने अहिंस के नाम
 पर हमेशा जवाबदारी और सम्प्रतिमान बर्ग के हितों को रक्षित की।
 सामाजिक तौर से यह थी कि हिंसा के बिना किसी जन संघर्ष को सुझाते
 उन्होंने को, जो उस समय तत्काल रोक दिया कि संघर्ष ने सम्प्रतिमान
 बर्ग और साम्राज्यवाद के हितों के विरुद्ध क्रान्तिकारी रूप लेना शुरू कर
 दिया। ऐसे समय गांधी की हमेशा यह ध्येय रहता था कि आंदोलन जहाँ
 असह्य क्रान्ति का रूप न ले ले।" ^{४२} और गांधी को इच्छाओं के अनुसार
 १९४७ में एक सम्प्रतिमान हुआ, कि स्वतंत्रता के नाम से पुकारा गया,
 हालांकि यह स्वतंत्रता आधुनिक-साम्राज्यवादों का ही हो भिता। चूंकि
 हर युग और हर समय का इतिहास उस समय के शासकों का इतिहास होता
 है, जो: शासक बर्ग ने उस सम्प्रतिमान को जो स्वतंत्रता के नाम से घोष
 कर लोकप्रिय जनमानस के मार्ग में बाधा उपस्थित कर दी और साम्राज्यो
 हीनता के साथ-साथ भारतीय पूँजीपतियों की सेवा समर्थक उन्हें को
 हीनता करने का पैसा प्रभावित दे दिया।

बीरगौर नाम क्या तब गये भी नहीं थे कि गले-भारतीयों के ऊपर
उन्होंने के स्वाम-नाम नम्रता रखकर बैठ गये ।

१९४७ के बाद असमान-विकास का गति बीर तेज हुई और
“जहाँ विद्युत् साम है तब उद्योग लगाये जायेंगे वहाँ साधारण जनता
को आवश्यकताओं पर ध्यान देने का प्रश्न ही नहीं उठता । उद्योगधर्मियों
में किया शीघ्र और प्रवेष्ट का आवश्यकता के अनुसार वहाँ, धर्मिक वहाँ
कारखाने स्थापित किये जहाँ कम से कम पूँजा के माध्यम से अधिक से अधिक
साम कमाया जा सके । अतः अधिकांश निवासी शीघ्र में उद्योग करने उन्हीं
शीघ्रों में ही वहाँ पकड़ी सस्ता है तथा प्रवेष्ट सरकारों अधिक से अधिक
सुविधाएँ देने की तैयार हैं, की सस्ता धिक्का और पानी, कम मूल्य पर
भूमि, टैक्सों में कम, आयात-निर्यात सम्बन्धी छूट एवं सरकारी संरक्षण।”

इस असमान विकास का परिणाम यह निम्नलिखित कि एक और
ती निर्भरता अपनी सोचा की भा पार कर गये और दूसरे और घनी
तीनों पर घन को बढ़ा जा गये । देश में १९७२ में नरोको को रैला, जो
रहर्षों में प्रति व्यक्ति आवश्यकता का सर्वा ३० लक्ष्य और गाँव में २०
लक्ष्य था, का जीसत देशतो शीघ्रों को आवासी का ४४.५० प्रतिशत और
दूसरे शीघ्रों में ५९.३४ प्रतिशत था, जबकि हमारे देशों के अंत तक नरोको
का रैला के माथे रहने वालों को अनुमानित संख्या बढ़कर ६० प्रतिशत
ही नहीं । नरोको को संख्या निम्नतर बढ़ने के साथ-साथ देश के २० सबसे
बड़े पूँजापति घरानों का सम्पत्ति १९६० में २४२० करोड़ लक्ष्य था ।
१ अप्रैल १९७२ को सम्पत्ति सुरक्षा के मुद्दे को तरफ बढ़कर ३७१९ करोड़ ही

कभी यह बुढ़ि २५ प्रतिशत थी । सन् १९७५ तक उनका बीसत में बीर बुढ़ि छुं बीर ४४६५ करीड़ लगभग ही गये । देश के २० परानों में से २ पराने टाटा एवं पिछता के पास २१४९५ करीड़ का सम्पत्ति है। याना मिफं इन ही अन्तर्गत में मुंह में बीटा के पास पूजापति परानों का सम्पत्ति का ४० प्रतिशत हिस्सा है ।

१९७२ और १९७७ के बीच बफा "अनुशासन कर्" में टाटा का सम्पत्ति ६४९९ करोड़ रुपये से बढ़कर १ ६९.२८ करोड़ रुपये हो गई। बिड़ला को सम्पत्ति ५९.४० करोड़ से बढ़कर १०६६.२० करोड़ रुपये हो गयी।^{४४} अर्थात् टाटा की सम्पत्ति में प्रतिवर्ष वृद्धि ६६.६ प्रतिशत और बिड़ला की सम्पत्ति में प्रतिवर्ष वृद्धि ८१.६ प्रतिशत थी। टाटा वहाँ-वहाँ से पैसे कमा प्रथम थे, वहाँ-वहाँ से उतरते छ दिताय वेणो में जा गये। कारण - बिड़ला द्वारा सरकार को दिया गया सहयोग। यह बड़ी विचित्र स्थिति है कि उस बीच जाम जनता मरकर तस्करी और गराबों के बीच को रहा था, वहाँ इस प्रकार कंद-सौग" को गराबों का रक्त कोने का अनुमति सिक्के-हस्तिक को पाय कि वह सरकार का सहायता करते हैं और हर अस्मि-विरोधी कदम का स्वागत करते हैं। अर्थात्, काल के उस काल-युग में नाजवान पड़े-लिसे बैरज्वारों का संस्था सब को है से ऊपर निकल गया, जबकि उस वहाँ पहले यह सिक्के ४५ लाख हो था। इस प्रकार देश के समस्त जायिके-संकट गहराता का रहा है और सरकार अपनी कुलों के कम र में है, गराबों का कितना उले कहां, बाहे मरें जमा सिक्की रहें। पूँज-वाद का यह पिशाच अत्यन्त मयावह और संकटपूर्ण है।

नया उपरता हुआ मूस्वामा कर्ग

स्वायाम्ना संग्राम के दौरान १९३० के एकदम बाद जर्मन-
 दारों ने पूंजीपतियों के सहयोग कर अपना पूंजी का कुछ हिस्सा उधोगों में लगाया
 और पूंजीपतियों के ग्राम में मृमि दो जिम्मे है उधोग का काम को निराम
 है कि कृषि उपज का बहाना से करें। इसका परिणाम यह हुआ कि
 शहरी मृमि की तरफ कामकाज मृमि पर पूंजीपतियों का अधिकार बढ़ता
 जाता गया। जर्मन-दार को स्थिति नमि में पड़े थे कि सुदूर पूर्व, जर्मन-
 यह एक ऐसा अनुत्पादक कर्ग था, जिसके पास सब करने के नाम पर एक सौ
 बंधन रहम थी। और जर्मन के नाम पर चारों ओर के कृत है। जर्मन-
 दारों अनुक्रम में जर्मन-दारों द्वारा सभार की देय लगान की राशि को
 निर्धारित कर दो गढ़ों को परन्तु जर्मन-दारों द्वारा जितनी से जितना लगान
 लिया जायेगा, इसका कर्ग और उल्लेख नहीं था। अतः जर्मन-दार अपने
 मनमाने से लगान कसू करते, जिससे उनको अधिक स्थिति बहुत मजबूत थे
 शहरी शीषक और ग्रामोण शीषक एक ही और भारत में जर्मन से जर्मन
 की तरह फिट गये। स्वायाम्ना के बाद इनके शीषण क्षेत्र और जापुनिक
 हुए और उन्होंने कृषि का वाणिज्योत्थान अर्थात् याधिकारण कर दिया।
 इससे कृषि का वाणिज्योत्थान आरम्भ हुआ। जर्मन-दारों की अवस्था ने समाप्त
 होने से जापुनिक परिवर्तन होना बाध था, परन्तु वह नहीं हुआ। जापुन
 में ऐसा बहुत से कर्मियों की दो गढ़ों जिम्मे मूस्वामा कर्ग निरन्तर काम
 का स्थिति में रहा।

जापान के बाद फिलिप कास में मस्त सुविचारों और अनुमानों
 का इसी कर्ग ने उधोग लिया। छोटे-छोटे जितनी के नाम पर जितने कर्ग, बाध

पानी एवं खाद सरकार ने लिये, वे सब इसी कर्म के उपयोग लिये । और
 इसी व्यवस्था की जायसिद्ध बनाने में लगातार प्रयत्न लिये । इस जायसिद्ध-
 करण के फलस्वरूप जो हरिजन भूस्वामी-कर्म का उभार कर आया है, वह
 सामान्य तो वह अपि नहीं है। इस नये उभार भूस्वामी में जमादारों और
 पूंजीपतियों, दोनों के गुण विद्यमान हैं । हममें जमादारों का बुद्धिमत्ता और
 पूंजीपति का कर्म-कृतार्थ और निरमलता का मिश्रण है। बल्लभ राम जिलास्त्री
 में सिद्धहस्त यह कर्म देह की राजनीति और समसामयिक जीवन की प्रगति
 और अग्रगण्यता में प्रभावित कर रहा है। सरकारी और सेंट्रल विभाग के
 नाम पर जितनी सुविधाएँ दी गईं, वह सब इसमें ही लीं । इसका कारण
 यह स्पष्ट है कि सेंट्रल विभाग अधिकारी, जिला विभाग अधिकारी और
 ग्राम सेवा के जितने अधिकारी नाप के उन्नति करने की धीरे धीरे देखे सब
 गांव पहुँचने पर उभरे यहाँ लगे और सेवा-भाव ने प्रभावित हो गया कर्म के
 काम का कामना करते हैं। सहकारी समितियों ने किसी जगह जो सब सामान
 की-कम भूमिस्वामी ने बांधकर वह पै उठाकर जमा धर मारा और बैचारे
 सिधमे लोगों की मन मारकर कुंठा । यहाँ कर्म जमा प्रभु, जिला प्रभु सरपंच
 और प्रभाव बना, जिसके मत पर सरकारी सुविधाओं के मुहाने बनने और
 लीत लिये । और तो और यहाँ कर्म २०२०२०, २००० तथा २००० तक
 जनता को सेवा करने की सामने आया। ब्रिटिश माल होते हुए भी भारत
 बटाकर रातों-रात सफाई टीका पल्ल कर्मियों बन गया । ऐसी लोगों ने
 सेवा को क्या वाता का का सस्ता है ।

कृष्ण में जायसिद्ध परिवर्तन के लिए हरित-क्रान्ति का मार्ग
 दिया गया । जिसमें अच्छे लोग एवं खाद की सुविधाएँ दी गईं लिये इस
 कर्म ने लिया । यह सर्वोपदिष्ट है कि हरित-क्रान्ति ने निरमलता और गायक्यता

को दोबारा और ऊँचा कर दो। मृमि छिपट-सिपट कर मूसलाघात जग पर जाता रहा और मृमिहोन बनने की प्रक्रिया एक बार बारी विहाल रूप में चालू हुई। हरितक्रान्ति ने एक और अमानवीय व्यवस्था की जन्म दिया, जिसे कोई काम्य नहीं है। विगत कुछ वर्षों में भारत वर्ष में २३ प्रतिशत कुत्सर्कों ने जिनके पास समस्त कृषिगत मृमि का लगभग ५० प्रतिशत भाग है, अधिक उपज देने वाले साधनों का प्रयोग किया। कुछ भिन्नतर विचारों से है कि यहाँ ८० प्रतिशत ग्रामोण जगत्तया तपाका यत्त हरितक्रान्ति ने बढ़ता है, यहाँ १३ प्रतिशत जगत्तया के साथ में मृमि का वैन्द्राकरण ही गया। चूँकि छोटा किसान धन की अभाव में इन साधनों का उपयोग नहीं कर पाता, अतः यह और भी विकसित गया और विचारों यहाँ तक जा गया कि जग है बहुत हीकर उनमें जाती मृमि मूसलाघात की बीच था। और उदा के क्षेत्र में मूसलाघात यहाँ पर तैयार हुआ। इस प्रकार अजादा के बाद उभरा यह नया मूसलाघात जगत्तया प्रगति करता गया और उभार ने जिसने मृमि-सुधार ली, उसे और भी लाभ हुआ।

बाव यह मूसलाघात जगत्तया जगत्तया-व्यवस्था पर जगत्तया बमारी बैठा है, जिसके समस्त जगत्तया हित से सम्बन्धित है। इसने रहते जगत्तया की स्थिति यह है कि २० प्रतिशत परिवारों ने पास ती किंकि, मा मृमि मह है और यह जगत्तया की समस्त कृषिगत मृमि का ५५.३३ प्रतिशत जगत्तया कृषि में ली बैठा है।

निष्कर्षतः, अजादा के बाद जगत्तया यह नया मूसलाघात ग्रामोण-व्यवस्था का भाग है, जिसका कुंठ है नती जगत्तया की सारी सम्पत्ति है, और ग्रामोण जगत्तया करोबा, पूर और कामारो का भारतीय जगत्तया यत्त रहा है अजादा के बाद जगत्तया संकुण मृमि-सुधारों के मो

इसे हो साम भिना । अगर मैं पंजीपति घन बटोरने का जवाब दोंडू
 मैं लगा है तो नहीं मैं यह पूछनायी । इन दोनों के रही भिना भी प्रकार
 के परिवर्तन की जामना करना निर्णय है । इसका कारण , इसे भिना
 वाली सरकारों सहायता है । जब तक पंजीपति पूछनाय का का सरकार
 है, तब तक भिनाता ज यह नीगा नाच समाप्त होने वाला नहा ।

राजनैतिक विचारधाराएं और कल

भारत विश्व का विस्तारतम लोकतांत्रिक देश है। राजनैतिक-
 विचारधाराएं और कलभन्दा की दैनन्दिन परिवर्तित स्थितियां, इसका
 प्रमाण हैं। १९४७ की सदा-ग्रहण से लेकर १९६७ तक भारतीय रा द्वाय कांग्रेस
 का स्वयंभू शासन रहा । यह नैडक का कलता और विनम्रतायुक्त कुटिलता
 का ही परिणाम था कि निर्भर बारी जरीबों और संघर्षों के कारण
 वह अपनी पकड़ को मजबूत बनाये रहे । पहचाना नायक के विरोध और
 मोह की को स्थिति में कुत्तानी ने कांग्रेस के अध्यक्ष पद से त्यागपत्र दे
 दिया , इसकी जगह डा० राजेन्द्रप्रसाद की अध्यक्षता पर सौंपा गया ।
 १९५१ में ठंडे नैडक-टण्डन विवाद का प्रभाव भी कम न था । किन्तु नैडक
 ठंडे भी टाल गयी । ऊपर कांग्रेस सुझा दिख रहा कि किन्तु अन्दा अन्दा
 वह लौकतो होती कती गयी । विवाद बढ़ती कती गयी । इसका परिणाम
 था कि १९६७ में कांग्रेस की बाठ प्रांती में करारी हार भिनी । इसके बाद
 निर्भर परम्परा स्थिति को देखकर सरकारतोन प्रधानमंत्र ने १९७१ में
 पाकिस्तान से युद्ध सड़ा और जरीबों लफ्फों का सम्पत्ति नष्ट कर एवं अंत्य

अन्धकार का अन्त कुत्तों के पीछे नहीं । मावुस जनता ने विकास को
उभे सहरों में हार्निकर ही हँसता नहीं । की अपार बहुमत ने सासन सँभाला।
विकास का पस्तो में हूँ हँसता हँसता । सरकार अपने यत्नों की मूल गयी और
समस्याएँ के सिद्धांत के ध्यान पर उन्हें मान्यता देकर पक्षान्ता आरम्भ कर
दिया । फलतः समस्याएँ फलतः फलतः रहों । नही हड़पने का लड़ाई देव
अपने प्रणित और समोक्त दौर में पहुँच गया । हँसता हँसता अपने को
सारा देश समझने लगा । एक प्रजासत्तिय देश को मान्यताओं की सिद्धांतों
को हँसता कर जनता पर दमन-कर चालू कर दिया । आजातकाल का बीड़ा
जाना उनकी मारी अफसोस का परिणाम था । १९७१ में मारी बहुमत ने
विकासी हँसता हँसता १९७७ में जीवों का तरस उड़ गया ।

रैणु ने स्था-साहित्य का विश्लेषण करने के लिए उनके
रचनाकाल (१९५२-७६) का संपूर्ण राजनीतिक विश्लेषण आवश्यक है ।
रैणु ने अपने साहित्य में कांग्रेस, कम्युनिस्ट और सोशलिस्ट पार्टी
को निरीक्षण किया है । इस लिए संदीन में इन दलों और इन राजनीति
के सम्बन्ध में जानकारी आवश्यक है ।

१- भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को स्थापना २८ सितम्बर, १८८५
८० में हुई । कांग्रेस को स्थापना की आवश्यकता की स्पष्ट रूप से इसे
संस्थापक अधिवेशन १८८५-८६ में कहा "उस देश में लोगों को यहाँ ऐसा संस्था
नहीं थी वहाँ कार्य करें, जो १८८० में महाराजा का प्रतिपदा दिया जाता
है । --- उनके स्वार्थ में और शासितों के भी स्वार्थ " बहुत वांछनीय यह
होगा कि भारतीय राजनीति प्रतिक्रिया हड़पे और और सरकार की बताएँ
कि शासन के नीचा क्या हैं और उन्हें की सुधार का सकता है । उनके स्पष्ट

है कि **जंगल** **मस्तिष्क** **संज्ञ** का उद्देश्य **जंगल** की स्थापना में देश की स्वाधीनता दिखाना कदापि नहीं था। मैं मात्र यह चाहते थे कि भारत पर सदैव **जंगलों** का राज्य बना रहे। **जंगल** राज्य का सुदृढ़ता के लिए यह आवश्यक था कि जंगल में कैलाश न जाने पावे। इसलिए छोटा-छोटा मार्गों में उत्तमकर हो यहाँ पहुँचाने रहे जंगल और छोटे मार्ग अर्थात् साधना का मार्गक कभी न कर पाने की स्थिति में जावे। प्रथम अधिवेशन को समाप्ति पर दिये गये, माधवजी ने उनकी बुद्धिमान स्पष्ट शीला है। "सुम ने ब्रिटिश साम्राज्य का विक्टोरिया का छोटी प्रस्ता की और कहा कि सब उपस्थित लोग महाराजा की बहुत प्यारी हैं और वे सब लोग महाराजा के बच्चे हैं। ऐसा महिमापन राजाजीवरों का जय-जयकार उन्हें आरम्भ में हो जाना चाहिए था। लेकिन कौन बात नहीं, देर-आये दुःखस्त जाये। फिर जाने की राज-राजीवरों के पुतों के फाँसी सीलने के मा' अयोग्य बताते हुए सुम ने कहा उनका जय-जयकार सिर्फ तीन बार नहीं, तीन का तीन बार और और संभव हो तो उसका दो तीन बार करने का प्रस्ताव रखा। उपस्थित लोगों ने भारत भूमिगत का हो नहीं, स्वदेश का नहीं, ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रति महाराजा विक्टोरिया का बार-बार जय-जयकार किया और अपने घर चले गये।" इस प्रकार राजपूत आन्दोलन में जंगल का जय साम्राज्यवादियों के हस्तक्षेप से हुआ। यह छोटी विह्वलना है कि साम्राज्यवाद के सभी छोटे प्रतीक विक्टोरिया के पुतों के फाँसी सीलने के योग्य बनने में मा' अपना सामान्य समझने वाले ऐलन अन्टाकिन सुम जंगल के पिता थे। वास्तव में जंगल राजपूत आन्दोलन की आगे बढ़ाने के लिए नहीं, बल्कि भारतीय जाति की रोकने का अन्ध करने के लिए पैदा का नहीं। इन अन्तर्विरोधों की महारमा गांधी मा' नहीं

सम्पन्न गये । १९०५ ईस्वी में सम्मान में गये गये उनके हृदय मिलने लगे हैं-

“क्यों यह उल्टा हुए महान् कृतो का अनुभव ही रहा है कि कांग्रेस को स्थापना एक और महान् १९०५ ईस्वी में का, विन्हीं हमें कांग्रेस के पिता कहते हैं ।” ४७

कांग्रेस का पूरा परिचय धीरे-धीरे बदलता चला गया । महात्मा गांधी के राजनीति में प्रवेश के बाद मुख्य दो - पूर्णोपनिवेशवाद के प्रति उद्घोषणा बनकर रह गये । महात्मा गांधी ने स्वाधीनता-वादीतम के लिए कांग्रेस के माथे के लाले जन-साधारण को हथप्रती किया, किन्तु जो जाम-जादमी के हिसारे का पीछा करने लगे दिये । कांग्रेस का संघर्ष राष्ट्रीय स्वतंत्रता-वादी का संघर्ष बनकर रह गया, जोकि असल में कांग्रेस के माथे के लिए फिट्टा पूरा और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ रहा था। महात्मा गांधी ने इस जनान्दोलन को जाने कौन के हिसारे के पीछा में लड़ो से बच-राखने के साथ प्रयोग किया । उन्होंने इसी सम्पूर्ण वायव्यता में जनान्दोलन को प्रतिष्ठित के रूप में, अपने पाँच लड़ो भारत को संयुक्त करता के रूप में जो जौनों के साथ-साथ, सुलह, समझौते की, लेकिन इस बात के लिए निर्भीक रहते कि जनान्दोलन विधान-मन्त्रों के साथ में न चला जाये । ४८

महात्मा गांधी और कांग्रेस के भूस्वामी-पूज्य पादा परिचय के बारे में प्रेमचन्द लिखते हैं “सुराज्य जाँ पर तुम में यही-बड़ा लक्ष्य लगे, तुम को जौनों को तरह लौटो में रहोगे । जहाँ का तुम्हारा राज महँ है, तब तो तुम मीन पिलास पर डाला मारते हो । जब तुम्हारा राज ही जौनों का तब तो तुम मरानों को फँस कर पो पाओगे ।” ४९ इस प्रकार राष्ट्रीय वादीतम में कांग्रेस का परिचय स्पष्ट हो जाता है। सन् १९३० तक मन्त्र-काँजनी

सङ्घर्ष स्वयं सङ्घ रहा था। यह बड़ा विचित्र स्थिति है कि कांग्रेस का हीमन्त या कीपमिनेटिज राज्य का मार्ग कर रही थी, तथा भारत का अधिक का गिरेहो सरकार का समाप्ति हेतु संघर्ष में रत था। के सम्मान हुआ, लेकिन मात्र कांग्रेस ने का पर नहीं। ²⁰

समाधानका ये बाद जॉर्ज में कीटिरीय और म. उभर कर सामने आये। गांधी को का मोहना हुआ। गैरह का विरोध कांग्रेस के अंदर और मा प्रहार हुआ। मुपान्ता ने अध्यक्षता फर ले त्याग-पत्र दे दिया। १९२१ में गैरह - टंडन विवाद और मा उग्र हुआ, जिसका परिणाम कापरान्त यी जा था। ^{४१} कापरान्त-गौतमा मा। का-प्राप्ति ने इस पृथिवीत संघर्ष में कांग्रेस की न गया का, परिणामका प अंदर में होकर। हीता गले कांग्रेस की १९२२ के चुनावों में जारा अकालता का सामना करना पड़ा। देश के ८ प्रांतों में उसे पराजित कर दिया गया। इस पराजय के कारणों का समुदायक विश्लेषण न पर हन्दितागांधी ने अन्ती 'वात्मा की आवाज' के नाम पर कांग्रेस के दुई का अन्त। कुर्गे के आसपास सङ्घ मार्ग में गहरदार लड़ी कर लीये। कांग्रेस के एक दुई पर हन्दिता गांधी को कुर्गे रस दा गले, जहाँ बैठ वह भारतीय नेता का दमन और मा भारदार हफिगार्गे में करी लगी। सन् १९३४ में निर्वात बड़े दमन और राजकता को पूंय से अपना न हुआ बचाने के लिए हन्दिता गांधी कुः जनता के का प गले और रीटा-रीय की ही, दो-मार्ग का मावात्मक मार्ग लेर विजय प्राप्ता था। देश का जनता गरीब और मूल से कर रही थी, लेकिन हमारी प्रमानमंत्र उम प्कलत सामान्य और है वैतकर ही राष्ट्रियता का मान अताप रह के। इस समस्याओं के वैतकर

होने का परिणाम था - वापसताल । लेकिन वापसताल का निर्णय कम और बालक मो कुरी की न बना पाया और १९७० में इन्दिरा गांधी और उनके बादशाह बांधो में उड़ गयी ।

१९७० में लेबर १९८० तक जनता-दल राज में रहा, जिन्हे वे मो उठा वर्ग के थे, जतः उनकी जोड़ लाम को जाता गला निरक हो था। १९८० में इन्दिरागांधी पुनः लाम में बाढ़ । जिन्हे कु-परिवर्तन ली का विविक्त परिवर्तन को जाता गला भी निरक हो । जगिस फूतः पूजावति- मुखाभा की को पाटी है, जतः उनी समस्त वायव्यगाला उनी वर्ग के हित बांधाण के हित है । वेत के समस्त ज विकास को हनी वाता करना फूला हा हीना ।

भारतीय जनसंघ

भारतीय जनसंघ का स्थापना बादर, १९५९ में डा० लामा फूलाद मुखाभा की अध्यक्षता में हुई । डा० मुखाभा नेहरू को ल प्रथम मोर-परिणाम में फली है । स्थापना-भारत के बदले तंदमों में डा० मुखाभा के विचार नेहरू को से विम्व है । समस्त नात्रिमुख कारण न था कि डा० मुखाभा हिन्दू-महासभा के ल संकेत पाटी के नात्रि सदस्य है । हिन्दू-महासभा को विचारिक्ता को लेबर के प्रथम मोरपरिणाम में तंज के रूप में गयी करती है । स्थापना भारत का जनता के सर्व-धर्म-समभाव ली धर्मनिरपेक्ष राज्य के विस्तार की स्वीकार किया । भारत के घंटकों के परवार निरक्त हो यह एक महासभा का फूला था, एक फूलफानी का एक बहुत फूला फाग भारत का धर्मनिरपेक्षता की स्वीकार कर यहाँ

यह गया और संकीर्ण विचारों से संवाहित लोगों-का पाकिस्तान मान
 मान गये । डा० मुन्शी के समक्ष यह एक विशिष्ट स्थिति थी कि १
 हिन्दुवाद की संकीर्ण विचारधारा का निर्वाह की वही १ यह अन्तर्गत
 की स्थिति अधिक दिन न रह सकी और ८ अगस्त १९४० के 'लिफाफा-
 मेहर' सम्मेलन के विरोध में उन्होंने अपना त्यागपत्र दे दिया । १९४१, १९४०
 की संसद में अपने त्यागपत्र के कारणों को स्पष्ट करते हुए उन्होंने
 पूरा रूप में कहा कि पूरे भारत में हिन्दुओं की बुरी तरह से सताया जा
 रहा है । उनके पूरे अधिकार क्षीन हो गये हैं किन्तु हमारा सरकार इस
 सन्वास्वद कार्य के लिए कहां कोई समय नहीं उठा रही है जिससे वहाँ रह
 रहे अल्पसंख्यकों की हिन्दुओं की रक्षा की जा सके । ^{५२} इस प्रकार
 यह स्पष्ट है कि भारतीय जनसंघ की स्थापना के पूरा में हिन्दू राष्ट्र की
 राष्ट्र की अवधारणा कार्य कर रही थी जो निरन्तर से भारतीय धर्म
 निरपेक्षाता की धारा के विरुद्ध थी । भारतीय जनसंघ की स्थापना के
 बाद सर्वप्रथम उन्होंने कश्मीर के सम्पूर्ण विलय की मांग को और नारा
 दिया कि बिना किसी जातिगत भेदभाव, रैनीय, पूजा के प्रकारों,
 भाषाओं विभिन्नता, प्रांतीयता एवं वैचारिक मत-भेदों के होते हुए भी
 प्रत्येक भारतीय की ^{मातृभूमि की} भारतीय जनसंघ के द्वार खुले हैं । ^{५३} इसके पूरा में उनको
 भारतीयकरण को अवधारणा थी ।

भारतीय जनसंघ की स्थापना हिन्दू-महासभा के तत्काल पर
 एक विशाल राजन तिक दल उठा करने की इच्छा से हुई थी मुस्लिम लीग
 और जमाते-इस्लामी को टकरा जा रही । इसमें जाने के लिए यद्यपि प्रत्येक
 भारतीय का स्वागत किया गया, किन्तु सिद्धान्तों और कार्य-प्रणाली से
 यह स्पष्ट है कि वह एक हिन्दुओं का दल था । वास्तविक रूप में इसमें

मुद्रास्वामी के लिए कहां की स्थापना नहीं था। इस बात को स्थापना के समय व्यक्त किया गया विचार भी कहीं हा कमाल में नहीं है। एक और ती भारतीय संस्कृति को दुहाई दी गई, जिसका आधार पशुपति और पुराण इत्यादि हैं, और दूसरी और अपना धर्म निरवेकाता प्रदर्शित करने के लिए सभी भारतीयों के लिए द्वार खुल जाने का बात कहा गई। देश का विकास करने को माधोवीजनाई पर प्रचार डालती हुए स्व० बाबूबाबू उपाध्याय ने कहा कि हमारे पास भी निम्नोद्धारण और स्वदेश को ^{५५} यह कैसा विचार है कि दूसरी और उनका यह कहना कि हम प्राइवेट सेक्टर और पब्लिक सेक्टर दोनों की स्थापना करेंगे और नये को बात यह होगी कि ये दोनों एक-दूसरे के पूरक होंगे। ^{५५} बाबू बाबूबाबू विचार हैं। प्राइवेट सेक्टर व्यक्तित्व सम्पत्ति के क्षेत्रों को जहां - जहां में पब्लिक - सेक्टर की सहाय देती हैं। इसीलिए उन पर नियंत्रण की आवश्यकता है। निम्नोद्धारण का आधार पब्लिक सेक्टर है न कि प्राइवेट सेक्टर। ये दो विचार हैं, जिन पर चलने से निश्चय हो पूँजीपति-वर्ग की ताम बाला और पूँजी का कैडोकरण होकर असमानता और कठिनाई। डा० मुन्शी ने कम्युनिज्म के बारे में भी अपने हालायाम्ब विचार व्यक्त किये हैं कि हमारे लिए सर्वप्रथम राष्ट्रहित आवश्यक है और हम राष्ट्र-हित में ^{५६} कम्युनिज्म को गंवार कर "सुपर कम्युनिज्म" को स्थापना करना होगा, यह तीन सा "सुपर -कम्युनिज्म" है, जब तक नहीं जाय। फल सिद्धांत यह है कि पूँजीवाद की सहाय देकर शीघ्रता से परम्परा की सहायता रखा जाय, यही बात बाबू अमेरिका की पूँजीवादी देश के राष्ट्रपति रोमन कह रहे हैं। ^{५७}

भारतीय जनसंघ और उसने लड़ाई की परम्परा के साथ ही विभिन्न कार्यकर्ताओं ने यह स्पष्ट है कि यह बात देश के पूँजीपति

कर्म ने अपनी रसार्थ तैयार किया है। इनके पास हिन्दुओं की एक कानूनी
का महामन्त्र राजपूत और सांस्कृतिक परीक्षा को रखा है। संस्कृति
को रसार्थ यह कला सामुदायिकता का माध्यम होता है। जन्मों को यह
विह्वलना हो है कि उसके पास कला में समानता लाने के लिए बाकि
विज्ञान नहीं है, इसीलिए यह धर्म और नीति के नाम पर जनता के
मानवमर्त्यों के पावनार्थों की लाने का कुछ रचना है। लेकिन यह स्पष्ट
है कि हम यदि धर्म और नीति का वापस फेरकर समानता के ऊपर लफ्फ
तक पहुँचना चाहें तो विकासता ही मिलेगी। ऐसे एक ही संकलन की
महत्वपूर्ण बनाना है जहाँ समानता केवल नैतिक कर्मों पर आधारित न
रहकर अधिक ठोस रूप प्राप्त कर ले।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी

सोवियत संघ में कम्युनिस्ट क्रांति के सफल होने पर विश्व
स्तर पर इसकी प्रतिबिम्बितुनाई फैली लगी। प्रत्येक पराधीन देश-
सोवियत-संघ के क्रांति की योजना के स्वप्न बुझी लगी। भारत के
भी एक ऐसा ही पराधीन देश था जिसने क्रांति के सुनहरे स्वप्न देखे,
यह बात सुना है कि कौम शासकों ने उसमें जिनका बाधाएं उपस्थित कीं।
लेकिन क्रांति को तब तक उतनी कैबली होती है कि वह १९४७ साल
प्रतिबिम्बों पर भी नहीं रुकती और जनमानस की हिता देती है। हम
क्रांतिकारी सत्ताओं के सम्बन्ध में डा० पूरुषोत्तम दास ने लिखा है कि
“यह की क्रांति के बाद से यूरोप स्थित प्रवासी क्रांतिकारियों के मन
में बड़ी उत्पत्ति उठी। कीर्त-कीर्त पक्षी हो वे वापस समानता की यात्रा-

काम्यी थे। मोहनदास करमचंदजी का नाम और सिद्ध बाबाजी (सोमनाथ बाबाजी) पेरिस में एनार्किस्ट कम्युनिस्ट (बराक़तावादी साम्यवादी) पार्टी के सदस्य बने थे। डीक (डा० दत्त) शास्त्रीजी के प्रारंभिक सहस्रिस्ट क्लब का सदस्य बना था। मदन कामा वामपंथी थे। १९२५ ई० में डीक ने जब पेरिस में ठहरा किता ता तो उन्होंने बीबी और प्रारंभिको मिलित भाषा में लेख से कहा, "उत्थित लोगी की तरह बने कहे की पद्धति रहता और भारत के मजदूरों और किसानों की संछित करना।" डीक के सहस्रिस्ट नेता हाइडमैन से लेकर अब के बराक़तावादी नेता पाट्टाभय, नीलेश्वर नेता लोभन, ये सब भारत की स्वाधीनता चाहते थे। अतः जब हम लोगी के एक क्ल में शामिल कर राज्य स्थापित किया तो सब तरह के वामपंथी लोगी का वहाँ जान स्थापितिक था। इसलिए सब तरह के क्रान्तिकारी मास्की का मुँह खोलने लगे। मास्की का नाम उस वक्त ही गया था "नया मजदूर।"

भारतीयों का प्रथम प्रतिनिधि मंडल वर्ष १९१९ में लैमिन है भिन्न। इस प्रतिनिधि मंडल में थे - मोहनदास (नेता), नीलेश्वर करमचंद, नीलेश्वर करमचंद, मंडलम प्रतिवादी मजदूर सोमनाथ बाबाजी, पलोपमिंह नि और करमचंद का नीलेश्वर हाशिम। इसके बाद निरंतर भारतीय क्रान्तिकारी उस पहुँचते और वहाँ बैठकर भारतीय स्वायत्तता की योजना बनाते रहे। उन्होंने सत् प्रारंभिक के वास्तविक अध्यक्ष करमचंद, बाबाजी एमएमराय और कमनीनाथ मुखर्जी ने ताशक में १७ जनवरी १९२० को भारत की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की। जिसकी कार्यवाही निम्न लिखित थी - "२७ जनवरी १९२० को कुँसमा की कार्यवाही :

जाना है। हमारा उद्देश्य औपनिवेशिक राज्य को भाग से बटकर
पूर्ण स्वाधीनता को भाग है।

उन्होंने जाने कहा कि सभी वर्गों के लोगों के लिए
स्वाधीनता, साम्राज्यवाद के फाँटे से राष्ट्रीय पूँज को मुक्त कराना,
जमींदारी और तबाहशोही की समाप्ति कर पूर्ण प्रजातांत्रिक स्वतंत्रता
को हम भाग करते हैं।

१९२६ से लेकर १९२९ तक पाटों ने जो काम किए उसके
परिणामस्वरूप देश में स्थान-स्थान पर विद्यमान-बान्दीतन दूर हुए,
जिनमें अधिकांश सदस्य कम्युनिस्ट थे। कम्युनिस्ट-बान्दीतनों को एक स्वस्थ
दुजात हुए, जिनसे कम्युनिस्ट बान्दीतन की शक्ति में असाधारण वृद्धि
हुई। लेकिन १९२९ ई० में कम्युनिस्ट प्रभाव से चिंतित होकर ब्रिटिश
सरकार ने प्रमुख कम्युनिस्ट नेताओं पर बैरठ - जाखाने बैर जलाया जिनमें
उन्हें परेशान करने के लिए फूँटे बारीस लगाये। इससे कम्युनिस्ट बान्दी-
तन की कुछ समय के लिए जायात पहुँचा। इसी का परिणाम था कि
१९३५ में सदस्यों की संख्या कुल १००० थी। १९४३ में जब पाटों का
प्रथम काँग्रेस हुआ तो, तब सदस्य संख्या बढ़कर १६००० हो गई। और
१९४७ में जब पाटों को दूसरी काँग्रेस होने जा रही थी तब सदस्य संख्या
१०००० तक पहुँच गई।^{६१}

१९४७ में ब्रिटिश शासकों ने जब काँग्रेस नेताओं की सेवा
सँधी तब वास्तविक स्थिति की वजहों से कम्युनिस्ट कटों के एक
हिस्से के लोगों ने पारी पूर को। उनका विचार था कि जाहरसात

नेहरू अन्य दक्षिणार्पण कांग्रेसियों में सबसे अधिक प्रतिशोध हैं, जिनमें उनसे नेहरू का सम्पर्क लोगों की समझ में करना चाहिए और एक राष्ट्रीय संयुक्त दल का निर्माण का कम्युनिस्ट कांग्रेस पार्टी का संयुक्त सरकार बनाने चाहिए जिसका नेहरू नेहरू को हैं। कम्युनिस्ट पार्टी को इस असीमिततावादी और जन-विरोधी नीति का पार्टी के नेता हिली के लोगों ने बहुत विरोध किया। उनका विचार था कि कांग्रेस को मुक्त: नो: त: नु: के: नु: के: और पूंजीपतियों के हितों का संरक्षण करने का है, जिनमें हमें एक विरोधी नीति चाहिए और सा प्राण्यवाद, सामंतवाद और पूंजी-स्वाधिकारवाद एवं अन्य प्रतिस्पर्धावादी शक्तियों का विरोध करने में कांग्रेस का उचित बलानि करना चाहिए।

उपरोक्त चीनी विचारधाराओं का जन्म १९४७ में हो ही गया था, लेकिन समय के साथ-साथ उन्हें कलने-पुलने का उचित बका भी मिलता रहा और १९५६ के वास्तविक अविवेकन एक पार्टी में स्पष्ट रूप से दो गुट बन गये। एक कांग्रेस समर्थक और दूसरा कांग्रेस को जन-विरोधी, विरोध। कांग्रेस - अल्पसंख्यक गुट की अपना सम्पूर्ण सक्रियता यह है किता और सो.पो.स.स.स. को २०वीं कांग्रेस में यह स्पष्ट रूप से कहा गया कि "कांग्रेस - कम्युनिस्ट एकता के द्वारा कांग्रेस - कम्युनिस्ट सहयोगी सरकार निर्माण प्रक्रिया में सहयोगी होगा। सो.पो.स.स.स. ने समाजवादी कोन के विरोध पक्ष प्रचार किया और उनसे विरोध में भारत में कांग्रेस समर्थक कम्युनिस्ट नेताओं की अपना कुल सम्पूर्ण देकर जन-विरोधी प्रचार किया। उपा सम्पूर्ण कम्युनिस्ट नेताओं ने दक्षिण-पंथी कर्तों, जिसमें

कम्युनिस्टों की पौर प्रतिक्रिया का दल को सम्मिलित है, है साथ मिलकर काम का विरोध तो किया है, साथ ही अधिभाषित कम्युनिस्ट पार्टी के एक गुट की धमक-धमकी बख्तर उठी बदनाम भी किया। हमसे कम्युनिस्ट पार्टी में विरोध और भी उग्र हुआ। और स्थिति यह हो गयी कि सजाय दल का विरोध संविधान संघ का विरोध समझा जाने लगा। इस प्रकार सो.पी.ओ.आर. के सदस्य पर चले गये कम्युनिस्ट पार्टी के एक गुट ने सजाय दल के प्रत्येक सदस्य को धमकी देने के साथ-साथ और कमजोर मोर्चा का विरोध किया और १९६४ तक जारी-जारी पार्टी की विभाजन के तार पर ला उठा गया। राष्ट्रीय परिषद् के १०६ सदस्यों में से ३२ सदस्यों की अलग एक अलग दल बनाने की विचार किया। इस पार्टी का उद्देश्य न कमजोर-सोवियत का मोर्चा है बल्कि मा-तीय सजाय दल को अधिरोधी मोर्चा का उठा विरोध और कमजोर बुनियाद संघर्ष के लिए बाधना था, इस पार्टी का नाम सो.पी.ओ.आर. (एम) रखा गया, जो दक्षिणार्ध के सो.पी.ओ.आर. की नकल मोर्चा के विरोध में कमों।

इस प्रकार सो.पी.ओ.आर. (एम) का कम अधिभाषित सो.पी.ओ.आर. के एक गुट के नेताओं के संघर्षवाद और सुधारवाद का मोर्चा के विरोध में हुआ। सो.पी.ओ.आर. (एम) ने सजाय दल की सख्ती से शास्त्र संयुक्त सरकार बनाने का भी उठा विरोध किया और एक स्वायत्त अस्तित्ववान दल का निर्माण किया, जिसने अपने मोर्चा और कार्यक्रम है।

सोशलिस्ट पार्टी (एम) का कार्यक्रम

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) का पक्का विश्वास है कि गरीबों और बैरंगारों को समझते हैं कि जब तक हम नहीं ही सकते जब तक उत्पादन के साधनों की समाजीकरण नहीं होता, जब तक सारे शोषकों का शासन नहीं ही जाता और समाजवाद की स्थापना नहीं हो जाती ।

जनता को रक्षा और तानाशाही का हमला है कि वह तब तक नहीं ही सकते जब तक हमारी वर्गव्यवस्था पर निहित स्वार्थों का कब्जा खत्म नहीं होता और जनता है कि वह एक अच्छा जिंदगी बंद करने है कि तब तक वेदा नहीं किया जाते ।

हमारी जनता की जायिक बचपनारी है प्रति वास्तविक जिसे किता न ही बर्ष निरपेक्षाता की रक्षा को जा सकता है और न साम्यवायिकता से लड़ा जा सकता है ।

जब तक बहुतायुय सम्पत्तियों की, बड़े पूंजीपतियों व कम दारों की शोषण करने के हट भिन्न रहेगा तब तक न ही देश बर्षी बड़ सकता है और न उसे तानाशाही से ही बचाया जा सकता है।

सोशलिस्ट पार्टी

सोशलिस्ट पार्टी का जन्म १९३४ में वायव्या क्षेत्र में प्रभावित होकर हुआ । इसका नाम कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी रखा गया । अपने जन्म के समय यह बल कांग्रेस की नीतियों के विरुद्ध में था और इसके

अधिकांश नेता अर्ध-प्रारम्भिक अवस्था में कम्युनिस्ट रहे चुके थे। लेकिन कोई-कोई इस पर गंभीरता का प्रभाव बहुत बारम्ब हुआ और यह अपने कामकीय नेता की पहचान कर गंभीरता के पिछले गुरु बन गये। गंभीरता के समान सबसे बड़ी पुनीति १९३४ के आस-पास बड़ी कम्युनिस्ट प्रभाव की रचना की थी, जिसके कारण गंभीरता की कार्य-समस्या को अधिक विरोधी नीति अपनायी हो रही थी और अधिकांश सर्व-समय परिवर्तन की तत्त्वज्ञान देकर जिसमें और मजदूर कार्य-समस्या के हासिल की अपना रहे थे। इस तत्त्वज्ञानिक नजर समस्या से निपटने हेतु सोशलिस्ट पार्टी का प्रयोग किया गया। अधिकांशों के लक्ष्य थे- १९३४ के आस-पास कम्युनिस्ट पार्टी का नतीजा था, यह राजकीय कामकीय के अन्तर्गत सुधारवाद के तत्त्वज्ञान की नीति से अन्तर्गत, कामकीय और लड़ाई नीतियों की अपने तरफ खिंचे रहने की। कम्युनिस्ट नारायण कौर ने इन नीतियों की कम्युनिस्ट पार्टी को लक्ष्य जाने से रोकने के लिए अपने प्रभाव का प्रयोग किया। हालांकि कम्युनिस्ट नारायण अमेरिका में कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष रहे थे, लेकिन भारत बाहर उन्होंने कम्युनिस्ट विरोधी नीति अपनाई और अन्तर्गत इस प्रयत्न में रहे कि लोगों की कम्युनिस्ट पार्टी से दूर रखा जाय।

इस नयी पार्टी के संस्थापन में भी नीति सम्बन्ध अपना कक्षा कक्ष पर १९३४ में दिया। इस अवस्था में कहा गया कि यह पार्टी मार्क्सवाद पर आधारित है। किन्तु, लेनिनवाद की नहीं मार्क्सवाद, क्योंकि लेनिनवाद का जो विशेष परिस्थितियों में काम है।

सोशलिस्ट पार्टी में आरम्भ से ही अन्तर-विरोध रहे हैं। एक और ती मार्क्सवाद पर आधारित रहने की योजना का भी और

उसने नेता दूसरो और भावभावों की हीमा समझकर कांग्रेस को तरफ
 में जाती रहे। अपने पूरे समय को दियानर यह पीछाणा करते हैं कि
 सोशलिस्ट पार्टी की वन-तंगठन में कीगी, जो: उसने सदस्य वही लोग
 ही लगेगी जो कांग्रेस के सदस्य हैं। वह कांग्रेस के अन्दर काम करेगी। इन
 अंतर्निरीष: विचारधाराओं की वल्ले का कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी गड़गड़
 रूप में चलती रही। फरवरी १९४७ के कांग्रेस अधिवेशन में जाकर प्रगति-
 शील तरफों को जिता लें जिसे फलस्वरूप कांग्रेस उपरान्त की विचारधारा
 दे दो गढ़ लेजिम इसका अर्थ यह बंद गिरी नहीं कि उसने विचारधारा
 में जोड़ बांधू परिवर्तन हुआ ही। देश की स्वाधीनता के बाद नी: लार्
 का स्वात उठ खड़ा हुआ और पार्टी में कांग्रेस से कम हीन लार्
 अस्तित्व को प्राप्त के लिए ललक बारम्बार लें। किन्तु केन्द्रिय नेता
 और वल्ले, कीमत एवं संयुक्त प्रदेश के नेता फिर भी वही चाहते थे कि
 सोशलिस्ट पार्टी कांग्रेस की विचारधारा के अनुसार की और कम्युनिस्ट
 पार्टी से छू रहे। लेकिन, देश बाँट और समितनाहु प्रदेश को बँटिया
 वह चाहते थे कि पार्टी कम्युनिस्ट पार्टी के साथ मिल कर काम करे।
 यह लड़ाई १९४८ तक चलती रही और १९४८ के नासिक सम्मेलन में कांग्रेस
 से कम हीन का विरष्य कर लिया।

मार्च १९४९ में सोशलिस्ट पार्टी के पूर्ण राष्ट्रीय सम्मेलन में
 डाक्टर राममनोहर लोहिया ने "बागे खुर्ी" का प्रांतिकारो विचार दिया।
 उसने पार्टी में जो नी: ललक का संघार हुआ। पार्टी ने अपने प्रांतिकारो
 विचारों और नी: ललकों से बनता का पनपीह लिया, लेकिन पार्टी की
 केन्द्रिय परिणाम के ललकों और तानाशाह लकी के कारण पार्टी वनी

विद्वान्ताओं की कारण न बना सके । बिना परिणाम यह हुआ कि १९५१-५२ के प्रथम आम चुनावों में अन्धों मोर्चियों के होते हुए भी पाटों की कमता में तीव्रवृत्त कर दिया, उसके कई-कई दिग्गज नेता पराजित हुए । इस चुनाव से पाटों की मारो बमबा ली और पाटों के अस्तित्व की संशय पैदा हो गया किन्तु निम्नान्तरु विमान कम्पन द्वारा पाटों के सम्मतीता करके एक ही पाटों बनाने का प्रयास किया गया । १९५२ में यह प्रयास सफल हुआ और दोनों पक्षों के विलय से प्रजा सोशलिस्ट पाटों का जन्म हुआ ।

सुप्रसिद्ध डॉक्टर और राजनीतिज्ञ लीहिया ने प्रजा सोशलिस्ट पाटों की गांधी बाबा विचारधारा की जिसमें लघु उद्योगों का निर्माण कर पूँजा के विवेन्द्रोत्थरण को बात कही गयी थी । डा० लीहिया सह-कारिता के विरोध में थे जो कि कांग्रेस को एक महत्त्वपूर्ण नीति थी । जयप्रकाश नारायण और अलीक मेहता लीहिया के विरोधी रहे । उनका विचार था कि कांग्रेस से सत्याग करके ही देश के पिछड़ेपन को दूर किया जा सकता है । अलीक मेहता का यह विचार बहुत ही विचित्र था कि कांग्रेस को नीचेवाई मिश्र भाषिण्य में सोशलिस्ट मोर्चियों के समान हो लेंगे । बात: हमें कांग्रेस और प्रजा सोशलिस्ट पाटों के बीच वैचारिक सम्मतीता कर लेना चाहिए । डा० लीहिया ने हमका प्रबल विरोध किया और कहा कि सोशलिस्ट कांग्रेस से उल्लाह हो रही किसी कम्युनिस्टों के । उन्होंने स्पष्ट कहा कि कांग्रेस के साथ प्रजा सोशलिस्ट पाटों का मोत-विषयक सम्मतीता नहीं हो सकता ।^{६७}

सुन १९५३ के पाटों अधिवेशन में डा० लीहिया ने अपनी सहायकियों की कांग्रेस-समर्थी नीति का ठट्का विरोध किया। इससे विरोध में पाटों के महापत्रों असीक मेहता और जेम्स सोन संयुक्त मंत्रियों एवं जयप्रकाशनारायण ने अपना त्याग-पत्र दे दिया। बहुत सीधे -विचार और मान-दौड़ के बाद जाफ़ो मरिदों की पेशकश से ठंठ दिया गया, लेकिन जयप्रकाश नारायण ने उद्देश्य के लिए पाटों त्याग दो और १९५४ में सर्वोच्च वर्गसितन में सम्मिलित हो गरी।

पाटों अधिवेशन में कांग्रेस सहायक विरोध प्रस्ताव पारित हो जाने पर डा० लीहिया ने प्रावणालीर -जीबोन में कांग्रेस ७७० सीकलिसिट सहायक ने जनी मंत्रिपरिषद् का विरोध किया और १९५४ में भाग्यावी प्रश्न पर पुलिस द्वारा प्रदर्शनकारियों पर गौली चलानी ज-ने का डा० लीहिया ने विरोध तो किया हो, साथ ही सीकलिसिट मंत्रों पट्टम धानु पित्तले के का मंत्रिपरिषद् से त्यागपत्र मांगा। और जब प्रथा सीकलिसिट पाटों के सरकार ने अपना त्यागपत्र प्रस्तुत नहीं किया तो १९५५ में डा० लीहिया ने एक नयी सीकलिसिट पाटों का स्थापना की।

डा० लीहिया द्वारा अपनी बला पाटों बना लेने के बाद पी०एस०पी० और एस०एस०पी० के विलय के लिए पुनः चर्चाएं जहाँ कीकन वह समय नहीं हुआ। एक फूट की बार-बार दोहराने से वह वास्तविकता नहीं बन सकती। १९६३ में पी०एस०पी० नेता असीक मेहता की कवाकरसास मेहता ने भारतीय योक्ता जायंग का उपाध्यक्ष बना द दिया और मेहता की प्रत्यु के बाद १९६६ में असीक मेहता की कांग्रेस सरकार में योजनामंत्रों

बनाया गया ।

एस०एस०पी० नारायणाय अधिवेशन अप्रैल १९६६ में कोटा में छ० सीधिया की अध्यक्षता में हुआ जिसमें पाटों की नवीन पिछा प्रदान करने के लिए समाजवादी समाज की स्थापना से, क्रांतिकारी विचार पैदा किये गये । किन्हीं स्त्रो-भ्रष्टाचार की समानता के लिए क्रांति, रंगमंच के आधार पर असमानताओं की समाप्ति, बन्धन और जाति के आधार पर असमानताओं समाप्ति, विदेशी यन्त्रों की समाप्ति और विश्वस्तरीय शासन, व्यक्तिगत सम्पत्ति के आधार पर जाति के असमानताओं का विरोध और उत्पादन में वृद्धि का सुन्मीयित प्रयास, व्यक्तिगत अधिकारों के हनन का विरोध एवं सत्ताओं को शक्ति का विरोध और सविनय अवज्ञा के सिद्धान्त का समर्थन ।

इन क्रांतिकारी विचारों की देकर एस०एस०पी० ने १९६० काम चुनाव लड़े किन्तु बाह्यतोत सफलता न मिल सकी । १९६० में डा० सीधिया की प्रेरणा के बाद पाटों केतर विचार न हो गया । पाटों के अन्दर बाँटे-बाँटे सम्पत्ति बन गये और वे जाति में हो सहेने ली । १९७९ में जाकर फिर समझौता हुआ लेकिन वह मा वल्ले समझौता को पुनरावृत्ति हो था । अतः पाटों की नीचे नीचे पिछा और शक्ति न मिल सकी ।

सोशलिस्ट पाटों का अतीत कई अंतर्निरीक्षणों में परपूर है । इस पाटों में कभी मा एक विचारधारा ने काम नहीं किया और परिणामस्वरूप पाटों टूटता रहा और फिर पैदा होता कर कुत्ते की अवकल करती रही । इस बीच समाज में सोशलिस्ट पाटों के प्रति प्रतिक्रिया की स्नेह था, कभी मो नष्ट हो गया ।

जातिवाद का राजनीतिकरण

भारतीय राजनीति में जाति का प्रभाव आरम्भ में हो रहा है। यद्यपि ब्रिटिश प्रशासन ने प्रत्यक्ष रूप से इस राजनीतिक विचार-धारा का अस्त करने का प्रयत्न तो किया किन्तु अपरोक्ष रूप में उसने इसे फलने-फूलने में सहायता दी है। भारतीय राजनीति के शरीर में जाति ने रक्त का महत्वपूर्ण कार्य किया है। जाति अब नवोदय के संवायक एवं नवजातिकावर्गों के चुनाव तक सीमित नहीं रहे हैं। उसका प्रभाव प्रधानमंत्री के चुनाव में भी प्रवेश का हुआ है।

यदि समाज विज्ञान के अध्ययन क्षेत्र की आधार मानकर भारतीय राजनीति का पिछले छठी बर्षों का अध्ययन किया जाय तो यह ज्ञात होगा कि जातिवाद का प्रभाव निरन्तर बढ़ रहा है। यह प्रभाव अब इतना बढ़ गया है कि इससे मुक्ति को जाना भी असम्भव लगने लगा है। क्योंकि यह राजीवों का जातिवाद की भुजान में बहुत कुतूहल है और इसी आधार पर अपना अधिकार बनाये रखता है। उसके पास जाति और पूँजी विप्लव भावना में है, अतः वह नाचे से लेकर ^{ऊपर तक} समाज प्रभुत्व कायम रखने में लगे हुए है। दुःख का विषय है कि भारत में ऐसे राजनितियों की संज्ञान में कोई स्थान नहीं है, लेकिन व्यावहारिक दृष्टि से इनका भावना या हो सारा देश भाव रहा है। कई उच्च कोटि के नेतामण्डल तक जातिवाद के आधार पर प्रचलित विचार के यंत्रों में निरन्तर रखी हैं, चाहे वह बाहरी रूप से ऐसे वाक्य हों कि जाति या सन्ध्याय संबंधी पैदावारों का उन्मूलन होना चाहिए।⁴⁹ राजनीतिज्ञों का एक मात्र उपदेश्य सदा-प्राप्ति है और सदा-प्राप्ति के लिए लोगों की अपनी समर्थन में रहना परमावश्यक है। और यह कार्य जाति

हो कर सकता है। अतः स्थिति यह है कि कौंधे व्यक्ति को वही वही नितना हो। यही और गुणवान् लोगों न ही, यदि उनको जाति है तो न ही। निवाचन क्षेत्र में अधिक और संगठित नहीं है, तो वह चुनाव जीत हो नहीं सकता। यदि जाति का प्रभाव है तो वह घरे के नाम पर भी जीत पा सकता है। इसलिए भारतीय प्रजातंत्र का निवाचन द्वारा जाति और घरे के घरे-घरे से हाथ नया है, जिसे अस्तित्व की नष्ट करने के लिए घरे - संघर्ष को एक विचारों हो बहुत ही।

यह विचारणा हो है कि स्वाधीनता-संग्राम की महत्वपूर्ण मांग-जिक कार्य की लेकर घरे वाता संग्राम में घरी बहुत न रह सके। उनमें प्रान्तीय स्तर तक जातिवाद के प्रभावशाली रूप के घरे की उद्धारण मिलती है। बिहार में १९२६-२७ के चुनावों में कांग्रेस कमेटी ने जाति के आधार पर कुछ चुनाव क्षेत्रों के लिए घरे उम्मीदवारों का घरे किया और उन्हें विजय दिलाने के विचार से घरे आधार पर प्रयत्न कीे गये। ^{७०} इस बात की महत्व दिया गया कि क्षेत्र-विशेष में जाति-विशेष का प्रत्याज्ञा लड़ा किया जाये और घरे का री महत्वपूर्ण जातियों की उचित प्रतिनिधित्व दिया जाये।

स्वाधीनता के परवात् कांग्रेस ने १९२५ में आवहो अधिवेशन में निरूप्य किया कि वह भारतीय तरतर्षों की राजनीति में स्थान नहीं देगे। यह एक स्वतन्त्र परम्परा का लक्षण था, किन्तु प्रस्ता की व्यावहारिक स्वरूप नहीं दिया गया और स्वाधीनता भारत में कांग्रेस में जातिवाद की और भी घरे का अवसर मिला।

जातिवाद का सघी अधिक प्रभाव बिहार में देता था सघना है। बिहार उन एम्पों में है जहाँ सघी पहले जाति का राजनीतकरण हुआ।

ब्रिटिश शासन-काल में बिहार की एक पुण्य प्राप्त बनाने में कायस्थ -
जाति की महत्तावादीताओं का विशेष योग था । इस जाति ने संपूर्ण
नागरिक-संरचनाओं पर अपना अधिकार कर रखा था । अगर वे सच्चे महत्त्व-
पूर्ण कर्म माइनों के ज्योत थे, इसका प्रमुख कारण यह था कि यह
जाति सभी अधिन ग्री-लिखों को । शासकीय दौड़ों में मुखिया, राज-
पूतों तथा शासकीयों की प्रशंसा थी ।

बिहार में सभी वर्गों का अस्तित्व न के बराबर था, वहाँ जाति
हो चल थी । जिस जाति का नेता जिस दल में है, उसी दल उसी की पकड़ी।
इसीलिए दल-बदल में भी बिहार में अपना स्थान महत्त्वपूर्ण बनाया है। बारी
की जाति का हुंका पीटा गया । जे. ए. मिश्रों का, जातिगत प्रचार
हो चुका जिसो दल ने यह नहीं बताया कि हम सभी में बाने गर किया
परिवर्तन होने १ १९५० में जो विधेयको प्रसाद मण्डल ने अपना नया दल
‘सोशलिस्ट दल’ केवल जातिवाद के आधार पर ही लड़ा दिया । मण्डल
बिहार को जैसी सबसे बड़ी जाति अक्षरों अपना यादवों के नेता के रूप
मण्डल ने सोशलिस्ट पार्टी से त्याग-पत्र देकर अपना नया दल बनाया तो
उनके सामने बहुत बड़ी समस्या आ खड़ी हुई, क्योंकि सोशलिस्ट नेता
कभी तो ठीक से इन्होंने मकौली जातियों के नेता के बौर सोशलिस्ट पार्टी
माइनों जातिवाद के आधार पर लड़ा रहे थे । सोशलिस्ट दल के नेता ने
संयुक्त-मोर्चा सरकार की उलटकर अपनी जातियों के विधायकों के समुदाय में
सरकार बनाने चाही । लेकिन, इसमें कभी यह रहे नहीं कि उसने सोश-
लिस्ट पार्टी से सम्बन्ध -विच्छेद कर लिये । इसका परिणाम यह हुआ कि
जिन २५ सदस्यों की सूची मण्डल ने दी, जिसमें अधिकांश सदस्य दलित
जातियों तथा पिछड़े वर्गों के थे, उसमें से १५ सदस्यों ने क्यूरो ठीक से

यकाब में जान् यह स्पष्ट कह दिया कि वे सीशलिस्ट पार्टी में हैं। इस प्रकार दलित और पिछड़े वर्गों की भी भागी में बाँट दिया गया ।
पिछड़े वर्ग के अधिकार सदस्य क्यूं ठाकुर के साथ थे। जनवरी १९६८ में संयुक्त मोर्चा सरकार का पतन हुआ और फिर जातिगत आधार पर दल बदल का न्या-द्वेष हुआ जिसके फलस्वरूप मंडल की मुख्यमंत्री बनाना । हालाँकि मंडल विधान मंडल के सदस्य या नहीं थे, लेकिन विधान मंडल में उनकी जाति के सदस्यों को संख्या बंधि सर्वाधिक था, बातः और किसी दूसरे जाति का नेता की बन सकता था। मंडल-मंत्रिमण्डल की स्थिति यह थी कि नये मंत्रियों और उप-मंत्रियों में तो साधू मो थे- महा सुहृद मित्र, फर्रुख राम बिहार हाथ और स्वामी विवेकानन्द । ये तीनों पहले अपनी राजनीति अपने घर के नाम पर हो जाता रहे थे । एक और घर की मुनाफ़े इन्होंने मंत्री बहिषेद प्राप्त किया , ती दूसरे और जाति की कुलीन का आधार पटना में रात-दिन चल रहा था । हीनात दल मंत्रियों को संख्या २५ पहुंच गयो , ये सभी बहुतेस मंत्री दल-बन्धु थे । जे कीर्ण का मित्रायक अन्य दल छोड़कर हीनात दल में सम्मिलित हुआ , उसे दो मंत्री-पद प्राप्त हो गया । यह कार्य दल-बन्धुओं की सभी सोमाई और सभी परिभाषाओं की तिलांजलि देकर किया जा रहा था। बिहार -प्रदेश में राजनीतिक नीतिगत अब कहाँ-कहाँ दुष्टिणीय हो रहा था । कांग्रेस के प्रभावशाली नेताओं में ब्राह्मणों का स्थान सर्वाधिक था, फलस्वरूप कांग्रेस विरोधी ब्राह्मण विरोधी सप्ताह जाने लगा और "हीनात -दल" को सरकार बनने से ब्राह्मणों की अपनी सेवा निवृत्ती नज़र आने लगी जिसे उन्होंने छटक विरोध किया । क्योंकि वह समय उनके लिए सेवा को शक्ति प्राप्त करने के बवाल में बुझा हुआ नहीं था, बल्कि उन्हें राजनीतिक जीवन-भरण से लौटा देने-साथें पड़ा था । इसी समय एक और असाधारण घटना पटी कि मंडल ने कांग्रेसियों की "मौलिक वाले दूर"

कम दिया। उस वस्तु का कील का प्रसारण हुआ कि बिहार में
बातीय कों के लक्ष उम्ह पड़ो। पुलिस अधिकारियों के वातिगत बावार
पर अन्वेषण तलाशी चले गयी और उन्का उत्खान की गया गया।^{७१}

बिहार-प्रदेश का राजनीति मुख्यतः जाति और धर्म पर आधारित है। जो जिनको बड़ो जाति का है, वह उतना ही ज्यादा होता है। राजनीतिक-नीतिगत उनमें वहाँ निश्चित रूप से गहरे हैं, इसलिए कम-बहुत जो विकास-रूप में होता है, जिसका उत्प्रेरण कुहीं से बिपरी रहना है। वे जिनो विकास-अवस्था नीति से प्रभावित नहीं हैं। उन्को प्रेरक तत्त्व हैं- धर्म-विशेष-महावाक्यान्तारों और विरोध गुटबंदी और धर्मों, जातिगत प्रतिस्पर्धाओं और धर्मों।^{७२}

बिहार के बाद जातिवाद का गढ़ हरियाणा है। हरियाणा का पंजाब से विकास में जातिवाद के बावार पर ही हुआ। विकास में पूर्ण पंजाब को राजनीति का संघर्षना पाट जाति के लक्षों में केन्द्रित था। इसके मुख्य रूप से दो कारण हैं- (१) गांधी के जाटों का संघर्ष बहुत अधिक है (२) जिलों के नामों पर अधिकतर जाटों का नियंत्रण है। पंजाब को राजनीति गया से अकाली-सोनी जातिगत राजनीति तथा अकाली और अकाली शरीरमणि गुरुद्वारा प्रमुख संघर्ष के निष्कर्षों के उद-गिराई प्रस्तावित है। प्रतापसिंह केरौ, गुरुनानक सिंह, लक्ष्मण सिंह गिल (१९५६ के १९६० तक के मुख्यमंत्री) और प्रमुख अकाली नेता संगे फतेहसिंह, लक्ष्मण सिंह राठौवाला तथा पंजाब के अन्य कई प्रभावशाली नेता जाति के जाट हैं। कहा जाता है कि पंजाब के जिले जाटों, जिसका संगे अकाली-रूप पर नियंत्रण है, और दो साल बाद नेतृत्व में हरियाणा के हिन्दू-जाटों के बीच एक

सम्पत्तियों के परिणामस्वरूप हो ज़बाद का विभाजन हुआ ।^{७३}

हरियाणा की राजनीति जो कम में तीन तरफों का विशेष प्रभाव रहा है- जाति, व्यक्तिवाद और धर्मिक सेवा-जातियों में प्रमुख जाट तथा बहोरा हैं । ये दो लोग संसिद्ध-सेवा में जाते हैं और वहाँ से लौटकर पुनः राजनीति में जाति के आधार परीत होते हैं, इसी कारण यहाँ बल से कम व्यक्ति की अधिक महत्ता प्राप्ता है। फलस्वरूप, उनके लिए यह जोल-बुल का नया है कि वे अन्य जातियों को सुना में अपनी जाति के लोगों की हो अधिक बच्चा सम्पत्तों हैं। उदाहरण के लिए गुजरात और बरेल्लनदु कीर्तों का बहोरा, बहोरा उम्मीदवार की हो फा देता है, चारे पर जिसे भी बल का नहीं न ही। यही बात राज्य के अन्य कीर्तों में देखी जाती है। बुनाब के समय वहाँ चारा सता है- 'जाट के बेटे जाट की, जाट का बेटे जाट की।' बारम्बार को बात है कि जाति का यह हल हिन्दुओं तक हा हा मित नहा, मुसलमानों में भी है । यही मुसलमानों के अपने नीति हैं और उनको भी प्रवृत्ति प्रायः वही रहती है कि अपने नीति के उम्मीदवारों की हो मत दें । और यदि प्रसिद्ध सेवा और सेवा-बल उम्मीदवारों में ही तो यही उम्मीदवारों का समर्थन लिया जाता है ।

हरियाणा के विभाजन के बाद स्वतंत्र राज्य होने पर बहोरा नेता बल का राज बारीन्द सिंह मुलामाजी बने के लिए जाटों का समर्थन लेकर ब्राह्मण-विरुद्धी स्तर में में मैदान में आयी । किन्तु ब्राह्मण नेता फावतवयास हमारे ने करीब बरिष्ठ मंडल के हस्तक्षेप के चारा जाट-बहोरा की जाटकर स्तर बल हथिया ली । इससे जाटों और बहोरा की भारी लोफ और दारिद्र्य का सम्पत्ता नाना पड़ा ।

भावतत्काल हमारे की मंत्रि-परिषद् बनायी एक मन्त्रालय हो
 हुआ था कि जातिवाद के बाजार पर दल-बदल हुए हुए और हमारे की
 स्थानपर देना पड़ा । हमारे बाद राज कोरेन्द्र सिंह संयुक्त सीमा मंत्रिपरिषद्
 ने २४ मार्च की समय को, उनमें अधिकांश जाट और बहोर थे ।

मार्च १९६७ की राज कोरेन्द्र सिंह सरकार की राष्ट्रपति
 ने बहाल कर दिया और फरवरी १९६८ में हरियाणा में पुनः चुनाव हुए ।
 इस समय हरियाणा में तीन गट थे - ब्राह्मण गट, जाट गट और वैश्य गट।
 जाट तथा उनके नेता देवोलास इस बात की कृता समझते थे कि और ब्राह्मण
 उनका नेता रहे अपना मुख्यमंत्री को । इस फरवरी १९६८ के चुनावों के एक
 सर्वेक्षण से पता चलता है कि १९६७ के आम चुनावों का परिणाम हाथ में
 रखते यदि चुनावों में भा जातिवादी तथा उप-जातिवादी का महत्वपूर्ण भूमिका
 रहा । अनुमानतः कम से कम ७५ प्रतिशत मतदाताओं ने अपनी जाति-परिचय
 या भाषा के आधार पर ही हाथ में दिया । जाति की भावना सभी सम्प्रदायों
 में प्रकट थी - हरिजनों में, मैत्री मुस्लिमों में बहोरों व जाटों में तथा तबलों
 सिन्धुओं में ।

हरियाणा का एक भाग स्थिति यह है। जाटों के नेता देवोलास
 तथा देवोलास बहोरों के नेता राज कोरेन्द्र सिंह को अपना उद्देश्य एक ही
 पारो है और जातिवाद हरियाणा के रेशे-रेखे तक में हावी है ।

पंजाब में बहाल-जाट अब भी जना जातिवाद जमाने हुए हैं।
 राजस्थान में ब्राह्मण और ठाकुरों को राजनीति है। राजस्थान के प्रमुख
 तीन मुख्यमंत्री ब्राह्मण थे और आज भी दल-बदल से और सत्ता की लड़ाई

दोनों जातियों के बीच रहा है। कभी-कभी ऐसा अवसर होता है कि दोनों
 को लड़ाई में तीव्रता साथ पार ले जाता है। उदाहरण के लिए कभी लड़ाई
 ब्राह्मण, जाट और कुुरा जातियों के बीच थी। ब्राह्मणों के नेता कम्ता-
 पति त्रिपाठी, जाटों के नेता बरणासिंह और अन्य जातियों के नेता
 कन्दमान गुप्ता थे। कन्दमान का पुत्र और बरणासिंह एवं त्रिपाठी की है
 केन्द्र में बने जाने के बाद यहाँ लड़ाई के दूसरा मोड़ ले लिया है। जब बरणा-
 सिंह के साथ साथ जाट, बहार, कुुरा और नाले की मिश्रित जाति हैं तो
 काँग्रेस के साथ ब्राह्मण और अन्य हरिजन-काँ। ठाकुर मो काँग्रेस के साथ
 हो हैं। कहने का अभिप्राय यह कि ठाकुर और निम्न-काँ काँग्रेस में मो काँ
 सम्मिलित हैं, लेकिन उन्हें प्रकट होने का अवसर नहीं मिल पा रहा है। इससे
 कारण कम्तापति त्रिपाठी की वरिष्ठ काँग्रेसी की बाहर फँस दिया गया।
 बाम्प में यह संघर्ष ब्राह्मण और ब्राह्मण के बीच है। गैर-ब्राह्मण
 जातियों में कम्तापति, रैड्डी और हरिजन हैं। इनमें हरिजनों का प्रभाव कम है।
 रैड्डी और कम्तापति का प्रांतीय-राजनीति पर हावी हैं। यह जाति का प्रभाव
 व्यक्ति की क्षमता बड़ा और गिरा देता है, इसका उदाहरण संजोव रैड्डी
 हैं। तीसरे बाप कुुरा से पूर्व रैड्डी की वंशिकता नेता नहीं थे परन्तु चार-
 चोरे उन्होंने अपनी को रैड्डी जाति का बहुत बड़ा नेता बना लिया और उसी
 के बाद पर काँग्रेस अध्यक्ष की पद को पा लिया। अपनी इस क्षमतापूर्ण प्रगति
 के बारे में उन्होंने स्वयं कहा है कि "हमने पूर्व में भारत सेवा भारत से की
 महारथपूर्ण सम्पादन नहीं था किन्तु एक वर्ग के अवसर से हम मान् अवसर की
 कर कर दिया और मुझे इस योग्य बना दिया कि मैं स्थानीय राष्ट्रीय
 समसामर्थी के राष्ट्रीय दृष्टिकोण से देश सर्व और एक दृष्टि रूप में उनकी महत्व

की सम्पत्त सन् ।^{७५} और वही साधारण नेता आति है जो वा बाप
भारत की विरात देश का राष्ट्रपति है। बलिहारी है उस प्रजासत्त की
जिमें सब कुछ जातिवाद के आधार पर ही होता है। मंपूर्ण देश की
राजनीति का संभालन जातिवाद और धर्म के आधार पर ही रहा है ।

प्रांतोय राजनीति में तो जातिवाद और धर्म की विषय-वैति
पूरी फौज की फुल है, लेकिन केन्द्राय राजनीति में इसी जगह नहीं रह
पाया । पं० जवाहरलाल नेहरू के समय तक जयरा हा घर रहा था सत्ता है
कि जातिवाद का केन्द्र में प्रभाव कम था । लेकिन नेहरू और तारकी के बाद
अर्थात् १९६६-६७ में इन्दिरा गांधी प्रमानमंत्री बनने ली उन्होंने जातिवाद की
अत्यधिक बढ़ावा दिया । अपनी मंत्रिपरिषद् में अधिकांशतः के प्राक्षुणा रक्ता
हैं, बड़े-बड़े मन्त्रवर्ग पद में प्राक्षुणाओं की मिली जाती हैं और प्राक्षुणा
में उन्हें अपना नेता मानते हैं। इंदिरा गांधी की तार-जोत प्राक्षुणा
को अपना हार-जोत मानो जाता है । १९७७ में जयरा सरकार बनाने और
उसमें जातिवाद के एक चौधरी परणामिंद को जाने । जयरा-भारत के
जातिवाद की अधिक बढ़ावा दिया । जयरा-भारत के मठन पर चौधरा परण-
मिंद की उसका उपाध्यक्ष बनाया गया और देश के बहुत बड़े मान का टिकट
जाहंगी का अधिकार भी उन्हें दिया गया । टिकट बांटते समय चौधरा परण
मिंद ने पूर्ण जाति और धर्म के आधार पर अपनी मिथ्या दी । इसी जगह-
जहां पाटों की जाघात भी लगा, लेकिन चौधरा अपना छवियों के सिद्ध भी
की मायो है, जयः प्रकृत विरोध के बावजूद भी उन्होंने उस जाघात की टिकट
की, जिसे वे चाहते थे । की जम्मु-कश्मीर में ठाकुर बलदेव सिंह की टिकट न
देकर बलदेव सिंह को टिकट दी । इसका कारण चौधरा की दृष्टि में

बामू - बीबरो का पुलिस-बख्त होना है। ऐसी स्थिति में प्रभाव विपरीत पड़ा और ठाकुर जलेश्वर सिंह स्वतंत्र प्रत्याशी के रूप में चुनाव लड़ें बीबरो को। यहाँ यह भी ध्यान है कि इन अफासताओं के दोहरे बीबरो राज्य का अल्प-ज्ञान को बाटों को साल की हानि पहुँचाने में सहायक रहा।

जनता बाटों की अज्ञात-सफलता किसी पर केन्द्र में सरकार गठन करने का अवसर आया। बीबरो जलेश्वर सिंह, बामू जलेश्वर सिंह और बीबरो को माफ़े प्रभावमयी-पद के प्रत्याशी थे। बीबरो जलेश्वर सिंह की यह ज्ञान ही क्या था कि यह सफलता उनके चुनाव-विजय का कारण बनी है। वे किसी भी हालत में प्रभावमयी पद हाँकने की तैयार नहीं थे, इससे सिद्ध उन्होंने केन्द्र में जातिवाद का प्रचार किया। लेकिन समाजवादों और अन्य प्रगतिशील सदस्यों का विचार था कि यदि किसी हरिजन की, जिसमें प्रगतिशील योग्यता और राजनीतिक गुण-गुण हैं, प्रभावमयी कामयाबी के साथ ही उसके दल की बहुत लाभ होना। इस निष्कर्ष के सम्मुख में भी ही बीबरो जलेश्वर सिंह की बातें सुना कि दल के सदस्य बामू जलेश्वर सिंह के प्रभावमयी बनने की तैयारी रहे हैं, उन्होंने पुराने को अग्रवाल नारायण की शिष्टी लिख दा कि वह बीबरो को माफ़े का प्रभावमयी होना स्वाभाविक रहेगा। यह बड़ी प्रभावमयी बात है कि बीबरो बीबरो को माफ़े की बनी मुने बैठे थे और स्वयं में माफ़े उन्हें प्रभावमयी काम देना नहीं चाहती थे, वह बीबरो जलेश्वर सिंह एक हरिजन का नाम बताते हो बीबरो जो के नाम पर सहमत हो गये। बीबरो की जातिवाद समर्थक नेता की हरिजन-निरुत्थ गुण भाव्य हो रहा था, जैसा कि हरियाणा में उनके पक्ष केवीताल की प्राप्ति का निरुत्थ।

चौधरो चरणसिंह की पंक्ति-बंद से छटायी जाने पर वह कात्ति-बाद कीर नया रंग लाया । चौधरो चरणसिंह की अब वह पूर्ण विश्वास ही गया था कि भुक्त हस्तों से पंक्ति-बंद से छटायी गया है, क्योंकि मैं जाट हूँ और जाटों के पीछे लगे हैं । सात दृष्टि आवाजी से उन्होंने एक मेट में कहा था कि "बाप सिन्धु के हैं और इसलिये यहाँ के लोगों से प्रचलित कात्ति बाजनाबाई की नहीं लम्बा होती । चरणसिंह की सरगार ने दिखाता था सकता है, बाजनाबाई की नहीं, क्योंकि वह जाटकुल है और मैं जाट हूँ ।" ^{१५} हमका अर्थ स्पष्ट है कि चौधरो चरणसिंह पर जाटवाद का रंग पूरी तरह लागू है, वह हर बटन के पीछे जाटवादका प्रमाणी देते हैं। बाजनाबाई के शब्दों में - "हमवतोनन्दन बहुगुणा में हाल हो मैं राजधानी को एक साप्ताहिक पत्रिका "साप्ताहिक हिन्दुस्तान" में एक मेट में कहा था कि श्रोमती गांधी को एक विशेष रोग है जिसे "पैर नोइया" कहा जाता है। उनके मन में सदा यह धारणा रहता है कि सब लोग उनके विरुद्ध ण्डयन्त्र कर रहे हैं। उनका कहना है कि श्रोमती गांधी स्वयं ही अपनी सबसे बड़ी शत्रु हैं । मैं श्री बहुगुणा की इस बात से सहमत हूँ। परन्तु, मेरा कहना है चौधरो चरणसिंह को भी यही रोग है और उनके मन में भी यही धारणा घर कर गयी है। अंतर केवल इतना है कि वह यह समझते हैं कि "ण्डयन्त्रकारों" केवल इस कारण उनके विरुद्ध हैं कि वह जाट हैं । इस बारे में उनकी भावना इतनी उत्कट है कि वह किसी भी सही बात पर विश्वास करने के लिए तैयार हो जाते हैं जिससे इस धारणा को पुष्टि हो । इस मनोगन्धि के कारण उनके सोचने का ढंग ही विकृत हो गया है ।

१५ जुलाई १९७९ को मोरारजी देसाई द्वारा पद त्याग कर दिये जाने के बाद एक बार फिर दल-बदल का नंगा नाच हुआ । चौधरो चरणसिंह

और उनके अनुसार राजनारायण ने एक-एक करके रघु सत्यम
 किया और चरित्रात्मक भी उन्होंने के फल में गया। इस एक-एक
 के बोले भी वास्तविक और यकीन पुणित वास्तविकता के काम कर रहे
 थे। भारत के राष्ट्रपति जिन्हें रैड्डी वाति-विहीन के नेता होने के
 कारण ही यह परिभाषा पर मिला, इस फल के उपयुक्त काम न कर
 सके। " के अपने व्यक्तिगत कृत्यों से प्रेरित थे। विरवाच किया
 जाता है कि उन्हें फल में बाबू काजीवन राम के प्रति बहुत सख्त ही देश
 का भावना फल रही था और पिछले ही वक्तों में उन्हें भीरारजी भाव
 से भी धिक्की की गई थी। जो लोग राष्ट्रपति से मिलते रहे हैं, उन्हीं
 राष्ट्रपति में यह बात कभी नहीं हुआ कि वह जो क्लेश की सत्य नहीं
 करे। " राष्ट्रपति और चरणसिंह दोनों ही बड़े और छोटे जातियों
 से उन्हीं बड़े-भूमे बैठे थे वतः भीरे का साम उठाते हुए उन्होंने चरणसिंह
 की प्रवानकीय बनाना इसलिये स्वीकार कर लिया कि चरणसिंह का
 बाट केही बाप का वाति के नेता हैं और स्वयं रैड्डी भी बाप का वाति
 के नेता हैं। कुछ राजनीतिक विश्लेषणकारों ने इस पर अपना टिप्पणी
 इस प्रकार लिखा - " वही बाप का वाति - चरणसिंह, सरदार
 स्वर्णसिंह, देवराज अर्ध - एक छुट ही नहीं और बांग्र का एक बाप का
 वाति के सदस्य ने उन्हीं इस छुट्टी पर अपना बदहस्त रखा था। " ८०
 केही चरणसिंह के सम्बन्ध में यह टिप्पणी गलत नहीं है। उन्होंने कता
 सरकार की प्रांतीय सरकारें कता समय उन्होंने बाप का वाति के
 नेताओं की मुख्यमंत्री पर संधि, जिन्हें हमारे स यादव, उ०प्र०, देवीसाह
 बाट-चरियाणा, भासमणि रत्नतराय यादव उड़ीसा और रफी ठाकुर
 भाव - बिहार प्रमुख हैं। यदि हम उपर्युक्त टिप्पणी को गलत भी मानें

ती क्या कारण है कि बीबरा ने पल्ली से हाँ करिअन और झाड़ुणा
 विरोध करके हम बोब को जातियों की प्राप्ति में सहायता दी। यहाँ यह
 भी दृष्टव्य है कि बाणासंह के प्रधानमंत्री बनने के समय उनकी मजदूरी राज-
 नारायण यह कहती फिर रहे थे कि "झाड़ुणा फिर से सहायता देने
 की योजना बना रहे हैं।" ⁵¹ राजनारायण का यह दुष्प्रचार वास्तविकता
 की ओर को गहरा रहा था। भारतीय राजनीति में जातिवाद का प्रभाव
 वास्तविक दृश्य कि जहाँ राष्ट्रपति ने लेकर प्रधानमंत्री तक के बीच का स्तर
 जातिवाद पर टिक गया है, पल्ली का हमारे मन और मोड़ों में देखने
 की नहीं मिलता। राजनीति का फल को इस स्थिति पर हमेशा की संतुष्टि
 राजनारायण की हमारे जाने निकल गयी कि उनमें सिद्ध समस्त उपमाएँ को
 हीटो रह जाती हैं। "टाइम्स आफ इंडिया" ने लिखा है कि "पल्ली
 कुछ वर्षों में किसी भी व्यक्ति ने सामाजिक जीवन का स्तर हमारा नहीं
 गिराया, और उनके प्रति हमारी पूर्ण उत्पन्न नहीं की मिलती कि राज-
 नारायण ने।" ⁵² उसी दिन "इंडियन इक्विप्रि" ने अपने संपादकत्व में
 राजनारायण की "कैलाश रेट लाय" (कैलाश व्यक्ति की कारण नाश करे)
 की संज्ञा की। संपादक ने लिखा - "जहाँ राजनारायण ने लीज्जत की जी
 जाति पहुँचाई है उनकी हमें कीवें किता नहीं है, किता हम जानते हैं कि
 राजनीतिक नीतिज्ञता के माफकडों का पूर्णपणे की काम ही रहा है
 और कीवें उसी रीति की देखी नहीं करता।" ⁵³

हम विचार परिस्थितियों में देश के उदयान की बात करना
 वास्तविकता है, की नेता उच्च-पदस्थ और भी हमारे निम्न-स्तर के
 विचार रहते हैं, हमारे समता के क्षिति की कामना करना कोल के क्षिति
 में नाश के कदाचित की परिवर्तन करना है। राष्ट्रपति कैलाश का विचार

सम्मान मात्र तथा का मकसद ही नहीं, एक मावणात्मक -सुख को प्रत्येक
बहुते मा है, या फिराये जातिवाद पर बाधारित ही ती, स्थिति
की विनामता से मुँह मीड़ना , सत्य की नकारना हीना और सत्य ही
सत्य होता है उसे नकारना बुद्धिमत्ता तो क्यापि नहीं ही मकसद ।

जातिवाद का यह खौड़ पैत को रग-रग में समा गया है ।
यहाँ जाति में मा उपजाति है, अतः उनका मा प्रभाव पड़ता है । श्री
१९८० के लोक-समा कुतर्कों में श्रीमद् जनपद से लोकसत्ता को समझने गोमती
हमिदरा कुमारी ने इस उपजाति के नाटक को लेता और उन्हें उपलब्धता
को भिन्न । श्रीमद् को खोट श्रीमद् नगर ने बाहर नावों से मा कुतर्कों
है और नावों को स्थिति में ठाकुर, ब्राह्मण और हरिजन प्रमुख हैं ।
ब्राह्मण और हरिजनों के मा काँग्रेस (४) की भिन्न, लेता निरिक्त मा,
अतः ठाकुर मा की लीड़ना लोकसत्ता को प्रत्याहार के लिए आवश्यक है
या । ठाकुर में मा का प्रभाव है । श्रीमती हमिदरा कुमारी स्वयं
तीमरी को खेट है और यदुर्लभों में जाही है । इन दोनों उपजातियों
का मा उन्हें भिन्न आवश्यक नहीं था, क्योंकि अधिकारी यदुर्लभों काँग्रेस
(४) में है, अतः यह मा काँग्रेस (४) की भिन्न था । श्रीमती हमिदरा
कुमारी ने यह नाटक बहुत अच्छी तरह लेता । जब वह तीमरी के नावों
में गई तो उन्हें कहा कि मैं जापना खेटी हूँ कुतर्कों अपना मा है" और जब
वह यदुर्लभों में गया तो कहा सच्चा-सा पृथ्वी बारबर बहुत कमजोर गयो
और कहा कि दादा में ती जापनी बहुत हूँ कुतर्कों अपना मा दापनी ।"
और यदुर्लभों ने अपनी यह की इस कार्यवाही से प्रसन्न होकर मात्र जापना
मा ही नहीं दिया वरन् विदा मा भी । क्योंकि उनका बहुत उनके यहाँ
पड़ती बार जापना है। यहाँ यह मा प्रष्टव्य है कि श्रीमती हमिदरा कुमारी

नमाना को मृतपुर्वा रानो हैं, उसीलिए ठाकुरों ने अपनी बहू बीर देवी
 को अपना मत्त किया। रानो के स्वाम पर यदि कोई सामारण परिवार
 को ठाकुर महिला कुत्ता लड़ती बीर वह भी उसी नाटक में लेखती ती
 न बीर मिली बीर न किया हो। इस प्रकार हमारे यहाँ जाति में जो
 कई बीर बीरों का पैदा होता जाता है। यदि बीरों परणामिह के स्वाम
 पर मयूत-बलीगढ़ का लीव जाट छड़ा हो जाय बीर जाटवाद के बापार
 पर का मार्गें ती उनको नमाना-जम्हा हो हीगो। जाटों में जो बीर
 बीर कई का इतना प्रभाव है कि मैरठ के जाट मयूत-बलीगढ़ के जाटों को
 जाट ही नहीं मानता, विवाह का-प्राप्ति के अकार है। संभवतः श्रो
 लीव बटना हीगो कि मैरठ के जाट ने मयूत-बलीगढ़ के जाट के यहाँ
 अपनी लड़कों का विवाह किया हो। इसका कारण स्पष्ट है कि मयूत-
 बलीगढ़ के जाट मैरठ के जाटों को जीता मानते हैं। मैरठ के जाट जहाँ
 इनको मरपू उलगा करते हैं, यहाँ वे उन्हें अपना सम्मान्य बीर मान
 मानते हैं। लीवायों का नाम जो मयूत मिले के जाट-जम्हा लोग में हैं।
 यहाँ कुत्ता के समय लीवायों में होता है कि लीवायों का प्रत्याशो जाट
 ती होता हो है, साथ ही ऐसे वह जो बार-बार बहना पड़ता है कि मुझे
 बीरों परणामिह के बावले पास मेरा है बीर अब का कटती हैं ती जाट
 उस प्रत्य हो ती यहाँ बीरों परणामिह को अपना मत्त देती हैं। उन समय
 हमसे पूछा जाय कि अपना मत्त किो देकर बायी हो ती कि कैदुन बीरों
 बावले की कह ती हैं। जबकि बीरों बावले की ठन्हीमें बावले तक नहीं देता।
 हाँ, यह अवश्य है कि कड़ो-कड़ो बीरालों पर बीरों परणामिह का बहुत
 पुराना विश्वास अवश्य होता है।

बाबू काबोवन राम को भी यही स्थिति है। वे हाथों को
 बिना हरिकन के पर पानी पोते हैं, परन्तु हरिकन उन्हें अपना नेता
 मानते हैं। हातांकि, अब स्थिति में कुछ परिवर्तन अवश्य आया है, लेकिन
 हालांकि नहीं कि बाबू को का फुलाका एक सामान्य हरिकन कर रहे हैं।
 हरिकनों में जो अब दो गुट बन गये हैं, जाटल और बाटमोतिर तो
 बतल-बतल है जो साथ ही जाटलों में भी दो गुट हैं- एक बह सुविधा
 मीनो जाटल-का है, जिसे स्थापना के बाद हरिकन-बहायता के नाम
 पर जमकर बप त पर मरा है, और बाटल सुविधार्थ रस में और
 सम्बन्धियों ने मीनो हैं। दूसरा, जाटल का वह भी अतिपात है, जो
 किता भी प्रकार को सुविधा नहीं मिल सका। यह सबके बच्चों को
 हाथपुटि ही, निःशुल्क सुविधा ही, निःशुल्क बमोन का पितरका ही,
 परकारो सेवाओं में आरक्षण ही अथवा सुविधात मिताबिन दीव्र ही,
 उस बरोन को कुछ भी नहीं मिल सका। बूँकि स्थापना के पर-बाबू
 बाबू काबोवन राम को बनें हरिकन नेता के और वे स्वयं जाति के जाटल
 हैं बतः अधिकतर सुविधार्थ जाटलों ने तो हैं। बाटमोतिर समाज अतिपात
 और उपेक्षात हैं। शोषाथ ने पुस्तकों से तथ्य लेने के साथ ही रस हरिकन
 पुस्तकों में बाबर लामन की स्मार हरिकनों के शाशासक किता है और
 अपनी इस विचार की तथ्यात्मकता को है। हरिकनों (बाटमोतिर) के
 फन में जाटलों के प्रति आक्रोश है। आक्रोश हीना सामाजिक भा है
 क्योंकि उनका कहना यह है कि जाटल अब सुविधा का नम्बर जाता है
 तब तो हरिकनों के नाम पर अब कुछ ठकार आती है, किन्तु बाटमोतिरों
 के साथ ही रहे अत्याचार का प्रश्न आता है, तब वे अपनी की उच्च-

कारि का प्रदर्शित करते हैं। उनका यह भी कहना है कि चूंकि हरिजन समाज सुधार अधिकारी भी बाध्य होते हैं, अतः वे भी हमारा हीनता करते हैं। " इस प्रकार हरिजन उत्थान के नाम पर भ्रष्टा समस्त सुविधा की वही कां ने छुपा है और वास्तविक अच्छी रहे गयी हैं। सरकार इस तथ्य से अनभिज्ञ है, ऐसा बात नहीं है, बल्कि उसमें सुधार करने का साहस हो नहीं है। बाध्य संस्था में जो अधिक हैं और इन ३५ वर्गों में उन्होंने अपना विकास कर नये-वर्ग का निर्माण किया है, जो एम० एल० ए०, एम० पी०, पी० ए० सरकारी कर्मचारी हैं और हरिजन-वर्गों के वहाँ पर हैं यह गरीबों-बर्गों लक्ष्यों का हरिजन उत्थान योजना का परिणाम है ।

ये सभी वास्तविकताएं हैं, जो ही मुंह खुले पर हाथों से संभावना हो अधिक हैं। अतः उनका निम्न भी आवश्यक है। धर्म, जाति और धर्म के बर्गों पर लटका यह प्रजासत्ताय-नेहरू अधिक दिन नहीं चलाता । इससे पीले स्तम्भों में संभावना और प्रजासत्ताय का दोषक बन गये हैं, जो समय रहती खुल जाया जाना आवश्यक है। प्रजासत्ता को यह परि-माणता कि " जनता की सरकार जनता द्वारा जनता है " कि " हीन कूटो पड़ गये हैं और अब यह परिमाणता उचित लगती है कि " प्रजासत्ता में एक वर्ग विशेष की सरकार वास्तविक रूप धर्म के नाम पर गरीब जनता का रक्षित-पान करने के लिए होती है । "

संयम-

- १- राष्ट्र संरक्षण - मानव संसाधन, पृ० ११९
- २- फ्रीडरिच लीस - परिवार, व्यक्तिगत सम्पत्ति और उच्च राजपूतों की उत्पत्ति, पृ० २३०
- ३- शक्ति बन्ध - मानववाद क्या है, पृ० १८
- ४- कार्ल मार्क्स, फ्रीडरिच लीस - कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र, पृ० ४१
- ५- -वही - पृ० ४८-४९
- ६- -वही - पृ० ४३
- ७- -वही - पृ० ४४
- ८- कार्ल मार्क्स, फ्रीडरिच लीस - संगठित रक्षाएँ, भाग-१, पृ० १८
- ९- शक्ति बन्ध - मानववाद क्या है, पृ० ४७
- १०- डॉ० लैडीन्ट्रीव - राजनीतिक व्यवस्था की प्रणाली, पृ० १६४
- ११- ए०आर०कैताए - भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक दृष्टिकोण, पृ० ११
- १२- -वही - पृ० ३३
- १३- -वही - पृ० ४०
- १४- रानी पाम्पट - जाज का भारत, उद्घुत, पृ० १३३
- १५- ए०आर०कैताए - भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक दृष्टिकोण, पृ० ६६-६७
- १६- -वही - पृ० ६७
- १७- रानी पाम्पट - जाज का भारत, उद्घुत, पृ० १५४
- १८- -वही - पृ० ११४-१५
- १९- -वही - पृ० १४२
- २०- -वही - पृ० १४२-४३

- २१- -बही- पृ० १४३
- २२- -बही- पृ० १४६
- २३- -बही- पृ० १४३
- २४- -बही- उद्धृत पृ० १४३-४४
- २५- -बही- पृ० १४८
- २६- -बही- पृ० १४९
- २७- ज्योत्सनासिंह - भारत का मुक्ति संग्राम, पृ० १०-११
- २८- -बही- पृ० १२
- २९- रमिष वन्तर् - माक्सवाद क्या है, पृ० ३४
- ३०- ज्योत्सनासिंह - भारत का मुक्ति संग्राम, पृ० १६
- ३१- ए०आर०देसाई - भारतीय राष्ट्रवाद को सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ० ८४
- ३२- -बही- पृ० ८५
- ३३- रजनी पामद - जाय का भारत, पृ० १६२
- ३४- -बही- पृ० १८०
- ३५- ए०आर०देसाई - भारतीय राष्ट्रवाद को सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ० १६२
- ३६- -बही- पृ० १६२
- ३७- रजनी पामद - जाय का भारत, पृ० २३९
- ३८- ए०आर०देसाई - भारतीय राष्ट्रवाद को सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ० १४४
- ३९- रजनी पामद - जाय का भारत, पृ० १३२
- ४०- ए०आर०देसाई - भारतीय राष्ट्रवाद को सामाजिक पृष्ठभूमि, उद्धृत, पृ० ११
- ४१- -बही- पृ० ११
- ४२- रजनी पामद - जाय का भारत, पृ० ४
- ४३- डा० कुंजरभासिंह - हिन्दा उपन्यास : सामाजिक चेतना, पृ० १४२

- ४४- लोक सत्तर, साप्ताहिक, दिनांक १४-१-१९७१
 ४५- ज्योत्स्नासिंह - भारत का मुक्ति संग्राम, पृ० १६०
 ४६- -वही- पृ० १२८-२९
 ४७- संकरपाल शर्मा (सं०) - इंडियन पार्लियामेंट पाटोके, पृ० २
 ४८- डा० सुंदरपालसिंह (सं०) प्रेमचन्द का क्या संसार, पृ० १९
 ४९- प्रेमचन्द- गद्य , पृ० १७२
 ५०- ज्योत्स्नासिंह - भारत का मुक्ति संग्राम, भूमिका, पृ० VIII
 ५१- डॉ० राम० लाल मंडेरिपाद- समकालीन भारत : संक्षेप संस्कृत, पृ० ४-५
 ५२- सुंदरसिंह मंडारी - इंडियन पार्लियामेंट पाटोके, पृ० १२१
 ५३- -वही- पृ० १२३
 ५४- -वही- पृ० १२३
 ५५- -वही- पृ० १२५
 ५६- -वही- पृ० १२५
 ५७- अमेरिकी राष्ट्रपति शोमन - अमर उवाचा, दि० १०-६-८२, पृ० ६
 ५८- डा० सुंदरपालसिंह - प्रेमचन्द का क्या-संसार, उपपुत्र , पृ० १०२
 ५९- डा० श्रीमन्मनाथ शर्मा- अप्रकाशित राजनीतिक इतिहास, पृ० २५५-५६
 ६०- लाल० लाल कृष्णन (सं०) इंडियन पार्लियामेंट पाटोके, पृ० ६९
 ६१- -वही- पृ० ७०
 ६२- डॉ० राम० लाल मंडेरिपाद - (सं०) इंडियन पार्लियामेंट पाटोके, पृ० ६१
 ६३- ज्योत्स्नासिंह - भारत का मुक्ति संग्राम, पृ० ६२८। ६४- -वही- पृ० ६२८
 ६५- रामचन्द्र मुस्ता (सं०) इंडियन पार्लियामेंट पाटोके, पृ० २६०
 ६६- -वही- पृ० २६३
 ६७- -वही- पृ० २६३
 ६८- -वही- पृ० २६०
 ६९- डा० राममनीहर लोहिया- कास्ट सिस्टम वन इंडिया, पृ० १७२

७०- डा० राजेन्द्रप्रसाद - बाटीबायीझाफो , पु० ८२९

७१- डा० सुमान कश्यप- दल-वक्त्र और राज्यों की राजनीति, पु० २३९

७२- -वही- पु० २३३

७३- -वही- पु० २५२

७४- -वही- पु० १३९

७५- -वही- पु० १४३

७६- डा० सुमान कश्यप- सं० भारतीय राजनीति और राजनीतिक दल,
पु० १२८

७७- लाल लुक्का बाहुवाणी - विश्वासघात , पु० २९

७८- -वही- पु० २८

७९- -वही- पु० ६९

८०- -वही- पु० ६९

८१- -वही- पु० ११५

८२- टाहमस काफे इंडिया, ४ अक्टूबर १९७९

८३- इंडियन ए ग्रीस, ४ अक्टूबर, १९७९

बसुन्धरा कल्याण

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100 101 102 103 104 105 106 107 108 109 110 111 112 113 114 115 116 117 118 119 120 121 122 123 124 125 126 127 128 129 130 131 132 133 134 135 136 137 138 139 140 141 142 143 144 145 146 147 148 149 150 151 152 153 154 155 156 157 158 159 160 161 162 163 164 165 166 167 168 169 170 171 172 173 174 175 176 177 178 179 180 181 182 183 184 185 186 187 188 189 190 191 192 193 194 195 196 197 198 199 200 201 202 203 204 205 206 207 208 209 210 211 212 213 214 215 216 217 218 219 220 221 222 223 224 225 226 227 228 229 230 231 232 233 234 235 236 237 238 239 240 241 242 243 244 245 246 247 248 249 250 251 252 253 254 255 256 257 258 259 260 261 262 263 264 265 266 267 268 269 270 271 272 273 274 275 276 277 278 279 280 281 282 283 284 285 286 287 288 289 290 291 292 293 294 295 296 297 298 299 300 301 302 303 304 305 306 307 308 309 310 311 312 313 314 315 316 317 318 319 320 321 322 323 324 325 326 327 328 329 330 331 332 333 334 335 336 337 338 339 340 341 342 343 344 345 346 347 348 349 350 351 352 353 354 355 356 357 358 359 360 361 362 363 364 365 366 367 368 369 370 371 372 373 374 375 376 377 378 379 380 381 382 383 384 385 386 387 388 389 390 391 392 393 394 395 396 397 398 399 400 401 402 403 404 405 406 407 408 409 410 411 412 413 414 415 416 417 418 419 420 421 422 423 424 425 426 427 428 429 430 431 432 433 434 435 436 437 438 439 440 441 442 443 444 445 446 447 448 449 450 451 452 453 454 455 456 457 458 459 460 461 462 463 464 465 466 467 468 469 470 471 472 473 474 475 476 477 478 479 480 481 482 483 484 485 486 487 488 489 490 491 492 493 494 495 496 497 498 499 500 501 502 503 504 505 506 507 508 509 510 511 512 513 514 515 516 517 518 519 520 521 522 523 524 525 526 527 528 529 530 531 532 533 534 535 536 537 538 539 540 541 542 543 544 545 546 547 548 549 550 551 552 553 554 555 556 557 558 559 560 561 562 563 564 565 566 567 568 569 570 571 572 573 574 575 576 577 578 579 580 581 582 583 584 585 586 587 588 589 590 591 592 593 594 595 596 597 598 599 600 601 602 603 604 605 606 607 608 609 610 611 612 613 614 615 616 617 618 619 620 621 622 623 624 625 626 627 628 629 630 631 632 633 634 635 636 637 638 639 640 641 642 643 644 645 646 647 648 649 650 651 652 653 654 655 656 657 658 659 660 661 662 663 664 665 666 667 668 669 670 671 672 673 674 675 676 677 678 679 680 681 682 683 684 685 686 687 688 689 690 691 692 693 694 695 696 697 698 699 700 701 702 703 704 705 706 707 708 709 710 711 712 713 714 715 716 717 718 719 720 721 722 723 724 725 726 727 728 729 730 731 732 733 734 735 736 737 738 739 740 741 742 743 744 745 746 747 748 749 750 751 752 753 754 755 756 757 758 759 760 761 762 763 764 765 766 767 768 769 770 771 772 773 774 775 776 777 778 779 780 781 782 783 784 785 786 787 788 789 790 791 792 793 794 795 796 797 798 799 800 801 802 803 804 805 806 807 808 809 810 811 812 813 814 815 816 817 818 819 820 821 822 823 824 825 826 827 828 829 830 831 832 833 834 835 836 837 838 839 840 841 842 843 844 845 846 847 848 849 850 851 852 853 854 855 856 857 858 859 860 861 862 863 864 865 866 867 868 869 870 871 872 873 874 875 876 877 878 879 880 881 882 883 884 885 886 887 888 889 890 891 892 893 894 895 896 897 898 899 900 901 902 903 904 905 906 907 908 909 910 911 912 913 914 915 916 917 918 919 920 921 922 923 924 925 926 927 928 929 930 931 932 933 934 935 936 937 938 939 940 941 942 943 944 945 946 947 948 949 950 951 952 953 954 955 956 957 958 959 960 961 962 963 964 965 966 967 968 969 970 971 972 973 974 975 976 977 978 979 980 981 982 983 984 985 986 987 988 989 990 991 992 993 994 995 996 997 998 999 1000 1001 1002 1003 1004 1005 1006 1007 1008 1009 1010 1011 1012 1013 1014 1015 1016 1017 1018 1019 1020 1021 1022 1023 1024 1025 1026 1027 1028 1029 1030 1031 1032 1033 1034 1035 1036 1037 1038 1039 104

चतुर्थ अध्याय

“ मैना बीकन और परती:परिकथा ”

रेणु के प्रारम्भिक दो उपन्यास “मैना बीकन ” और “परती परिकथा” ग्राम-भिरितक उपन्यास हैं । ग्रामीण जीवन के बारीक रेशों को जिस कलात्मकता के साथ सजाया गया है वह मात्र यथार्थ जीवन की अभिव्यक्ति ही नहीं बल्कि कथाकार की वस्तुस्त-जीवन की संकृति का प्रतीक है । उपन्यासकार के लिये यह आवश्यक भी है कि उसका सम्बन्ध दैनन्दिन-जीवन की प्रत्येक छटना से जुड़ा हो। दैनन्दिन-जीवन की छटनाओं और उसके मूल में पहुँचने के लिये उसके मन में जिसनी उदपटाहट होगी ,वह उतना ही बड़ा लेखक होगा । इसीलिये उपन्यासकार व्यक्ति के भाग्य की कहानी उस समय तक नहीं लिख सकता जब तक कि वह सम्पूर्ण वास्तविकता के इस सुस्पष्ट-सुस्थिर दर्शन से भी सेत न हो । उसमें यह समझ होनी चाहिए कि जीवन की ये विविध परिस्थितियाँ कौन सी हैं जिसकी कदाचित्त उन व्यक्तियों में से प्रत्येक ऐसा बना है जैसा कि वह है । रेणु के इन दो प्रारम्भिक उपन्यासों में यह समझ स्पष्ट है । इन उपन्यासों में मात्र सतही वर्णन ही नहीं बल्कि परिलक्षित-परिणामों के मूल में कौन-सी परिस्थितियाँ काम कर रही हैं, लेखक ने स्पष्ट किया है ।

रेणु के ये दो उपन्यास स्वातन्त्र्य-योत्तर मीच के तीव्रता

के साथ बदलते प्रतिमानों को धानी देने में लगे हैं। गीत की सम्पूर्ण अछाई और बुराई के साथ रेणु साहित्य की देखभाल में प्रवेश करता है, " उसका गीत जैसा भी है - संपूर्णता के साथ उसे चिह्नित किया है।" इसमें क्लृप्त भी हैं शून्य भी, धून भी है गुंजाव भी, कीचड़ भी है चन्दन भी, सुंदरता भी है कुम्हता भी - मैं किसी से भी दामन बचाकर निकल नहीं पाया।" इसका कारण उनकी जीवन के प्रति कुंम पकड़ और रचना-धर्मिता के प्रति आस्था है - " कथा की सारी अछाइयों और बुराइयों के साथ साहित्य की देखभाल पर आ खड़ा हूँ ; पता नहीं अछा किया या बुरा। जो भी हो, अपनी निष्ठा में कभी सहस्र नहीं करता।"

साहित्य की अन्य विधाओं और उपन्यास में अन्तर भी लेखनीय आस्था और यथार्थ जीवन की कुंम पकड़ का ही है। उपन्यास यथार्थ से हटकर जीवन्त नहीं रह सकता, जब कि अन्य साहित्यिक विधाओं के साथ ऐसा नहीं है। उपन्यास मात्र आत्मिक गद्य नहीं है, वह मानव के जीवन का गद्य है - ऐसी पहली कला है जो सम्पूर्ण मानव को लेकर उसे अभिव्यक्ति प्रदान करने की चेष्टा करती है। उपन्यास को अन्य कलाओं से अलग करने वाली महान विवेकता यह है कि उसमें गुप्त जीवन को प्रत्यक्ष करने की शक्ति है। इस प्रकार यह कला कविता या नाटक या सिनेमा, या चित्रकला या संगीत से यथार्थ का एक भिन्न दृश्य प्रस्तुत करती है। "मेला बाका" और "परती परिकथा" वास्तव में दो ऐसे ही उपन्यास हैं। जिनमें सम्पूर्ण मानवीयता अपनी आस्था और अस्मिता के साथ विस्तृत-कमक पर उद्घाटित होती है। हिन्दी के प्रबुद्ध आचार्यों ने अब तक रेणु के इन दो उपन्यासों की समीक्षा करते

तब उसकी अंकीय गन्ध की सुँघकर उन्हें "बीधनिक-उपन्यास" कहकर द्वितीय शक्ति में बँटा दिया। यह रेंगू के साथ अन्याय है। उनके ये दो उपन्यास मात्र अंकीय चिन्तन के ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत के बदलते गीत का चित्र प्रस्तुत करने में काम हैं। अंकीय का लहारा तो मात्र सैकड़ों ईमानदारी का प्रमाण है। इन उपन्यासों के सम्बन्ध में यह मत अत्यधिक उपयुक्त है कि, "ग्रामीण-जीवन की वास्तविकताओं को उजागर करने वाले इन महत्त्वपूर्ण उपन्यासों पर बीधनिकता का लेखन लगाकर उन्हें जानबूझकर एक ओर धोखे का प्रयास किया गया।" रेंगू के ये दो उपन्यास प्रेमचन्द की समाजोन्मुख और मोददेव परम्परा की आगे की दो मजबूत कड़ी हैं। इन उपन्यासों में चित्रित सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं और उनके अन्तर्विरोधों का विश्लेषण ही हमारा यही अभीष्ट है।

॥ ४ ॥ भुत्तामियों का बहुता प्रभुत्व :-

भारतीय ग्राम्य-जीवन की आय का मूल-स्रोत कृषि है। कृषि ही वह मूल मन्त्र है जिसने सम्पूर्ण ग्राम-जीवन को बाध रखा है। कृषि आय का साधन है और आय हमारी मानसिकता का निर्धारण करती है। भारतवर्ष में 73 प्रतिशत जनसंख्या गाँव में निवास करती है। इतनी विशाल जनसंख्या जिस देश में मात्र कृषि पर आधारित है, वहाँ बाजाबंदी के 35 वर्ष बाद भी उनके हितों को अनदेखा किया जाता रहा है। सरकारों नीतियों के परिणाम स्वल्प "ग्रामीण क्षेत्रों में कुजीवादी

आधार पर कृषीय-विकास का प्रभाव समान रूप से यकीनारी है मुजारे से लेकर एक बाजार अर्थव्यवस्था तक और कृषि पूंजीपतियों और धनी किसानों के बहुते हुए तत्त्वों के मुनाफे के लिये सम्पूर्ण कृषि अर्थव्यवस्था का द्रुतस्वा-
न्तरण गांवों में सामाजिक जीवन के आधार में रदबोवधन भा रहा है ।
गैर-आर्थिक जोत के स्वामियों के लिये यह बहुत प्रतिकूल स्थिति पैदा करता है ।⁶ इस व्यवस्था से असमानता की खाई और भी चौड़ी हुई है ।
और जीवन-निर्वाह की ओर मुकाबल वाले कुकर्मों को बाजार के लिये उत्पादन करने वाले ,प्रतिस्पर्धी, मुनाफे के पीछे दौड़ने वाले किसानों में स्वाभ्यस्तित कर दिया है । इस प्रकार हमने उन व्यापक अनाभ्यस्तित समूहों को जबरदस्त असुविधा में डाल दिया है जो अन्य तीताधनों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं ।
ग्रामीण क्षेत्र में नये पूंजीवादी और समूह सम्बन्ध किसानों के साथ असमान प्रतिद्वन्द्वता के परिणामस्वरूप मध्य और गरीब क्षितिकर्ता [और समान क्षितिकर्ता हर मजदूर और तबाह छोटे कारीगर] की आर्थिक दशा बिगड़ गई है ।
कांग्रेस सरकार बीज, उर्वरक, सिंचाई, बिजली की सुविधाएं ,पुष्ट जैसी सुविधाएं केवल उनकी ही प्रदान करती है जो उनके लिये भुक्तान कर सकते हैं अथवा जिम्मी साख है, ऐसी कांग्रेस सरकार की कृषि नीतियों के परिणामस्वरूप कुकर्मों के निम्न स्तर के लिये प्रतिस्पर्धात्मक सर्वत्र अधिकाधिक प्रतिकूल होता जा रहा है । हमने कृषीय-ग्राम जनता के बीच व्यापक अस्तीच पैदा किया है । और परिणामस्वरूप उन धनी तत्त्वों, जो कांग्रेस सरकार के विविध कृषि कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से मजबूत हुए,और उन तत्त्वों जो परिणामतः कमजोर और कमजोरे होते जाते हैं ,के बीच सर्वत्र तेज हो रहा है । एक प्रतिद्वन्द्वतापूर्ण बाजार

अर्थव्यवस्था के सम्बन्धों के बढ़ते हुए जाल में अधिकाधिक जैसे मध्य तथा गरीब तबके एक-दूसरे का दूर-दूर पर गरीब बनाये जा रहे हैं और जड़ से उखाड़े जा रहे हैं।⁷ इस भयंकर परिणाम से रेणु अत्यधिक चिन्तित थे, जिसका प्रमाण उनके प्रथम दो उपन्यास हैं।

“मेला बीकन” रेणु का प्रथम उपन्यास है। इस उपन्यास में भूमि के केन्द्रीयकरण के कारण निरन्तर बढ़ते भूस्वामी-वर्ग के शोका और दमन का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। जमींदारी-उन्मूलन के साथ बड़े-बड़े जमींदारों ने कृषि-भूमि का इस प्रकार प्रबन्ध किया कि उनकी जमीन भी बच गई और सरकार से जमींदारी-उन्मूलन के नाम पर मुआवजा भी ले लिया। इन बड़े जमींदारों ने अपने सरकारी-कर्मचारियों के साथ धनिक-सम्बन्ध और रिरक्त के बल पर फालसु भूमि को अपने ही सम्बन्धियों के नाम कर कृषि-भूमि को सुरक्षित रखा। यद्यपि सरकार को इस बारे में जानकारी थी किन्तु उसे नीम-चौर, चौर मोतेरे भाई। इसीलिये विरोध रूप से बिहार में इन जमींदारों पर खदलते नियमों और भूमि-सुधार कानूनों का कहीं कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ा। जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के बाद ऊपर का एक वर्ग 500 एकड़ से अधिक जमीन वाला समाप्त होकर दूसरे वर्ग 100 से 500 एकड़ जमीन में समाविष्ट हो गया। परन्तु अन्य वर्ग ज्यों के त्यों रह गये और जमीन का दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई।⁸ “मेला बीकन” का विरोधनाथ प्रताप तहसीलदार और “परतीपरिकथा” का जितेंद्र नाथ मिश्र ऐसे ही दो बड़े भूस्वामी हैं, जिन्हें हर नियम ने लाभ ही दिया हासि के स्थान पर।

“ मैना जीवन ” में तीन बड़ भूस्वामी हैं । विश्वनाथ प्रसाद तहसीलदार, रामकिरण सिंह और छिन्नावन यादव । तीनों ने जलग- जलग ढंग से यह भूमि एकत्रित की है । विश्वनाथ प्रसाद तहसीलदार ने अपने छद्म- हथकण्डों के कम पर, ठाकुर रामकिरण सिंह ने अपनी ईमानदारी और निष्ठा के कम पर और छिन्नावन यादव ने कुछ ही दिनों में बड़े कुम्ह-झी के पैसों के कम पर । विश्वनाथ प्रसाद तहसीलदार के यही लगातार तीन पीढ़ियों से तहसीलदारी चली आ रही है और उसी का परिणाम है - यह अन्धर जमींदारी । रेणु मिश्रों हैं, “कायस्थ टोनी के मुखिया विश्वनाथ प्रसाद मल्लिक, राज पारकीा के तहसीलदार हैं । तहसीलदारी उनके खानदान में तीन पुरत से चली आ रही है । उसी के कम पर तहसीलदार साहब आज एक हजार बीघे जमीन के एक बड़े कारतकार हैं । कायस्थ टोनी की गीब के अन्य जाति के लोग मामिक- टोना कहते हैं ।”⁹ इतना बड़ी जमींदारी विश्वनाथ प्रसाद के पिता ने ऐसे ही नहीं ले ला । ईमानदारी से तो जादमी मात्र पैट भर सकता है । जमींदारी पकड़ती करने के लिये दूसरों के पैट की रोटि भी छीनना आवश्यक है , यही उसने किया... “तहसीलदार के बाप देवनाथ मल्लिक तिरु पांच रुपये माहवारी पर बहान हुए थे लेकिन उनकी आमदनी! तीन सार बीतते- बीतते बत्ती-गब्बे बीघे अन्धर! उपजाऊ ! जमीन के मामिक बन गये थे । जादमी की उनकी आमदनी ही असल आमदनी है । और तहसीलदारी रीब का क्या बुझना ! तहसीलदार के छेत में मजदूरी करने वालों की कभी मजदूरी नहीं मिलती थी ।¹⁰ इतना बड़ा शोका एक अन्य वेतन भोगी कर्मचारी द्वारा कोई कम्पना भी नहीं कर सकता ।

पूर्व स्वाधीन भारत में तहसीलदार वास्तव में गाँव का राजा होता था, वह जैसा कर दे उसकी बदमशाने की आवाज उठाने तक की किसी में भी हिम्मत नहीं थी। असली गाँव का राजा वही होता था। उसके शौका-चक्र के नीचे पितृता ग्रामीण - जन्मा धूँ भी धूँ नहीं कर सकती थी। तहसीलदार विरयनाथ प्रसाद के पिता के शौका के बारे में रेणु निखते हैं, " राजारखी के राजा तो तिरहुत में रहते थे, उन्हें किसी ने कभी देखा भी नहीं। असल राजा तो बूढ़े देवनाथ बस्मिक ही थे। उस समय कटिहार शहर ठिकाने से बसा भी नहीं था। बूढ़े तहसीलदार साहब लसीमशाही कुतों के तन्ने में ही कीटियाँ पूरेनियाँ से ठुल्लाकर मीठाते थे और तीन महीने में ही कीटियाँ बड़ जाती थीं। सुन्ते हैं वे बीमते बहुत कम थे, कान से कुछ कम सुन्ते थे; और जब बीमते थे तो ... मारी ताने की दल जुता। कल्ला नदी के बगल में जो गढ़डा है, उसी में जोंक बालकर रखा था। जिसने तहरीर, तमबाना या मजराना देने में देर की, उसे गढ़टे में चार घण्टे तक खड़ा करवा दिया। पीछ के अंगूठे से लेकर जाँघ तक मोटे- मोटे जोंक छुंर की तरह लटक जाते थे। यही शौका तहसीलदार के जमीन खरीदने में सहायक होता है। विरय-नाथ प्रसाद तो अपने पिता से भी बड़कर हैं - वह शौका भी करता है और चामाकी भी। अर्थात् वह जागे की कड़ी है। अब शौका का वह युग नहीं रहा, गाँव में भी चेतना की महार पहुँच गयी है। अतः अब शौका के हथियार पहने से अधिक तीखे और धारदार तो हैं किन्तु उभिश्ल स्व से प्रयोग होने लगा है। तहसीलदार की चामाकी के बारे में रेणु निखते हैं - " तहसीलदार साहब कानूनवी आदमी हैं। कागज पर

बापके हाथ का "क" भी लिखा हो तो उससे वह सारी दस्तावेज ऐसी बना दें कि पटना का इलाक़ा विशेषतः भी नहीं पहचान पाये कि इसका है या जानी *¹² इसी जानसाजी के आधार पर तहसील्दार ने अपनी जमींदारी इतनी बढ़ी कर ली है । "मेला बीछल" में तहसील्दार मेरीगंज की का सबसे बड़ा आदमी है । गाँव के लोग उसी के नाम पर उसके मुहम्मद को मामिक-टोला कहते हैं । तहसील्दार की बढ़ती भूमि मात्र मेरीगंज ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत के ग्रामीण-इतिहास का प्रतिनिधित्व करती है । जमींदारी-उन्मुक्त के समय कानून में छोड़े गये छोटे से छिद्र से इन्हींमे लाभ उठाया और निरन्तर अपनी सम्पत्ति को बढ़ाते चले गये । उनके परिणामस्वरूप गाँव में असमानता का चक्र और भी तेजी से घूमने लगा । छोटे-छोटे किसान भूमिहीन होते गये और भूस्वामी की भूमि बढ़ती गई -- "चारों ओर तहसील्दार साहब की जमीन । पूरब, वह जो ताड़ का पेड़ दिखाई पड़ता है कम्ला के उस पारवहाँ तक और उत्तर, बड़े बरगद तक । दक्कन में लीमासों की जमीन दखल करने के बाद ,पिपरा गाँव तक तहसील्दार के पेट में समा आया है । हर के पश्चिम ततमा-टोला के पास पचास एकड़ जमीन की एक ही जमा है । खजाना माता है सिर्फ दस जमा । तहसील्दार साहब के बाप ने भी इस जमा के दखल करने की हरचन्द कोशिश की थी, मगर गोटी नहीं बैठी । तहसील्दार साहब ने भी भी अपनी तहसील्दारी के समय बहुत कम जमायी ,लेकिन तुम कैथ तो वह भूमिहार । वह जमीन तो धरमपुर के मेरी बाबू की है । तहसील्दार साहब की बीछ की किरकिरी वह जमीन । इस दो मंजिले की छत पर बैठने से

जमीन की भूख और तेज हो जाती है । मित्रा-पट्टी, दलीम-इस्तावेज मरम्मत से लेकर , अकेले में बैठकर , तरह-तरह के पैन्ट , प्लायट , भी यहीं सोचते हैं वह ।¹³ रेणु इस बढ़ते भूस्वामी के बारे में यह स्पष्ट कर देते हैं कि इतने शोका के बाद भी अभी उसकी भूख शांत नहीं हुई है । विभिन्न प्रकार के बड़े हथकण्डों से और शोका करके वह गांव की सम्पूर्ण भूमि के पर अपना एकाधिकार मानता है । यह स्थिति संपूर्ण भारत के बड़े भूस्वामी की है ।

“ मैना जीका ” का दूसरा भूस्वामी ठाकुर राम किरपान सिंह है । ठाकुर साहब पर तीन सौ बीघे जमीन है । यह जमीन उनके दादा की निष्ठा और ईमानदारी के कारण मिली । इसी जमीन के कम पर वे अपने दोनो के मुखिया हैं, “ठाकुर रामकिरपान सिंह राजपूत दोनो के मुखिया हैं । इनके दादा महारानी चम्पावती की स्टेट के सिपाही थे और विश्वनाथ प्रसाद के दादा तहसीलदार । कहते हैं कि जब महारानी चम्पावती और राजपारखी में दिवानी मुकद्दमा चल रहा था तो विश्वनाथ प्रसाद के दादा राजपारखी स्टेट की ओर मिल गये थे । स्टेट वालों को महारानी के सारे गुप्त कागजात हाथ लग गये और महारानी मुकद्दमे में हार गयी । काशी जाने से पहले महारानी ने रामकिरपानसिंह के नाम अपनी बची हुई तीन सौ बीघे जमीन की मित्रा-पट्टी कर दी थी ।”¹⁴ सिंह जी निरभर हैं और तहसीलदार पट्टा-मित्रा है , इसीलिये वे हमेशा तहसीलदार के विरोधी भी रहे हैं और उसके बारे में भी हैं । सम्पूर्ण उपम्यास में ठाकुर रामकिरपान सिंह कहीं भी अपनी कूरता और चालाकी का प्रदर्शन नहीं करते । यद्यपि छोटे- छोटे

स्वार्थ उन्हें घेरते हैं और वे निरिचस्त भी होते हैं किन्तु जिस प्रकार छोटी मछली बड़ी मछली को खा जाती है , ठीक उसी प्रकार बड़ा भूस्वामी तहसीलदार छोटे भूस्वामी रामकिरणपाल सिंह के प्रत्येक अधिकार को खा जाता है और अन्त में तहसीलदार जहाँ बहुत बड़ा भूस्वामी के रूप में उभरकर आता, वहाँ से भूमिहीन हो गये हैं । तहसीलदार की भूमि बढ़ाने की भूज उपन्यास के अन्त में और भी तीव्र हो जाती है, जब कि ठाकुर रामकिरणपालसिंह एकदम निवृत्त मार्गी । "मेरीगंज गाँव के एकमात्र मामिक, एकमात्र जमींदार, तहसीलदार बाबू विश्वनाथ मल्लिक का सम्हार देख लो ।.....जिस बड़े चाँपल पर एक पक्षि में बैठकर ,गान्धी जी के सराध के दिन लोगों ने सरवष्टन भीज आया , उसी को घेरकर खसिहान बनाया है तहसीलदार साहब ने । इस बीघे का घिराव है । रामकिरणपाल सिंह अपनी बच्ची- सुया जमीन कल सहित तहसीलदार के यहाँ सुद-रेहन रखकर तीरथ करने जा रहे हैं - काली, केदारजी ।"¹⁹ यह स्थिति है स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय ग्राम की, जहाँ निरन्तर बड़ा भूस्वामी और बड़ा होता जा रहा है और छोटा और भी छोटा । समस्त सरकारी मशीनरी भी उसी बड़े भूस्वामी के हित- संरक्षण में जुटी है । निश्चय ही यह दयनीय स्थिति है ।

छेलावन यादव , यादव-टोली का मुखिया है । उसके पास छेद ती बीघे जमीन है । मेरीगंज का वह तीसरे नम्बर का भूस्वामी है । उसने अपनी जमीन बेईमानी के कल पर नहीं, बल्कि घी-दूध बेचकर बचाये स्वयं से खरीदी है । "यादवों का दल नया है । इनके मुखिया

खेतावन यादव को दस बरस पहले तक लोगों ने भैंस चराते देखा है ।

दूध- घी की बिछी से जमाये हुए पैसे की बात जब चारों ओर बुरी तरह फैल गई तो खेतावन को बड़ी चिन्ता हुई । महीनों तहसीलदार के यहाँ दाढ़ते रहे । तर्कसमै जर को डाली चढ़ायी, तिसाहियों को दूध-घी पिलाया और अन्त में कम्ला के किनारे पधास बीघे जमीन की बन्दोबस्ती हो लकी । जब तो उद्द सौ बीघे की जोत है ।¹⁶ भूमि खरीदने के लिये बेचैन खेतावन पर धीरे धीरे उद्द सौ बीघे जमीन कर नेता है और उसी जमीन के आधार पर वह यादव-टोली का मुखिया भी बन जाता है । गाँव में मुखियागीरी आर्थिक आधार पर ही मिलती है, जिस पर कुछ भी नहीं है उसे कौन मुखिया बना देगा । रेणू, यादवों के दल को "नया" कहते हैं । नया इसीलिये कि यादव हमेशा भूमिहीन रहे हैं , उनका मुख्य पेशा फालतू जमीन पर गाय-भैंस चराना और दूध-घी का व्यापार करना रहा है । अकेला खेतावन ऐसा है जो अपनी कमाई के आधार पर जमीन खरीदता है और आर्थिक आधार को सुदृढ़ करता है । गाँव में भी उसका सम्मान भूमि के आधार पर ही होता है , इसीलिये यादवों का दल नया है । तहसीलदार की कुदृष्टि से वह भी नहीं बच पाता । जिस प्रकार रामकिरणपाल सिंह भूमिहीन होकर काली, केदारजी चले जाते हैं वही प्रकार खेतावन यादव अपने पुराने पैसे पर लौट जाता है, " खेतावन अब छुद भैंस चराता है । तीन बजे रात में भैंस जैसा चरती है वह दिन भर में नहीं चरेगी। जब तो उसको अपना रमान {चरगाह } भी नहीं है । इसीलिये धरता की ओर ले जाता है । खेतावन यादव, यादव-टोली का मज़ूर, भैंस चराकर लौट रहा है ।"¹⁷ अन्तिम पैक्ति में रेणू यह कहना चाहते हैं कि जिस आधार पर खेतावन यादव टोली का मज़ूर

बना था ,जब वह बाधार ही तहसीलदार के पेट में चला गया,जब क्या मरु । अब तो वह सामान्य भूमिहीन-यादव है । जिसका कहीं कोई सम्मान नहीं ।

“ परती परिकथा ” में प्रमुख रूप से जिनस्तन उर्फ जिजेन्द्रनाथ मिश्र ही बड़ा भूस्वामी है । दूसरे रोजन बिस्वा । जिजेन्द्र के पिता जिजेन्द्रनाथ मिश्र चालाकी से भूमि अर्जित करते हैं और रोजन बिस्वा गाँव का महाजम है । महाजमी के कम पर वह तीन सौ बीघे जमीन का भूस्वामी हो जाता है । यह कैसा साम्य है कि “मैला जीकल” के तहसीलदार विरवनाथ पुसाद के पिता भी प्रारम्भ में भूमिहीन थे और जिजेन्द्रनाथ मिश्र के पिता भी । दोनों ही अपने-अपने-अपने से भूमि अर्जित करते हैं । “मैला जीकल” के विरवनाथ पुसाद तहसीलदार “परती - परिकथा” के जिजेन्द्रनाथ मिश्र की अपेक्षा अधिक चालाक और चतुर हैं । इसी का परिणाम है कि अन्त तक पहुँचते पहुँचते वे अपने गाँव के दोनों भूस्वामियों की समाप्ति करके सम्पूर्ण भूमि की अपने अधिकार में कर लेते हैं, जबकि जिजेन्द्र ऐसा नहीं करता । इसके तीन प्रमुख कारण हैं -- पहला तो यह कि जिजेन्द्र के सम्मल अपनी विस्तृत परती जमीन है , वह उसे उर्वरक बनाने की चिन्ता में रहता है क्योंकि दूसरों की छोटी-मोटी जमीन लेने से अच्छा है कि वह इस विशाल परती के प्रयोग में लाये । दूसरे उसके पास मुँशी जमधारी दास और रामकिरणाल सिंह जैसे दो तेज और चालाक तेजक मौजूद हैं जो सदैव जिजेन्द्र के हित के लिये लगे रहते हैं। और तीसरे “ मैला जीकल” के रामकिरणाल सिंह और जेमावन यादव के वर्ग-चरित्र और “परती परिकथा” के रोजन बिस्वा के वर्ग-चरित्र में भी अन्तर है । रामकिरणाल सिंह और जेमावन यादव तहसीलदार

विरवनाथ प्रसाद के चक्कर में जाकर भूमिहीन हो जाते हैं जबकि रोजन बिस्वा गाँव में चल रहे मुकदमों और सर्वे-सेटलमेन्ट की आधी से नाभ में रहता है। कारण कि उस पर भी शोका का अधिकार है -- महाजमी। इसीलिये उसकी भूमि कम होने की अपेक्षा बढ़ती है। यह वास्तविकता भी है। स्वातन्त्र्योत्तर भारत का इतिहास ऐसा ही है। ऐसे के आधार पर पूँजीपति-महाजन निरन्तर गाँव में जमीन खरीद रहा है। जमीन खरीदने से उसकी दो नम्बर की कमाई सुरक्षित रहती है। रोजन बिस्वा हनी वर्ग का प्रतिनिधि-पात्र है।

शिवेन्द्र नाथ मिश्र अंग्रेज क्लॉट मिस्टर ऐधनी के यहाँ छोटा मुंशी था। उसके मन में हमेशा अपने गाँव की जमींदारी खरीदने की धुन त्वावर रहती। एक दिन मिस्टर ऐधनी बाहर गये हुए थे, मिसेज ऐधनी कोठी पर बसेली थी। मिसेज ऐधनी के गुप्त-आदेश को न समझ पाने के कारण मिस्टर ऐधनी ने शिवेन्द्र मिश्र को दण्डित करते हुए कहा- "पहला कसूर माफ किया। कम सुनह मेम साहब के सामने दस बार काम पकड़कर ...उदठेगा...बेदठेगा। समझूँ : " ¹⁸ शिवेन्द्र मिश्र ने अपना अवराध स्वीकार कर क्षमा-याचना कर ली, कारण कि, उसके मन में जमींदारी खरीदने की जो अदम्य मानसता थी और यह मानसता साहब को छुट करके पूर्ण नहीं हो सकती थी। " मुझे जमींदार बनना था। मुझे जमींदारी खरीदनी थी अपने गाँव की। पंडितों के टॉन में पढ़ी हुई विज्ञा मैने पिटारी में बन्द कर दी थी। क्यों कि उससे एक बीघा जमीन भी नहीं खरीदी जा सकती थी। मेरे जिने में एक अचढ़ आदमी ने किसी साहब की कोठी में तिसाही की मौकरी करके जमींदारी खरीदी थी।

हस्तलिखे केपी काल और कचहरी की विजा बुडि से मैं भी जमींदारी जरीदना चाहता था । ... मैंने स्वीकार कर लिया ।¹⁹ परिणाम स्वल्प " साहब का विश्वास मुझ पर बढ़ता ही गया । मेम साहब हर हफ्ते मुझे टिप देतीं । मेरी तरकी हुई । मैं मीर मुंशी बना दिया गया । उः महीने के जमा हुए टिप के रुपये से ही मैंने अपने गांव में बदरिया घाट के पास दस बीघे जमीन की बन्दोबस्ती कर ली । वीरें खोलकर देखता रहा , सीकता रहा ।²⁰ जमींदार बनने की भूख अब भी शांस्त नहीं हुई बल्कि और भी बढ़ गई । ऐसी स्थिति में उत्तम- काल का आग्रह लिया । उत्तम- बाल भी भूमि हड़पने का एक सशक्त माध्यम है, जिसका लाभ शिवेन्द्र मिश्र ने उठाया । इसका उद्घाटन अपनी पत्नी गीता से स्वयं शिवेन्द्र मिश्र करता हुआ कहता है -----

" दस्तावेज जाल करने वालों को प्राणों में दण्ड तक की सजा होती है । मेरे दस्तावेजों को कई नीतियों ने कई बार जाली दस्तावेज कहकर चेलेन्द्र किया । बादशाही जमाने के दानपत्र, ताप्रपत्र, लभी जाली हैं , उन्होंने कहा । कह देने से ही तो नहीं होता है । पचहत्तर नम्बर तौजी को लेकर मिर्जापुर कौंठी के ठिगली साहब से झगड़ा था । साढ़े पांच सौ एकड़ जमीन । एक ही बकबन्दी । उस एक एक जमीन में धान और पार की ऐसी खेती लगती है कि फलन देखकर बादमी पुत्राधिक भूम जाये । ... कलकत्ते के सरकारी एक्सपर्ट ने कहा, दानपत्र असली है । ... माफ करो गीत, जब कहने ही बैठा हूं तो सच कहूं । उत्तम में वह दानपत्र जाली था ।²¹ इन चित्रियों के माध्यम से रेणु ने भूस्वामी-वर्ग के जाल, विश्वासघात और चरित्रहीनता का पर्दाफास किया है । किस प्रकार एक व्यक्ति अपने शोका की भूमि की शांस्त करने के लिये

अमानवीय बलों का आश्रय लेता है । दूसरे की चाहे कितनी भी हाथि हो, लेकिन अपने हितों की पूर्ति हेतु ये बन्धे होकर कार्य करते हैं ।

इसी उल- कम से हथियाई गई जमीन का एकमात्र स्वामी है जितेन्द्र माध मिश्र - " गाँव के सामने कैला विशाल परती की ठेढ़ हजार बीघे जमीन का मामिक बकेला वही है । दुमारीदान के बीच प्रसिद्ध कुँओं का स्वामी, बदरिया घाट से लेकर मीरघाट तक की धरती का जमींदार ।"²² परानपुर गाँव मेरीगंज की ज़ेल्हा बहुत ही विकसित है । इस विकसित गाँव का जमींदार जितेन्द्र मिश्र दस- पन्द्रह वर्षों के बाद गाँव लौटा है । गाँव में इस बीच व्यापक परिवर्तन हुए, किन्तु जितन बीर जमीन पर इसका कहीं कोई प्रभाव नहीं पड़ा । जमींदारी- प्रथा समाप्त हुई , जमींदारों की फामतु जमीन खी गई, लेकिन जितेन्द्र मिश्र की जमींदारी नहीं गई- मात्र चालाकी और जालसाजी के बल पर । रेणु लिखते हैं कि - "मुंशी जमधारी लाल ने इसी पतनी शब्द के बल पर प्रान्तीय सरकार के रेवेन्यू डिपार्टमेंट की आँखों में धूल झाँक दी । सन् 1937 की कांग्रेसी-मिनिस्टरी के समय ही उसने सारे स्टेट की तेरह टुकड़ों में बाँटकर छोड़ दिया था। इस बार जमींदारी-उन्मूलन के समय बड़े- बड़े हाकिम तिर बटककर रह गये । लेकिन मुंशी जमधारीलाल की कम की मार और मार की बारीकी की वे नहीं पकड़ सके । परानपुर स्टेट वैदाग बच गया । इससे छोटी हैसियत के जमींदारों की जमींदारी खी गयी।"²³ यह उद्घाटन रेणु ने साक्षितिक रूप में किया है । सन् 1947 में बनी सरकार स्वयं जमींदारों की पेश्वर

भी , कतः कामुन में पैती छिड़ उठे गये जिन्में से हाथी भी सहजता से निकल गया । यह वर्णन भारतीय- ग्राम-जीवन की विषमताओं की स्वच्छ करता है । जमींदार और जमींदार के कर्मचारियों ने ग्रामीण-जमता को अपने गोकुल-चक्र में फँसाये रखने के लिये विभिन्न प्रकार के हथकण्डों का प्रयोग करते हैं - समस्त सरकारी नियम इन तक बाँटे- बाँटे नब्बों के अनुसृत हो जाते हैं जवना सरकारी -कर्मचारियों से मिलकर अपने अनुसृत कर लिये जाते हैं ।

जितेन्द्र मिश्र की किसान परती जमीन से दस हजार रुपये वार्षिक आय होती है - "हर साल, कोसी की बाढ़ से मारे हुए बलाके के लोग, सहसा जिना के मवेशी वाले किसान अपनी गाय- भैंस लेकर जाते हैं , दो सय्या की गाय और तीन सय्ये हर भैंस का तो बंधा हुआ है । दस हजार की आमदनी हर साल होती थी, जिन्तन की ।"²⁴ इससे जितेन्द्र की शान्ति नहीं मिलती । वह अब यहाँ गुलाब के पीछे रोपेगा । दैक्टर से पूरी परती की तह्रि रखा है । "मेला बीजम " का तहलीकदार अन्त में बाकर दैक्टर खरीदता है और "परती परिकथा "का जितेन्द्र बाँते ही दैक्टर खरीद लेता है । विरचमाध प्रताप से बागे का विकास है यह जितेन्द्र मिश्र । जितेन्द्र छेती का बीबीगीकरण कर रहा है । निरन्तर बढ़ते भू स्वामी की यही पहचान है । सरकारी-कर्मचारियों की सहायता से जिन्तन अपनी योजना में तफल होता है । पाच सौ वर्षों से बेकार पड़ी हुई परती पर छेती के नायक जमीन पाई गई । दुजारीदान की कोसी की मुठ्यधारा से तयुक्त करके तिरफ करौड़ों रुपये की बचत ही नहीं, करौड़ों की आमदनी भी होगी ।"²⁵ इस विकास से सर्वाधिक लाभ जितेन्द्र की ही होगा । जितेन्द्र की ठेढ़ हजार बीघा परती पड़ी जमीन

पर खेती होगी - इससे उसका और भी घर भरेगा । और जब घर भरेगा तब शीका के हथियार और पैके । इस प्रकार स्वातन्त्र्योत्तर भारत में जितने भी विकास हेतु काम उठाये गये , उनका वास्तविक लाभ बड़े भुत्सामी को ही मिला । इसका मुख्य कारण यह भी है कि जितने पास कुछ है ही नहीं , उसे लाभ कहा ले होगा । जिसे परती का एक बीघा भी सर्व- सेटलमेन्ट में नहीं मिला , उसके लिये दुसारीदान को कोली की मुठकारा से संयुक्त करो ज़्यादा गंगा से कहीं कोई प्रभाव नहीं पड़ता , नीला क्या रहने और क्या निचोड़े ! यह बड़ी चिन्तना ही है कि सम्पूर्ण गाँव एक होकर जितेन्द्र के पिछड़ परती पर ^{उत्तम} ठामता है, किन्तु बेकार । बड़े भुत्सामी से टकरा कोन से सकता है । इसी दयनीय और असहाय परिस्थिति का लाभ उठाकर बड़ा भुत्सामी -वर्ग निरन्तर बढ़ रहा है । उसके शीका का पहिया और भी तेजी से घूम रहा है ।

" परती परिकथा " का दूसरा भुत्सामी रीति विस्वा है । रीति विस्वा महाजन और भुत्सामी का मिला-जुटा रूप है , जो गाँव की निर्धन जनता का दोनों हाथों से शीका कर रहा है । गाँव का किसान आज कर्ज से लदा हुआ है । अपनी मर्यादाओं और परम्पराओं के कठोर में बन्द वह असामंजस जीवन व्यतीत कर रहा है । ठोटी-सी भूमि , उत्तरदायित्व बहुत से -- परिणाम कर्ज । भारतीय ठोटा किसान कर्ज में ही जन्म लेता है और कर्ज में ही मर जाता है -यह उसकी नियति ही बन कर रह गयी है । स्वातन्त्र्योत्तर भूमि सुधार कानूनों ने इसे और पीछे ठोड़ दिया है । जिसके पास खाने की ही नहीं है , वह खेत में क्या ठालेगा । अतः नये बीज, खाद और पानी इसकी सामर्थ्य

के बाहर थे जिसका परिणाम यह हुआ कि बहुत भूस्वामी तो धन-कम के आधार पर निरन्तर विकास करता गया और छोटा किसान निरन्तर पिछड़ता चला गया । "परती परिकथा" का सर्वे-सेटलमेन्ट कार्यक्रम निम्न जम्मा के हित के लिये सरकार ने लागू किया ,परन्तु उसे बहुत लिया बड़े भूस्वामी जिम्मेदार और महाजन रॉयल बिस्वा ने । रॉयल बिस्वा अब मात्र महाजन ही नहीं , वह भूस्वामी भी हो गया है । "रॉयल बिस्वा गाँव का सबसे बड़ा महाजन है वाज्जल । जमीन कम थी लेकिन इस सर्वे में वह भी पूरी हो गई । बंध की, खुद-रेहन जमीन के कमावा कमाना बनवा कर बहुत सी जमीन खरीदी है । सारे गाँव में रॉयल बिस्वा ही एक है जिसकी जमीन पर एक भी तमाजा नहीं पड़ा । वस्त्र में, उसके पास जिसकी जमीन थी , सब रेहन और बंध की । उस पर तमाजा देने से क्या फायदा ! सर्वे के समय हजार बारह सौ कन्या हमेशा घर में मौजूद रहने के लिये जमीन वालों ने रॉयल बिस्वा से कन्या माँगा । बिस्वा ने सबको एक ही जवाब दिया - जमीन बंध को काँच लेता है वाज्जल ! जबर माँहये । नहीं तो जमीन फाँटतमामा मित्र दीजिय ।तीन सौ बीघे जमीन खरीदी है उसने । रॉज कर्ज लेने वालों की भीड़ लगी रहती है ।"²⁶

बसन्त भूमि-सुधार कार्यक्रम साथ शोका को भी लाये । भ्रष्टाचार के नवीन पीछे रॉयल गये जिसके लिये खाद- पानी के रूप में गरीबों की कमाई हो दी गई । पराम्पुर के छोटे किसानों के पास सर्वे से पहले जितना था , वह भी भ्रष्टाचार के कारण रॉयल बिस्वा जैसे महाजन के घर चला गया । सर्वे ने गाँव के बड़े महाजन को छोटे

किसानों की षोठ पर भुस्वामी और बना दिया । रेणु का यह संकेत कि - राज कर्ज सैमि वालों की भीड़ लगी रहती है - रीशम बिस्वा और भी बढ़ रहा है । यह स्वाधीन भारत का प्रवृत्त्यात्मक विकास का संकेत-मात्र है । जिस प्रकार गांधि में छोटे किसानों की समाप्त कर बढ़ा भुस्वामी और महाजन निरन्तर उनकी जमीन हड़प रहा है यह चिन्तनीय अवस्था है ।

गांव में बढ़ता भुस्वामी - वर्ग परम्परागत रूप से अपने चिन्तनी भ्रष्टाचार की जीवन्त गाथा है । रेणु ने मात्र उसे भुस्वामी ही नहीं दिखाया बल्कि उसके निरन्तर विकास में कौन सी शक्तियाँ काम कर रही हैं, का भी स्पष्ट चित्रण प्रस्तुत किया है । सरकारी कर्मचारियों और राजनीतिज्ञों की मिनी-भ्रात से यह बढ़ा भुस्वामी अपने ही गांव के गरीबों का गला काटने में लगे होता है । इस प्रकार असमानता की दीवारें और भी ऊँची होती जा रही हैं । देश में बढ़ते भुस्वामी- वर्ग की निष्पूरता, भ्रष्टता और धूर्तता का ज्वलन्त दस्तावेज है - "मैला जीवन " और " बदती परिकथा " ।

॥ ब । बन्ते - चिह्निते नये आर्थिक और सामाजिक सम्बन्ध :-

उपन्यास यथार्थ से दूतर रह कर जीवन्त नहीं रह सकता । सामाजिक - यथार्थ का विशिष्ट प्रकार से उल्लेख ही उपन्यास की गरिमा को प्राप्त होता है । रेणु अति सम्येदमशील कथाकार थे । सामाजिक- जीवन के विभिन्न अन्तर्विरोधों को अपनी सूझ और यथार्थ दृष्टि के कारण ही

उन्होंने क्रात्मकता प्रदान की है । रेणु के चिन्ता इसीमिये जीवन्त हैं। "मेला जाऊ" और "बरती बरिक्का" ग्रामीण जीवन के अस्तसम्बन्धों को मुक्त करने में समर्थ है । दोनों उपन्यासों की मूलभूत धारणा यह है कि सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सम्बन्धों के मिये तड़फती, तरलती और ललकती ग्रामीण-जमाता का विशिष्ट सम्येदमा और सुव्यवस्थापूर्ण वर्ग हुआ है । ग्रामीण सम्बन्धों का मूलधार भूमि है । भूमि की केन्द्रीयता के कारण एक ओर भू स्वामी वर्ग की कुटिमता है तो दूसरी ओर छोटे किसान , बटार्चदार और छेतिहर श्रमिकों की विवशता । भूस्वामी- वर्ग निरन्तर अपना घर भरने के लिये किस प्रकार अपने से निम्ने वर्ग का शोका करता है - रेणु ने अपनी सम्पूर्ण आत्मिकता के साथ इसे वाणी प्रदान की है ।

ब्रिटिशकालीन भारत में भूस्वामी-वर्ग जमींदार के नाम से जाना जाता था । ग्रामीण-जीवन का सम्पूर्ण दोहन यही जमींदार करता था इसके लिये उसे श्रमिकों से अधिकार भी प्राप्त थे । जमींदारी- उन्मूलन के उपरान्त भूस्वामी-वर्ग शीर्षस्थ है । उसके नीचे क्रमशः सीरदार एवं आसामी आते हैं । सबसे नीचे के स्तर पर बटार्चदार और भूमिहीन मजदूर स्थित हैं ।²⁷ जमींदारी- उन्मूलन के उपरान्त इस भूस्वामी-वर्ग की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति में कहीं कोई अन्तर नहीं आया। हाँ, इतना जरूर हुआ है कि पहले वह श्रमिकों से कहीं कहीं अनुग्रहित रहने के कारण दस्ता था, किन्तु अब तो ऐसा भी नहीं है । काग्रेसी सरकार को यह अपनी ही सरकार समझता है - और है भी । देहातों में उसका आधिपत्य है , वह जैसा चाहता है वैसा होता है । सरकारी-

कर्मचारियों की मिली- भात से वह सम्माना शीका करने में समर्थ है ।
 रेणु के ये दो उपन्यास बली शीका के चिह्न आवाज उठाते हैं ।
 ग्रामीण- जीवन के आपसी सम्बन्धों के बारे में सकेत रूप में अध्या
 स्पष्टता के साथ लिखकर रेणु उनके मूल कारणों को उद्घाटित करते हैं।

“ मैना जीवन ” एवं “ परती परिकथा ” के भुस्वामी
 चिरयनाथ प्रसाद, रामकिरण लाल, विनायक यादव, जिन्तन और
 रोशन बिस्वा का विरोध कामोचरम, मुन्ता एवं गङ्गधर या प्रमुख रूप
 से करते हैं । लेकिन निष्कर्षतः शीका की दहकती भट्टी में ये भूमिहीन
 पात्र पत्नी की तरह जलकर मज्ज जाते हैं । भुस्वामी-वर्ग निरन्तर
 बढ़ता जाता है , उतना जितना विरोध ही रहा है , वह उतना ही
 जागे बढ़ रहा है - यह एक चिह्नम्बना ही है । “ मैना जीवन ” भारतवर्ष
 के पिछड़े गाँवों का प्रतीक है । “ जहाँ हर साल कीरी [नदी] का
 तीर्थ मृत्यु होता है और वह पुर्णिया का पूर्वी -बाँध , जहाँ मनेरिया
 और कामा आजार हर साल मृत्यु की बाढ़ से जाते हैं ।”²⁸ उस पिछड़े
 और बीमार -बँसल को सुधारने का कृत मेकर कुन-जाति-हीन डी०प्रशान्त
 जाता है । डी० प्रशान्त मान्यता का लब्धा- लेखक है । बादि से मेकर
 वन्त तक रेणु की लहानुभूति डी० प्रशान्त की मिली है ।

मेरीगज मीमहा लाल ठाकुर जी० मार्टिन की पत्नी
 मेरी मार्टिन के नाम पर रखा गया नाम है । मेरी की दुःख मृत्यु ही
 जाने के बाद “ मार्टिन पुर्णिया गया, सिविल सर्जन, डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट
 डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन और ईश्वर बाकीतर से मिला , एक छोटी सी
 डिस्क्रिप्शन की मजुरी के लिये जमीन-जातमान एक करता रहा ।

ठिस्सेम्सरी के लिये अपनी जमीन रजिस्ट्री कर दी । अधिकारियों ने ज़ारवात्मन दिलाया - अगले साल जरूर ठिस्सेम्सरी खुल जायेगी ।^{*29} अब कई साल बाद डॉ० प्रशान्त के प्रयत्नों से ठिस्सेम्सरी खुलने का समय आया है । इस परिवर्तन के कारण गाँव की हलकें तेज होती हैं । राजनीतिक, धार्मिक और जातिवाद की लम्बायें एक दूसरे की पराजित करने के लिये तैयार की जाती हैं । गाँव में छोटी से छोटी छटना भी ईर्ष्या और द्वेष के कारण विस्तार पा जाती है ।

गाँव में ठिस्सेम्सरी- घर का निर्माण होना है ।

जिसके लिये गाँव के लोगों की सहायता की आवश्यकता है । यहाँ रेणु भूस्वामी-वर्ग की शोकावादी प्रवृत्ति के बारे में सहायता के साथ बताते हैं कि निम्न जाति एवं वर्ग के जो लोग सहायता के लिये तैयार हो जाते हैं किन्तु भूस्वामी- वर्ग किंचित भी तैयार नहीं होता । निम्न वर्ग के लोग रात-दिन तक कार्य करने के लिये तैयार हो जाते हैं । यह उनकी सामाजिक कार्यों के प्रति भावुकता और आत्मीयता का प्रभाव है । निम्न वर्ग में सामाजिक कार्यों के प्रति जितना उत्साह अपनी वर्ग-गत भावुकता के कारण है, भूस्वामी-वर्ग में उसका उतना ही उल्टा । यह हमकी वर्गीय कुटिलता का प्रतीक है । मजदूर रात-दिन काम तो करेंगे लेकिन छायेगी क्या ; रेणु यह स्पष्ट करते हैं कि मजदूर- वर्ग पर एक दिन को भी छाये को नहीं है -- राज कमाते हैं और खाते हैं । इसी वास्तविकता को समझते हुए अनुकारी लोगों का तनुककत कबता है-
 * एक दिन या दो दिन की बात हो तो किसी तरह खा भी जा सकता है । सात दिन तक बिना मजूरी के ; यह जरा मुश्किल मामला होता है।

तत्मा और बुद्धिमान लोगों की बात जाने दीजिए । उनकी बीरते हैं, कुछ से दोपहरिया तक काला में कादोपानी छिड़कर एक दो तेर गीची मछली निकाल लायेंगी । चार तेर धान का हिस्सा मग जायेगा । बाबू लोगों के पुत्रों के टानों के पास धरती खरीदकर , घुहे के मोर्दों को फोड़कर भी कुछ धान जमा कर लेंगी । नहीं तो कोठी के ऊँच से छमरबानू उछाड़ लायेंगी ।... लेकिन और लोगों के लिये तो बहुत मुश्किल है ।³⁰ इस बीभर्त समस्या की बमदेव भी समझता है , लेकिन उसका उपाय क्या है । और उपाय भी तनुक्काम सुझाता है - "यदि मानिक लोग बाधेदिन की मजदूरी दे दें तो काम चल जाय ।"³¹ बमदेव जैसा गान्धीवादी इस उपाय से प्रसन्न होता है । वह सोचता है कि मानिक लोग उसकी इस बात को मान लेंगे । बमदेव भावुकता में जी रहा है ,उत्ते नहीं मानूम कि यदि मानिक लोग ऐसे ही समाज हित के कामों में अपना धन मुटाते रहें तो उनका ज्ञान कैसे बढ़ेगा । मानिकों के निरन्तर बढ़ने का कारण ही उनकी कुटिमता और हृदयहीनता है, जिसे बमदेव नहीं समझ पाता । सर्वप्रथम वह ठाकुर के पास जाता है जो ताफ मना कर देते हैं , तत्परचात तहतीन्दार ताहम के पास । "तनुक्काम के प्रस्ताव को सुनते ही विरचमाध बाबू चिढ़ गये ।... धानुक टोनी का तनुक्काम : अपने को बहुत काबिल समझता है । हर बात में वह एक-न-एक लो जकर लगायेगा । तुम भी तो बमदेव पूरे "बमभीलानाध" हो । उससे पूछा नहीं कि जस्वताम से तिरु मानिक लोगों की भलाई होगी क्या : "³² मजदूर वर्ग की भावुकता और भुखामी वर्ग की कुटिमता यही स्पष्ट हो जाती है । एक ओर मजदूर है जिस पर कुछ नहीं है, फिर भी सार्वजनिक कार्यों के लिये बाधे दिन का केतन छोड़ने को विवश है और दूसरी ओर भुखामी जिसके यही भावुकता का नाम ही नहीं । इनके यही व्यक्तिगत

स्वार्थ ही सर्वापि है । समाज-सेवा तो मात्र बगुनार्थ - भक्ति है ।
 ऐसी स्थिति में गाँव का क्या हित ही सकेगा , यह चिन्तनीय प्रश्न है।

कमदेव चम्पलट्टी का यादव है । वह मेरीगंज में अपनी
 बुढ़िया माँ की यहाँ रहकर कांग्रेस पार्टी के लिये कार्य करता है । गाँव
 में उसे कोई सम्मान नहीं देता । सम्मान का आधार भी उसके पास नहीं
 है, सम्मान मिले भी कैसे ! डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मिली मोर्गों के अल्पताम
 निर्माण के लिए जाने पर गाँव वालों को पता चलता है कि वह —
 "रामकृष्ण आश्रम का कार्यकर्ता है ; बहुत बहादुर है ।"³³ कमदेव को
 सम्मान का ठीक आधार मिला । यादव टोली के लोगों को जब बात
 हुआ कि वह छोटा-मोटा आदमी नहीं है , उसे बाहर से जाये राय
 साहब भी जानते हैं । अतः यादव टोली के लोग उसे क्षमा माँगते हुए
 कहते हैं - " कमदेव भाई । .. हम लोग मूर्ख ठहरे और तुम गियाणी।
 हम तो कृष के लोग हैं । तुम तो बहुत देश-विदेश घूमे हो , बड़े- बड़े
 लोगों के साथ रहे हो । हमारा कसूर माफ़ कर दो ।"³⁴ स्वार्थ व्यक्ति
 को कितना गिरा देता है , इसका प्रतीक है छिन्नावन यादव। छिन्नावन
 को जब यह भी पता चल गया है कि उसकी कुटुम्बताओं और
 शांकावादी प्रचुरित पर पर्दा डालने एवं हित-संरक्षण के लिए कमदेव
 की बहुत आवश्यकता है । कमदेव नेता है, बाहर के लोग भी उसे जानते
 हैं , अतः अपने घर रख लेने से उसका सम्मान बढ़ेगा । अतः "उसी दिन
 से छिन्नावन सिंह यादव कमदेव को अपने यहाँ रहने के लिये आग्रह कर रहे
 हैं , "जात का नाम, जात की इज्जत तो तुम्हों लोगों के हाथों में है ।
 तुम कोई पराये हो ! तुम्हारी माँ की मेरी चाची होगी । हम तुम भाई-

भाई ठहरे । छिन्नायन की ठेरावानी खुद जाकर कनदेव की बुढ़िया मौली से कह गई, "घर जीमन तक आपका ही है । जिस घर में एक कुटी नहीं, उस घर का भी कोई ठिकाना रहता है । मैं अकेली क्या करूँ दूध-घी देखूँ कि गोबर - गुडाम !"³⁵ इस पर रण्ट की टिप्पणी बहुत ही सार्थक है कि "कनदेव की बुढ़िया मौली की दुनिया ही बदल गई । कम तक घर-घर घूमकर कुटार्थ-पितार्थ करती फिरती थी और आज गोय की मातृकिम जाकर उसे सारे घर की मातृकिम बना गई।"³⁶ स्वार्थ के आधार पर टिके सम्बन्ध अधिक दिनों तक नहीं चल पाते । छिन्नायन यादव की जल सगता है कि कनदेव से उसका कोई हित नहीं ही था रहा तो वह उसे जल करने की सीखता है । भावुकता पर टिके सम्बन्ध छिन्नायन के यही नहीं हैं, उसके यही मात्र स्वार्थ है । उसके स्वगत लक्षण के माध्यम से यह बात स्पष्ट हो जाती है - "कनदेव की सारी दुनिया की भलाई तो सुकती है, मगर जिसका कमक जाता है उसके लिये एक तिनका भी तो लोचें । दिन-भर तहसीलदार के यही बैठा रहता है और शाम को कीर्तन । कल्ला किनारे वाले एक जमा में कल्ल पातखान के दादा का नाम कायमी बटेया-दार की हेतियत से दर्ज है । कनदेव ने कहा कि कल्ल से कह-सुनकर सुमुर्दों निजवा दो या रजिस्ट्री करवा दो, तो काम ही नहीं दिया । हमसाहा गोनाय ततमा कम से कम जोतने नहीं जाता है । कहता है, पिछले नाम का बकाया साफ कर दीजिय तो हम उठावेंगे । कनदेव टुबुर-टुबुर देखता रहा , कुछ बोला भी नहीं, उसटे हमसे कहस करने लगा, ... गरीब लोगों का दरमादा नहीं रोकना चाहिये भाई साहब ।"³⁷ भूस्वामी की धूर्तता का इससे अधिक और क्या नमूना होगा ! छिन्नायन कनदेव को अपने घर रखकर उसके परयेक गलत काम की स्वीकृति भी चाहता है ,जिसे

कमदेव स्वीकार नहीं करता । ऐसे आदमी की छिनायन की आवश्यकता नहीं , उसे चाहिए जो उसके प्रत्येक गलत काम की भी जड़ता बतावे और उसे करने में उसकी सहायता करे । भूस्वामी-वर्ग के लिये राजनीति भी अपनी स्वार्थ-तिष्ठि का माध्यम है ।

मेरीगंज का महन्त भूस्वामी और धार्मिक मठाधीश दोनों है । धर्म हमारी भावनाओं पर ठाका ठामता है । इसी धार्मिक भावनाओं की धर्म के नाम पर अपने पक्ष^{में} करके महन्त शांका करता है । महन्त के हाथ में शांका की दुधारी तलवार है । वैसे तो भूस्वामी-वर्ग का शांका ही कम नहीं है और उस पर ऊपर से धर्म की माध्यम बनाकर किया गया शांका । सामान्य शांका के विरोध में कुछ कहा जा सकता है । किन्तु अरिश्चित एवं परम्पराओं में जाबद जम्मा धार्मिक शांका का विरोध कैसे करे ? बाबू टोमी के क्लिनू ने मठ पर काम किया है , वह सब कुछ जानता है । मठ के अन्दर होते भ्रष्टाचार की रण्टू जो क्लिनू जैसे अवद से कहलवाते हैं - धार्मिक मठ, जहाँ बड़ा से अभिभूत होकर भोग जाते हैं , वहाँ भी इस प्रकार के अत्याचार होते हैं , तो देश का उद्वार कैसे संभव है ? सम्पूर्ण देश ही अत्याचार के शिकार में कसा है । मठ के महन्त द्वारा किये जा रहे भ्रष्टाचार के विरोध में जन्मत बदल रहा है, लेकिन इसका सच उपाय महन्त के पास है । वह भुखी और निर्धन-जम्मा को भोज दे रहा है । भोज के अन्तर्विरोधों की स्पष्ट करते हुए क्लिनू कहता है - "बन्धा महन्त अपने पापों का प्राञ्छित कर रहा है । बाबाजी होकर जो रसैमन रखता है , वह बाबाजी नहीं । ऊपर बाबाजी भीतर दगाबाजी । क्या कहते हो ? रसैमन नहीं, दासिम है ! किसी और

को लिखाना । पाँच बरस तक मठ में मौकरी किया है , हमसे बढ़कर और कौन जानेगा मठ की बात ! और कोई देखे या नहीं देखे , ऊपर परमेस्वर तो है । महीध जब लछमी दासिन को मठ पर लाया था तो वह एकदम अन्ध थी , एकदम मादाम । एक ही कपड़ा पहन्ती थी । कभी वह बच्ची और कभी पचास बरस का झुटा गिड़ । रोज रात में लछमी रोती थी - ऐसा रोना कि जिसे सुनकर पत्थर भी पिघल जाय । हम तो तो नहीं सकते थे । उठकर भैंसों को खोजकर चराने चले जाते थे । रोज सुबह लछमी कुछ लैने बधाम पर जाती थी , उसकी जींठें कदम के फूल की तरह फूली रहती थीं । रात में रोने का कारण बुझने पर चुपचाप टुकुर- टुकुर मुँह देखने लगती थी , ठीक गाय की बाछी की तरह, जिसकी माँ मर गयी हो..... । ऐसा ही भँडार है यह रमदसवा । वह सामा भी अन्धा होगा , देख लेना ।.... महीध एक बार चार दिन के लिये पुरेनिया गया था । हमने सोचा कि चार रात तो लछमी सेन से तो सकेगी । से बनेया । बाघ के मुँह से लुट्टी तो किन्नार के मुँह में गयी । उसके बाद लछमी ऐसी बीमार पड़ी कि मरते- मरते बची । पाप भजा छिपे ! रामदास को मिरगी जाने लगी और महीध लेवादास सुरदास हो गये । एकदम चौपट ।.... हमारा तीन साल का दरमाहा बाकी रखा है । भँडारा करता है । हम उन लोगों को साधु नहीं समझते हैं ।³⁸ रेण्टू का यह सामान्य पाप महीध की साधु नहीं मानता, यह उनके निरन्तर भ्रष्टाचार का प्रतिकूल है । धर्म की बाढ़ में किये जा रहे इन निरंकुश भ्रष्टाचारों के प्रति रेण्टू विरोध प्रकट करते हैं । सम्पूर्ण गाँव के द्वारा दी गई दान-भूमि के कल पर महीध, आर्थिक, धार्मिक और

राजनीतिक शोका तो कर ही रहे हैं इसके अतिरिक्त रक्त दैहिक शोका में भी वे ललसे जागे हैं । इसका एकमात्र कारण उनका धार्मिक महत्त के साथ भुक्तानी होना है । यदि महत्त के पास इतनी भूमि नहीं होती तो वह निश्चित रूप से पीटकर भाग दिये जाते किन्तु भौतिक- बाधा, आर्थिक-बाधा को झुठ करता है और उसी के कम पर महत्त चेन की चीनी बजा रहा है । ग्रामीण-जीवन में हो रहे जबरन भ्रष्टाचारों की बाक्की रेणु ने प्रकट की है जिसमें धार्मिक मठ भी अगुते नहीं ।

भुक्तानी-धर्म के शोका-बड के नीचे फंसी हुई ग्रामीण-जन्ता का किस प्रकार शोका हो रहा है , रेणु उसे विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रस्तुत करते हैं । भारतीय ग्रामीण जन्ता की स्थिति परमत्त है । उसका इतना दोहन किया गया है कि अब उसके पास कुछ भी नहीं है , कर्मे की भी नहीं । क्या कभी और कितने कहे : उसे मामूम है कि तारा देश ही अराजकता की चपेट में है, जहाँ भी रहोगे वहाँ शोका होगा । इस भयावह स्थिति से बस्त ग्रामीण-जन्ता की कल्ल स्थिति का वर्णन करते हुए रेणु जी लिखते हैं - "सम्हार । ताम भर की क्माई का मेजा-जोखा तो सम्हार में ही होता है । दो महीने की कर्मी , एक महीना मकुमी, फिर ताम भर की छटनी । दक्की-मकुमी करके जमा करो, ताम-भर के छाये हुए कर्मे का हिसाब करके चुकावो । बाक्की यदि रह जाये तो फिर तादा कागज पर कंगूठे की टीप लगावो । त्काई कर्मी है तो केन गाय भरना रखी या हमवाहा चरवाहा दो । फिर कर्मे छावो । सम्हार का चक्र चलता रहता है । सम्हार में केनों के मुंह दक्की-मकुमी होती है । केनों के मुंह में जानी का "जाव" लगा दिया जाता है । गरीब और

बेजमीन लोगों की हानि भी छम्हार के केंनों जैसी है । ... मुँह में
 जाली का "जाब" ।... लेकिन छम्हार का मोह । यह नहीं टूट सकता ।
 भुक्क्या उगते ही छम्हार जग जाता है । लुई की तरह गहने वालों, माछ
 के भीर की ठंडी हवा का कोई असर देह पर नहीं होता । जोस और
 पाले से तो देह शुष्म हो जाता है । जब हाथ से अपनी नाक भी नहीं
 छुई जाती है तब घूर में फिर से लूटे पुत्रास डालकर नई जाड़ा वेदा की
 जाती है । घूर में शकरकन्द पकता रहता है । घूर के पास देह गरमाने
 की बारी जिसकी रहती है ,वह प्रातकी गाता है -- "हरि विष्णु के
 पुरिहें मोर लुआरध, हरि विष्णु के ।... अथवा "निरकम के कम राम
 हो सन्तो, निरकम के कम राम ।"³⁹ श्रमिक की यह कठ्ठा स्थिति
 वास्तव में देश के तथाकथित विकास के गीत गाने वालों के लिये शर्म की
 बात है । पूरी लाम रात-दिन अथक परिश्रम करने वाला श्रमिक "मूक पशु"
 बना रहता है और आराम करने वाला भुस्वामी अपने खाते भरता है ।
 इसी से चिन्तित हो चेतना-सम्बन्ध डी० प्रशान्त ममता को लिखता है-
 " यही हम्सान है कही : ... अभी पहला काम है , जानवर को
 हम्सान बनाना ।"⁴⁰ रेणु बार बार इन लोगों को जानवर कह रहे हैं,
 इसका सीधा सादा अर्थ है कि ये इन लोगों की इस नारकीय स्थिति से
 अत्यन्त क्षुब्ध हैं । राष्ट्रीय स्तर हो रहे श्रमिक-वर्ग के इस अमानवीय
 शोका पर रेणु तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करके उसे दूर करना चाहते हैं।
 ये इसके कारण को भी स्पष्ट करते हैं - -- व्यक्तिगत भुलस्यरित का
 अधिकार । भूमि का जब तक समाजीकरण नहीं होगा, तब तक ये श्रमिक
 इसी प्रकार "मूक पशुओं" की तरह दुहते रहेंगे । रेणु समाजवादी-विचार
 धारा के प्रकट समर्थक रहे हैं ,अतः समाजवादी दल के श्रमिक का यह

कर्म, वास्तव में रेणु का ही कर्म है -- " जिस तरह सूरज का झुलना एक महान तब है , पूजीवाद का नाश होना भी उतना ही तब है ।
 किसानों की चिमनियाँ आग उगमेली, और उन पर मजदूरों का कब्जा होगा।
 चारों ओर लाला भूखा मँडरा रहा है । उदरों, किसानों के सच्चे सपूतों ।
 धरती के सच्चे मासिकों, उदरों । क्रान्ति का महान मेकर आगे बढ़ो ।⁴¹
 रेणु की यह भविष्यवाणी उन्हें एक सचेत और युग दृष्टा साहित्यकार के
 रूप में प्रतिष्ठित करती है । वास्तव में यह तब भी है । निरन्तर तीव्र के
 माध्यम से एक दिन मजदूरों और किसानों का समस्त भूमि पर कब्जा होगा
 और ये शोका के हथियार फिर सदैव के लिये नष्ट कर दिये जायेंगे ।
 मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोका समाप्त होगा इसके लिये रेणु भी आशा
 से युक्त हैं और इतिहास भी साक्षी है कि यह एक प्रक्रिया है, जिसे कोई
 रोक नहीं सकता ।

तीज-रथोहार भारतीय जन-मानस में बैठे हुए हैं । मँगार्ह
 ही अध्या अकाम -- जन्ता उन्हें मानने को बाध्य है । इन रथोहारों से
 निम्न - जन्ता का शोका और अधिक होता है । कारण कि -- "मजदूर के
 पास कोई सम्पत्ति नहीं है ।... कानून सदाचार केनियम , धर्म-ये सब उसके
 लिये तरह-तरह के पूजीवादी ढकोल्ले हैं जिनके पीछे उतने ही पूजीवादी
 हित छिपे पड़े हैं ।⁴² रेणु भी अपने चित्रण के माध्यम से यही व्यक्त
 करना चाहते हैं - "चावल का आटा, गूँठ और तेल । पूजा- पकवान के
 इस छोटे से आयोजन के लिये मासिकों के दरवाजे पर पीच दिन पहले से ही
 भीड़ लग जाती है । परिवार के मुख खीन दिये जाते हैं । मासिक बहीखाता
 लेकर बैठ जाते हैं , पास में कजरीटी खुली हुयी रहती है । धान मापने

वाला धान की ढेरी से धान मापता जाता है ।बादरदास को एक
 मन ।तोनाये तलमा को तीन पसेरी । सादा कागज पर अंगूठे का निशान
 निशान देते जाओ । भादों महीने में यदि मदे धान चुका दोगे तो हयोड़ा
 यानी एक मन का डेढ़ मन । यदि अगहनी काल में चुकाओगे तो डेढ़ मन
 का तीन मन । सीधा हिसाब है ।⁴³ वापस में लड़ते रहने वाले गाँव के
 तीनों भुखामी शीका के लिए एक हैं । सम्पूर्ण गाँव को उन्होंने हिस्सों
 में विभाजित कर रखा है । इससे भुखामी-वर्ग की भी लाभ है - वह अपने
 टोले का मनमाना शीका करने को स्वतन्त्र है । "गाँव के सभी बड़े-बड़े
 किसानों का अपना-अपना टोला है - सिंध जी का तलमा और वात्खान
 टोला, तहसीलदार साहब का पानिया टोला, धानुक टोला, कुर्मी टोला
 और फियोहटोला, खेनावन यादव का गुबार टोला और कोयरी टोला।"⁵⁴
 भुखामी वर्ग ने अपने हिस्सों की खार्श गाँव को बाँट रखा है । यह कैसी
 विडम्बना है । भुखामी वर्ग के शीका से तड़पता मेरीगज मात्र प्रतीक
 है, वरना सम्पूर्ण भारतवर्ष की स्थिति ऐसी ही है । धर्म, संस्कृति,
 नैतिकता और परम्पराओं से जाहत भारतीय ग्रामीण जन निरन्तर मर
 रहा है और शीघ्र मरे ले रहे हैं । हमारे देश का विकास का यही रहस्य
 है । एक ओर अनाप-रनाप पैसा है तो दूसरी ओर एक-एक पैसे को
 तरसती अधिमूर्ख निर्धन जनता । डॉ० प्रशान्त जल इस अतहाय स्थिति
 को देखता है तो उसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार करता है-"जाम से मदे हुए
 पेड़ों के देखने के पहले उसकी आँखें हस्तान के उन टिकोनों पर पड़ती हैं
 जिन्हें जामों की गुठलियों के सुखे गूदे की रोट्टी पर जिम्मा रहना है....
 और ऐसे हस्तान ! भूखे, अतुष्ट हस्तानों की आत्मा कभी भूट नहीं हो
 या कभी विद्रोह नहीं करे, ऐसी आशा करनी ही बेवकूफी है ।

डॉक्टर यहाँ की गरीबी और बेबसी को देखकर आश्चर्यित होता है । वह समझता कि कितना महान है जिसके सहारे यह वर्ग जी रहा है ; बावजूद वह कौन सा कठोर कठोर विधान है , जिसने हजारों-हजार क्षुधियों को अमुक्तान में बाँध रखा है ।⁴⁵ यह स्थिति वास्तव में ही भयावह है । रेणु इसपर दुःख व्यक्त करते हैं और साथ ही विरयस्त भी होते हैं कि यह भयावह और नारकीय स्थिति अधिक दिन तक नहीं चल सकती । श्रमिक- वर्ग निर्दिष्ट रूप से एक दिन ज़ेक़ाई लेकर उठेगा और धुनित- गाँवों को समाप्त करने के लिये एकतावद्ध होकर संघर्ष करेगा । रेणु का यह विश्वास धीरे धीरे लय होता जा रहा है । श्रमिक लामबन्द हो रहा है, वह अब अपने अधिकारों को पाना चाहता है । पाकर रहेगा ।

भूस्वामी और बटार्चदार के सम्बन्ध मालिक और दास जैसे हैं । भूस्वामी जब चाहे तब बटार्चदार को अपनी भूमि से जलग कर सकता है । अर्थात्, बटार्चदार भूस्वामी की कुशा पर अपने कर्म से कृषि कार्य करता है । जमींदारी-उन्मूलन के समय बटार्चदारों को उनके अधिकार दे दिये गये किन्तु जमींदारों ने उन्हें जबरन भूमि से जलग कर दिया , मेरीगंज में भी यही हो रहा है । बतते दुःखी हो डा० प्रशान्त तथालों को समझा रहा है - "तुम लोग ही जमीन के असल मालिक हो । कानून है, जिसने तीन साल तक जमीन को जीता-बीया है , जमीन उतनी की होगी ।"⁴⁶ भूस्वामी वर्ग अपने हितों पर संकट आते देख एक हो गया है। तथालों की भूमि पहले ही बन्दोंमें मिलकर अपने कब्जे में कर ली है ---

हरगोरी ने सिध जी के नाम लैधान टोपी की बन्दोबस्त एक जमीन बेनामी करवाई है, जिसमें से दो एक सिध जी को मिलेगी। ... देनावन ने भी बीच बीछा लैधान टोपी की बन्दोबस्त भी है। बेतार का ऊपर सुम्हिरतदास कोचरी टोपी वालों से कहता है, " यदि हरगोरी तहसील्दार ने तहसील्दार चिरयमाध प्रसाद के नाम दो ली बीछे और और मेरे नाम से बचाव बीछे की निजा-बहुती नहीं की तो फिर देख लेना। हा कायस्थ है, लेन नहीं।"⁴⁷ इसमें सबसे अधिक लाभ तहसील्दार चिरयमाध प्रसाद को होता है, अतः वह इस बातम्न लैकट से सर्वाधिक चिन्तित हैं। गांव के लोगों की एक बंदायस्त करते हैं - तहसील्दार और सभी की लैधानों के विरोध में एक करते हैं। उन्हें यह अच्छी प्रकार बात है कि यदि अब लैधानों के विरोध में एक होकर जमीन बचानी तो फिर किसी में साहस नहीं कि तहसील्दार की जमीन पर बीछ भी ठाम लें। तहसील्दार अपनी कूट ठामों और राज्य करों की नीति से काम लेते हैं, जिसमें क्रिमिक नेता कामोचरन, जातखी जी और सम्पूर्ण गांव उमका साथ देने का बचन देते हैं। तहसील्दार की इस कूटपूर्ण बंदायस्त का वर्णन करते हुए रेणु जी कहते हैं, " सुनी, कामोचरन बेटा। मोठर बने हा तो बड़ा अच्छा काम है। बाबू गांव का नाम तो इसी में है। कोई लौरसिस्ट का मोठर है, तो कोई कोटेल का, तो कोई कामी टोपी का। लेकिन देख जा भैया, हम गांव के सभी मोठों के अकेले मानिक हैं। यदि गांव में उधर-उधर कुछ किये तो पीठ की चमड़ी भी उछेड़ में। ... देनावन। जातिखी जी। बाप ही लोग कहिये, जो मोठें हमको कहते हैं काका, मामा, भैया, कृकाउन लड़कों की गलती पर यदि हम काम बन्दुकर मन दें या दो कड़ी बात कह दें तो हमको कोई दोष देगा। ... नहीं, नहीं। बाप बाजिज

बात कहते हैं ।.....लेकिन सभी भाई सुन लीजिए। यदि गांव के बाहर का कोई बाहरी हम पर हमला करे तो उसका मुकाबला सभी को मिलकर करना होगा । हाँ, यदि बाहर वाले इस गांव के जमीन बान्सी पर हमला करें तो सभी को सहायता करनी होगी ।.... गांव की जमीन गांव में रहेगी । बाहर क्यों लेंगे, समझे :-⁴⁸ भूस्वामी-वर्ग की कुटिलताओं की ग्रामीण जनता और उसके स्थानीय नेता समझने में असमर्थ रहते हैं । परिणामस्वरूप भूस्वामी-क्षमिक संबंध मेरीगंज और बाहर के बायसी में बढ़न जाता है । तहसीलदार विखनाथ प्रसाद की कुटिल राजनीति से क्षमिक-वर्ग की भारी हानि होती है और उनका हित । स्थानों की डी० प्रशासन द्वारा अपने अधिकारों का शोषण होता है । वे तहसीलदार द्वारा की गयी बन्दोबस्ती की अपनी बान्सीत सीमा जमीन के बीहान की लूट रहे हैं, जिसका विरोध सारा मेरीगंज करता है । रेणु ने चित्रण प्रस्तुत किया है , " जे । कामी माई की जे । महारमा गान्धी की जे । इन्किलाब जिन्दाबाद । भारद्वाजा की जे । शीरनिष्ठ पाटी जिन्दाबाद । लैटा हिन्दू राज का । हिन्दू राज की जे । तहसीलदार विखनाथ प्रसाद की जे । कमदेव जी की जे ।"⁴⁹ रेणु इन जयकारों के माध्यम से स्पष्ट करते हैं कि सारा गांव स्थानों के विरोध में एक हो गया है मानो हिन्दूराज पर कोई विदेशी आक्रमण हुआ हो । विखनाथ प्रसाद की जय के नारे भी लगते हैं - नारा की जय पर । गरीब और अतहाय जनता की भावनाओं को अपने वश में करके तहसीलदार माभ की स्थिति में रहकर लीका के हथियार की और भी धारदार बनाता है । यह बड़ी विचित्र स्थिति है कि कांग्रेसी सरकार ने ही जमींदारी प्रथा समाप्त की और उसी पाटी का स्थानीय नेता कमदेव उसके विरोध में जाकर तहसीलदार जे

भुस्वामी का सम्पर्क करता है। यह उसके अन्तर्विरोध हैं, जिनमें अन्दर पैठकर रेणु यथार्थ का उद्घाटन करते हैं। इस सम्बन्ध में सबसे अधिक लाभ भी विरचनाध प्रसाद को होता है। तबसीमदार एक दिन स्वयं अपना आकलन करते हैं, "जिस बात से सारे गाँव का मुन्नाम हुआ, उसमें भी नफा ही रहा तबसीमदार को। मुन्नामें मैं मुन्ने फँस गये और इतना बड़ा तेलम केस दूसरों के सिर पर ही खेप लिया। अपने घर से तो एक बेला भी गया ही नहीं। ऊपर से पाँच हजार के करीब कायदा ही हुआ। डेमावन, रामकिरणाम सिंह खीरह की जमीन मिली तो मुफ्त में ही।"⁵⁰ इससे भुस्वामी-वर्ग की कूटिलता और धूर्तता स्पष्ट हो जाती है। सम्पूर्ण गाँव को भी तस्त करके भी जमींदार प्रसन्न है। उस पर कहीं कोई सीकट नहीं है। यह निरन्तर बढ़ रहा है - बढ़ता जा रहा है। यह देश के इतिहास विकास का इतिहास है। इससे जीर्ण मूढ़ने का कर्म है, यथार्थ को नकारना। रेणु के ये वर्णन वास्तव में हमारे देश की 73 प्रतिशत ग्रामीण-जनता की निर्धनता के कारणों को स्पष्ट करते हैं।

रेणु वास्तव में एक अति-संवेदनशील लेखक थे। ग्रामीण-जीवन की इस भयावहता से वह अत्यन्त दुःखी थे। इसका प्रमाण "मेला जीवन" में दिगना-बीराही के जोरनिस्टी-कार्यकर्ता द्वारा स्वाधीनता को नकारने से मिलता है। रेणु भी दिगना-बीराही के निन्दागी थे, अतः वास्तव में वह उनका ही कलम है - "अरे भाई, दिगना-बीराही का सोसलिट है तो दिगना बीराही में जाकर अपने गाँव का सादा सगाधे। यही काबिलियती छोटने का क्या जरूरत था! अपना मुँह है - बस लगा दिया सादा - यह आजादी झूठी है।"⁵¹ रेणु वास्तव में इस आजादी

की घुठी मानते थे , और है भी । भूस्वामी-पूजीपतियों का राज्य कभी भी आम-जमाता का हित नहीं कर सकता । इसीलिये वास्तविक-बाजादी के बारे में रेणु कहते हैं - " जिस दिन धनी, जमींदार, सेठ और मिल वालों की सांग राह चलते कोढ़ी और पागल समझने लगेंगे उसी दिन ,उसी दिन असल सुराज हो जायेगा ।"⁵² सुराज की इससे बड़ी परिभाषा और क्या होगी । रेणु इस तथ्य की भरी प्रकार समझते थे कि जब तक शोकावादी तत्त्व बढ़ते रहेंगे, तब तक वास्तविक बाजादी नहीं मिल सकती । यह रेणु की चैतन्य बुद्धि का निष्कर्ष है । यह स्वप्न नहीं, वास्तविकता है - रेणु की आस्था पक्की थी ।

यह चिन्तन ही है कि यथार्थ और उसके अंतर्निहित तत्त्वों को स्पष्ट करने के बाद भी रेणु निष्कर्ष में बचपना कर जाते हैं । यह उनकी समाजवादी-दृष्टि का परिणाम है, जिस पर महात्मा-गान्धी के हृदय-परिवर्तनवाद का प्रभाव है । भूस्वामी शक्ति के लक्ष्य का परिणाम भूस्वामी के हृदय-परिवर्तन में होता है । यह ऐतिहासिक दृष्टि से भी अव्यर्थ है , ऐसा कभी नहीं हुआ और न हो सकता । जीवन भर एक-एक र्ध जमीन के लिये बेईमानी करने वाला, शोषक सहस्रीसदार सुमरितदास से क कहता है -" लोगों से कह दो... हरेक परिवार को पाँच बीघा के दर से में जमीन मीटा दूंगा ।...एक र्ध जमीन के लिये हाथकोठ तक मुकदमा मढ़ते हैं लोग । और मैं तो बीघे जमीन दे रहा हूँ ।"⁵³ लेकिन रेणु यह भी स्पष्ट कर देते हैं कि यह जमीन जिसे सहस्रीसदार दे रहा है ,उन्हीं किसानों से नीलाम की गई है - "अरे, यह जमीन तो उन्हीं किसानों की है, नीलाम की हुई, जस्त की हुई, उन्हें वापस दे रहा हूँ । मैं कहता हूँ,

प्रेमाम कर दो, मासिक का हुकुम है ।⁵⁴ यह अधार्थ निष्कर्ष महात्मा गान्धी के प्रति भावुकता और तारामिस्ट पार्टी की समन्वय और समझौता-परक नीति का परिणाम है । रेणु यदि निष्कर्ष न देते तो अच्छा था, क्योंकि लेखक का कार्य हकीम की तरह इलाज करना नहीं, बल्कि कि अधार्थ का उद्घाटन करना है । मुक्तिबांध ऐसे ही लेखकों के सम्बन्ध में करते हैं, "बहुत बार लेखक जिम जीवन-सत्यों को कलात्मक रूप में प्रस्तुत करना चाहता है, उनकी वह ढंग से नहीं समझता । उनके प्रति उसका दृष्टिकोण भी बहुत बार गलत होता है । ऐसी स्थिति में लेखक वास्तविकता के अधार्थबांध के स्थान पर अधिकतम कल्पना का सहारा लेकर अपना काम पूरा करता है । उसकी यह क्षमता न केवल व्यक्तिगत होती है वरन्, वह उस फल से सम्बद्ध होती है, जो उन जीवन सत्यों के वास्तविक रूप को तथा उनके वास्तविक मूल्यों को प्रच्छन्न अथवा नितास्त गुप्त रखा चाहता है ।"⁵⁵

भूस्वामी और श्रमिक के आपसी संबंध की रेणु "परती-परिकथा" में और भी गहराई से चित्रित करते हैं । "परती परिकथा" का जितेन्द्रनाथ मिश्र "मेला जीवन" के तहसीलदार विरयनाथ प्रसाद का आगे का विकास है । जमींदारी उन्मूलन से उत्पन्न समस्याओं के समाधान हेतु तहसीलदार स्थान-गैरस्थान संबंध कराकर अपनी भूमि की बटाईदारों से रखा करता है । "मेला जीवन" के छोटे किसान और छेतिहर-मजदूर कटिघार भाग से रहे हैं - मजदूरी की तलाश में । मेरीगंज में अब गुजर कही-जमीन तो तहसीलदार ने छुप ली । रेणु छेतिहर मजदूर की दयनीय अवस्था से दुःखी थे । आजादी के बाद उस पर जमीन भी नहीं रही और

छेती के औद्योगीकरण के कारण उनकी मजदूरी में भी टोटा पड़ गया—
 " तबलीबदार साहेब इस बार टक्टर ॥ ट्रैक्टर ॥ खरीद रहे हैं । बेतार
 कबता था , उसी में सब कुछ होगा— इस, चीनी, विद्या, कोटुकमान,
 कादी गोरा और धनकटनी भी । आदमी की क्या जरूरत ! पानी का
 पम्पू आयेगा । इन्दर भवान की कुशामद की जरूरत नहीं । कम्ला नदी
 में पम्पू लगा दिया ,मिसिम स्टाट कर दिया और इधिया-कुँ की तरह
 सब पानी सोखकर छेत परा देगा ।" ... जब इन्दर भवान को ही मून
 नेब चला रहे हैं तबलीबदार साहेब तो आदमी उनके हुजूर में क्या है !
 कटिहार में एक जूट मिल और कुना है । तीन जूट मिल!...घनो, घनो
 दो कया रोज मजदूरी मिलती है । गाँव में अब क्या रखा है !^{५६}
 सरकारी-नीतियों की असम्यक्ता और कर्मचारियों की मिली-भगत के
 कारण बटाईदार और उठे किसान छेतियार मजदूर हो गये । सरकारी
 नीतियाँ जहाँ उन्हें अपनी भूमि पर स्थाई अधिकार दिमाने की की थीं,
 वही उसके विरुद्ध उन्हें असम कर दिया गया । "मैला जीवन" का विरव
 नाथ प्रसाद कांग्रेस-कमेटी का सदस्य है और वही अपनी सरतापाटी के
 नियमों की तहिक रहा है —यह चिन्तनीय स्थिति है । जितेन्द्रनाथ मिश्र
 भी गाँव में आकर वही करता है— अनवरत शोकना । रण्टु लिखते हैं —
 " इस सैक सर्वे सेटलमेन्ट की बीधी में गाँव बाये हैं जिन्तन बाबू । मुंशी
 जनधारी के चकुर्ण से देखते-सुनते हैं और रामवरकर... की चिगाबुडि
 से समझते-बुझते हैं । किसी की कोई बात नहीं सुनते । किसी से मुँह खोलकर
 बात नहीं करते । नया ट्रैक्टर खरीद हुआ है । बटाई करने वाले किसानों
 को, जमीन से बेदखल किये बिना फार्म बनाना असम्भव है।^{५७} गरीबों से
 छीनी गई भूमि पर तबलीबदार और जिन्तन दोनों का ट्रैक्टर चल रहा
 है । जमींदारी-उन्मूलन और समस्त भूमि-सुधार का यही परिणाम है ।

बिहार टेम्पेस्टी-एक्ट में लगातार तीन साल तक जमीन बाबाद करने वालों की मौतही एक प्रदान करने का प्राविधान रखा गया । इस नियम से सारे गांव में प्रान्त में तहलका मच गया ।-° जिसे भर के किसानों और भूमिहीनों में महाभारत मचा हुआ है । तिरक भूमिहीन नहीं, ठेठ लो वीछे के मासिकों ने भी दूसरे बड़े किसानों की जमीन पर दावे किये हैं ।..... हजार वीछे वाला भी एक इंच जमीन छोड़ने को राजी नहीं ।-⁵⁸ गांव में मुख्य जायिक- तीन कृषि है, इसीलिये महाभारत होना स्वाभाविक ही है। लेकिन महाभारत का परिणाम भूस्वामी-वर्ग के हित में ही गया । भूस्वामी के पास खर्च करने की क्षमता है , पास गये नीकर-बाकर हैं, वह सर्वशक्तिमान है । सर्व के चकर में भूमिहीनों की भूमि मिलना तो दूर रही- सही पूँजी को और लुटा बैठते हैं , उन्हीं के कन्धों पर चढ़कर रीतन बिस्वा जैसा महाजन तीन लो वीछे भूमि का स्वामी हो जाता है । रेणु का यह चिन्ता स्वाधीन भारत की जीवन-गाथा है, जहाँ हर नये कानून ने गरीबों का गला काटा और धेनोशाहों के घर को और भी भरा ।

भूस्वामी विभिन्न प्रकार से अपनी कृषि को कार्य पद्धति का संवर्धन करते थे । बटेयादार के अतिरिक्त कुछ गुलाम भी रखते थे, जिसे तिरक उसका पेट भरने हेतु ही दिया जाता था । इससे भूस्वामी-वर्ग को सर्वप्रथम लाभ तो यह था कि ऐसा गुलाम जिसके पास भविष्य की बचत के नाम पर कुछ भी नहीं है, सामने आकर विद्रोह करने की स्थिति में नहीं रह जाता । दूसरे यह कि वह सदैव भूस्वामी-वर्ग के हितों का संरक्षण करने में अपना हित समझता । भूस्वामी को उसकी नहीं उसके क्षम की आवश्यकता थी , इसीलिये उसका सम्मान नहीं था । दुरतों का पिता लरेना ख्यास ऐसा ही गुलाम था जितेन्द्र मिश्र का । "ख्यास का

अर्थ : छा-वास । पुराकास से दृष्ट किसानों ने छैन नामक पृथा प्रचलित की थी । कमार, कम्हार, चमार आदि को छैन देते थे और बदले में सास भर काम लेते थे । इस के हिसाब से ही सभी किसम के छैन की दर निश्चित होती थी । एक इस वाले को अगहनी धाम एक मन, भदई एक मन। लेकिन छावास तो दिन रात जीगम से लेकर दरवाजे तक का काम करता था। इसीलिये उन्हें ऐसी ज़मान दी जाती थी जिस पर छेती बारी मासिक के ही इस कैल से होती । उपज काटकर छावास ले जाते । छा-वास का अर्थ हुआ- छावों और वास करो ।⁵⁹ रात-दिन काम करने के बाद मात्र कुछ भूमि की उपज ; भूमि नहीं । यह गुनामी की स्थिति थी । इस स्थिति में छावास बाजीवन भुस्वामी से न जमा बट सकता था और न अपनी स्थिति ही सुदुरु बना सकता है । भुस्वामी श्रमिक के यह सम्बन्ध उसके अनवरत, शोषण को ही स्पष्ट करते हैं

रेणु के वर्तन वास्तव में स्वातन्त्र्योन्मुख गीत का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हैं । भुस्वामी और बटार्थदार में किस प्रकार भूमि पर कब्जा करने के लिये संघर्ष चल रहा है, यह स्थिति मण्डरपूर्ण है । रेणु इस तथ्य का भी उद्घाटन करते हैं कि जिस मये बदलते कानूनों से गरीब का हित नहीं हुआ । भुस्वामी-वर्ग कानून बनने से पूर्व ही उसकी कमियाँ का साथी उठा लेता है और बटार्थदार दूर-दूर देखता रह जाता है । ये ऐतिहासिक महत्व के चित्रण हैं - रेणु के ।

। स । राजनीति का स्वल्प : जातिवाद और धर्म :-

रेणु राजनीति से साहित्य में जाये । राजनीतिक समझ और उसके अन्तर्निहितों के बारे में रेणु की गहरी पैठ थी । स्वाधीनता पूर्व और स्वाधीनतर भारत की बदलती राजनीति , गिरते मानदण्ड और

अराजकता से रण्टू का निष्कट का सम्बन्ध रहा। सन् 1942 से रण्टू ने भारतीय राजनीति में सक्रिय भाग लिया, वे जेल भी गये और विभिन्न प्रकार कष्ट भी लगे। स्वाधीन भारत की राजनीति में आयी मुख्यधारात्मकता ने रण्टू को राजनीति से साहित्य में जाने के लिये विवश किया। स्वाधीनता मिलते ही कम के देशद्रोही, पूँजीपति और जमींदार किस प्रकार कांग्रेस की जिम्मा, प्रान्त और राष्ट्रीय समितियों के सदस्य और पदाधिकारी बने, रण्टू इसे अस्वाभाव्य मानते हैं। एक सामान्य किन्तु समर्पित कार्यकर्ता को पीछे छोड़कर ऐसे के आधार पर कांग्रेस पार्टी में आयी अराजक पद प्राप्ति से रण्टू जैसे कार्यकर्ता का दुःखी होना स्वाभाविक ही है। रण्टू समाजवादी दल के सक्रिय कार्यकर्ता थे। प्रथम अध्याय में रण्टू के जीवन-दर्शन और विचारधारा का तथ्यात्मक वर्णन किया गया है। इस दल में मूल रूप से कांग्रेस के प्रगतिशील कार्यकर्ता आये। कांग्रेस से विरोध का स्पष्ट कारण कांग्रेस की पूँजीपति-भूस्वामी समर्थक नीति थी। किन्तु धीरे-धीरे लगभग उसी कार्यक्षमता के अन्त में जाने के कारण रण्टू का विचार समाजवादी-दल से भी उठ गया। राजनीति से निराश होकर रण्टू साहित्य में प्रवेश करते हैं। रण्टू के शक्तिशाली और प्रभावशाली वर्णनों के मूल में उनकी गहरी राजनीतिक समझ ही है। स्वाधीन भारत की घृणित राजनीति और उसके कार्यकर्ताओं के अन्तर्घिरोधों को रण्टू ने विस्तृत स्तर पर चित्रित किया है।

स्वाधीनता की लड़ाई लड़ने वालों में सामान्य-जन्मा अधिक थी। भूस्वामी और पूँजीपति दोनों के आधार पर देशद्रोह कर रहा था। उसकी सम्पूर्ण सहानुभूति कीर्तियों के प्रति थी, किन्तु कांग्रेस का समर्थन प्राप्त करने की दृष्टि से वह अपने हितों के पक्ष में महात्मा गान्धी को

दाम दे रहा था । जिसके कारण वह अपनी दमन और शौक-प्रवृत्तियों
 को ध्यावत् बनाये रख रहा था । कांग्रेस का मूल कार्यकर्ता गरीब आदमी ही
 था । " नेता आत्म " के समवेत , बाबनदास और धुन्नी गुसाईं इसी निम्न
 वर्ग के कार्यकर्ता हैं जो महात्मा गान्धी के आह्वान पर अपना सर्वस्व त्याग
 कर कांग्रेस में आते हैं और स्वाधीनता संग्राम में बूढ़ पड़ते हैं । ये कार्यकर्ता
 समर्पित भी थे , नेतागिरी की स्वार्थ और धुनित गन्ध हमसे बहुत दूर
 थी । समवेत ने हरगोरी के वातावरण से यह स्थिति और भी स्पष्ट हो
 जाती है । हरगोरी के यह पृष्ठ पर - " सुना कि अपनी सीठरी खुब कम
 रही है । " ⁶⁰ समवेत उत्तर देता है - " बाबू साहेब गरीब आदमी भी भला
 सीठर होता है । हम तो आप लोगों का सेवक हैं । " ⁶¹ समवेत एक तो
 गरीब है , दूसरे अहीर जाति का । गाँव में राजनीति का आधार जाति
 है । जातिगत आधार ही लोग दलों की सदस्यता स्वीकारते हैं । हरगोरी
 राजपूत है , अहीर जाति राजपूतों से नीची पड़ती है - हरगोरी- समवेत
 विवाद का मूल कारण भी यही जाति है । नीची जाति का आदमी
 ऊँची जाति के सामने नेतागिरी करे यह उन्हें स्वीकार कहीं ! इसी आधार
 पर हरगोरी समवेत का अपमान करता है । - " आप तो सीठर ही हो
 गये तो आजकल कांग्रेस आफिस का चौका बर्तन काम करता है । " हरगोरी
 अचानक उबल पड़ा - " अरे भाई , सभी काशी फले जाओगे ! परतल बाटने
 के लिये भी तो कुछ लोग रह जाओ । जेन क्या गये , पण्डित जवाहरलाल
 हो गये । कांग्रेस आफिस में भोसटिपरी करते हैं , अब जन्धों में कामा
 बनकर यही सीठरी छोटने आया है । स्वयंसेवक न छोड़ा का दुम । " ⁶²
 निम्न जाति & समवेत का उच्च-जाति का हरगोरी अपमान करता है ।

और इस अवमान का बदला लेने की जाग भी उसी के टोली में फैलती है। यादव टोली का अवमान हुआ है, मानो । सुपूर्ण कार्य - व्यापार गांव में जातिगत आधार पर ही चलते हैं । गुजरटोली । यादव टोली । में जैसे ही यह दुःखद सूचना मिली, सबके सब उत्तेजित हो गये - "गुजरटोली वाले झेरी लेकर जा रहे हैं", एक सड़का दौड़ता हुआ आकर खबर दे गया । .. कौन किसका जवाब देता है । किस कुरलत है । सारे गांव में कुहराम मचा हुआ है । हरगौरी की माँ अब शिवगिर सिंह को जीगन में बुला रही है । चिल्ला रही है, " गुजरटोली का रौंदी बूढ़ा आया है ।.. गुजरटोली में बूढ़े बच्चे खोल रहे हैं कि हरगौरी ने बलदेव को कुत्ते से मारा है । कुत्ते का बेटा कलचरन काली किरिया खाया है - हरगौरी का खून पीये ।"⁶³ जातिवाद का यह बख़्तर कोई भीष्म तर्जुन का रूप लेता इससे पहले ही गान्धीवादी बलदेव समझौता कर कालाचरन को समझा देता है । रेणु इस पर टिप्पणी करते हैं, "सबसे पहले यदि उस दिन बलदेव भी ठीक समय पर नहीं आ जाते तो कालाचरन इस पार चाहे उस पार कर देता ।"⁶⁴ व्यक्तिगत ईर्ष्या की लड़ाई भी गांव में जातिवाद के आधार पर लड़ी जाती है । गांव की जनता विभिन्न टोलियों में बंटी हुई है और उसी आधार पर उनके दम बने हुए हैं । यादव सोशलिस्ट हो गये हैं तो राजपूत जारो एसो एसो में चले गये हैं ।

राजपूत में अधिक वस्तुएं और अधिक मात्रा में लेने के लिये बलदेव गांव के लोगों को पुर्णिया ले जाता है । पुर्णिया में मिनिस्टर साहेब आ रहे हैं । मिनिस्टर से अधिक राजपूत का कपड़ा लेने गई जनता को यह नहीं मालूम कि उन्हें बहका कर ले जाने में मिनिस्टर के स्वागत का रहस्य छुपा पड़ा है । यही सबसे बड़ा परिवर्तन यह होता है कि

कालीचरण और वासुदेव सोशलिस्ट पार्टी के सम्बन्ध में जाते हैं और उसकी सदस्यता ग्रहण करते हैं। मेरीगंज में सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना होती है। यही यह तथ्य भी रेगुलैरिटी में स्पष्ट किया है कि मेरीगंज में सोशलिस्ट पार्टी के नाम पर यादवों को लिया जाता है। सारे यादव सोशलिस्ट हो जाते हैं। सोशलिस्ट पार्टी के जिला मन्त्री यादवों की संख्या के ही आधार पर सैनिक जी को मेरीगंज भेजते हैं ताकि यादव के कारण सारे यादव सोशलिस्ट पार्टी में आ जायें - 'ये हैं कामरेड गंगाप्रसाद सिंह यादव सैनिक जी, और बाप लोग हैं, कामरेड कालीचरण और.... क्या नाम?' ही वासुदेव जी। आज मेरीगंज से रामकृष्ण आश्रम में जी जुनूस आया था इन्हीं लोगों की सदारत में। पार्टी प्लेज पर साहजिक कर दिया है। मेरीगंज में सबसे ज्यादा यादवों की आबादी है। यही बापका जाना ही ठीक होगा। यही आर्गनाइज करने में कोई दिक्कत नहीं होगा।⁶⁵ वास्तव में कोई दिक्कत नहीं होती। सभी यादव-टोली का जन्म-सामान्य कालीचरण के साथ आ जाता है।

कांग्रेस मूलतः भुस्वामी-पूजीपतियों की पार्टी है।

वह मूलतः भारतीय राजनीति में साम्राज्यवादी शासन के विरुद्ध राष्ट्रीय पूजीपति-वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व कर रही थी।⁶⁶ नगर में पूजीपति और गाँव में भुस्वामी-वर्ग इसकी सहायता कर रहा था। भुस्वामी भी उच्च जाति का था अतः उसके यहाँ पहले अपना आर्थिक हित और बाद में जातीय हित की प्राथमिकता प्राप्त थी। अतः कहने का अभिप्राय यह है कि कांग्रेस उच्च-वर्ग और वर्ग की पार्टी थी, बलदेव, बाबनदास और घुम्नी गुसाई जैसे निम्न वर्ग और वर्ग के लोग उसमें सिर्फ महात्मा गान्धी

बढ़ावत थे । जिनका किनिरान्तर शोका हो रहा था । कांग्रेस के अन्दर भूस्वामियों की स्थिति का वर्णन करते हुए रेणू लिखते हैं - " जिला का सबसे बड़ा किसान है भीला बाबू । तीस हजार बीघा जमीन है । रहुवा बस्टेट के मुखिया बाबू भी किसान ही हैं। उनकी बात मिलाती है। दाता कर्ण हैं । चारफन में सबसे ज्यादा खेया दिया और कांग्रेस के सहायताफन में भी सबसे ज्यादा खेया दिया । जिला कांग्रेस के सबसे बड़े मोठर हैं रिक्ताध चौधरी जी०० जो , आप तो जानते ही हैं उनकी । वह भी बड़े किसान हैं ।" 67 रेणू यही स्पष्ट करते हैं कि कांग्रेस में बड़े भूस्वामी ही अधिक हैं । मेरीगज का मुठेरी तहसीलदार चिरवनाथ प्रसाद भी कांग्रेसी हो जाता है । "तहसीलदार भी कांग्रेसी हो गये हैं । उन्होंने चरखा सेन्टर के लिये अपना गुहास घर दे दिया है । जूदर पहन्ने लगे हैं। बोलते थे सारी जिन्दगी दूध बेईमानी करते ही गुजर गई । आखिरी उम्र में पुण्य भी करना चाहिए ।... तहसीलदार साहब क्वाक्विनया मेम्बर नहीं बने हैं । क्वाक्विनया मेम्बर तो सभी बनते हैं । तहसीलदार साहब चार सौ टकिया मेम्बर बने हैं । देखा नहीं : रिक्ताध बाबू ने रसोद काटकर दिया और तहसीलदार साहब ने तुरत मन्धाता तम्बाकू के पत्तों के बराबर चार मम्बरी नोट निकालकर दे दिया । छड़- छड़ करता था नोटों⁶⁸ चार सौ रुपयों की महिमा कि कसदेव जैसा कर्मठ कार्यकर्ता पीछे रह गया और तहसीलदार जिला कमेटी का मेम्बर भी बन गया और पूजो बोटने का काम भी कसदेव से छीनकर तहसीलदार को दे दिया गया । ऐसी स्थिति को देखकर ही कसदेव का मन फटता है 69 चौधरी जी को वह सब दिन से गुरु की तरह मानता आ रहा है । कभी किसी काम में

तरोटी नहीं होने दिया । इतना चौअण्णिया मेम्बर बनाकर दिया।
 गांव में चरखा सेन्टर खुलवा दिया, लेकिन जिन्ना कमेटी के मेम्बर
 तहसीलदार साहब हो गये । कमदेव को कोई खबर नहीं दी गई । कड़े
 की मेम्बरी भी नहीं रही । मौमक कानून के समय जेल से जाने का यही
 बखशीस मिला है । कालीचरन की पारी धाने ठी करते हैं - " कांग्रेस
 जमीरों की पार्टी है ।"⁶⁹ कांग्रेस की इस स्थिति से दुःखी होकर चुम्नी
 गुसाई शोसलिस्ट पार्टी में चला गया⁷⁰ और कमदेव- " वह पुरैनिया जायेगा,
 जहाँ से चम्पनसदटी चला जायेगा । वह अब अपने गांव में रहेगा, अपने
 समाज में, अपनी जाति में रहेगा ।... जाति बड़ी चीज है ।... जाति
 की बात ऐसी है कि सभी बड़े- बड़े सीठर अपनी-अपनी जाति की पार्टी
 में हैं ।"⁷¹ चुम्नी गुसाई और कमदेव की भांति इस जातिवादी राजनीति
 से बाबनदास का भी मोहभंग हो जाता है । ये तीनों कार्यकर्ता एक साथ
 ही कांग्रेस -पार्टी में जाये थे।⁷² हमके जाने का कारण गान्धी जी के
 प्रति ज्वार श्रद्धा और स्वाधीनता के प्रति दृढ़ विश्वास था किन्तु कांग्रेसी
 भ्रष्ट-राजनीति से तलाक़ होकर तीनों ही रूत : रूत : कमल हो जाते हैं ।
 जिन्ना कांग्रेस के अध्यक्ष पद हेतु चुनाव को देखकर बाबनदास जैसा ईमानदार
 कार्यकर्ता दंग रह जाता है ।- "जिन्ना कांग्रेस के सभापति का चुनाव होने
 वाला है । चार उम्मीदवार हैं, दो जल्ल और दो कमजल्ल । राजपूत
 और भूमिहार में युकाजिला है । जिसे भर के सेठों और जमीं दारों की
 मोटर गाड़ियाँ दी हुई रही हैं । एक-दूसरे के गद्दे मुँह उखाड़े जा रहे हैं ।
 कटिहार काटन मिल वाले राजपूतों की और ... ऐसे का तमाशा कोई
 यही जाकर देखे । बाबनदास सोचता है, अब लोगों को चाहिए कि अपनी
 अपनी टोपी पर लिखवा लें - भूमिहार राजपूत, कायस्थ, यादव, हरिजन।"⁷³

इस प्रकार जातिवादी राजनीति से बाबमवाद जैसा फटाना और बाबमवाद को भी दुःखी हो उठता है। राजनीति का काम देश और समाज का हित करना है, वहाँ अब राजनीति जाति जैसी संकीर्ण गलियों में भटक कर रह गई है, ऐसी स्थिति में देश का क्या होगा ? हर नेता अपनी जाति के आधार पर कूद रहा है, जिसकी जाति अधिक है वही सफल है। क्या यही स्वाधीनता है? जिसके लिये लाखों लोगों ने अपना सब कुछ त्याग दिया और अंग्रेजों के विरुद्ध शस्त्राह्वर दिया। बाबम बहुत चिन्तित है। वह कहीं जाये, क्या करे ? ऊपर से नीचे तक भ्रष्टाचार का बीमबाला। कमरे के के द्वारा यह कहने पर कि स्थानीय नेता अधिक भ्रष्ट हैं, बाबम कहता है—“नहीं कमरे, उठन बाबू जैसे छोटे लोगों की बात जाने दो। यह बेकारी ऊपर से आयी है। यह पटनियाँ रोग है।... अब तो और भ्रष्टाचार से फैलेगा।... भूमिहार, रजपूत, वैश्य, जाट, हरिजन सब लड़ रहे हैं। .. अपने चुनाव में तिगुने मेरे ! एम० एम० ए०॥ चुने जायें। किसका आदमी ज्यादा चुना जाये इसी की लड़ाई है। यदि रजपूत पार्टी के लोग ज्यादा जाये जो सबसे बड़ा मन्तरी भी रजपूत होगा।”⁷⁴ बाबम का मोहक हो जाता है। वह आजादी के किसी उत्सव में भाग नहीं लेता। उसी प्रकार महात्मा गान्धी भी किसी उत्सव में भाग नहीं लेते। दोनों पक्षों में एक विचित्र साम्य है—“पूरी भारत भूमि पर उस दिन जल मनाया जा रहा था। मगर, वह आदमी जो भारत को विदेशी शासन से मुक्त कराने के लिये दूसरों के मुकाबले कहीं ज्यादा जिम्मेदार था इन जनों में शिरकत नहीं कर रहा था। जब भारत सरकार के चुनाव व प्रसारण विभाग का एक अक्षर संदेश प्राप्त करने के लिये गान्धी जी के पास पहुँचा तो गान्धी जी ने

जवाब दिया कि - " अब मैं चुक गया हूँ । मेरे पास कबने को कुछ नहीं रह गया है ।" जब अफसर ने फिर कहा कि अगर बाप कोई सन्देश नहीं देंगे तो यह अच्छा नहीं लगेगा , तब गान्धी जी ने जवाब दिया कि - "मेरे पास देने की कोई भी सन्देश नहीं है । अगर यह बात बुरी है तो बुरी बनी रहे ।"⁷⁵ संकलित रचनाएँ: अंग्रेजी, खण्ड 3, पृ० 95-96।

बाबन, कानदेव और घुम्नी गुसाई के मोहभा की तरह ही महात्मा गान्धी का मोहभा होता है । 26 जनवरी सन् 1948 के दिन जब कि पहली बार स्वाधीन भारत में स्वतन्त्रता दिवस मनाया जा रहा था महात्मा गान्धी अपनी मृत्यु से चार दिन पूर्व यह कहते हैं - "आज का दिन, 26 जनवरी का दिन आजादी का दिन है । इसका उत्सव मनाना तब तक ठीक था जब तक हम आजादी के लिए संघर्ष कर रहे थे और आजादी हमने देखी नहीं थी और न उसे भरता था । अब हम इसे भरत चुके हैं , और हमें इससे मोहभा होता दिखाई देता है । कम से कम मेरा मोहभा तो हो चुका है, भले ही आप सबका न हुआ हो ।"⁷⁶

महात्मा गान्धी की यह मोहभा की स्थिति बड़ी भयावह है । जिस स्वाधीनता के लिये सब कुछ किया वह ऐसी निरर्थक सिद्ध होगी, यह सोचा भी न था । बाबनदास जिसमें महात्मा गान्धी की प्रतिच्छवि है, निराश हो कहता है - "सब मेले मँतरी होना चाहते हैं कानदेव । देस का काम, गरीबों का काम , चाहे मजूरों का काम जो भी करते हैं, एक ही लोभ से । ... उस पाटी में बस एक जेवराना बाबू हैं । हा हा हा । उनको भी कोई गोली मार देगा ।"⁷⁷ जिस मोहभा ने चार दिन बाद महात्मा गान्धी नाथूराम गोठसे की गोली के शिकार होते हैं वही बाबनदास अपने ही कींग्रेसी के हाथों मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

गान्धीवादी बाबन्दास की कीग्रेसी द्वारा बरया मामी गान्धी जी की बरया ही है । गान्धी जी के श्राद्ध के दिन कइहा धामा का सेक्रेटरी कुमारचन्द कापरा तस्करी कर रहा है जिसका विरोध बाबन्दास करता है । -" कइहा के कुमारचन्द कापरा, वही जुआ कम्पनी वाला, जिसकी जुए की दुकान पर नेवीलाम भीमा बाबू और बाबन ने फारबिसाजि मेला में पिक्केटिंग किया था । जुआ भी नहीं, एक्कन पाकिटमार छेला करता था । और मोरगिया लड़कियाँ, मोरगिया दास-गीजा का कारबार करता था ।... आज कइहा धामा कीग्रेस का सिक्रेटरी है ।... उसी की गाड़ियाँ हैं । लपसाई मिस्टर और कइहा धामा के दरोगा और कलीमुद्दीपुर के नाका वाले इक्कनदार मिलाकर रकम जाठ जामा और उधर कुमारचन्द कापरा रकम जाठ जामा । गाड़ियाँ सदा चालू सड़के से नहीं जायेंगी । घोर पेड़ा [घोर रास्ता] होकर, घोर छाट होकर पार करेंगी । फिर उधर के व्यापारी को उस पार पहुँचा देगा । उधर के हाकिम-हुक्मामों को भी उसी तरह हिस्सा मिलेगा । माखीं खया का कारबार है ।... ये आ गई । हाँ, ग गाड़ियाँ ।"⁷⁸ कापरा को देखकर बाबन कहता है -" जाइये सामने । पास कराइये गाड़ी । आप भी कीग्रेस के मेम्बर हैं और हम भी । छाता खुल हुआ है, जपना-जपना हिताब-किताब लिखाइये ।... आज के इस पविस्तर दिन को हम कलक नहीं लगाने देंगे।... बाबन्दास मान जाओ । एक-एक कैल को इक्कनदार और दूसरे को कापरा, पँड मरोड़कर आगे बढ़ाते हैं । गाड़ीवान अवाक होकर हाथ में रास धामे हुए है । ... यह क्या हो रहा है ! बाबन्दास बीच बीच पर खड़ा है और गाड़ियाँ ऊपर से आर पार कर रही हैं ।... अब बाबन्दास ठीक कैल के सामने आकर खड़ा होता है । कैल उसे दुरधी मार

कर गिरा देता है । वह सीक पर झुक जाता है । ... ठीक पहिये के नीचे ।... गाड़ी पास । कट... कर - कट । गाड़ियाँ पास हो रही हैं पचास गाड़ियाँ । जाखिरी गाड़ी जब गुजर गई तो हकमदार और रामबुआपनीसह मिलकर ,बाबन की चिरधी चिरधी लारा ,सबू के कीचड़ में लथ पथ लारा को उठाकर फसते हैं । ... नागर मदी के उस पार , पाकिस्तान में कैमा होगा । बधर नहीं... हरगिज नहीं ।"⁷⁹ बाबन की हत्या वास्तव में गान्धी के आदर्शों की हत्या है , उनके सिद्धान्तों की हत्या है और उनके रामराज्य के स्वप्न की हत्या है ,जिसे हमने कांग्रेसी-शिष्य निरुत्पत्ति कर रहे हैं । यह एक ऐतिहासिक सत्य है । स्वाधीन भारत की राजनीति का प्रारम्भिक -चरण उससे अधिक भयावह और बीभत्स क्या हो सकता है ।

"परती: परिकथा " के राजनीतिक परिदृश्य के मूल में पराम्पूर गाँव में हो रहे सर्वे सेटममेंट्स की गाथा है । सर्वे के समय शान्त गाँव एकदम उलस पड़ा , राजनीति तेज हुई ,मूल्य बढ़ते और उनके साथ व्यक्ति सम्बन्धों में भी स्वार्थ के कीड़े कुस गये । "मैला जीवन" की जातिवादी राजनीति से तंग आकर बाबनदास और बाबन बलदेव का मोहभंग होता है , "परती परिकथा" में रोजू इसी जातिवाद को आर्थिक रूप में देना चाहते हैं । किन्तु यह तो निर्विवाद सत्य है कि जातिगत सम्बन्ध भी आर्थिक नीति पर टिके हैं । उच्च जाति के जोतजों पर कुछ नहीं है तो उसे कौन पछता है , उससे व्यास केनावन हो अच्छा है । आर्थिक आधार पर ^{लाज} मनी को शरीर बेचने से रोकता है जबकि उसके मुहर्मे की सभी नदितमें अपना शरीर बेच रही हैं । सबसे बड़ा कारण तो अर्थ है । लेकिन यह भी सच है कि क्षमवान व्यक्ति अपनी स्वार्थसिद्धि

के लिये जाति का आधार नेता है । परामर्श भी इससे जुड़ा नहीं रह सका है । -" पिछले आठ-दस वर्षों से जातिवाद ने काफी जोर पकड़ा है । राजनीतिक पार्टियाँ भी जातिवाद की सहायता से संगठन करना जायज समझती हैं । राजनीति के दंगल में सब कुछ माफ़ है ।"⁸⁰ भारतीय संविधान में जातिवाद के आधार पर राजनीति करने और दल बनाने का कहीं कोई उल्लेख नहीं है । किन्तु व्यक्तिगत जीवन में देखने पर यह स्पष्ट होता है , सारे देश की राजनीति का मूलधार जाति ही है । वृत्त से लेकर राष्ट्रपति तक के चुनाव में जाति का महत्वपूर्ण स्थान है । जाति ही नेतृत्व प्रदान करती है और वही जीतती है । बहुत से नेता तो मात्र जाति के नेता ही हैं , जाति से जलग बटकर उनका कोई स्थान नहीं । "नेता बीजन" में जातिवादी-राजनीति के प्रभाव की रेणु सीधे ही ग्रहण करते हैं किन्तु बाद में परिस्थितियाँ बदलें और तदनुसार राजनीति के मानदण्ड भी बदलें । धीरे- धीरे जाति राजनीति के मूल में चली गई । प्रारम्भ में यह यदि फुलक पर थी तो अब बाकर वह मूल में समाविष्ट हो गयी है । यानी कि राजनीति का संचालन जातिवाद के आधार पर धड़ल्ले से हो रहा है । "परती परिकथा " के प्रमुख पात्र एवं कांग्रेसी नेता सुन्तो भी इसी जातिवाद से प्रभावित हैं । ऊपर से देखने पर वह इससे जलग दिखाई पड़ता है किन्तु उसके द्वारा छेनी जा रही राजनीति के मूल में देखें तो स्पष्ट जातिवादी राजनीति के कीड़े कुलकुलाते मजर आते हैं । सुन्तो यद्यपि निम्न वर्ग और वर्ग का है लेकिन उसकी राजनीतिक - पृष्ठभूमि में सब उच्च वर्ग के लोग हैं , ये वे लोग हैं जो सुन्तो के कंधे पर बन्दूक रखकर खरब खना रहे हैं । उसमें सुन्तों का भी अपना लाभ है। अपने नाप का बदला । शासक-दल का यह स्थानीय नेता अपने स्वयं के

छोटे से स्वार्थ से ग्रसित होकर राजनीतिक लगी रहा है जिसका लाभ
 कुँवर सिंह, गच्छुबुज या और रोशन मिस्त्रा जैसे उच्च- वर्ग के लोग उठा
 रहे हैं। यहाँ यह भी स्पष्ट है कि मुन्ता से काम करवाने में उच्च- वर्ग
 के लोग उसकी सेवा भी करते हैं। यह मात्र अपने व्यक्तिगत लाभ के
 कारण है, मुन्ता का सम्मान करने की उनकी नीयत कभी नहीं रही
 और न है। - "किन्तु, मुन्ता की बात निराली है। सायद पार्टी का
 कार्यकर्ता है - धाना कमिटी के सभापति के प्रियजनों में से एक। धाना
 कमिटी के सभापति भी जाहिल हैं। उनका विश्वास है कि पढ़े- लिखे
 लोग काम कम बात ज्यादा करते हैं। इसलिये धाने भर की ग्राम कमिटियाँ
 एक से एक जाहिलों के जिम्मे लगायी गयी हैं। फिर, मुन्ता ने अपने एक-
 एक लीडर की कुहा किया। बर्कर के हो कम पर लीडर, लीडर के कम पर
 मिनिस्टर। १००० बड़े लोगों की सेवा कभी निष्फल नहीं जाती। १००० सर्वे
 के समय मुन्ता की कीमत और बढ़ गई है सभी धीरे धीरे जान गये हैं,
 सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट पार्टी वाले जिसकी मदद करेंगे उन्हें जमीन
 हरगिज नहीं मिल सकती। ब्रह्मा, विष्णु, महेश उठकर आवें, तब भी
 नहीं। १००० ब्राह्मण-उतरी उसकी घरम-पूजा कर जाते हैं। बी०ए०,
 एम० ए० की तो मुन्ता बाबू गाय-बैस समजता है। गोशाला का।⁸¹
 रण्ट के ये निष्कर्ष हमारे देश की राजनीति में आये जातिवादी उफान
 प्रवृत्त्यात्मक विकास हैं। यह निष्कर्ष उनके मेहन की प्रौढ़ता की प्रकट करते
 हैं। निष्कर्ष के लिये आवश्यक है कि वह अपनी बात को सीधे-सीधे नहीं,
 बल्कि तर्कों के माध्यम से स्पष्ट करें। ३०० मेघ के विचार इस दृष्टि से
 अत्यन्त उपयोगी हैं। - "कलाकृति में कलाकार के मन्तव्य हमें सीधे या
 प्रत्यक्ष: नहीं मिला करते, वे प्रवृत्त्यात्मक होते हैं, उनका अनुमान

करके हम परिणाम निकालते हैं । हम हममें कमाकार के मन्तव्यों से ज्यादा समाज और जन के बारे में प्रस्थापमाण (प्रोपोजीशन) हासिल करके हमकी सत्यता का निश्चय कर सकते हैं ।" 92

मुन्तों की राजनीति में उच्च-वर्ण के गुरुधुज या लीग लगा रहे हैं । हम पहले इस तथ्य को स्पष्ट कर चुके हैं कि मुन्तों की राजनीतिमैकैकीठे मात्र उसका स्वयं का स्वार्थ और उच्च वर्ण की राजनीति कार्य कर रही है । जिस प्रकार भारतीय राजनीति के मूल में भुस्वामी-भूजोपतियों की रीति-नीति कार्य कर रही है , ठीक उसी प्रकार से पराजूर में । मुन्तों जैसे कार्यकर्ता तो बड़े लोगों के हाथ क छिनांना हैं -मिट्टी के - जब तक साबित हैं तब तक नाच रहे हैं दूसरों के बहारों पर और जिस दिन वे देखें कि अब वह हमारे हितों की पूर्ति में सहायक नहीं हैं,उसी दिन हटाकर फेंक देंगे । मुन्तों जैसे कार्यकर्ता को यह विवशता है कि उन पर धन नहीं है जहाँ, वह धन और जाति-कम दोनों प्रकार से हीन है । ये दो कारण ही राजनीति के आधार हैं ।

अतः महत्वाकीशी मुन्तों भी अगर सड़ने के लिये हमका प्रयोग करता है -

"मुन्तों को गुरुधुज या ने कानूमी दीव-पैच के उदाहरण देकर समझा दिया -ग्राम पंचायत के लिये कांग्रेस की ओर से रोरल बिस्वा को छोड़ा किया जाय । नाम रहेगा रोरल बिस्वा का, काम तो सभी मुन्तों के मन के होंगे । ग्राम पंचायत के मार्फत गांव में पूरी तरह जड़ जमाकर, मुन्तों विधान सभा के लिये नाम पेश करेगा । रोरल बिस्वा तन, मन, धन से मदद करेगा। कैसे नहीं चुनो कांग्रेस वाले ! स्या की स्या कमी होगी ! एक ही चुनाव में तीन-तीन चुनाव सड़ने का पता , ग्राम-पंचायत के मार्फत , यदि गुरुधुज या जमा नहीं कर दे तो वह ब्राह्मण नहीं-

समार ।³³ धन और जाति के आधार पर चलने वाली राजनीति का मुन्तो मात्र प्रतीक है , वरना रंगू भारतीय -राजनीति की उस घुणित स्थिति का उद्घाटन करते हैं । भारतीय राजनीति की यह दुःखद स्थिति है, जहाँ योग्यता और क्षमता को नकार कर जाति और धन जैसे घुणित आधारों पर राजनीतिज्ञों का चयन होता है ।

इस जोड़ी राजनीति से निम्न वर्ग और वर्ग के लोगों की सदैव हानि हो रही है । लाभ हमेशा उन्हीं की हुआ है, जिन पर धन और जातीय शक्ति है । मुन्तो जैसे कार्यकर्ता जिस दिन अपना अस्तित्व ग्रहण करने की सोचते भी हैं ,उसी दिन उन्हें बुरी तरह काटकर जलज कर दिया जाता है । जोड़ी राजनीति के परिणाम भी जोड़े ही रहते हैं । "परती: परिकथा " में प्रमुख कीरोसी-पात्र मुन्तो अब तक सीधे कर रहा है, किन्तु उपसन्धि न के बराबर है । उपसन्धि क नाम पर गच्छुज बा , रोगन बिस्वा और जिसेन्द्रमाध मिश्र हाथ मार ले जाते हैं । गाँव में व्याप्त राजनीतिक उधम-पुधम से गच्छुज बा की आय बढ़ गई है -" एक ही पखवारे की आय से जाने जाने महीनों की आमदनी का हिसाब देखा है जोड़कर गच्छुज बा ने । मार-काटकर पाच-साँ रुपये महीने की आमदनी 1000 गच्छुज बा बकील से कम दावी नहीं रखता है । सलाह नकद पंसा लेकर ही देता है , मुफ्त में कभी नहीं । फौस के जलावा भैंरी और दर्जी के रूप में दही , केला, दूध, घिउड़ा आदि भी स्वीकार करता है ।³⁴ और रोगन बिस्वा भुस्वामी बनने के अतिरिक्त गाँव का मुखिया भी बन जाता है - धन के आधार पर । "गच्छुज बा ठीक ही कहते थे- रोगन बिस्वा की मुखियागोरी उसकी तिजोरी में धरी हुई है ।"³⁵ राजनीतिक दंगल में जो जितना बड़ा है उसे उतना ही बड़ा लाभ होता है ।

गाँव में सबसे बड़ा भुख्तामी जिन्तन है, इसीलिए जिन्तन ही सारी राजनीतिक लड़ाई में सर्वाधिक लाभ में रहता है। मुन्तों जैसे कार्यकर्ता बुरी तरह से परास्त हो जाते हैं - "मुन्तों के बारे में, गाँव के लोगों के मन में यह बात उतर गई है - जान-बूझकर भस्ती में जाँकने से जा रहा था लोगों की 100 मानिकपुर उदयामन्द हाट में गला मीजकर सुना रहा था पराम्पुर के लड़कों को - तो मुन्था का सरकार है पराम्पुर का मुन्तो। हम लोगों के गाँव से भी भेड़ भड़काकर ले गया था। इतने पढ़े-लिखे लोगों की जाँकों में उसने कैसे झूठ बोल दी 1000 मुन्तों का जिला कांग्रेस के सभापति ने कुलाकर खूब फटकार दी है। धामा कांग्रेस के सभापति ने जन्दी से चौबन्मिया रसीद का हिसाब दाखिल करने को कहा है।⁸⁶ और जन्त में " मुन्तों से पुलिस इन्स्पेक्टर साहेब ने मुचलका लिया है 1000 कांग्रेस का पीछे तो खंया चन्दा बसूलकर गतगति कर गया है।⁸⁷ मुन्तों जैसे नेता की यही नियति है। बड़ों की लड़ाई में छोटा पिस्तता है। गाँव से लेकर सम्पूर्ण राष्ट्र तक की यही राजनीति है। बड़े नेता साखों छाकर ठकार भी नहीं लेते किन्तु मुन्तों जैसे स्थानीय नेता पर एक-एक पैसे का हिसाब। इस भ्रष्ट राजनीति से रेणु दुःखी थे। यही रेणु यह भी स्पष्ट कर देते हैं कि स्थानीय से लेकर राष्ट्रीय नेता किस प्रकार भ्रष्ट हैं। तत्ताधारी-दल के हानि के कारण चन्दा करते हैं और खा जाते हैं। इस राजनीति से देश का कोई लाभ संभव नहीं है।

भारतीय राजनीति में धर्म का प्रमुख स्थान है। स्वाधीन भारत का आरम्भ ही धर्म के नाम पर हुए बटवारे और भीषण मर-संहार में हुआ। यद्यपि भारतीय संविधान में धर्म निरपेक्ष और सर्व-धर्म समभाव के सिद्धान्त की स्वीकार किया गया है किन्तु व्यावहारिक जीवन में ऐसा

कहीं नहीं है। हिन्दू नेता पहले हिन्दू हैं बाद में कुछ और एवं मुसलमान नेता पहले मुसलमान हैं बाद में कुछ और। धर्म राजनीति का मौल-मज्जा है। राजनीति को स्थिर करने हेतु निरन्तर धर्म को बढ़ावा दिया जा रहा है। धर्म व्यक्तिगत वात्सा की वस्तु है। लेकिन जब धर्म सामाजिक जीवन में अवरोध बनकर आये तब : वह निश्चय ही राष्ट्र का अहित करता है। भारत में यही हो रहा है। यही आजादी का सबसे अधिक दुस्वयोग डेकारी ने किया है तो वह मात्र धर्म ही है। धर्म के नाम पर एक अराजकता की फसले - फूलने दिया जा रहा है। यह सब व्यक्तिगत हित के कारण ही हो रहा है। राजनीतिज्ञ पहले अपना पद देख रहे हैं और बाद में देश। इसीलिए देश की स्थिति निरन्तर विस्फोटक होती जा रही है और हमारे नेता धार्मिक मठाधीशों के तंत्र-मंत्र के अल पर ऐसा कर रहे हैं। रेणु ने इस ओर धिन्ता प्रकट की है। उनके प्रथम उपन्यास "मेला बीकन" में पृष्ठ पर 900 बीघे जमीन है जिसके आधार पर महन्त अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के कण्ठों की आकाश में फहरा रहा है। कांग्रेस का विच्छादान तथा सक्रिय कार्यकर्ता कलदेव पण्ड की कोठारिम लठमी से घन्टा तो नेता ही है साथ ही उससे क्लेश सम्बन्ध भी बनाये हुए है। -" कलदेव जी की नजर बड़ी मेनी है। दस रुपये का एक नोट निकालकर देते हुए लठमी कहती है -" बाजकन तो हाथ एकदम खाली है। बाप तो बाजकन बंधर का रास्ता ही भूल गये हैं। हमसे जो अपराध हुआ है, ठिमा ीजिय।... कलदेव जी की फिर लठमी के देह की सुगन्ध लगी। किन्तु मनोहर।"⁸⁹ कलदेव जी की आत्मिकता का एक और उदाहरण कि जब उन्हें लठमी द्वारा दिये बीजक से भी उगी के देह की गन्ध लगती है -" बीजक से भी लठमी के देह की सुगन्धी निकलती है। इस सुगन्ध में एक मत्ता है। इस पौधी के हरेक पन्ने की लठमी की उंगलियों ने परत किया है...

- "पौधी पटि-पटि का मुन्ना, पण्डित भया न कोय। दूई ऊँर प्रेम का पढ़ा तो पण्डित होय ।" लछमी की देखने से ही मन पवित्र हो जाता है।⁸⁹ जन्त में बनदेव लछमी को लेकर कलम-बाग में रहने लगते हैं⁹⁰ एक निष्ठावान कायेसी का पतन है पर यदि वह चन्दा के लिये न जाता तो यह लक्ष्य भी नहीं होता । बाहर से आये हुए राजनीतिक कार्यकर्ता भी मठ पर रहते हैं। प्रत्येक दल को चन्दा मिलता है लेकिन रण्टू ने मठ का राजनीति में सीधा सम्बन्ध नहीं दिखाया है । यह मठ के महन्त की कुटिल राजनीति हो है । वह अपने प्रत्येक कार्य को धर्म के नाम पर सिद्ध करना चाहता है और ऊपर से राजनीतिक लेप । यह इसीलिये कि उसके भ्रष्ट-कार्यों पर कोई रोक न लगा सके । धर्म का आभिजात्य स्वरूप है ।

धर्म के दूसरे ठेकेदार मेरीगात्र में जोतखी जी हैं । जोतखी जी का चित्रण रण्टू ने इस प्रकार किया है कि धर्म का व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में हस्तक्षेप स्पष्ट होता है । मेरीगात्र में छुन रहे असतास का सबसे अधिक विरोध जोतखी जी करते हैं । समाजहित में छुन रहे असतास का विरोध धर्म की निस्सारता को सिद्ध करता है ।-" थूड़े जोतखी जी भविष्यवाणी करते हैं, "कोई माने या नहीं माने, हम कहते हैं कि एक दिन इस गाँव में गिः काँवा उड़ेगा । लक्षणा अच्छे नहीं हैं । गाँव का ग्रह बिगड़ा हुआ है । किसी दिन इस गाँव में छुन होगा छुन । मुलिस-दारोगा गाँव की गली-गली में छुमेगा । और वह हसपिताल ! अभी तो नहीं मालूम होगा जब कुर में दवा डालकर गाँव में डेजा फैलाएगा तो समझना ।"⁹¹

धर्म का राजनीति में हस्तक्षेप रण्टू के दूसरे उपन्यास "परती परिकथा" में अधिक हुआ है । मुन्ता की जब समस्त राजनीतिक -जीवाजी

जिन्तन की परती पर ट्रैक्टर चलाने से नहीं रोक सकता, तब वह धर्म का सहारा लेता है। मुन्तों की यह परेशानी बिकट है— आज तीन दिन हो गये। लोगों को समझा रहा हूँ। हर टोले वाले से कहता हूँ— सभी मिलकर ट्रैक्टर की भरभरी बन्द करो। लेकिन हर टोले में मानूस होता है। आदिार का दलाल अपनी दलाली कर रहा है। कोई कहता है, परती जीतते हैं जिन्तन बाबू अपनी, हमें हम लोग क्यों पढ़ने जायें। किसी ने जवाब दिया, परती में अड़ुआ-फसल करने से असल जमीन का मुकदमा खराब हो जायेगा। अपने देवता पितर को हम भूल गये हैं।⁹² मुन्तों की लगी जिन्तन की भावनाओं को बाह्य कर देती है। परमदेव के नाम पर मुन्तों भगता मिरतू का सरपधी का प्रलोभन देकर जिन्तन के खिलाफ ध्येय रखता है। भगता मिरतू पर जाये कृष्ण परमादेव चलते- चलते कह जाते हैं— इस जमाने में किसी का पर... मत करो ठाकुरबाड़ी में रामकला की मूरत है। उसकी पूजा करने वाले पूजारी को रामकला समझा देंगे। पूजारी जी जो कहे सब लोग उसी मुताबिक काम करना। सबका भला होगा।... आज पर चलते हुए कहा था परमादेव ने।⁹³ उसके बाद मुन्तों पण्डित सरखजी। घाबे को सरपधी का प्रलोभन देता है और ठाकुरबाड़ों के पूजारी जी भी अब लीठर हो गये। आज चार हजार, सोनकन्ह के नेता हैं। मुन्तों और वीरभट्टर बाबू उनकी पीठ पर हैं। मुन्तों ने राजनैतिक लगी लगायी है। जिन्तन बाबू को गाँव से भगाने के लिये सब कुछ कर सकता है वह। पण्डित सरखजीत घाबे को फुलाकर उसने ठीक कर लिया है—ग्राम पंचायत का चुनाव होने वाला है। आपको सरपधि बना देंगे, धाना सभापति जी से कहकर।⁹⁴ सरपधी के प्रलोभन में पण्डित जी ऐसे जाये कि वे भी अब जिन्तन के खिलाफ हो गये हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि

पण्डित जी रामलाला मन्दिर के पूजारी हैं । और इसी आधार पर वे अपनी राजनीतिक घामे धन रहे हैं ।-“पण्डित सरबजीत चौधे को रामलाला ने अपने में कहा है - मिसर खानदान अब जेपन्धी के रास्ते पर है । यानी चींटों को अब पीछे लगा है । इसीलिये पुरानी चक्कर परतों को तोड़ने पर तुलना हुआ है । मीन के दिन सुबह कहा-धौकर ठाकुरबाड़ी में बाल-बच्चा सहित जमा हो जाओ । परतों तोड़कर गौमाता के पेट पर छुरी चला रहा है जिन्तन १००० बी- बी- बी । इसने की बात नहीं । यह हमारी भूजों गौ-माता की आवाज है । दुख से छटपटाती हुई गेया क्लिष्ट कर रही है बी- बी - बी । यही हमारा नारा है । जितनी बार हम लोग मिल कर यह नारा लगायेंगे, उतनी बार जिन्तन के सिर पर गौहरया का पाष मवार होगा । एक बार बी- बी करने पर चार हजार गौजों की हरया का पाष । अस्सी हजार गौहरया का पाष चढ़ते ही वह खुद-कु-खुद पागल हो जायेगा । लगाइये नारा - बी-बी-बी ।”^{११} अपनी राजनीतिक स्वार्थ-सिद्धि हेतु धर्म का माध्यम लेकर लुन्तों द्वारा किया गया यह कार्य निरिधत ही धृष्टित है । धर्म ने लुन्तों की यही सहायता की, जहाँ वह विरक्त धक गया था । अतः धर्म की राजनीति का वर्णन कर रेणु जी वर्तमान राजनीति में धर्म और उसके जन्तर्विरोधों को स्पष्ट करते हैं।

राजनीति में धर्म के हस्तक्षेप का दूसरा उदाहरण है मीर समसुद्दीन । पीताम्बर वा उर्फ मज्जूम परान्पुर में कम्युनिस्ट पार्टी को सक्रिय करता है । मज्जूरों में काम करने हेतु वह मुसलमान टोले में जाता है - जहाँ तीन सौ गाड़ीवान रहते हैं -” मज्जूम ने परान्पुर के मुसलमान टोले में काम शुरू किया । परान्पुर के चार सौ गाड़ीवानों में साढ़े तीन सौ उसकी पार्टी में आ गये , तुरत । मीर समसुद्दीन ने कींगेस

में जाने से पहले मकबूल को वचन दिया था - ओजा जी ! छुटा कसम - हम आपका साथ देंगे । मकबूल दिन-रात मुसलमान टोली में रहता । तीन सा गाड़ीवान सिर्फ मुसलमान टोली में ही रहते हैं । फारसिनगर बाजार से जूट दुसई का भाड़ा लेकर जिस दिन लौटते गाड़ीवान ,यूनियन के नाम पर खेया ,जठन्नी , चवन्नी और दुबान्नियों के ढेर लग जाते मकबूल के सामने ।⁹⁶ लेकिन मीर समसुद्दीन का राजनीतिक लगी उसकी सारी राजनीति और कार्यक्रमों को परास्त कर देती है । मीर अपने स्वार्थों की पूर्ति हेतु कांग्रेस में जा रहा है । कांग्रेस में जाने के लिये यह आवश्यक है कि उसकी जाति उसके साथ होनी ही चाहिए । धर्म के नाम पर वह लोगों को उल्लता है - "एक जुम्मा को नमाज पढ़ने के बाद समसुद्दीन मीर ने नमाजियों को कुरान की कसम खिलायी और बताया - मैं सभी मुसलमानों को और से कांग्रेस कमेटी में जा रहा हूँ । तुम लोगों की क्या राय है ? एक बड़े गाड़ीवान ने कहा - मकबूल से पूछकर कहेंगे, हम लोग । - मकबूल कान होता है ! मीर समसुद्दीन ने कहा - गांव का मीर मैं हूँ या मकबूल । यदि मकबूल से पूछकर ही चलना है तो मकबूल से ही कहो, अपने जुम्मा से नमाज पढ़ायेगा । "⁹⁷ मुसलमान खटाक रह गये । नमाज तो मीर ही पढ़ायेगा ,अतः वे मकबूल को छोड़कर मीर के साथ जा गये। राजनीतिक पतन की यह दुःखद स्थिति है । राजनीति धर्म के आधार पर चल रही है । रण्टु के चिन्ता का उद्देश्य ऐसी घुणित राजनीति को नकारना है । स्वाधीन भारत के 35 वसन्तों में धर्म की बाहु में राजनीतिक स्वार्थ सिद्धि का यह नाटक और भी बढ़-चढ़कर खेला गया है, खेला जा रहा है ।

४ द ॥ ग्रामीण परिवेश में सरकारी कर्मचारियों की भूमिका :-

“ मैला डॉक्टर ” का डी० प्रशान्त पहला सरकारी कर्मचारी है जो कि मेरौगंज में दिखाई पड़ता है । डी० प्रशान्त एक आस्थावान और परिश्रमी युवक है जो कि जन सेवा को ही अपना उद्देश्य बनाकर गांव में आता है । गांव में सरकारी कर्मचारी और निरक्षर एक दूसरे के पर्याय बन चुके हैं । महन्त से डॉक्टर का प्रथम परिचय होता है और महन्त ग्रामीण मानसिकता का उद्घाटन करते हुए कहते हैं-“डागडर साहेब आपसे कितना मुश्किल मिलता है । दां सौ !... हा, यही अपनी आमदनी भी होगी। असल आमदनी तो अपनी आमदनी है ।”⁹⁸ डी० प्रशान्त चेतना सम्पन्न है ,अतः उसका व्यवहार अन्य कर्मचारियों से अलग है । मेरौगंज और उनके जीघल में व्याप्त कालाजार और मलेरिया के कीटाणुओं को समाप्त करने के लिये वह अधिक परिश्रम करता है । अन्त में जिन निष्कर्ष पर पहुँचता है वह वास्तव में यथार्थ है -“ गरौखी और जहालत - इस रोग के दो कीटाणु हैं ।”⁹⁹ ये दोनों कीटाणु व्यवस्था की देन हैं, इनमें प्रशान्त चाहते हुए भी कुछ नहीं कर सकता । हा इतना अवश्य करता है कि निम्न और अशिक्षित स्थानों की भूमि को तहसीलदार द्वारा छीने जाने पर वह उन्हें उनके अधिकारों के बारे में सचेत करता है । “ डॉक्टर ने कहा कि तुम लोग ही जमीन के असल मालिक हो । जानूँ है, जिसने तीन साल तक जमीन को जोता-बोया है, जमीन उसी की होगी ।”¹⁰⁰ और कालीचरण को वह सचेत करता हुआ कहता है-“मत समझना कि स्थानों की जमीन छुड़ाकर ही जमींदार सन्तोष कर लेगा । अब गांव के किसानों

की बारी आयेगी।¹⁰¹ कालीचरन इस पर चौंक उठता है। उसकी दृष्टि में तहसीलदार का आदमी है, लेकिन चेतना सम्पन्न व्यक्ति किसी का नहीं होता, वह अपने सिद्धान्तों का होता है। अपने सिद्धान्तों के लिये वह ज़िंदा भी त्याग कर सकता है। डॉ० प्रशान्त कालीचरन को अपने तहसीलदार के साथ सम्बन्धों का स्पष्ट करता है।-“तहसीलदार साहब गीव के रहस्य हैं। मुझे उम्र में बड़े हैं। कम्ला की बीमारी के चलते मुझे कुछ ज्यादा बाना-जाना पड़ता है। वे मुझे बहुत प्यार करते हैं। मैं भी उन लोगों की इज्जत करता हूँ लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि मैं तहसीलदार साहब के जन्माय का भी समर्थन करना ज़रूरी पसन्द लूँगा।”¹⁰² रेणु ने डॉ० प्रशान्त को एक आदर्श कर्मचारी के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसके प्रत्येक कार्य के प्रति एक सिद्धान्त है।

सरकारी-कर्मचारियों की मिली-भगत से गीव में शौक्य होता है। मेरीगंज गीव में क्यड़ा, जेल बाँर घोसी की पुर्जों कमलदास के कमरूदी बाबू बीटते हैं। कमरूदीहा मेरीगंज से दस कोस है। इसीलिये कमरूदी बाबू सरकारी-कर्मचारियों को सेवा-पूजा करके अपना घर भर रहे हैं। “कमरूदी बाबू कुंझा हैं, खीन की थिकी से ही जमींदार हुए हैं, मुस्लीम के लोठर हैं। झटहार पूर्णियाँ मोटर रोड के किनारे पर ही घर है। हमेशा हाकिम-हुकाम उनके यहाँ जाते रहते हैं। महीने में साठ मुर्गियों का खर्च है। लोग कहते हैं कि नये हथियारों जब आये तो सारे इलाके में यह बात मशहूर हो गई कि बड़े-बड़े हाकिम हैं, किसी के यहाँ न तो जाते हैं और न किसी का प न ही जाते हैं। लेकिन कमरूदी बाबू भी पीछा छोड़ने वाले आदमी नहीं। हथियारों का उत्तेवर गुप्तमान है। उसको कुरान की कसम देकर पान-सुपारी खाने के लिये दिया। वस

एक बार कटिहार से लौट रहे थे इसलिये साहब, ठीक कम्बूदो बाबू के घर के सामने जाकर मोटरगाड़ी खराब हो गयी । दस बजे रात को इसलिये साहब और रुकी जाते ; उसके बाद से ही कम्बूदो बाबू जीत-मूँदकर क्लिक करने लगे ।¹⁰³ रेल के इस चित्रण से यह स्पष्ट है कि ग्रामीण जनता के शोषण के मूल में भूस्वामी-सरकारी कर्मचारियों की मिली-भगत ही है । सरकारी कर्मचारियों को गाँव में इसलिये भेजा जाता है कि वे ग्रामीण जनता के शोषण को समाप्त कर उन्हें उत्थान के मार्ग पर लायें किन्तु होगा इसका विपरीत ही । डा० प्रशान्त जैसे सरकारी कर्मचारी सभी हो जायें तो ग्रामीण-विकास सम्भव है वरना यह परम्परा राष्ट्रीय विकास के स्वप्न को ही नष्ट कर देगी ।

सरकारी - कर्मचारी भ्रष्टाचार के खेल पर गरीब जनता का दोहन करने में लगे हुए हैं । परामपुर में सर्वे के साथ इसीलिये भूस्वामी बंटाईदार कर्मचारियों को घेरे रहते हैं और सेवा में लगे रहते हैं ताकि उनसे उन्हें लाभ ही सके । इसी लाभ की आशा में वे कर्मचारियों का घर भर रह रहे हैं । "कानूनों के चपरासी जी को इसाके के बड़े से बड़े जमीन वाले हाथ उठाकर ज्यहिन्द करते हैं - ज्यहिन्द चपरासी जी ।.... कहिए कानूनों साहब को चाकल पसन्द आया ! उसली वासमती चाकल है, अपने ऊर्ध्व के चाकल से निकालकर भेजा था । ... जी, जी, जी हा ।... छो जाज जा जावेगा ।"¹⁰⁴ बड़े से बड़ा भूस्वामी चपरासी को इसीलिए हाथ उठाकर ज्यहिन्द नहीं कर रहा कि वह उसका सम्मान कर रहा है बल्कि उसके मूल में व्यक्तिगत लाभ के कीड़े कुम्कुला रहे हैं । कानूनों की धी और चाकल इसीलिये दिया जा रहा है कि वह अमेतिक रूप से उनका लाभ दें और व विशाल भूस्वामित्व के अधिकारी बने रहें । सरकारी कर्मचारियों

को घन्टे टुकड़े फेंककर भूस्वामी मन्माना गाँव का कर रहा है , यह बड़ी दुःख स्थिति है । भूमि पर जिनका अधिकार होना चाहिए , नवीन कानूनों के अनुसार वह नहीं हो पाता और इसीलिये अब तक किये गये समस्त भूमि -सुधार भूस्वामी वर्ग के में ही हो गये हैं । इसका मूल कारण सरकारी कर्मचारियों का भ्रष्टाचार ही है ।

गच्छुज का गाँव का जिवौलिया है । सर्वे सैटलमेन्ट के समय उसने गाँव के महाजन रौशन बिस्वी और सरकारी कर्मचारियों से मिलकर पैसा एकट्ठा किया है । इस त्रिकोण में लाभ तीनों को ही हुआ । रौशन बिस्वी तो इसी के आधार पर तीन सौ बीघे भूमि का स्वामी हो गया है । सरकारी कर्मचारी भी रोज मनीजार्डर कर रहे हैं और दा जी तो बिना कानून पढ़े ही बकीनों से अधिक कमा रहे हैं ।

"गच्छुज का जाजक बहुत व्यस्त हैं । सर्वे के समय उसको रात भी छुट्टी नहीं मिलती । दिन भर सोता है , जेवर में उठकर भाग पोता है और ज़ेहरा होते ही जेण्ड्रेस कचकर निकल पड़ता है । ... काम ही ऐसा है कि दिन में नहीं किया जा सकता । सर्वे कचहरी में एक ही हाकिम नहीं , थपरासियों को जोड़ा जाये तो तेतीस हाकिम हैं । तेतीसों हाकिमों से खूब पटती है गच्छुज का की । कानूनों साहब के कान में गच्छुज ने ही मंत्र फूँक कर बतलाया थाइफ को जगा लीजिए कानूनों साहब । हर तरह की सुविधा तो होगी ही । फिर , इतना खेया घर कसे भेजिएगा ! थाइफ बायगी तो... । सभी हाकिम इसकर खतियाते हैं उससे । जाँच को कनकी मगूकर सोने के कमरे में ले जाते हैं ।... बिना बकालत पास किये ही गच्छुज का को सेकड़ों मुवकिम घेरे रहते हैं । तब एक बात है । गच्छुज का अपने मुवकिम से काम बनाने के पहले ही फीत ले लेता है । हाकिमों को

पूजा में जो हिस्सा मिलता है, उसका हिसाब जलम है । १००० गखुधुज आ बिगड़ा काम बनाने वाला आदमी है । दूसरी बात, गखुधुज के मार्फत कोई काम बनवाना हो तो उससे सीधे बात मत कीजिए । काम खराब हो जायेगा । केपटोमी का राजम बिस्वा है न उससे कहिए । १००० पैसा वाला आदमी है । गखुधुज आ तो काम बनवाना है तो राजम बिस्वा को तलाम करना होगा पहले ।¹⁰⁵ बिचौलियों के माध्यम से हो रहे भ्रष्टाचार को रणू ने स्पष्ट किया है । गांव हा या शहर प्रत्येक स्थान पर सरकारी कर्मचारी बिचौलियों के माध्यम से धन छींच रहे हैं - जमाप गलाप । सरकारी कर्मचारियों की यह भूमिका बहुत ही दुःखद है ।

सरकारी कर्मचारियों के बारे में रणू और भी स्पष्ट करते हैं, " सहरों की गिनकर भी आमदनी करने वाला आदमी ही सरकारी कर्मचारी हो सकता है ।"¹⁰⁶ नये भूमि-सुधार कानून के अनुसार जिस भूमि पर हल की रेफ भी पड़ गई वह उसी की हो गई । परानपुर गांव में पड़ी परती पर हल चलते हैं । भूस्वामी-वर्ग परती को तोड़कर अपनी भूसम्पत्ति को बढ़ाना चाहता है । इसके लिये वह सरकारी कर्मचारियों को रिश्वत दे रहा है - " एक हजार रुपया तो किसी छिन्तन बाबू दे रहे हैं जो रमई वाले बाबूजों का देक्टर भाड़ा पर लाने गये हैं । नये कानून की लहरे बातें हैं- जाती हैं - चौदों के रुपये मजलियों की तरह उटपटाते हैं । कागज के नोट पत्रियों की तरह फड़फड़ाकर उड़ते हैं ।"¹⁰⁷ भूमि-सुधार कानून गरीब को भूमि देने और भूस्वामी से फालतू पड़ी भूमि छीनने को बमाये जाते हैं लेकिन क धन के हल पर सरकारी कर्मचारियों को अपने पक्ष में करके भूस्वामी- वर्ग ने जब तक सभी भूमि सुधार कानूनों का दुस्मयोंग ही किया है । गरीब बेचारा बेकत रह जाता है और जमीर उसके सामने से उसका अधिकार छीन

कर ले जाता है। यह वास्तविक स्थिति है। सरकारी कर्मचारी-वर्ग की इस राष्ट्रद्रोही नीति का जन्त कहीं दिखाई नहीं दे रहा। निरन्तर रिश्तों के बल पर यह जर्ज पैसा कमा रहा है। सर्वेक्षण करने पर पता चलता है कि यह अपनी आय से दस गुना छर्च करके भी बैंकों में पैसा जमा करिये रहता है। ऊपर से नीचे तक सभी भ्रष्ट हैं, कान किसकी कबे !

“ मैला जीफल ” के तहसीलदार विश्वनाथ पताद के तहसीलदारी छोड़ने पर हरगोरीसिंह को तहसीलदारी मिली। इसके लिये उसे चार सौ रुपये की रिश्त देनी पड़ी।¹⁰¹ जो तहसीलदार चार सौ रुपये रिश्त लेकर पद प्राप्त कर रहा है - वह जन्ता को कैसे छोड़ देगा। अतः सरकारी कर्मचारियों के इस भ्रष्टाचार का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव जन्ता पर ही पड़ता है। स्थान और गैर-स्थान तहसीलों में भी पुलिस की रिश्त देकर भुखामी जर्ज छूट जाता है और गरीब स्थान गिरफ्तार हो जाते हैं। - “गैर स्थानों में कोई गिरफ्तार नहीं हुआ।...लेकिन, यह मत समझो कि मुफ्त में यह काम हुआ है।...दारोगा साहब कहने लगे कि छिन्नावन जी, आपके बारे में एस० पी० साहब को सन्देह हो गया है कि आपने सभी यादवों की हजेरी में जाने के लिये जरूर हुकूम दिया होगा। छिन्नावनजी की हालत खराब हो गई। वह तो तहसीलदार भाई थे, तो पांच हजार पर बात छूट गई। नहीं तो... नहीं तो अभी बड़े घर की हवा खाते रहते छिन्नावनजी। सिध जी घर में नहीं थे, शिवशंकरसिध भी नहीं। अब सिध जी लोगों के मन में क्या है सो कौन जाने !...दारोगा भी तो राजपूत है। बादमी के मन का कुछ ठिकाना नहीं, कब क्या करे। मुफ्त में सबकी गर्दन नहीं छूटी है। पांच हजार।”¹⁰² सरकारी कर्मचारियों के भ्रष्टाचारी होने के कारण निर्धन जन्ता की न्याय नहीं मिल पाता।

स्वाधीन भारत में आज सरकारी कर्मचारी भ्रष्टाचारी -बूजीपति-वर्ग का पातल बनकर उनके शोषण के मार्गों को प्रशस्त कर रहा है और नये नये हथियार गढ़ रहा है । आम जनता पहले से भी अधिक दुःखी है । रेणु ने इन विवरणों के माध्यम से ऐतिहासिक सम्पर्क प्रस्तुत किये हैं ।

। य । लोक - संस्कृति :-

ग्रामीण जीवन का सूत्र और यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करने के बाद भी रेणु अन्त तक जाते-जाते फिसल जाते हैं । इसका कारण उनकी समाजवादी दृष्टि ही है । समाजवादी दृष्टि आदर्श से प्रभावित है और इसी आदर्श समाधान के चक्कर में पहुँकर रेणु अपने यथार्थ के सूत्र रेशों को खींच बैठते हैं । ऐसे समाजवादियों की स्थिति यह है कि "वर्ग संघर्ष की अविकसित अवस्था और अन्धश्रम-वास के वातावरण के कारण इस तरह के शोषमिष्ट अपने को समाप्त वर्ग विरोधी से बहुत ऊँचा समझते हैं । समाज के प्रत्येक सदस्य की सबसे अधिक कृपा पात्रों की भी हालत को वे बेहतर बनाना चाहते हैं । इसीलिये स्वभावतः उनकी अपील हमेशा वर्ग भेदों से ऊपर आम समाज से होती है । बल्कि जास तौर से शालक वर्ग से होती है क्यों कि वे सोचते हैं कि भना ऐसे कैसे हो सकता है कि उनकी प्रणाली को एक बार समाज लेने के बाद भी लोग समाज को सर्वश्रेष्ठ योजना के रूप में उसे स्वीकार न करें ।" 110 रेणु के औपन्यासिक समापन भी इसी अतिरिक्त भावुकता के कारण वायवीय बनकर रह गये हैं। "मेरा जीवन" की विवृत समस्या का समाधान रेणु लोक विरचनाय प्रसाद के हृदय-परिवर्तन में देते हैं तो "परतोःपरिकथा" की समस्या का समाधान सांस्कृतिक कार्यक्रमों में । "सांस्कृतिक जीवन पर राजनीतिक प्रभाव अवश्य

पड़े हैं । किन्तु उसकी कामी प्रतिष्ठाया सर्वश्राव नहीं कर सकी है, अभी भी।
गाँव समाज में, मनुष्य के साथ मनुष्य का व्यक्तिगत सम्पर्क छिन्न हो चुका था,
 किन्तु वह अब नहीं रहा । एक आदमी के लिये उसके गाँव का दूसरा आदमी
 ज्ञात कुल शील छोड़ और कुछ नहीं ।कहाँ है आज का कोई उपयोगी
 उत्सव-अनुष्ठान, जहाँ आदमी एक दूसरे से मुक्तप्राण होकर मिल सके ! मनुष्य
 के साथ मनुष्य के प्राण का योगसूत्र नहीं ।" ¹¹¹

यह बड़ी विचित्र स्थिति है कि घटते साम्यवाद और
 बढ़ते पूँजावादी-प्रभाव के कारण सभी आपाधापी का समाधान रेणु जी
 सांस्कृतिक-आयोजनों में देखते हैं । उनका विश्वास है कि "यहाँ के सांस्कृतिक
 जीवन में रुबकी लगाये बिना प्रीति के छिन्न सूत्र को पकड़ना असम्भव है ।" ¹¹²
 परामपुर का जन्मादी-पात्र प्रश्न भी करता है कि - "भूखे किसान और
 मजदूरों को इससे क्या फायदा ?" ¹¹³ मजदूर का यह समसामयिक और
 ज्वलन्त प्रश्न रेणु की भावुकता के आगे अनुरतरित रह जाता है और उसका
 विषय पात्र जिवन्त सांस्कृतिक-आयोजनों की तैयारी में लग जाता है । "जिसेन्द्र
 ने परामपुर के सभी नौजवानों को, नाटक-प्रेमी व्यक्तियों को आमन्त्रित किया
 है, परामपुर नाट्यशाला का पुनरुद्धार करने के लिये । नाम-बनाम हर
 नौजवान की कुनाइट है ।" ¹¹⁴

"मेला जीवन" और "परती परिकथा" के निष्कर्षों में अवधारण
 होने के बाद भी इतना तो निश्चित ही है कि यथार्थ परिस्थितियों के अंक
 के कारण ये उपन्यास जीवन्त बन पड़े हैं । ग्रामीण जीवन की सूक्ष्म से सूक्ष्म
 छटनाओं और उनमें अन्तर्निहित अमानवीयताओं का रेणु ने जिस तारीकी से
 वर्णन किया है, वह वास्तव में रेणु की निष्ठा और आस्था का प्रतीक है ।
 स्वाधीन भारत में बढ़ते गाँव का एक जीवन्त चित्र प्रस्तुत करने में ये उपन्यास
 पूर्ण सफल हैं ।

संदर्भ ग्रन्थ

- 1- रैल्फ फीक्स- उपन्यास और लोक जीवन : पृ० 25
- 2- रेणु - मैला जीवन की भूमिका
- 3- वही
- 4- रैल्फ फीक्स - उपन्यास और लोक जीवन : पृ० 10
- 5- डा० कुंवरदास तिल- हिन्दी उपन्यास: सामाजिक चेतना : पृ० 168
- 6- ए०आर०देसाई- भारतीय राष्ट्रवाद की जन्मात्मक प्रवृत्तियाँ: पृ० 131
- 7- वही : पृ० 131-32
- 8- डा० चन्द्रिका ठाकुर - बिहार की कृषि और सामाजिक व्यवस्था : पृ० 12
- 9- रेणु - मैला जीवन : पृ० 16
- 10- वही : पृ० 143
- 11- वही : पृ० 143
- 12- वही : पृ० 275
- 13- वही : पृ० 284
- 14- वही : पृ० 16
- 15- वही : पृ० 319
- 16- वही : पृ० 16
- 17- वही : पृ० 324-25
- 18- रेणु - परती परिकथा : पृ० 299
- 19- वही : पृ० 299
- 20- वही : पृ० 300
- 21- वही : पृ० 302-3

- 22- रेणु - परती परिकथा : पृ 20
- 23- वही : पृ 81
- 24- वही : पृ 49
- 25- वही : पृ 362
- 26- वही : पृ 37-38
- 27- डी० धर्नर - दि एरोरियन ड्रास्केट इन इंडिया : पृ 25
- 28- रेणु - मैला जीवस : पृ 54
- 29- वही : पृ 14
- 30- वही : पृ 18
- 31- वही : पृ 18
- 32- वही : पृ 19
- 33- वही : पृ 11
- 34- वही : पृ 17
- 35- वही : पृ 17
- 36- वही : पृ 17
- 37- वही : पृ 70
- 38- वही : पृ 27
- 39- वही : पृ 79
- 40- वही : पृ 186
- 41- वही : पृ 109
- 42- कार्ल मार्क्स, फ्रेडरिक एंगेल्स - कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा-पत्र
: पृ 2049- 50
- 43- रेणु = मैला जीवस : पृ 130
- 44- वही : पृ 130

- 45- रेणु - मैला जंकल : पृ० 185
 46- वही : पृ० 201
 47- वही : पृ० 201
 48- वही : पृ० 191
 49- वही : पृ० 203-04
 50- वही : पृ० 276
 51- वही : पृ० 241
 52- वही : पृ० 294
 53- वही : पृ० 331
 54- वही : पृ० 331
 55- गजानन माधव मुक्तिबोध- नये साहित्य का लीन्दर्य-शास्त्र:पृ० 146
 56- रेणु - मैला जंकल : पृ० 320
 57- रेणु - परती परिकथा : पृ० 25
 58- वही : पृ० 27
 59- वही : पृ० 35
 60- रेणु मैला जंकल : पृ० 20
 61- वही : पृ० 20
 62- वही : पृ० 20
 63- वही : पृ० 21
 64- वही : पृ० 22
 65- वही : पृ० 95
 66- जयश्याम सिंह - भारत का मुक्ति संग्राम , भूमिका : पृ० 111
 67- रेणु-मैला जंकल : पृ० 76-77
 68- वही: पृ० 127

- 69- रेणु - मैला जीवस : पृ० 158
 70- वही : पृ० 157
 71- वही : पृ० 324
 72- वही : पृ० 157
 73- वही : पृ० 182
 74- वही : पृ० 310
 75- ई० एम० एस० मधुदिस्पाद - समकालीन भारतः सर्वग्रासी रक्षरः पृ० 2
 76- वही : पृ० 2
 77- रेणु - मैला जीवस : पृ० 311
 78- वही : पृ० 315
 79- वही : पृ० 318
 80- रेणु - वरती परिकथा : पृ० 25
 81- वही : पृ० 29
 82- डॉ० रमेश कुम्ल मेघ - सौन्दर्य जिज्ञासा : पृ० 301
 83- रेणु - वरती परिकथा : पृ० 308
 84- वही : पृ० 321
 85- वही : पृ० 321
 86- वही : पृ० 372
 87- वही : पृ० 376
 88- रेणु - मैला जीवस : पृ० 124
 89- वही : पृ० 51
 90- वही : पृ० 267
 91- वही : पृ० 30
 92- रेणु-वरती परिकथा : पृ० 38

- 93- रेणु- परती परिकथा : पृ० 114
 94- वही : पृ० 114
 95- वही : पृ० 114
 96- वही : पृ० 125
 97- वही : पृ० 125
 98- रेणु मेला बीकन : पृ० 45
 99- वही : पृ० 187
 100- वही : पृ० 201
 101- वही : पृ० 225
 102- वही : पृ० 225
 103- वही : पृ० 80
 104- रेणु - परती परिकथा : पृ० 28
 105- वही : पृ० 113
 106- वही : पृ० 121
 107- वही : पृ० 121
 108- रेणु - मेला बीकन : पृ० 145
 109- वही : पृ० 209
 110- कार्ल मार्क्स, फ्रेडरिक एंगेल्स - कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा-पत्र
 : पृ० 78
 111- रेणु - परती परिकथा : पृ० 343
 112- वही : पृ० 350
 113- वही : पृ० 352
 114 - वही : पृ० 350



पंचमः अध्यायः

रेणु के परवर्ती उपभ्यासों में शिक्षित

राजनीतिक परिवेश और सामाजिक

चिन्तन



रेणु के परवती उपन्यासों में विभिन्न राजनीतिक पारिवारिक और सामाजिक

विषय

“मैला जूँस” (१९५४) और “परती परिक्था” (१९५७) को रातों-रात मिली स्याति के दो साल बाद रेणु का कहाना-मंग्रह “तुमरो” प्रकाशित हुआ है। “तुमरो” (१९६९) को कलानिर्वाण मा उसा राजकी और जीवन्तता से परफूर हैं, जो ज्यों उसा दो उपन्यासों में दिखाने देतो हैं। रेणु का यह कहाना निरूप्य हो उका लेखन-कला का स्वर्णिम कात पा। “तुमरो” के बार वर्ण बाद “दोपरीपा” (१९६४) उपन्यास का प्रकाशन होता है। यह उपन्यास उसा रेणु का है, जिसमें “मैला जूँस” और “परती परिक्था” दिया, यह सख्त विश्वास नहीं होता। सामान्यता भविष्यवाणी के हास्टस में व्याप्त प्रष्टाकार और जीवितता की रेणु वाणी देने का प्रयत्न करती हैं, लेकिन जो अनुभव उन्हें प्राप्ता जंझ के हैं, उतनी नार के नहीं, जब: रेणु अपने व्यापारण-शाय का निराह नहीं कर पाते। पुनः दो वर्ण बाद उनका उपन्यास “बुझ” (१९६७) जाता है जोकि शरणार्थियों के अवस्थास्थित जीवन के प्रति पाठकों का ध्यान आकर्षित करता है। “बुझ” के एक वर्ण बाद, यानी १९६६ में रेणु “केली और तरे” लिख देते हैं, जिसमें उन्होंने स्वाध्याय-वर्धन के कुछ गुप्त-गुच्छों की उजागर किया है। राष्ट्रिय आन्दोलन में विपार्थियों के योगदान से लेकर १९६५ के भारत-पाक युद्ध का वर्णन इतिहास और साहित्य का दृष्टी ^{रूप} करने में सहायक

हीता है। रैणु को फूगु के दो वर्ग फ. वा. राणाकुण्ड प्रकाशन न. दिल्ली द्वारा "फूगु वा. रीठ" (१९७९) का प्रकाशन किया गया। यह उपन्यास देश को अबाधा और उसके बाद सभी आवाधाओं का किण्व करता है। रैणु के दो बार उपन्यास पहले के दो उपन्यासों के तुलना में निरक्षर छ. के फूगु हैं। यह बड़ा विविध स्थिति है कि रैणु को यथाय- वादों से निरंतर जारी बढ़ता है, अपनी ४४४०००० समता की गहराता करता है, लेकिन रैणु हमारे विपरीत आचरण करते हैं। रैणु का तेज निरंतर उकता होता जाता गया है। इन बार उपन्यासों के सम्पत्तियों के यथाय नकारा नहीं जा सकता, किन्तु जिस विस्तार और गहराई की आवश्यकता था, वह हमें नहीं जा पाता है। सामाजिक-राजनीतिक जीवन को जिस गतिधर्मी जो रैणु "मैला जाँक" और "परती : परिणाम" में एकजोती हैं, वह दृष्टि इन उपन्यासों में नहीं है। यह तेज के पल्लव का बीतक है।

१९६० के बाद रैणु कलकत्ता राजनीतिक घटनाओं का आलोक करने में आगे बढ़े हैं। यही कारण है कि अपने पहले के दो उपन्यासों में विस्तृत और गहरी राजनीतिक अंतर्दृष्टि एवं सामाजिक अंतर्दृष्टियों की चिन्ता करने वाला रैणु इन जोरों समस्याओं से मुंह चुराने लगता है। बाद के इन बार उपन्यासों को घटनाओं पर केन्द्र, जैसे, दलान्तर जोशी और उनके साथियों ने भी लिखा है, लेकिन यह बड़ा विडम्बना है कि जिस भावुकता और रोमान्चित से इनके उपन्यास संवाहित होते हैं, वही कार्य रैणु करता है। रैणु के "मैला जाँक" और "परती : परिणाम" सामाजिक दृष्टि-सम्पन्नता के कारण जहाँ एक असाधारण इतिहास प्रस्तुत करने में सक्षम हैं, वहाँ ये उपन्यास भावुकता और रोमान्चित के कारण प्रभावहीन

होकर रह जाती हैं। तैयारी के काम परिवर्तित होती राजनीतिक-प्रतिमानों की समझने में रैण्डु नती करती हैं, कात्स्न्यिक एक ब्राह्मण-विचारधारा उन पर हावी हो जाता है। ब्राह्मणता गंधर्वों के सम्मुख एक कुंभ का निर्माण करता है और वही कुंभ-दृष्टि को दृष्टि है-- ये उपन्यास ।

दोषीपा : समझौते संस्थाओं में व्याप्त प्रथाचार -

“दोषीपा” (१९६३) रैण्डु का तीसरा उपन्यास है। इसकी रचना ३० फ़रवरी १९६१ को हो पूरी हो गई थी, किन्तु विभिन्न अपरिचित कारणों से इसका प्रकाशन ३१ फ़रवरी, १९६३ को जवाब में ठीक की वषों परचातु संभव हो सका । रैण्डु ने इसका प्रथम और मुख्य कारण बताते हुए लिखा है कि “उस सीमा गया था कि वषों से दिन-रात छिद्र पर सवार पांच (श्रान्ति) १) दोषीपा की उत्तम-वत्तन उपन्यास करने एक उत्तम-वत्तन उपन्यास -संस्थागत कथनों से (००००) मूख-पांश्वर “पेज कथा” के नाम से प्रस्तुत किया गया । ज्ञातः यह सीमा-वत्तन-वत्तन कारणों से - सफल नहीं हो सकी । जब उन्हें उत्तम-वत्तन हा पैर करने के कुछ क्रम में यह पक्षों दोषीपा बारी का “ और ज्ञात में रैण्डु को ने उद्घोषणा को कर दो कि “हा बार और हैं । जा रहा है एक-एक कर ।” यह उद्घोषणा ज्ञात छिद्र छे और उन बार श्रान्ति पर ज्ञात नहीं लिखा गया ।

“दोषीपा” की महान् समझ-संस्था-महिलाओं को कथना कहानी कहता है। कहता कहता है, कहता रहता है- ऐसा ही ज्ञान-वत्तन महिलाओं को कहानियां जिन्होंने समाज की ज्ञात जीवन का हीम कर दिया , किन्तु समाज ने उन्हें दिया- वक्तान, उपेक्षा और निराशा का प्यार । दोषीपा के परचातु मानो संपूर्ण जीवन की सीमाओं का

परिणाम रमता पीसी को अमानक मृत्यु (कारण अज्ञात, किंतु संकेतों से लगता है कि दुष्प्र-भक्ति एक जाने के कारण) और बैला गुप्त की पांच वर्षों की सेवा। यह सेवा किस अवस्था में? क्या कोई अवस्था बैला ने लिया। हाँ, एक भयंकर अवस्था लिया उसने-- भिन्न जानें बैला प्रष्ट और प्रजाति गारी का पदाभिरुह लिया, उरी समाज के सामने उसके वास्तविक स्वरूप में लाकर खड़ा कर दिया। वर्तमान प्रष्ट और वराजक वातावरण में किसी की गलत रायि कबना उसका नहीं, वापका अपमान है। प्रत्येक स्वाम पर ही लोग हैं जिन्होंने मानवीयता पर स्तंभ का टीका लगा दिया है। भिन्न जानें और उनकी बाँटाल चीकड़ो - ऐसी वास्तवों का कुर्ष है, जिसने चोरे-चोरे मानव-सेवा का महान् कृत लेकर जाने वालों संस्था कर्क वाकिं वीमेन्स कीडो द्वारा संघालित वाकिं वीमेन्स होस्टल पर कब्जा कर लिया है, उसको जानरीरो सेक्रेटरी बनकर। उनका उद्देश्य मात्र कब्जा करना हो नहीं बल्कि उनके माध्यम से अपना प्रष्ट व्यापार बढ़ाना भी है।

बाँकपुर में कामकाजो पहिलाजरी के लिए जैसी रहने की कठिनाई और मेटेनोटो की भयंकर अव्यवस्था को देखकर वेरिस्टर श्री मोन्ड्र बनजो का फर्मा सोझता रमता बनजो बिचैत है। उनका मन-मस्तिष्क इस विषय का निर्णय समाधान तरीक रहा है। समाज-सेवा को मायना उनके मन में अचल से हो रहा है। बिहार के स्वायत्तमंत्रों के शब्दों में "बाँकपुर के वेरिस्टर श्री मोन्ड्र बनजो को पानो की में इस समय से जानता हूँ, जब वह भागलपुर कासेज में पढ़तो था। बैलाह ने लेकर समाज-सेवा और सामाजिक कार्यक्रमों में कूट मकाने वालों मिश्र रमता पटलों की लोग मृत गये हैं। --- १९४४ के मूल्य-वाहताओं को सेवा के लिए कार्य राजेन्द्र बाबू ने जिसको सुरि-सुरि प्रशंसा की थी। " बिहार की विद्यार्थ

समाज-सेवा रक्षा बनना, समाज-सेवा का जल की बालाबाला में लेता है, जबकि उसे इसके बाध-बल में नहीं पड़े, और दूसरे पारिवारिक जीवन में भी अवरोध जाता था। अपनी प्रतिभा को अपनी रक्षा नहीं को द्रुमिन् लेता है - पर - परिवार की शीर्षक और पाँच वर्षों तक पर गृहस्थी शीर्षक नहीं-वाटरिंग में रहती रक्षा बनना। -- गुफाद केप और एपेन में, बैरिस्टर बनना को गृहणी ही नहं। -- सर्जिंस, मेडोक्स, जल हास्पिटल, बेबी बार्ड, फिफेल बार्ड और टी०बी० बार्ड के प्रीम उसकी फाम्पनि गुफा प्रकृष्टित हो जाती- जा नहं। जा नहं दो दो जो। -- अपनी द्रुमिन् समाप्त कर सोमती रक्षा बनना फूलाते: समाज सेवा में ला नहं। दो वर्षों तक राज्य-भर में घूम-घूमकर मेटेरिन्टो रेंटर कुम्हाली फिराई। निरंतर परिश्रम एवं लगन के बाद पर वे सारे बाँकेपु को पीछा बन नहं एवं विमेष्य बैल्फोर बार्ड, मल्लिका शिरष ला विमाल्य, रिशु कल्याण केन्द्र, मातु मां सोपर, बाँके-विमेष्य लीस्टल मल्लिका मल बापि संस्थाओं को बनना - नां, नीची, पीची, बायजा, देवा जो। इतना सब कुछ करने के बाद नीचा छठातु छंवार से विदा हो नहं। जिस पीछे की पास -पीछे बड़ा किया -- उसे बनाय शीर्षक। तबस्त विहार उनकी प्रत्यु पर दुःखी रिन्तु सभी अधिक दुःखी हैं वे संस्थाएं--विमर्ष पीछो ने अपनी फिर के लू से पास्ता।

पीछो के ली जाने पर सभी अधिक उपरदायित्व देता गुफा पर जाता है। देता गुफा- लीस्टल को बहु गुफारिन्टेंड और इन उपरुक्त संस्थाओं को बैर-टैन्ड। पीछो को क्यो पूरा भरती है-- देता। जिस अवस्था में इन संस्थाओं की पीछो शीर्षक नयी पों, उनसे जाने विमलित करने का कै देता को हो है, जिसके कारण बाँकेपु को समाज-सेवा संस्थाओं विमेष्य बैल्फोर बार्ड को बड़ी प्रतिष्ठा है। स्थानात्मक पत्रों में इसके कार्यक्रम और

गतिविधियाँ है शक्ति उत्पाद करती रहती हैं, राज्य है कुलकर्मी जीवों के
 प्रोड्यूसर हैं। राज्य प्रोड्यूसर लेडी गलाम है जलवा बाउंड को "गति" में
 बारह मिला समय है। पूनज-सदस्यों में एक्सीटेंट है रिटायर
 जब, दो बसों और रोज-राग के पुरानी-विशेषज्ञ बुद्ध का बटर दुई के
 नाम उत्तेजनाय हैं। "कैला की रंगों में कूट-कूट पर सभाय तैयार जा
 माय-भरा हुआ है। व्यक्ति से ही वह देश-भक्ति की भावना से जीत-प्रीत
 है- "जातिवादियों से कहानियाँ सुनी समय देह बार-बार बिलरती।
 कहानियाँ बाग में मनमोहात की टिकटों में बाँपकर, कूट पर के लताते
 हुए बाण्डालों की वह रंगीन तस्वीर जिस दिन मिली, कैला री पड़ा
 था। - उस तस्वीर की देखकर घंटों रीती रहती। "उस तस्वीर ने
 उनके कानों पर इतना प्रभाव डीढ़ा कि जब वह बिलर रीती हो नहीं
 दे, कैला की मुक्त करना चाहती है। रीति कायरता है और कैला निश्चय
 हो कायर नहीं है, नहीं था, न कभी रहनी। कायरता अपना हो नाश
 करती है। जातिवादो-भावनाओं से जीत-प्रीत कैला की एक जूम-जातिवादो
 बलि बिलारी मिला जो उनके पिताका प्रिय शत्रु था। बलि बिलारी
 कैला से जातिवादो भावनाओं की मुक्तता है और एक दिन यह कहकर
 कि पाटों की महिला-कार्यकर्ता का सक्त करत हैं, से जाता है। यह
 जाना कैला के लिए अत्यधिक महत्त्व पड़ा। कैला जिसने सच्चाई के रूप में
 देश-भक्ति स्वाकार को था, जिसके मन में सदैव रहोदों के प्राति। जाति
 सरकार द्वारा जिसे का रहे अत्याचारों का खदा लेने की भावना थी--
 स्वयं अत्याचार का शिवार हो गये। मौला-माली कैला की क्या पता था
 कि देश की स्वाधीन करनी की पवित्र नाम में जो लो मैट्रिनी पुरा जाये हैं,
 जिनके लिए शारदारिक-नीपण देश से अधिक महत्वपूर्ण है। उहाँ रीणु
 स्वाधीनता बर्दील में जाये लो करीधों को और पाठक का ध्यान

वाक्यगत करना चाहती हैं कि किस प्रष्ट सीमा में स्वाधीनता-जातिवाद में जातिवादों उद्गम माना जाकर साधा-साधा जाता भी ठाक। जैसा कि 'सुनीता' उपन्यास के हरिप्रसाद और बाली बिहारों में और है। हरिप्रसाद भी यद्यपि उद्गम-जातिवादों है, लेकिन वह साध ही मनुष्य को। सुनीता की रात के समय निजके को में लेजाकर उठी नग्न कर मुंह ठक होता है और वापिस आ जाता है; उनके बिहारों ऐसा नहीं करता -- उसने अपनी भूख मिटाई और उसके दोस्त सरकाराज सां विषयी बाकि-बिहारों इधर लगे-दता जा, है उसके साथ ब्यापार किया। 'बकी, दुर्गिरा बफोदो जानवर से वह न जाने क्या तक लड़ता रहा। --- की है, दांत कीर नाहूँ -- किन्तु कीतः वह धार गये। हून से तथ्यय सरकाराज, पायल मेडिकर है उसे दवाई लिया, अपने बच्ची में। --- सुभारो केता राजा पर गये, कीर-मिलन होटल, फेरावर के सीसह नम्बर करे में। ^F फिता पर गये महान्दो में हुकर और लोक-विद्वत् अवफालो मां न जाने स्थिर क्लो गये। केता कीटकर फिर कमी गये नहीं गये। उसने नयी जिन्दगी बाराज को है- मीसो को कृपा है। धारा जीवन मीसा को तरह ही जगज-केता में व्यतीत करने का कठिन निर्णय लिया है केता ने।

सेवा-साधा पवित्र संस्थाओं में व्याप्त प्रष्टाचार और बराब-क्ता पर प्रहार करना रेणु का ज्योष्ट है। स्वाधीनता के फेरादू यह प्रष्टि अत्यधिक मात्रा में क्लमता होकर फुली-फाली है। जाय नये प्रतिहत संस्थाएं ऐसी हैं, जिनमें क्रौतिक व्यापार होती हैं। जमा-जगरा के जगभात्य के बारे में तथ्य उमर कर जारी कि वहाँ पर रह रहे जगध लड़कियों के साथ जगभात्य के अधिकारों और उनके निर्णय ब्यापार करते हैं। यही नहीं, हर जगह ऐसा ही हो रहा है। समाज में व्याप्त

इस जमीनकीता का परिणाम क्या होगा, समझ में नहीं आता। जानूँ
 निमाता कृप हैं, कहीं भी तो गया ? वे भी तो ऐसे हैं। "दाफेरा" ^१
 में इसका प्रतिनिधित्व करते हैं— जोरता ज्योत्स्ना जानंद । जोरतो
 जानंद जोरमें बर्तों बौर्ड का जानंदो सौंदरो हैं, उनका मुख्य व्यापार
 यह है कि बाहर से प्रतिष्ठित व्यक्तियों की छुआ-छुआकर उन्हें लड़कियाँ
 देना और अपने व्यापार की बढ़ाना । वेता इसका विरोध करते हैं
 वेता का विरोध बाधके मा है, जिस संस्था का उद्देश्य है इतना बड़ा
 सम्मान ही, वहाँ से विनीतें जान ही तो उसे जान पूजा । जैसे वेता
 विरोध करते हैं— उसकी मा तो दुह सौभार हैं। जोरतो जानन्द दिन-
 रात व्यापार में उन्नति कर रहा है— "एव तक "जु-मंडु" के जौकीत
 का लीम पैर - जो व्यापार वह छुट्टा तौर पर कर रहा था, उसका
 जो अब बड़े पैमाने पर पार्टीर रातर बंधा बनाकर करना होगा । जिस
 पाउंडर, बिटाभि का कम्प्लेस, स्ट्रीटमाइसिन -- ? पसोस हजार
 लफो ? लकड़ा के बाद वह लड़कों का व्यापार । ^२ इसमें उसको
 सहायता करता है— बाकिवासा का । मागे लकड़ा का व्यापारो है—
 लड़कों के व्यापार पर वह वन-विमान के समस्त अधिकारियों की लड़कियाँ
 परुषाकर अपना व्यापार कर रहा है। इसी प्रकार का प्रस्ताव वह जोरतो
 जानंद के सम्मुख रखा हुआ जाता है— "जुकी बनी भी "लगात "कल्पे में
 जोर "कल्पे नहीं । मैं इसको को कमाई लाता हूँ। बलासी पैरा पैरा है। ^३
 जोर रण्डु इस पर टिप्पणियाँ करते हुए कहते हैं, "जोरी का मागे, मागे
 बलास हैं । यह बलासी का दुनिया है। ^४ वास्तविकता भी यही है,
 जान सारी दुनिया बलासी का ठेका मात्र बनकर रह गई है। फिरन्तर
 बलासी बलासी का रहा है जोर उसी मात्रा में बलास मा । जो बलास अब किसी
 केच लार्गे, पता नहीं । इन्हीं केच मा रहा जाये तो किस प्रकार ? जहाँ

हमूँने नाँव में जाग लगा हो, यहाँ गरब को भाँकड़ा तो करो
 हो उसे रोकनी और बचाने का नैतिकता (साधन नहीं) जिसमें है ? रेणु
 बताना चाहती हैं कि जहाँ देवी वहाँ पर ली के नाम लीनों के ठठ ली
 हैं और नैतिकता हम धौंट कर पर रहा है, हमहाँ के सामने । ऊपर
 से बाभिजात्य जिसने वाली ये समाज-सेवा और से जिसने प्रष्ट हैं, उसे
 कीर्ति सौच भी नहीं सकता । जोमती बानन्द जीकि उस समाज-सेवा संस्था
 की सेक्रेटरी हैं- पछेन महापात्र की परवा पाँ उनके बाद महासी से
 विवाह किया । महासी के साथ-साथ रहकर उन्होंने भिस्टर सोमसुन्दर
 बानन्द के सामने में -- "दि फायरबुड - सम्राज्य नामक कम्पनी लड़ी
 कर ली और एक दिन अपना और अपने पति का सारा कारोबार गिष्ट कर
 वह सोमसुन्दर बानन्द के साथ सानपूर गई । वहाँ जोमती महासी से
 जोमती बानन्द को छु ।" उन विभिन्न उपनामों के परिवर्तन के पोहे
 पति-पत्नी का रिस्ता वहाँ भी नहीं है- शिवाय अथ प्राप्त है । जोमती
 बानन्द की महिला जमा पारलम्ब में कम हैं। बाभिजात्य-वर्ग में यह सब
 कुछ करता है और यहाँ उनको बाधुनिता है। ली बाधुनि विराज फुले
 वाली बहादुर-बादर लीन बंदर से जिसने पुजित और नारकीय हैं, इसका
 उदाहरण महामार्ग में आप्त बाभिजात्य बैर्यागुणि है। हमहाँ में
 बाभिजात्य बैर्यागुणि है । हमहाँ में बाभिजात्य बैर्यागुणि के ली
 नमूने सामने बाये हैं, जिसमें एक पवित्र समझ जाने वाली मंदिर का नमूना
 कहा संगीत है। इस मंदिर में दीपहर में बाभिजात्य-वर्ग की स्थिति
 नित्य प्रति करने करने जाता हैं, वहाँ उपस्थित नौजवानों का काम करे
 उनके साथ समविस्तार होती हैं। बैर्यागार और नियम विचारों के लिए
 यह एक रीजगार है । एक नौजवान से पूछने पर हात हुआ कि "की की
 करत होने पर की उस को में प्रवेश किया ।--- यह पूछने पर कि किस

तरह को औरतें तुम्हारे पास जाती हैं। अपने बताया सभी तरह का काम-
 का फी जाती । मैं इसका फिज्ज नहीं करता कि वे देखने में जाती हैं। उनकी
 पास फी जाती बाहिर। --- एक फामिल स्टार हीटल का बम्बारी कहता
 है- "आर मेरा पत्नी की फामिल ही गया कि मैं जाता करता हूं तो वह मुझे
 तलाक दे देगा । मैं आपसीर पर ५०० रु० रोजाना लेता हूं। अपने बताया
 कि उनके पास फी जाती औरतें जाती हैं, जिनके पति या तो दूर पर रहते
 हैं या धीरे में व्यस्त रहते हैं। --- इस तरह वे बनेक अच्छे रहे हैं, जहां लड़कियां
 उपलब्ध ही सकती और अब लड़के फिलाने के मा अच्छे का गये हैं। --- एक बड़े
 उधोगपति परिवार के माहम्मादे एक माहिलवाले की जाने साथ पर ले जाता
 करते थे । माहिलवाला अब उनका पत्नी के साथ संमीन करता था, तब उसे
 देखकर उनको अपनी कामवासना तुष्ट ही जाती है। यह स्थिति है इस
 समाज के बाहिलवाले-का को । वास्तव में वैश्यावृद्धि का बाधु जितना ठीक
 है यह । इसा प्रकार की योमता जानम्द हैं। उन्हें अब जानम्द से मा संतुष्ट
 नहीं है- नहीं ही सकते । वासना का जो नहीं होता, अब तो शरीर में
 शक्ति है, गति है, तब अब वासना समाप्त नहीं होती । लेकिन इसका यह
 अर्थ क्यापि नहीं है कि बूढ़े-निल्लो को तरह हर काह फुली फिरी, प्रतिबंधित
 मा जीन करे, यहां प्रष्ट लीग की समाज के निवास हैं। राज्जार या सरकारी
 रैस्ट हाउस जाने और योमता जानम्द । योमता जानम्द की में है। फामिल
 जाने से कहता है- "मैं तुम्हारी हूँ- तुम्हारी ही । बम्बली योम- बाहरे रैट
 रैट बाहरे डान । जाने फुजवाप इस जेडु औरत की बम्बार में फरकर फज
 पर रैटा रहा और वह जानम्द-बिह्वल बह्वृद्धाती गई- जाने- छिार-
 जित मो- जित मो ---। तुम-- जाने-- तुम--- सम्मुख परिरता ही---
 तुम-- जाने-- तुम- मुझे इतना प्यार करते हो ?--- मुझे उस बूढ़े के जंगल
 से छुटकर अपना यहाँ नहीं जाना लेती ? एकदम अपना-- एकदम अपना---

बाह मिल मा -- मिल मो मिल पाउ -- । ^{२४} इसको परिणाम यह होती है कि संबंधमायिता विस्मय वार्ता होस्टल जन-जन को दुष्टि में विद्रुमाघर होकर रह जाता है। जबकि यह क्या ही गया कि हर लड़की लड़ो जा रहा है। -- जब तो इस गली में, दिन में भी जैसे जमाने का माहस नहीं होगा किता की। ^{२५} एक और कैला का कठोर अनुप्रासन है और दूर।

मोमता जानन्द का प्रष्टाचार । कैला क्यों - क्यों जमाने की अन्तर्गत पातो है, लड़कियाँ में मो दो - दल बन गये है, समाज-सीवा और सन्धारिष लड़-कियाँ कैला के साथ हैं और जनेति लं प्रष्ट मोमता जानन्द के साथ । राम-रति यहाँ रहने वाली कामकाजी महिलाओं के बारे में ध्याता है कि "बह रीझियावाला बोदा तो काम में कुम्का हिलाकर खुद कुम्का गये । रीझ रात में बीस्ता के साथ रि-मता में बैठकर जाती है- रि-मता वाली की फीमा देने के बाद- बाया फंटा -पीन फंटा तब फाटक के पास लड़ो बलिगातो है, लीतो है। एकर कौं दिनों से रमा बलिम के संग में भी जाला जीट-वाल्स वाली बाहू जाने ली है। रमा बलिम मो बहो बरती है। ^{२६} बाहर वाली से संबंध निरन्तर लड़ रहे हैं। हर कैला और कामकाजी महिला जब यह चाहती है कि उसके किसी से जनेति सम्बन्ध रहे और न रहने पर होस्टल में सम्पत्तिगता

का व्यापार चलता है। सम्पत्तिगता जायुनिकता की भी है। जब हर लड़ो बोच की जायुनिकता का कामा पहना दिया गया है-- पहनाया जा रहा है। कुंता कैला को शिवायत करता है किवायती-- "बह लीगों के पास जानर ली जाता है। फिर-- । ये पास और जन्मनी-हनी के विहायन पर मो। लानिमणा और कुंता कैला हमेशा सराब-सराब बातें बीतती रहता है। ^{२७}

इतना बुरी स्थिति किता संघट वाला जारा काये जा रहे लीठे की भी नहीं होता हीमा , जितना इस होस्टल का है। मोमता जानन्द कैला प्रष्ट औरत जिसका जानरीरो सेक्टरा होगी, उसके अच्छा हास्त में करने की उम्मीद भी नहीं करना चाहिये। समाज को जाय क्या ही गया है, क्यों जा रहा है

वह, जिसे को किता नहीं। प्रत्येक व्यक्ति किता और उस की पाना
 चाहता है, चाहे इसके लिए उसे कुछ भी करनी पड़े। ऐसी स्थिति
 में समाज का निर्धार फल ही रहा है। इसी पक्ष की धर्म परिणामि होती
 है- अराजकता में। होस्टल में मा बहा हुआ-- बैला का अनिच्छा के विप-
 रीत शोभता बान्ध होस्टल के "चिकाटन - हात" में सुखम्य धीमा के निर्देशन
 में बैल करता है। बैल शान्ति का आत्म उन्मा संस्कृतक प्रभाव हासना
 अपना स्तरोप नाटक ब्रामा नहीं था, बल्कि होस्टल की लड़कियों का अपने
 दोस्तों की धर्म करने का अवसर देना था। कुं। देवी के भेदत्व में, यह
 कार्य ऊपर ही रहा था और नाथे नाटक। "शोभता आनन्द ने शान्ति की
 ऊपर बैला--। धीमे, लड़कियों का उद्धार करने ऊपर की और भागा और
 हात की रीतना हुआ गया। -- बैल स्मिथ जाफ ? बैलास्त की भारती
 कुं कुं। देवी के कंधे बंध का फुलर हात में गुंन रहा है- कुं। मे-स-म-
 सा- जा- जा- है - ह। -- भावान् मला की लात-माह के का। नै नहीं
 होती तो रीक बमों और रमा निम को मा बहा दुर्लभा होती की विभावतो
 और गरीबी को कुं है। फरैवरा और चित्रा की मा लात भागे ने हो
 बचाया - गुंडों के हाथ ने। "बैला इस बार में अनभिज्ञ था। संपूर्ण ऊपर
 में अचानक अशांत रीग फौल गया है। वह पूरी रात एक गली से दूसरी गली
 के प्रतीक पर में देखती फिरती। सुबह जब उठी रात की हल्ल धुपेंगा के गरी
 में शांत होता है कि - "दीनों की कर्दस्ता एक कीठरी में बंध करके के-
 ण्यता किया है-- कुं। मेम के दोस्तों ने। -- बैला गुप्त माने आचानक
 से गिरी-- कर्दस्ता केण्यता किया है। -- कुं। मेम के दोस्तों ने ? क्या
 कहती है यह रामरति ? ⁵⁹ बैला तो विश्व-स्वप्न में था नहं तीस मल्लो
 कि क्या ऐसा भी संभव होगा। कारण कि बैला इसमें पवित्र हुन्य और
 सेवा-भावी बनकर जाते है। वह समझता है कि इस होस्टल में जिसे भी बाली

या बहुत बड़े घर को लुटियाँ नहीं जाती, वहाँ तो बसे रहते हैं, जिसका जीवंतता है। पावली भी वही विश्वास पर देखी है कि वहाँ घुड़ियाँ रहती हैं। उन्हें क्या पता कि ऊपर से बच्चे नीचे पवित्र दिवस के होते हैं। अंदर बहरीले नाग भी रहते हैं, जो अपना गुंजल लाने बैठे रहते हैं और सिंगार बाने पर स्वयं उठ लेते हैं। ऐसा एक और वहाँ ज्योतिषिष्ठा और उपासकाल से रह रहते हैं, वहाँ हास्टल में रहती बात विभावली के लड़कों भी है जिसका उद्देश्य ऐसा है कि पवित्र है। वह भी पूरे उपास-कारों से सेवा करना चाहती है— अस्तित्वों को हास्टल का वातावरण बनना प्रमाणित है कि जिसा भी गम्य और संसार बान् लड़कों का उभर रहना, सिंगार कृपा के और कुछ भी नहीं है। जोमती आनन्द और उनका प्रिय कार्यकर्ता मृती देवा सदैव कुछ रहने में लगे रहते हैं। हास्टल के मध्य वातावरण में विशा भूने का उभार जिसका उद्देश्य है कि ऊपर से लिया है। इतनी वास्तव और प्रमाणित कार्य जिस स्थान पर होती हैं। अधिकारी-गणों को देखते हैं उनका जीवन रहता है— यह सवाल दिवस में होता है। सक्ता है, जिन्हु गहराई में जाकर देखें तो पता लगे कि केवल यही हास्टल है। वहाँ, लामा हर हास्टल से है, जहाँ अधिकारी सक्ता प्रष्ट हैं और क्लारों को प्रष्ट बना रहे हैं। वे हास्टल जिसा भी वैश्यात्म से गिरे हुए हैं। वैश्यात्म में विभावली और गौरी देवा के। वे और सचकार लुटियाँ के साथ असात्कार नहीं लेता। भारत के देश में जहाँ नारा को लुटिया ही उसका अभूषण है, वे लिए असात्कार एक अभिशाप है। वही प्रारण की सिर महिलाओं ने विभिन्न प्रदहने की, कफने कटायी, जिन्हु उभर और बहरी सरकार हुआ है। असात्कारों को लुटियों से सक्ता पर देनन्दिन भर रहते हैं— बार वर्णों को लुटियों पर वे साथ असात्कार और सरकार समारोह के रहते हैं। और गौरी के लुटियाओं नारा अभिशापकी जिंदगी उभरता

कोर कहाँ ? हमें तो कहाँ नहाँ लगता कि शीष्वाणा समाप्त हो गया है,
बक्या होने का रहा है । कोरें ठीक पाटने में क्या काम नहाँ रीता ।

शीघ्रता का मूल है- जाति विभक्तता । निम्न का एक स्थान पर शीघ्रता होता है, जैसे फेड़ के बाग जोड़ने का होता है, वहीं का निम्न-व्यक्ति का मूल शीघ्रता होता रहता है । इस प्रकार के अमानवीय शीघ्रता के कभी के लिए मात्र एक ही उदाहरण है- फैला, अर्थात् शीघ्रता के मूल की पहचानना । रीणु इससे मूल तक पहुँचते हैं और बताते हैं कि हास्टल में इस अमानवीय स्थिति का कारण दोनो लड़कियाँ का निम्न होना है । यहाँ लगभग सभी लड़कियाँ ऐसी हैं, जो निम्न वर्ग के परिवार से आकर स्वयं अपनी ही आवाजें हैं । रीणु बारंबार तथ्य देती हैं- "तारा-वली देवी को उग्र बालीय के ब्राह्मण समिते।-- सफ़ा है, पति के द्वारा शायद ही का है। तारावली देवी मैथिली जाति का ग्याम था, इसीलिए दूधने में जाते हैं। पास में जाँको ली फिर जाकर जाँको जपनी गीत की ।--- ल्यामा , भागलपुर जिले के बंगाल-बंगाली की लल्लटों के पिता गाने का गीत है । तारा- लिंगा जिनका मूल ।--- जहाँ फर्रि पर झा होकर दो छोटे भाइयों की पढ़ाया जाता है।--- जंगमो-लिंगा लालाका का लाल है। लालिहारो- लालाका के लाल है जाते हैं। -- बंटवारे के समय देह पर अमानवीय अत्याचार मौल हुआ है। पैरों एक और ऊँचा हुआ है।" ये इसी प्रकार रीणु अन्य लड़कियाँ के सामान्य में तथ्य देती हैं, इन संपूर्ण तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि ये सब पीड़ित हैं, पर ही , समाज के एवं धर्म के । इसी पीड़ा की दूर करने के लिए वे दूधने लेने जाते हैं, लालि दूधने पास में जाँको जपनी के अत्याचारों का दर्शन यह सर्वमान्य तथ्य है कि जहाँ की जहाँ शीघ्रता के लाले के लिए उसका

आरम्भिक रूप से पर्याप्त है। यह सब वह व्यक्ति को अपने अपने गुरुओं
 हाथों, सब तरफ उसका चिन्तन होना चाहिए, उसे भी नहीं मना
 नहीं करता। इसकी ही वजह से हमारे नमस्कार हैं हमारे लिए हमारे ही
 जाते हैं, किन्तु उन्हें यह सब पता कि हमारे ही चिन्तन में ही
 गिराई। जिस अध्यात्मिकता की दृष्टिकोण से-कि जो व्यक्ति है जिस वहाँ
 जाता है उसी अधिक अध्यात्मिक दृष्टिकोण से ही होता है। रैण्ड
 का यह कथन मात्र कहना न होकर वास्तविकता है, जिसे उपन्यास का
 पहलक मानकर ध्यान में नहीं आ सकता। वास्तविकता की ओर हम
 ने वह फाल्सी-कृतता है। उसका ही प्रकार फाल्सी-कृतता समाप्त हो
 के विपरीत है, इसीलिए उन पर ही हमें जानना चाहिए। रैण्ड ने भी इस
 अध्यात्मिक-होना की वजह से हमें ही अपना ही वास्तविकता व्यक्त
 की है। यथार्थ ही उपन्यास हमें जहाँ कि हमारे ; उपन्यास का
 जीवन-आत्मा ही महत्ता का सम्बन्ध है और इसी में हमारे जीवन-आत्मा ही प्रासंगिकता
 निहित है। "सोपेता" का ही सम्बन्ध ही जहाँ सम्बन्ध है, रैण्ड हमारे
 वास्तविकता पर प्रकाश डालती हुई कहती हैं- "जिसे उपन्यास और हमारे
 के लेखकों की यह हस्तक होती है कि हमें पता जाता है कि हमारे उपन्यास
 या उनकी कहानों के सभी स्थान (जहाँ), यहाँ कहलाने हैं।" यानी
 कि रैण्ड का यह उपन्यास वास्तविक नहीं यथार्थ है जो हमारे ही गुरु
 भक्ति पर है।

प्रश्नाचार हमारे जीवन का ही विचार में जाता है। उसे एक
 हाथ में धर्म के लक्षण होता है और दूसरे में जादू का। हमारे जीवन
 का विचार होता रहता है। जैसा कि हमारे जीवन में नहीं होते, ही जहाँ
 तो एक जहाँ प्रेम है। सदैव हमारे ही वास्तविकता पर ही ये धर्म

में परिणत होते हैं। उनमें प्रमुख भाग ईश्वर का होता है। ईश्वर वर
 क्षीणमि है जो क्षीण व्यक्ति के वश बनाये रहता है, दूसरों को जमा
 देने से। शोभता जानन्द की हा पीछे टो गनीं ही उनसे समझा गयी
 मही समस्या का रहता मौसो के विशालकाय व्यक्तिव को मही खीदना।
 वह जहाँ भी जाता, जिनसे भी मित्रता-मौसो के सौम्य और मधे
 व्यक्तिव की प्रतीति हमने की मित्रता। शोभता जानन्द का द्वीप इतने
 और भी अधिक बढ़ जाता। मौसो के इस मैसुरा-स्वयं की संज्ञित
 बना करता है, लेकिन अपने सद्व्यक्तियों से नहीं। जबकि होना यहाँ
 चाहिए था कि वे मौसो से अच्छा बर्तें करें। एक रीति के समानान्तर
 पुराने मही रीति काफ़ी से उ वर हीटा फल उबता है, उसके भित्ति से
 नहीं। शोभता जानन्द भित्ति का धुणित कार्य करता है— शोभता
 जानन्द अपना कुछ दिनों तक और जोड़े काम नहीं करेगा। उस रहता बनने
 के विषयों प्रभाव को मही करेगा। एक-एक व्यापक के दिल विमान से उस
 छुल को शया को गीह फँकना है।— देख जलने नहीं है— शोभता जानन्द
 को। भित्ति को काम से नहीं जायी, तबसे पहले रहता बनने का रामायण
 ऐसा भी तो, ऐसा ही। हावा, एक ही तक था। अब क्या? और क्या
 था, तो भी जलता देना ही न वह ज्योति।— हम भूत विचारियों की
 जीवन समझाये ? ²³ ईश्वर ही जलता ज्योति को और भी जलता है।
 मौसो को उपाधिद्वारा कैला गुप्त। देता को ज्योति और लग्न ज्योति
 के लिए विना-वाण को लाते हैं। मौसो और उसका कैला की पीछा दिखाने
 के लिए निरंतर चालयन रहता रहता है। हास्टत के पायित्री और शांत वाता-
 वरण की मष्ट करने में हा उतना हित निहित है। एक मल्लो की दिखाने
 के लिए भी मल्लो का जाता है। इसीलए वह जाने धुणित कार्य के कुल
 संवादन के लिए कुंठा देना के। मष्ट लुका की प्रतीति देकर श्रावता है—

“कूती देवा की मूर्ति, दाह की राखी ली है। वह जानो कुम्हारों को
 ठोक कर लेंगे।” और वह ठोक करती पा है — “गीरा ने री
 रीकर कहा, दादा जी, इसी डायन ने मुझे पकड़कर लीठरी में बंध
 किया था और बिना दादा की उस कुंठा के। मैं अपनी हाथों में मुंह में
 रक्खड़ा डूँड कर ---।” जोमती जानबूझ है इन कल्पित बातों में
 कैला प्रीति है। क्या करे वह ? अपनी निष्ठा में ती विधो को प्रकार
 को क्यों झुंझती नहीं। हास्टल का उदार भातावरण दुष्प्रति ही गया है,
 जोमती जानबूझ है कारण। कैला जिस देवा-माया में है जाया है, वह
 एक प्रेम का जो चोरे-चोरे फैल रहा है। और कैला का मन जो बंट रहा
 है, टूट-टूटकर गिर रहा है। निराशा का अधिकार उ है फा पर आसन
 बसा रहा है, अब वह अपनी कै-एकदम असहाय पाती है, जैसे कुछ नहीं
 कर सकता उसे मैं, कैला को नहीं। किता पड़ती जा रही है, जो डी-गम
 है, इसीलिए “कैला उस से पूछा है। कल्प मुंह में डालने को कहता नहीं
 होता। बाय मा अच्छी नहीं लगती। गीरा के पास जगतास में रंग
 पर बैठो रही। अभी, मुँह की पुलिस बार्ली ने एक ठंड-पैटे एक ठी
 परोशन किया है। हास्टल के सभी नियम-कानून की जोमती अब जानबूझ
 ने ही तोड़ता है और फुलना पड़ रहा है, उसे। एक फाटका और
 लाता है कैला की- गीरा को झुंझू से। कैला का मन भर गया। वह
 जानता-सो नहीं है। अब जानें हैं जैसे जानबूझ और जगतास दिता है नहीं
 पड़ रही उसे। इसीलिए निराश होकर — उरी अपरम स्वीकार कर लेती
 है अदासता में। इसका अर्थ यह कि “कैला गुप्त ने बर्बाद के लिए निर्देश ले
 बाहें छेड़कर और इस ने तेजहों बर्बाद को किया को ? — बार्ली विमेष
 हास्टल की एक कला-निरता कला जाना ? व्यभिचार है कई अड़ई
 को वह मासिकि को ?” और उसको जगतास रानरति को अपना

अपराध स्वीकार करता है। दोनों की पाँच बर्णों का सजा । निर्दोष
 बैसा और रामरति जैसा अपराध स्वीकार करके समस्त जराबक्ता और
 प्रष्टाचार का जिम्मा अपने ऊपर ले लेता हूँ बंधा निर्दोष संघर्ष
 करते हुए जेल में बंद कर दूँ, समर्पण कर देता हूँ। वास्तव में यह हुआ
 कि सतत संघर्षोत्साह बैसा जब यह देखती है कि मित्रों को मान्य हो नहीं
 संपूर्ण व्यवस्था प्रष्ट है, जेल में बाध्य, नैतिकता एवं सदाचार मात्र
 "हो - पोस" बनकर रह गयी हैं, तब बैसा जैसी सदाचारी एवं नैतिक
 नारी की यहाँ जीन जीने देगा ? वह अपने प्रष्टाचार के मोर्चे पर खड़ी
 रहती - कानि बिहारो और सरफाराज की कौन धृष्टिगत व्यक्ति जानें
 और उसे लुटें, अपमानित करें। मित्रों को जानें कि संग्राम के दौरान बैसा
 की जमा जंगल-जंगल और कमा विभावली - नारी का सर्वस्व छूटा जाँगी।
 यह हम जानता रहता, कौन नहीं रीति समझता । सब प्रष्ट हैं, प्रष्ट देश है
 वातावरण में वह नहीं रह सकती । स्वाधीनता के फलस्वरूप यह प्रष्टाचार
 और भी अधिक बढ़ा है - बढ़ रहा है - बैसा के निराला होने का कारण
 स्पष्ट है, वह पड़ता है, यहाँ है दुश्मनो काबादो, यहाँ है दुश्मन
 काकादो समाज को खरौता ? --- सच्चाई नामक गुण मनुष्य के हृदय
 से धीरे-धीरे लौप हो रहा है। --- स्वाधीनता के लिए जादवी जिता भी
 जहाँ पर अपनी आत्मा की देव रहता है। --- जहाँ जीवन में कौन अवसर
 नहीं, बाधा नहीं, विरवात नहीं । चारों ओर व्यर्थता का एक राय है।
 बैसा व्यर्थता के वातावरण में बैसा का विश्वास छित जाता है और
 निराशा के अन्तर्गत वापरण में वह बैसा फूटते चारों ओर की स्वीकार कर
 लेता है । बैसा जैसी सतत संघर्षमय नारी का संपूर्ण विश्वास टूटता है,
 फिर, जेल में रोज़ उसकी विशाल खिन्न की हत्या कर देती हैं। अपराधियों
 की दण्ड न दिताना, बैसा-रामरति का अपराध स्वीकार करना --- रोज़

के केंद्रों में बँधे होकर रह गया और भारतीय जन-गण-जन की स्वाधीनता के नाम पर मित्रा सौमित्र, दमन, अराजकता, अत्याचार, छूट, पाठ-पठोपावाद, धुणित राजनीतिक माटण, घरा का अमानवीय फुट-बाँट, कुंठ, संघास और जालियाद एवं प्रांतियता की मानकानी-वन । जम्हा-जमादने की दुहाई देने वाले कद्दूधारों राजधानी में छिपकर बैठ गये । एह-उपभोग में लग गये । प्रांतियकारियों के हाथ और रथान पर जालिया पीत-कर बने पाँ-बाप एवं हाका की महाक्रांतियारी और देश का अपर शहीद होने का धुणित प्रमाणपत्र दिया जाने लगा । राष्ट्रपिता की लीगटो के टुकड़े-टुकड़े कर बाजार में नीलामो करनेवाले ये वर्तमान-महाधारी स्वा-धीनता का अर्थ हो मूल गये । स्वाधीनता है उद्देश्य है हमला नहीं मरीजार नहीं रहा । अब उद्देश्य का ली बस यहा कि अपना घर किस प्रकार मरा जाये और किस प्रकार सौमित्र के नयी-नयी बानों का बार प्रसारित किया जाये । सौधदान को छया करनेवाले ये राजनेता संपूर्ण मानवीयता की हा निगल गये ।

“पुस्तक” (१५६५) रंगु का इसी आधार-भूमि पर लिखा गया उपन्यास है। “पुस्तक” का मूल आत्मा स्वाधीनता-प्राप्ति है जो वरु वरु बाद की अराजकता और आपसी हानि-भाव की कुटिल अमानवीयता है । देश की परिस्थितियों ने जिस प्रकार की कुरबट ला है और जलियान की भावना से संगठित होकर यह लड़ाई लड़ो गये, परिणाम उसी विपरीत निक्से । स्वाधीनता के बाद परिस्थितियों की विजयता का गलताना इसी का परिणाम है । क्रयिक संवेदनशाल और मानवीय दृष्टिों के लिए सतत संघर्ष करनेवाले व्यक्तियों की कूटनी उसी पथका ला । जिन स्वयं की साकार करने के लिए वे जस्ट मौल रहे थे, उनकी जसी सामने हा उड़ता

देश विभक्त हो उठे। स्वायत्त भारत के ये बीसह वर्ग मानो बीसह
 वर्ग बन्धन है। ---बीसह वर्ग हुए स्वराज्य है। --- काल है कल की
 बात ही। कुछ को याद ताजा है जमीन भी। दी-दी बार बाग फुल
 हो चुके हैं। देश में जो-जो काम हो रहे हैं। जल, गन्ध, पानी, ताप,
 वा०००००००, हवा००००००००, सौरज जलमोहणर, हवा०००००, पानी-
 बहुत पारे "जी" वाले लक्ष्मीका प्रकृत हो गया है। हर देश को लक्ष्मीका
 राजनीति में दाखिल हो गया है और प्रत्येक स्थल पास गण्डूराहरी है
 सपने देखा है- सति-काल, उठते- बैठते किसी बागिची बाग या गुणमान
 करता है। --- बाग फुल सामने हैं। प्रत्येक साधोपारो हम्मोदवार है और
 टिजिटिका केवो ? जिस देश के जीने-जीने में पैरों बाधे जा रहे हैं। ---
 समय पर बर्णन नहीं होता। जलम में बाढ़ जाता है। कतुओं की परिभा
 नष्ट हो चुके हैं। छुज-बाध तारों का भी कोई विश्वास नहीं- जिस
 दिन जलमज जलना बंद कर दें, कुछ कहा नहीं जा सकता। जीने रहता है,
 देश जाने बड़ा है। जीने-हम योजन-मर पावे जिसका हुआ देखा है।
 जीने-ज्या प्रत्येक हम्मोदवार बादमी यही अनुभव कर रहा है कि हम नहीं
 थे, यहां-बाद पावे जिसका रहे हैं। यद्यपि विकास हुआ है, हो रहा है
 लेकिन यह असमान विकास है। जब तक हर व्यक्ति का समान विकास नहीं
 होगा। तब तक यह जाजादा पीला मात्र हो रहेंगे। समाज के एक भाग
 की तो दृष्टि को सुता हट है और दूसरा उसकी विरोध में बूँ करने का भी
 हिम्मत नहीं रखता, ऐसे विकास से क्या लाभ ? असमान-विकास के साथ-
 साथ अन्य कीविरोध भी उभर कर सामने जाये हैं- जा रहे हैं। बाग
 स्थिति यह है कि जलमज एवं प्रांतिय भाषनाओं का जहर हलना फल
 गया है कि अपने देश में रहकर भी व्यक्ति यह अनुभव करता है कि वह किसी
 पराये देश में रह रहा है। यह परायेपन का पीप हो व्यक्ति मन की

जाति की हूँ, इस जाति के कारण देश का प्रत्येक सकेत नागरिक यह सीकता है कि वह जमा भा जुलूस में भा रहा है। उस जुलूस में जहाँ वह शरणार्थी है जमा भा। वह अपने हाँ पैरों में शरणार्थी है, यह कैसा विह्वलना है। रैण्ड इस उपन्यास का भूमिका इसी मनः स्थिति के बारे में कहते हैं कि "जिन्होंने कुछ वर्षों से मैं एक अद्भुत प्रेम में पड़ा हुआ है। दिन-रात, सोते-बैठते, हाँते-पाँते मुझे लगता है कि एक विशाल जुलूस के साथ भा रहा हूँ। अविराम। यह जुलूस कहीं भा रहा है ये लोग नीम हैं, जहाँ भा रहे हैं, क्या बाँकी हैं- मैं कुछ नहीं जानता। इस महाभीषास में जहाँ मुझे ही निश्चय हुआ नारा - मुझे नहीं सुनाई पड़ता। कारों और एक बन्दर मँडरा रहा है, घूँस जा। -- इस मोड़ से निरंतर राजपथ के किनारे समुच्चित कात्तनों में लड़ा सीवर जुलूस की देखने को देखता को है। किन्तु इस मोड़ से बलवान होने को गाम्भीर्य फुलमें नहीं। --- मेरी इस उपन्यास "जुलूस" पर मेरी इस अद्भुत मानसिक-निकार का प्रभावित अवलोकन फुल लोग।" रैण्ड की मानसिकता का यथेष्ट प्रभाव इस उपन्यास पर है और इसकी फुल आत्मा भी यहाँ है।

काल के बंटवारे के समया फुल-काल, पाकिस्तान (जब जांगला कैल) की दे दिया गया। परिणामस्वरूप वहाँ के हिन्दू शरणार्थी बनकर भारत में जा गये। जहाँ ही शरणार्थी इस उपन्यास को क्या का सुझावार बनती हैं। झापुर जिला मेमनसिंह के इन शरणार्थियों की गोदियार गाँव के निकट कहाया जाता है। राज्य के पुनर्वासि उपमन्त्री मुहम्मद हस्मादल नवा के नाम पर इस जालीना का नाम रखा जा रहा गया है। यहाँ जालीना का नाम रखा जा रहा गया है। यह जालीना परता जमीन में है। जालीना जालीना के सैकड़ों- पन्द्रह निवासों एक ही अला और गाँव के रहने वाले हैं। "पकिष्ठा" नामक पात्र की दौड़कर समा निहरी जाति के लोग हैं।

सत्तापीय, बाँदू, नमः छुड़ और केवले । यमीरवास वारिवाल ने जाया
 है और शारदा बचने और माखन दोनों अच्युत जिला ने निवास है -
 बैलिया केम्प में गुनापुर वालों के फल में बाँदू मिले-इन्हीं परिवार ।
 गुनापुर गाँव की स्थिति गुनापुर जैसी ही है। यहाँ पकली माँ मिलती है
 और बान माँ । बैला ही भिट्टा है, बैला ही सूरज, बाँदू और लारे,
 जिनमें, लोग हैं नियरों की घरता से अपने को जोड़ नखों का रहे हैं ।
 "जिस दिन पवित्रा नहीं रहती है उस दिन बैठकी में ये लोग यहाँ के
 निवासों - यहाँ का भरो छुँ भिट्टो और यहाँ के सूरज-बाँदू-लारे तक
 को निम्नता करते हैं बधाकर । -- २ बैला सब मिले जाऊँगी । पवित्रा
 की इस हसी एक बात का बहुत महत्त्व है-- गाँव के लोगों का यहाँ
 को भिट्टो से माँद करी नहीं ही रहा । यह कौन-सा दरवाजा है इन्हीं
 बिल का जिसे सीतले के लिए पवित्रा खुँ लटकायेगी जिस दरवाजे को--?"
 इस सम्बन्ध में जोड़ पाने का एक कारण यह भी है कि गोमियर गाँव
 के निवासों उन्हें अपने देश का मानते हैं नहीं । वे हमेशा उन्हें पाकि-
 स्तानो कहते रहते हैं और अफवाहों के माध्यम से पूणा का भोज लीते
 रहते हैं । इसी पूणा का दोवात दोनों को आपस में मिलने नहीं देता ।
 विभिन्न प्रकार के आरोपों से न्याय निवासियों की जखल करना
 गोमियर गाँव के निवासियों का दिनचर्या का कार्य बन गया है । बाँदू जब
 गोमियर गाँव में भिस्कुट बेचने गया तो चौधरा बाबू के बेटे ने उसका
 विरोध करते हुए कहा कि "इसके साथ का भिस्कुट साजोगी ? ये लोग
 गोमांस खाते हैं । --- सभी को मानते समय गोमांस खिलाया गया है
 पाकिस्तान में ।" इस प्रकार का अफवाहों ने दोनों को दूरी और मा
 बढ़ा दी । एक-दूसरे के प्रति पूणा और रोजों का भाव निरंतर बढ़ता
 जा रहा है। लेकिन कब तक ? अंत का वहाँ कोई संभावना दृष्टिगोचर
 नहीं होता-- न ही सज्जो कमा भी इस हाल में तो । इस जगहों में

समझदार और गंभीर प्रकृति का मात्र पवित्र है। पवित्र कुमायूर के समझदार का लड़का है- देखने में झंझुल किन्तु गंभीर, साधा-सादा और निष्कपट। पवित्रा सदैव चाहता है कि ये लोग एक-दूसरे के निकट जाएं। वह समझता है कि जब, तब हम एक-दूसरे के निकट जाएं भावनाओं की नई समझौते तक तब इस प्रकार के विरोध को जान सड़ता हो रहेंगे। इसी जान में जब वह हम नष्ट होते रहेंगे। पवित्रा श्रीमन्मन्त्र को सर्वमान्य मानता है। सभी भाषाओं में पवित्रा का विरोध करने का साधन नहीं, कारण कि वह अपना सुविधा से अधिक औरों के सुविधाओं और हितों का ध्यान सदैव रखता है। वह इस विद्या में प्रयत्न करता है। यानी कि देश का पूरा मंत्र यह है कि झंझुला-झिझुरी को यह जो मानसिकता है, यह जो बोध को बाध है, इसे पाटना आवश्यक है। इससे प्रतीत ता का भावना हो अधिक मात्रा में विकसित होता है। यह प्रतीतता राष्ट्रीयता की नष्ट करता है। राष्ट्रीयता एक भावना-मात्र है, भावना की कला को ठेक लग सकता है। वह कभी भी टूटकर छिन्न हो सकता है और जिससे छेड़वस्तु की पुनः रचना कर उसे पूर्ववत् स्थापित करना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। इसलिये इन झींटे-झींटे मतभेदों को बाधना। लोहाड़ के माध्यम से भूतकर हमें राष्ट्रीयता का भावना की सुदृढ़ करना होगा। इसी में देश का हित निहित है। आज पूर्वाश्रित के सांभावितोत्पन्न तमाम प्रदेशों को यह धर्मकर स्थिति है। जस में कितने तान बर्बादों में जाँदीलन चल रहा है। यह जाँदीलन यद्यपि विदेशी-नागरिकों को जानने के बहाने चल रहा है, किन्तु वहाँ पर लिखें यह नारी कि 'भारतीय कुंहे हैं' एवं 'हम स्वाधीन होना चाहते हैं', क्या हैं? भारत के लोगों को दुःख कहा और स्वाधीनता का नाम करना प्रयत्नावादो प्रकृति है, जिसे सपना रहते

न दबाया गया तो स्थिति निरंतर बिगड़ती चला जाएगी। " मित्रों
 किट्टीहो लाल हँसा का सक्रिय आन्दोलन " पुष्पस्ताकाया - आंदोलन को
 बड़ा हो है। तात्कालिकता से बातों असफल होने पर उन्हें देश से निष्काशित
 कर दिया गया है, लेकिन का देश की मायमोहिक्ता और प्रमुखता की
 जाहल करने वाले देशद्रोही को यहो सजा है। नहीं, कम नहीं। फंजाव
 में तात्कालिकता का भाग और सरकार को राजनीतिक - लाभ हेतु बुझा का
 ऐसा देशद्रोही शक्तियों को बड़ावा नहीं देता। यह स्पष्ट है कि अमेरिका
 एवं अन्य देशों को " पर - बिगाड़ " देशों से अपार सहायता मिल रही है,
 मिलती रहेगा। हम लोग जो बातें बड़े रहे तो देश संतुष्ट हो जायेगा।
 इसी से विरोध हेतु रण, पवित्रा जैसा त्याग और संघर्षात्मक नारा को
 लाते हैं।

पवित्रा कालीना और गोडियार में जैसा ऐसा है जो मंगला -
 विचारों का अंतर नहीं मानता। जो लोग अपनी संकेतों-विचारधारा
 के कारण ऐसा मानते हैं, तो वह प्रयत्न करते हैं कि इस बिना प्रचार को
 संकेतों विचारधारा को त्याग कर हम एक-दूसरे से मिलें। पवित्रा के इस
 विचार का हमें जाहल विरोध होता है। पवित्रा के अथवा प्रयत्नों से कालीना
 में एक स्कूल सौलतों की अन्तर्गत सरकार से मिल गया है। बूँद गोडियार
 गाँव में कोई स्कूल नहीं है, जो: पवित्रा चाहता है कि गाँव के लड़के को
 यहाँ पहुँचें। साथ-साथ पहुँचें से बच्चे एक-दूसरे के अधिक निकट जाएँ, एक-
 दूसरे की अच्छी प्रचार समझ लें। गाँव और कालीना में के विचार
 लोगों का जाना-बाना होता, जिसने जाफा पैत-भिलाप में प्रार्थना का सार:
 का निवारण हो जायेगा। इसी स्कूल की भावना की तैयार पवित्रा गोडियार
 गाँव गढ़े। वहाँ उसका विरोध होता है और विरोध का आधार विचारों -

कंता । पवित्रा के प्रस्ताव पर राधिका जस्ता है- "नहीं ममो है
 तिर नहीं । यह सिर्फ बाप लीगों के बच्ची है तिर तुला है। पुलिस,
 की ? तो मुन्नी- बाप लीगों के स्कूल में सब कंता बाल-बाल, बोलो-
 माता पढ़ाया सिखाया जायेगा । वह पढ़ाये हम लीग पढ़कर ज्ञान करेंगे
 जिससे कि सभी कंता हों ज्यों और बाप लीगों के तरह "रिफूजो"
 बनकर उस ज्जिना से उस ज्जिना में "लीफ़ो" लायती रहें । -- इस गाँव
 का बच्चा भी नहीं जायेगा बाप लीगों के स्कूल में । -- पवित्रा सु-
 न्नाती रहने । वह बोलती-- यह जिसने कह दिया है कि उस स्कूल में सिर्फ
 कंता पढ़ाया जायेगा ? बल्कि बालीना के बच्चे हिन्दो में ही सब कुछ
 पढ़ेंगे । कंता पढ़ने वाले की मा हिन्दी-मुन्ना हीगा । ³⁸ कालीनों
 में भी पवित्रा के इस ज्जम का विरोध होता है- "जिना जलने बहिष्टो
 का बैठक में इस बार पवित्रा के विरुद्ध कड़े दरखास्त पड़ी गया । और
 दोनों शिकायत पत्र गुप्तनाम । एक पत्र में कहा गया है, "पवित्रा केना"
 बालीनों-मेन्कर के पद के योग्य नहीं । -- उसका निमाम ठीक नहीं ।
 कालीनों के बाहर के लीगों से हैमेल बढ़ाती है। --- बालीनों के लिए बंधू
 वु. स्कूल में कालीनों के बाहर के बच्चों को भर्ती करवाती है। -- दूसरे पत्र
 में हत्याम लम्बाया गया है। "पवित्रा" को गौरीबास का लड़की लम्बा
 का लड़को "हिन्दुस्थानी" से प्रवाने के लिए तुला है। -- वह कहती
 है, गाँव वाली के साथ रीटो-नेटो ही बहुत जगहों है। "यह बड़ा
 विहमलता है कि पवित्रा के इस कार्य के लिए जहाँ, उनका भुरि-भुरि प्रशंसा
 का जाना चाहिए था, वहाँ उनका विरोध और होता है। पवित्रा का हस्त
 मारा है, वह अपने कर्तव्य-तथ से दृष्टि वाला नहीं । जिस बात की वह
 उचित समझती है उसे बात विरोध के बावजूद मान लेती है। यहाँ तक

और हास्यास्पद स्थिति यह है कि ऊपर से मालीना से सफेद लीन एक
 लकड़ा के विरामों में किन्तु जब उन्हें लकड़ा टकराती है। गोपूरा गांव
 के निवासियों से तो वे सम्पर्काला करने में पाई नहीं हटते। संघर्ष का
 हरिप्रसाद यादव ने शायद के विवाद को लेकर सभा सम्मुख में ~~बैठकर~~
 विवाद का विरोध करने हैं, किन्तु जंदर हा जंदर बीरा जिसे सम्पर्काला
 कर सम्पर्क पा कर रहे हैं। बालाचंद ने नया घोला पल्लु बना है, जादीन
 ने पर से। धान, चवल और चूड़ा-बहा ले जाया है। ^{३६} बालाचंद
 शारदा अपने पर जारी लकड़ा हुआ बहता है - "शारदा अपने परिवार,
 हमने तो ग्रेम से भी दिया है, ले लिया। लेकिन जाकी सम्पर्काला विधि में
 जिस बात के लिए सम्पर्काला लकड़ी लिये हैं। बालाचंद को मां बीला -
 बिट्टू को बाबा गांव से "मुझ" मांग लाया था-- एक दिन, ^{३७} "।
 और बिट्टू संघर्ष के विवाद का समस्त विरोध कर रहा है लीन पर
 मा संघर्ष को चाहता है- "वह जानता है कि बिट्टू जसम में क्यों कांतु-
 प्ट है। --- जसम में उसको स्वर संघर्ष पर है। दु है हो। और पर
 "बहु" उसको और जसम देखता है नहीं जसम उठाकर। -- संघर्ष को मां
 सम्पर्काला है बिट्टू नेवते। नेवते से शायद किसी ही फला ^{३८} "। सुनीबाबू
 को इस प्रस्ताव के फायदे विरोध हैं। किन्तु उन्हें भी है वह बात ही
 जाता है कि हरिप्रसाद भिन्नस्टर शिवनारायण बाबू का भांजा है और
 बहुत बड़े कारखाने का बेटा है, जिसके यहाँ से हर साल वे पास और मांस
 का मांगना करी जाती है; विरोध का फल सम्पर्क करने हैं। हरिप्रसाद
 यादव को देखकर जसम बीलता हा भावनी धंद ही गई। सुनी बाबू ^{३९} को
 स्पर्काला सुनी पर जब लकड़े बैठकर सुनी और जसम मरा जा कर रहे थे,
 उठ लड़े हुए- बाधने। बेठी-- हम सम्पर्काला कि बीरों द्वारा यादव है--
 बैठका सम्पर्काला होने के बाद सुनी बाबू ने हरिप्रसाद यादव को स्पर्काला में

फुलाकर कहा - वापस आना चाहते हैं तो जल्द। हा कर लोचिए ।
 शीघ्र इस काम तितना जल्द। हो।--- और आलोचना के लोग पीड़ा
 दुःखमूर्ता रहे हैं सो इन लोगों की कुछ रायों से बाधित न हो । समर्थ ?---
 हमने तो पीड़ा देहकत किया है। और अब तक हादा न हो पाया, देहकत
 करते रहेंगे । ³⁹ स्व-स्व कर रेणु सभी प्रभुत्व सदस्यों के बारे में बताते हैं
 कि जिस मुँह से वे पवित्रा का विरोध करते हैं, वही - दुःख उन्हीं काटों
 का समर्थन करते हैं। इस स्थिति में जीव समाज-जीवा का सम्मान है। अपने
 लोग हा जहाँ जाय नहीं देते, वहाँ बाहर के किसी व्यक्ति से भी उम्मीद
 का जा सकती है ? इसीलिए पवित्रा कालीनो-वैष्णवों के त्यागपत्र दे
 देता है। यह त्यागपत्र पवित्रा को भावुकता का धीक है, जिससे चारणा
 वह निराश हो जाती है। इस निराशा के अवसर पर रेणु का वास्तव उनका
 स्वयं को भावुकता का निराशा पर हावा होता है और पवित्रा को उसी
 निराशा को सूरत पाकर नरक बर्ग में विसर्जित पड़ता है। भूकाम्यो पवित्रा
 एकदम छिन्न उठता है, भस्म उठता है- संपूर्णता के साथ । नरक से अनामक
 भित्ति पवित्रा पुनः जाबत हो उठता है- " मैं जो नष्ट फिर । मैं जैसी
 नहीं । मैं निस्संग नहीं । मैं कहां निजने मैं नहीं । मैं एक विनाश परिवार
 को पैदा हूँ -- इन आत्माय स्वयं के बीच पारस्परिक सहानुभूति और
 सखीमिता की फिर से समवाजना है। --- अपने नाँव समाज में- लोगों
 के बाराम हृदय में-- आनंद मुहुर तब फिर भी भरना होगा ।-- पीछे
 कुछे बोजों का उठार करना होगा ।--- अविराग, अजन्मोपन, उदासनता,
 अकेलापन, आत्मकैन्द्रिकता, विच्छिन्नता की दूर करने पूरी-पट्टी लोगों की,
 अपने लोगों की, वस्तु सीटार लाना होगा । -- मैं जैसी सा नहीं, इस
 समाज में विलीन कर रहा हूँ। लोक संस्कृतिकृत समाज के कठोर के लिए। ⁴⁰

पवित्रा तो नरक बर्ग की पाकर जो उठो, जिस उठने के साथ
 जो उठने साथ जाये है- स्वाभिमर् में, पीड़ित हैं। पर हींदु का भाव रहे हैं।

बाफ़ा देखा और इन्हीं ने उन्हें इतना ज़ोर से धर दिया है कि वे अब निराश्रित हो गये हैं। गौड़ियर गाँव वाले उन पर दुःखी तरह से आँक बपाये हुए हैं। प्रांतियता को इस संकटापी घाट में व्यक्ति ने व्यक्ति के आकांक्षान्वयों में दरार डाल दी है। वे एक एक दूसरों के रक्त से प्याये हैं, जिसका परिणाम तो बड़ो विषट् होता है, "रेखिया और नारी ने फिर से सरला को ताश का सिर फाड़ दिया है, ताश ने।" ^{४१} और "कालाकांद को जो जोली - काला को प्रति-प्रति बाजबल न जाने कैसा हो गई है। -- कहता था, कौन हम लोग को मुझ-बैलाहा में जाकर रहे। फीरो करने वाले लड़कों ने साथ विरट् चिल्लाता हुआ जाया - अब इस कासीनो में जीव नहीं रहेगा -- दिन बहाड़े, यहाँ आदमी का जान कौन बर्बादगी किसी कि।" ^{४२} चारों-चारों तरफ़ों का भाग रहे हैं - प्याये जा रहे हैं। इस सार्वजनिक न देठा पाने का जून कारण उग्र प्रांतियता है। एक-दूसरे को भावनाओं का तिरस्कार करते हैं। विहारा समझते हैं कि कौनसी यहाँ बेकार में जा गयी और हमारे हितों को बाँट चुकायी है। एवं कौनसा जमा तः (बीदश सक्ल बाद मा) यह नहीं समझ पा रहे हैं कि वे मा अब इसा कै के नागरिक हैं। वे हमेशा अपना देश, अपना देश करते रहते हैं। इसीलिए वे नवोनगर को पार्लो ने अपना सम्बन्ध नहीं तोड़ पाते। प्रांतियता को इस दायार के निमित्तता के साथ लड़ना होगा, वरना इसा तरह का समस्या आये-दिन बना रहेंगे और देश का सार्वभौमिकता के मा संकट में फँस जायेगी। नवोनगर और गौड़ियर गाँव के इन विनाश सम्बन्धों ने ही अनुभव कर देश को वर्तमान परिस्थितियों का आकलन करना होगा। ताकि समस्या-समाधान निकाला जा सके।

गौड़ियर गाँव पूर्णियों जिले में स्थित है। इसका जमा नाम गौड़ो टाँलो से हुआ - जहाँ गौड़ो (महत्ता नारने वाला जाति) लोग रहते हैं - गौड़ियर। गौड़ियर से गौड़ियर। ^{४३} गौड़ियर गाँव में पन्द्रह घर मेधल,

चार परिवार राजपूत, बांस पर ग्वाले, जाठ धानुक, तिरह पर गौड़ा,
 विन्दु सभी सुखी और सम्पन्न तातेवर गौड़ा । तातेवर मो बहलियाँ का
 व्यवहार करता है। गाँव का यह बड़ा विविध स्थिति है कि निम्न जाति
 का तातेवर लक्ष्मी वाला है और अन्य जातियों का स्थिति अच्छी नहीं है—
 दो पर र अपूत, मोतिल माहें हैं— दोनों केतो करने के जलावा फूँठो
 गवाहो देते हैं और लठ्ठ का काम करते हैं । डोय धा ग्वाले हैं। विन्दु न जिनो
 के पास एक भैंस है और न गाय । जैतो-मकदूरो के सिवा और लग कर नहीं
 हैं, देवारी । जिया के पास एक धूर मो जमीन नहीं। धानुर्गों का जो वही
 हाल है। गौड़ियर गाँव का लक्ष्मी तातेवर गौड़ा के घर विराजता है। जमो
 टीले और सभी जाति के लोगों की तातेवर गौड़ा को दुपादृष्टि पर भरोसा
 रहता है। इसलिए उसने दासान पर गाँव और हलाके पर के लोग मुँहलगा-
 थियो । करने के लिए जमा होती हैं। तातेवर का यह स्थिति माँ पाँच
 बर्गों में है। ऐसा ही नहीं करते गाँव के जहाँदार ली पंडित रामचन्द्र जीधरो
 के और ये सभी मुँहलगाये की जाय तातेवर के दासान में बैठे हैं, सभी पंडित
 का जो थोड़ी थोड़ा जिया करते थे । समय बदलती देर नहीं लगता, पंडित जो के
 बड़े लड़के कामदेव ने उनके घर का नाश कर दिया । कामदेव ने समय लौटने
 वाला मुहली मुहलगा के साथ बहारवार लिया । ऐतन-जैस जता, पंडित
 जो की जायके स्थिति निरंतर गिरती गई। अपने पुत्र की मजाने के लिए
 पंडित जो ने की के क्मा चिंता नहीं की, इससे लाभ हुआ है तातेवर गौड़ा
 की—“जीधरो के घर जो जो गारो सप्या। धोरे-धोरे तातेवर गौड़ा के घर
 में जता गये है। जमान, पोखरी, बाग-जमीने और जैतो - बड़े मुहदुर्गों में सारा
 व रैल - कथका गिरवा के रूप में तातेवर गौड़ा ने लिख लिया।—पंडित
 रामचन्द्र जीधरी जहाँ पे ५ जमान और दो गाय लखन और कर रहे हैं। ४५

पंडित जो है मुझसे तो सबसे अधिक लाभ हुआ तालेवर गोढ़ों की। तालेवर निरंतर उत्पत्ति कर रहा है। वह जब इस इससे का सबसे अधिक लफ्फा वाता है, लेकिन लोगों की एक प्रण है कि वह नारा लफ्फा पकड़ो है का-पार से रकबित किया है, असत्य है- 'मिफा' पकड़ो का चिह्न है तालेवर ने फौज नहीं बना दिया है। तालेवर गोढ़ों अपनी जमाने का बहुत फल 'जाफा-गुणा' था। --- फल-प्रेत ; दिन-पिलावा, दिन-दानव जिनो की मा. हवा लज बाय- तालेवर गोढ़ों के हाथ की एक छुटकी फल गड़ती हा बाय-बाय नरने फल मागते थे। --- छुटकी- सरहदा में एक ताप बार डालनों की नंगा नधाया था- तालेवर गोढ़ों ने। मरी हुए लड़कों की चिता में के बाद चारों डालनों का 'गुणा' सांकर अपना कुनीटो में रख दिया था। फलान का लुड्डा जिके पर में गाल दे। उसके पर में सेवा 'पानरमला' लग जाता था कि एक हा सात में सब हाहाहार साक। --- यय, सामाजिक कुलातिगों, जय-विशवासी और शीजाणा के माध्यम से मन हकट्टा करता है तालेवर गोढ़ों। वह उसे गोड़ 'नहां' देखा कि तालेवर में ता-सा जगुणा हैं। जब तो उसमें सभी गुणा विधमान हैं क्योंकि उस पर फौज है और फौज सभी छुटकी पर आ जाता है। जिके पास फौज है उनमें सात करोड़ हैं, गोड़ 'नहां' कहता, न कहने को हिम्मत। रीण, यह स्पष्ट का 'ना' चाहती हैं कि यह छुट्ट गोढ़ों जिस प्रकार से घनपति मन जाता है और निरंतर शीजाणा करता रहता है। घन जाति की मा. दिया लेता है। जिके ने अच्छे पंडित तालेवर के पर जाते हैं और 'ना' छुटकी 'करे' हैं। ज्याराम राजपूत होकर मा. पर पकड़ने में लज्जा का अनुभव नहीं करता। जाति जब तक है, तब तक व्यक्ति के पास फौज नहीं, फौज होने पर जाति मा. उरुव ही जाती

है। ज्यरास ने पैर फड़ल लिये लोढ़ा के "पैर" में ही रीझा। जिस तरह
 "लेवट" ने राम जी का पैर तब तक नहीं छोड़ा था। जब तक कि पैर का
 पल्लारने - में जायगा पैर पलायन। बूले में जाय जाति ? गुणों में बूझ
 क्या जाति है। ^{४७} और गुण जो हैं वे किसी दिने हैं। तालेवर मन्त्री
 निरुद्ध जाति है, गौड़ियार का। शराब पीता है, अपना पुत्रवत् से जमाने
 सम्बन्ध हैं, जीता, जति-गुणित और जमाने में समय में बहने के लीनों
 का शोभाण करने में नहीं हिचकता, रीसे तालेवर में गुण दृढ़ता है ज्यरास-
 सिर्फ एक गुण उन्हीं पास लगता है। पंडित रामचन्द्र बोधरा रीझा के
 कारण गांव में तालेवर के द्रष्टाचार का डंका पीटते हैं, जहाँ मा जाते हैं
 सर्वप्रथम तालेवर की जनाति का व्याख्यान आरम्भ करते हैं। पंडित जो का
 बाणाय- बुद्धि काम कर जाता है और तालेवर के विपक्ष वातावरण में
 सोमा एक मन मा जाता है। तालेवर इस ग्रहम बस्त्र में बच्चे के लिए गांव
 की दावत करता है। गांव में मौजन हो सम्मान देता उपाय है किसी लीनों
 की जाने बहुत विता जा सकता है। तार्थ जाने में पूर्ण गांव के लीनों का
 दावत। यहाँ यह द्रष्टव्य है कि रीणु के "धेला" जितने का मही भी अपनी
 गौड़ियार प्रतिष्ठा को प्राप्त करने के लिए दावत का आयोजन करता है और
 सफल भी हो जाता है। इसी प्रकार तालेवर भी सफल हो जाता है-
 रात के तीसरे पहर में मौज सरम हुआ। ऐसा मौज गौड़ियार गांव में क्यों
 नहीं हुआ। गांव के लीनों ने पक्षी बार फुलाव कहा है इसीलिए पट्टारों
 ले-लेवर बाँटें कर रहे हैं। ^{४८} गांव वाले प्रथम हैं- तालेवर से। तालेवर
 के समस्त दुर्गुण फुलाव का गांव में और स्वाद में दब कर रहे हैं। तालेवर
 शोभाण के कल पर एक दिने नये मन की लिए तार्थ जा रहा है। उसका
 साथ देता है ज्यरास। ज्यरास जो तालेवर के लिए लगाने लगता है।

तालेवर को यह सम्पत्ति तार्प में भा गया। वृत्तों में गांव के लोगों की बाद में पाया जाता कि तार्प या तार्पों में की महिलाएं भी थीं। गुणवत्ता और सिंगारी। --- गांव में जिन्ना की फा नहलें लगने दिया और की-दी और त की तारथ करवा लाया। --- पुरा में समुद्र-स्नान के बाद तालेवर गौड़ी ने "कंठ" पढ़ी है कहा था - समझी ज्याराम। अब, जब यहाँ किन्ना "सम"। इससे बाद अब किन्ना रहा है की "प्रति" नहलें। अब "लंगेटा" कम। ^{४५} ऐसा समय न जाने तालेवर किन्ना बार से कुल है। स्पष्ट तराई में किन्ना बनाप-रनाप मन उसे वहाँ के लेने देता है। हर समय वही स्थिति। गौड़ियर गांव गंदगा और भ्रष्टाचार के बीच में फंसा गाँव बन रहा है और तालेवर उसे ले रहा है- धर्म को आहूत में। वास्तव में, धर्म एक ऐसा जमीन वस्त्र है कि जब सभी जस्र मूठे पड़ जायें तब धर्म जस्र का प्रतीक करें, निरिक्ता बन जायें। तालेवर बड़ा करता है। अतिवृष्टि के समय तालेवर का जस्र धर्म वहाँ हुए जाता है और वह तालेवर की हर मन्त्र हाथ में माला लेकर बैठा रहता है- निधन और निरोह लोगों की इन माव पर ध्यान के रहता है "तालेवर गौड़ी का मिल कर रहा है। वास्तव में वह करने गौड़ाम में जने हुए ध्यान को कूट रहा है- धूने दाम में, बावत किन्ना का यह समय है। ^{४६} अब "समा" को जाहजों पर कम्प-भर पानी। लेकिन तालेवर गौड़ी इस वैश्व प्रतीक से भा कागदा उठायेगा। इस बार, की-बारह। --- पाना उन्हें "वज्र" गिर, मुख्य ही, जस्र पड़े वज्र बाढ़ जावे - केवलों का बाँदा है। गहना-देवर, गाय-देव, जमान-क्यक लेबर कई रुह पर लफ्फा गये देगा। इस बार गौड़ियर गांव की पुरा जमीन तालेवर के पैर में कसा जायेगा। --- तालेवर के हल जास्मान में कस्ते हैं। ^{४७}

जासमान में हल चलने का समान आधार- कृष्ण-हीनण । 'कृष्ण' का यह तात्पर्य एक ऐसा प्रतिनिधि पात्र है जो समाज में ग्राम-विकास की जलद की जगह पर भर रहा है। ऐसी तात्पर्य को प्रकट करता है। यह कहना चाहते हैं कि गाँव का वैतुष्य तात्पर्य की प्रष्ट और पतिवर्ती लोगों के हाथ में है, जिससे वे का उद्धार होने का संभवता-संभावना हो नहीं है। तात्पर्य का हीनण सत्य है, क्योंकि समाज में ही उद्धार की संभावना है- कहां मतदाता प्रष्ट में ही गाँव और प्रजापति का पूरा आधार मतदाता है। मतदाता तात्पर्य की प्रष्ट लोगों को देना है सु-विचार है। समाज में तात्पर्य को परम सुरक्षित है।

हीनण का हीन बहुत बुरा होता है। किन्तु यह तो गाँव के जासमान उठा में चरफिनी को तरफ घूमता रहता है। पंडित रामचन्द्र जीधरा को तारी समझता तात्पर्य 'गिरवी' रहती है। उनमें ही कामदेव जीधरा ने उन्हें अवतिष्ठित कर दिया। अब वही कामदेव तारी का, गाँव पंडित का ही समझा रहता है। पंडित को कुछ ही जाती हैं, दोनो में पंडित तारी करते हैं- गाँव की। कामदेव को अच्छी ही जाता है। पंडित रामचन्द्र जीधरा और उनमें ही कामदेव जीधरा ने एक बार डेढ़ लाख रुपये का दिया है। इसलिए दोनो ने परामर्श दिया है- यदि कुछ दिली औरतों को जाने गिरवी में रह लिया जाय तो - - - ? -- पंडित रामचन्द्र जीधरा को पता चिन्तामन ही गया है, उनका गया कुछ समझा फिर लौट जायेगा। --- गाँव में फैला रहने पर भात भा सुन्दर ने निकलता है। 'फैला' की भा जाये, जाना चाहिए। अपने भाव्यों का गला काटने में न करने वाली वे समाज के जहाज के नाम निरन्तर फल-फल रहे हैं। पंडित का फैला हीते ही उन्होंने तात्पर्य को तरफ गाँव का लोगों का हीनण सब करना बराम

कर दिया । बलिभूषि ने सभ्य तालेवर के साथ-साथ पंडित जी भी बुद्ध हैं।
 "पंडित रामचन्द्र चौधरी का प्रसन्न हैं।--- राज बाला जमान में तालेवर
 गीठों की फायल देखकर देह में आग "लपक" जाता था । इस बार पंडित
 रामचन्द्र चौधरी भी अपनी लावेना - हवाई के मूक पर ।^{५३} तालेवर
 के शीश्या के नाथे दबा पंडित चौधरी जब उधारता है तो वह भी कुराँ
 का शीश्या बाले से नहीं करता । यह पूजावादा गुण की मछी बड़ा गुह
 है। शीश्या का बाला जिसके हाथ में आ जाती है, वह निभमता से काता
 है। तालेवर और पंडित रामचन्द्र चौधरी एक गाँव के दो शीश्या हो गये
 हैं। दोनों में हो लीपों का पाव है, जोम किले अधिक लूट कर अधिक मायपि
 बटीरता है । इस जमानवा । दाँड़ में गाँव फिसल रहा है, लुट रहा है- फूट
 बन कर । किले कहे हैं , यहाँ सभा तो ली हैं- सभा के बमकाले तुरती के
 बम्बर कुरे रहा हुं है - अवसर जाने पर जिम्ह ।

बापि-शीश्या अन्य शीश्याय प्रवृत्तियों की रक्कबा प्रदान
 करता है। व्यक्तिगत मा इसी शीश्या का व्यक्तिगत है। व्यक्तिगत वह
 कर सकता है जिसके पास कैमानी का जनाप-जनाप का है। कैम मछी अधिक-
 अधिक तालेवर गीठों पर है । तालेवर उसका शीश्या है। तालेवर तंत्र-मंत्र के
 बहाने मारी शीश्या करता है। जिसमें उसका सहायता करता है ज्योत
 सिंध । अन्य तंत्रों में वहाँ ब्राह्मण राजा के साथ निज्य जाति के शीश्या के
 द्वारा संयोग निजीय है, वहाँ तालेवर के गुण हमें नहीं पानते "उपके गुण
 मा किला उच्च कु है नहीं थे। गुण ने कहा था- जीह्मदाना के तंत्र में
 कीर्त फिल्लवट नहीं । इनके मंत्र पर ब्राह्मणों का कीर्त प्रभाव नहीं कड़ा,
 ज्यो । इसका बहुत यह है , वहाँ कुरे तांत्रिक मेरवी के रूप में ब्राह्मण

और गुरुन्या की झीड़कर बाका सभी जाति का विवाहिया लड़का की "क" में लाने की वही है- यहाँ अधिपुदना वही, नीचे गल है पवास तक किया उग्र का और किया जाति की नारी की "मैरवा" बनाया जा सकता है। इस लिए तालेवर गोड़ा अपने "क" के लिए तालेवर से सवर्णों औरतों की माँवाता। "काममाणो-नायना" के नाम पर तालेवर निरोह और विरह औरतों के साथ व्यवहार करता है। गहरा गर्व व्यभिचार में अस्त है। हरिप्रसाद यादव का सम्बन्ध संघ्या में है, दोपा का माँ का पारस में - विवाह में पहले से ही अनेक सम्बन्ध स्थापित किए हुए थे - "अपाहिज और अपने पति में मुचित माँ पारस में हाँ दिलाई है - सरस्वती की। -- बाँध, सूरज की माँ नहीं भावूम। -- लूने में विवाह के बाँधे साथ में पैट टटोलकर कहा था - बाँधको ? यह "मैरवा" वहाँ में लैलो जाँहें ही ? "क" पारस के साथ-साथ वह गरी से माँ का सम्बन्ध बनाये हुए है। गरी के बाद वह रामज्य से अपने अनेक सम्बन्ध स्थापित करता है। दोपा का माँ जब तक माँ में दम देसता है, साथ रहता है और जहाँ वह देसता है कि दम नहीं रहा, उसे झीड़ दूरी का काम करता है। दोपा की माँ के ये माँद उनकी जब प्रकार में संतुष्ट करते हैं। इन सभी अनेक-सम्बन्धों की जड़ में नारी को अनुराधा-नायना पहले है, काम-संतुष्ट बाद में। सूरदा केवल धन में होती है। धन का प्रलोभन देकर यह शीघ्रता जायत है। जब तक पूँजा का असमान वितरण रहता तक तक यह हमारा प्रकार चलता रहता।

"का कस्य परिवेदना" के महामंत्र की लक्ष्मी-चिन्ता गायत्री है। यही वह चिन्ता है जो पवित्रा के देश में नहीं पाई जाता है। यही चिन्ता सत्य का उद्घाटन कर रहा है - "का कस्य परिवेदना" अर्थात्

झार्षी को पाड़ा की कीड़े नहीं जानता - नहीं जानता और न जानने की
 कोशिश करता। यह रहस्य है हमारे विकास का। यह रहस्य है हमारे
 हमारे विकास का। २००३२००३ यह रहस्य है हमारे जीवन सत्ता की
 हमारे का, स्वाधीन रात को जितने निधन का। ये जीवन सत्ता मानने
 बन्वास ने हो गयी हैं। जीवन सत्ता हा नहीं जाय रीणु सीते ली पैतास
 सत्ता रहती। जाय स्थिति जिह्वा हा है, सुपारी ब्यापि हा नहीं।
 में और भी परिवार के हितों को रक्षा करने और एक-दूसरे जानता
 काटने के कारण में मान्सायता की जहाँ मिलकता झड़ दिया है। हमारा
 फोसों कि ३ किन्ता में है, हमें नहीं भासुम। सभा जहाँ है, दूसरों के
 हित किन्ता का। "जुद्ध" का क्या उता ३३ ज्वलन्त नपस्या की लैर
 बता है। शरणार्थी हमारे भाई हैं, वे भारतमंडल बनकर बायी ५, ली लीनी
 का रक्षा करना हमारा कर्तव्य था - कर्तव्य है, लेकिन हम अपने स्वार्थों
 का धिड़ में ली जमे हो गये कि दूसरों का कड़े से बड़ा दुल म। हमें गण्य
 सा लगता। रीणु जैसे सौदम्यता लैरक की यह पाड़ा वास्तव में निरन्तर
 दुर्लभ मान्य-मूल्यों की स्पष्ट करता है। इस ब्राजकाल को और निरिक्त
 रूप से ध्याम देना सीगा, बरना स्थिति और मो जटिल होता जायेगा।

जितनी जोरा है : राष्ट्रीय-संघटन का रीमानो समाधान -

समय परिवर्तेशाल है, समय की स-सृजना इतिहास का
 निर्माण करता है। समय व्यतीत होने पर समय-विशेष की विशिष्ट,
 घटनाई इतिहास का जंग बनता है। इतिहास का जंग बनकर वे महत्वपूर्ण
 घटनाई की बाल-विशेष के मंच पर मंचित हुई, पाठकों की रीमानिक्त
 करता है। यह लैरक पर निर्भर करता है कि वह घटनाई की किन्ता सुधम-

दृष्टि से देखा है और उनका जिस सूक्ष्मा के साथ चित्रण किया है। इतिहास और साहित्य में उल्लास ही और है जितना कथा और कान्ति से तराशो गई प्रतिमा में। कथर एक मूल गवाह तो होता है-- अपनी कथा का। अपनी प्राप्तिता को गवाह तो देता है, किन्तु सबसे प्रामाण्य की नहीं-- मात्र पुरातत्त्ववेत्ताओं की। इतिहास या इतिहासवेत्ताओं को समझ को वस्तु है। लेकिन साहित्य, तराशो खुद वह स्तारमय -प्रतिमा है जो स्मर्य कीलता-तो है। जिसका एक-एक को अपनी हीच्छा और आकर्षण का हिन्दु होता है। कथर में मनोहारी -मार्ग का बल्ल अभाव रहता है, जबकि प्रतिमा साक्षात् मनोहारी-मार्ग को कान्ति होती है। इतिहास में तथ्यों के माध्यम से युग का वर्णन किया जाता है, जबकि साहित्य में पात्रों के आपसी वार्तालाप और घटनाओं का मुख्य रूप प्रकार किया जाता है कि युग-विशेष किसी-आप विभक्त ही उठता है। इतिहास में विशेषज्ञ का धारा को को आपसी फूट, स्तर और संघर्ष का वर्णन होता है जबकि साहित्य में साधारण नायिका से चित्त का म बादमा के सुख-दुःख, राग-विराग, आशा-निराशा का मानवीय एवं सुवेदनात्मक दृष्टिकोण से चित्रण किया जाता है। रीणु का कहना हीरा है (१९६६) १९३० से लेकर १९६५ तक को कुछ घटनाओं की लेकर कल्पनासा उपन्यास है। रीणु का यह उपन्यास इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि उन्होंने ऐतिहासिक घटनाओं की तथ्य - साहित्यिक स्वरूप प्रदान करता है।

उपन्यास को मूल- आत्मा स्वाध्यायता और स्वाधीनता के फलदात् जाने वाले राष्ट्राय-संकट का और पाठकों को सपेक्ष करता है। मनमोहन गांधी से जेरियाकोट फटने जाता है। प्रतिमाशाली मनमोहन को बहुत यहाँ आकर जात होता है कि हमारा देश पराधीन है, हम सब परा-

मान हैं और पराधीनता मृत्यु की निशानी है। हमें स्वतंत्र होना होगा, संघर्ष करना होगा—और मर-भिष्टना का होगा स्वतंत्रता के लिए। स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए संघर्ष का आवश्यकता है, अन्यथा संघर्ष का मनमोहन को महाराज जो सम्मताती हुए कहते हैं—“तो वे नष्ट होते। राह में हाथ में कहां बैठना नहीं है।” मिलने की राहें बाली। न दाँट मूढ़ता, न दाँट—तो वे नष्ट हो जाते। साधे की कला, धिया धिया किता है क्या? स्वाधीनता-प्राप्ति का संघर्ष इतना सहज नहीं कि धिया त्याग और बलिदान से प्राप्त कर लिया जाये। इसके लिए प्राणों की बलि भी देनी होगी। महारज जो मैं माध्यम से रेणु गह की यह देना चाहते हैं कि मात्र कीर्ति से स्वाधीनता लेकर हमें यह नहीं मानना चाहिए कि हम स्वतंत्र हो गये, स्वतंत्रता मदीव संघट में रहता है। पूँजीवाद—युग उन्धे का युग है, एक की प्राप्ति करते देख दूसरे की उन्धे होते हैं। हमारा स्वतंत्रता और प्राप्ति की देखकर निरक्षर या दूसरों की उन्धे होना, उध उन्धे का परिणाम होगा युद्ध और उसमें लिए हमें सबकुछ तैयार रहना है। तभी स्वाधीनता की रक्षा की जा सकती है।

मनमोहन द्वितीय मास्टरजी ने लड़के प्रियव्रत राय के नेतृत्व में क्रांतिकारी-भावनाओं से परिपक्व होता है। गाँव से जाने वाला मोथा-सादा मनमोहन उसके मोना प्रियोदा की हर बात का जवाब देता है। मा-प्रेतों से डरने वाली मोना की प्रियोदा सम्मताती हुए कहते हैं—“देस मोना, मा-प्रेत की जादू को क्यों नहीं तर्क करता की देस में काम करता हो। तुम्हारी उम्र में मैं मा डरता न। मेरे गुरु महाराज ने मुझसे संस्कार कहा कि ‘देस’ की ‘देस’ का काम करेगा तो तुम मुझे

होता है- उसकी भूत क्या कर सकता है ? ^{५७} वास्तव में कम्पौलन वसी शरीर की सुप-सुप भूतपर भारत-पाँ को सेवा में लग जाता है ।

स्वायामता की लड़ाई में अपना सर्वस्व-संयाम कर के जाती है विधायाँ-विश्वीर-वस्तु के स्थापना करते हैं। विश्वीर-वस्तु के जगति निवास और गमन हैं, जोकि ज्ञातिबारा-विचारों में जीतप्रति हैं। इस बात के साथ स्थायी सदस्य हैं- प्रियोदा, सुनारायण, बुदगानंद, वज्राहोम, मीमा, वज्रफालोत्त और मनमोहन । प्रियोदा अपना कुल मैतृत्व प्रदान कर रहे हैं। वहाँ भा अवकाश मिलता है, ये सदस्य अत्याचारों का विरोध करते हैं । स्कूल में ज्ञातिबारा-विचारों की चिंतारों को कर रहे हैं- ये सब । पूरा परि-वर्तन गर्वों जो की गिरफ्तारों को कटना से होता है। गर्वों जो की गिरफ्तारों के विरोध में स्कूल केंद्र और बाजार केंद्र का जोखाना दिया जाता है- " हम लोग कत लड़ताल करेंगे- " स्त्राणक - स्कूल नहीं जायें- बाजार केंद्र रक्षा । प्रियोदा बीते । ^{५८} लड़ताल सफल रहो । गर्वों और शहर का जमता में भा उस लड़ताल का सफलता में अपना योगदान दिया- " बारा दिन स्कूल के " लड़ता ।-विधायाँ परमान गदों के पार-वात्पर और पुन के पास बैलती-बैलती, गहाती-गाती रहे। दीपहर की पास के गर्वों के कं-लोगों में मिलकर बार लंडो दही और कं-टीकें लूटा मिला-प्रियोदा के साथ प्रियोदा बीते, गर्वों वाली मात मो बनवा रहे हैं। --- मौज का व्यवस्था है। ^{५९} सरकारों-रमन और उत्पानुन के हर से तोनों दिन बराक-बराक पर बर्षों के लड़ता के छात्रों में मिलकर माफो माफो की-सात सेतानों के सिवा । ^{६०} इन पर डंडों से पार लगाने गदों और मजिजा के प्रति तबका किया गया । इस संपूर्ण वर्णन में रेणु एक बहुत लोको मत सदस्य रूप में कह गयी कि - " अकारों के लड़के, प्राणों और स्वातंत्र्य प्राणों

वाले लड़के, और कुछ मुसलमान लड़के का खूब में हाजिर हुआ।^{६१} प्रियादा
 और नीला जो सामान्य घर के लड़के बाबादो की संपूर्ण पहचान में आगे
 लगे, बड़े घर के लड़के हमेशा आगे दूर रहे। दूर रहने का कारण सरकारी-
 कृतियों के लिए जाने का भय। इसी भय में उन्हें न केवल घर बैठ समाप्त
 देखने की विवशता थी, बल्कि इस जन-जन की शक्ति का उपयोग भी करना।
 यह वास्तविकता है, हमारे स्वायत्तता-आन्दोलन की। सरकारी-जन
 बाज फ्रेंच और हवा के पक्ष पर बाई कितना भी शक्तिशाली और त्यागी
 प्रवृत्ति का प्रदर्शन करे, किन्तु वास्तविकता हमें विवशित है।

सेना का कितना प्रभाव पड़ता है, इसके उदाहरण हैं-
 मनमोहन के बाका। मनमोहन के बाका जनपद हैं, देश की स्वायत्तता
 का लड़ाई से उनका दूर-दूर का भाग सम्बन्ध नहीं है, लेकिन जो भी शहर
 जाते हैं- मनमोहन और प्रियादा की देखती हैं, उन्हें कार्यकर्ताओं में परिचित
 होते हैं उनके विचार सुनते हैं, तो उनका मन भी स्वायत्तता-संग्राम में बल
 पड़ने की उद्युत हो उठता है। "पिक्केटिंग" का जमाना है। बाज का दुल्हन
 पर धरना दिया जा रहा है। एक-एक सेनावादी रोज बाका देता है और
 शान की - "पुलिस के सिपाही जाते हैं। एक सिपाही आगे बढ़कर सत्ता-
 ग्रहण स्वयं सेवक से कहता है- "यहाँ से हट जाओ। अब बाज बाकूल लेगा
 रहे हैं। --- जान दूँगी नहीं छुट्टी यहाँ से। मैं जीजा सरकार का बाकूल
 नहीं मानता।" और तत्पश्चात् निरफ्तारों। मनमोहन के बाका के
 मन में भी हाजिर जल रहा है। जब तारी देश में जो भी जाने के लिए
 वातावरण बन रहा है, तब बाका की पाई रहते। एक दिन मनमोहन
 देखता है कि "बाका" "पिक्केटिंग" कर रहे हैं। प्रियादा जाते, "मैं
 जानता था। बाका किता पिन नाम लिखा कर चले जायें। मनमोहन कुछ
 देर तक झूठ ही गया। यह क्या करे ? को क्या रोगी? --- पुलिस के सिपाही

करी । काका गिरफ्तार हुए । उन्होंने नजर दोड़कर मौजमा शुरू किया । और मनमोहन पर नजर पड़ते ही संत पड़े, "मुजाजा - यह देख।" काका ने हाथ की हथकड़ों दिखाता हुआ कहा, "कहाँ ली हुई हो ?" कुत्ते के बाँधू पार पड़े मनमोहन को बाँधों से । उसके बंठ से अपने आप यह नया गीत निकल पड़ा - कुछ री, कुछ ही मौजमानी मौत का फैसला है--। भारत माता की मे । -- नयी जेल देखो--।" मनमोहन ने काका निम्न मध्यम वर्ग के हैं- रैण्डु वहाँ पर भी उन्हें उच्च वर्ग या उच्च-मध्यम वर्ग का महसूस दिखलाते। निम्न-मध्यम वर्ग के होने के कारण उन पर राजनेति अपना प्रभाव डाल देती है और काका पिछेछे करते हुए जेल जाती हैं। यह कड़ा परिवर्तन और जिला में महसूस हुआ। कारण वही है कि उच्च-मध्यम वर्ग और उच्च-वर्ग तब तक सत्-मनसि में लगा रहता है । ताकि जिला की सुविचारों वापिस न आँट जायें।" ६४ इस प्रतिक्रियावादी वर्ग न सदैव स्वाधीनता आन्दोलन के विरोध में कार्य किया, अपने निहित स्वार्थों के पूर्ति के कारण ।

मनमोहन इस उपन्यास का केन्द्रीय पात्र है। जादि वे बंठ तक उपन्यास पर प्रत्यक्ष और पर्यक्ष रूप में डाला रहा है। किन्तु, यह कड़ी विशिष्ट स्थिति है कि जिला पात्र की रैण्डु एक क्रांतिकारी और महान् मानना चाहती हैं, वह सबसे कमजोर और भीत पात्र साबित होती है । उनके कड़वा उसके काका और उसका झोटा भाई का देश के लिए कार्य करने हैं। काका पिछेछे करते जैसे जाती हैं और उसका झोटा भाई मनमोहन १९६५ को भारत - पाकिस्तान का लड़ाई में बारातापूर के उन से शुरू के कड़ी डूबते हुए सहोदर हो जाता है। ६५ किन्तु, मनमोहन पर सब का अवगार जाता है, संकुंचित हो जाता है। बम्बई अधिवेशन में करी या मरी का भारत किया गया, गांधी जी , नैदर जा और तमिल नाडु के नेता गिरफ्तार कर लिये गये ।

'हे जीर्ण भारत हीर्ण' का चिह्न समस्त भारत में गूँज रहा है। रेल, तार काटे जा रहे हैं, पोस्टऑफिस पर कब्जा हो चुका है। सरकारी कार्यालयों पर अतिथिगारों का कब्जा कर रहे हैं और एम में भी रंगू का अतिथिगारों का मोहना नाम है प्रेम में पड़ा है। देश के लिए पर-भित्त का वृत्त लेने वाला युवक मावुक - प्रेम में हूँ रह रहा है। देश पर कंडा काहराया गया - उनके पाँच साथी रहोद हो गये - 'प्रियादा, सुखानंद, अरुण, मोला और तू - एक गिरता, दूसरा जागे बहुर उमड़े हाथ से कंडा ले लेता दूसरा गिरता तीसरा कंडा धाकता। जोड़े के गिरने से पल्ले मोला की आवाज दो - अपने 'जीर्णभार' की। किन्तु मोला की बहुर नाम पानलों की तरह बिल्टा रहा था, नहीं-नहीं-। 'अपना यह अतिथि है ? मोला कहां पर अतिथि करना चाहता है- लाता है तिको सपने में- 'तिका जीर्ण की देखते हो मनमोहन की कुदरत मोस की कहानी याद आता है। हम उम्र के लड़के भा देश के लिए जान 'निहावर' कर सकते हैं; बहादुरी दिखता सकते हैं। --- वह सपने देखता है, कल्पना करता है- कि सुख की मारने का बार उसकी सौंपा गया है। पर परमान नव के उम्र बार बालूच में करवेरा की भाड़ियों में छिपकर बैठा है। कि सुख की भाड़ी फुल के पास जा नहें। वह कम कौंकता है। न जाने कैसी कि सुख बाल-बात सब जाता है और मनमोहन पकड़ लिया जाता है। उसे पानलों का सजा सुना हो नहें है। बारों और उसका नाम अरुण-दु-जवानों के मुँह पर है। --- छो-बड़ा तस्वारी इकता है उसका । --- कांसी का कंदो ? ---- हूँ मैं पड़ा --- पड़े हैं गते मैं कंदो। मनमोहन की लाता है, वह भिट्टो का पड़ा है। 'उस संपूर्ण पणनि से मनमोहन की बहुर हवि नहां उभारी। देश पर रहोद होने के लिए जिसे मन में बाग है, वह न ली मोस

जैसे लड़कियों के कपड़ों में बहुत ही और दिखा-स्वच्छ देखता है। जाति-कारियों का जीवन त्याग और बलिदान की जगह-जाया होता है, मन-मोहन का संपूर्ण व्यक्तित्व इसके विपरीत एक नरक-व्यक्तित्व बनकर उभरता है। रैण्ड, जिस जाति को बात कर रहे हैं, जिस स्वाधीनता संग्राम को बात कर रहे हैं, वह नक्सला आंदोलन से प्रभावित है। रैण्ड को धीरे-धीरे नक्सला-आंदोलन के समर्थक बन गये थे और उसी की सोचों का प मन-मोहन पर है।^{५९} रैण्ड अपने जीवन में जिस प्रकार भावुकता-रमना - जाति करते रहे, उसी का प्रतिरूप है मनमोहन । मनमोहन की जाति-कारियों का यह भावुक और रीमाणी-जाति उनको स्पष्ट वैज्ञानिक - समझ न होने के कारण है ।

“जितने बीराहे” में स्वाधीनता-संग्राम के आंदोलन का चित्रण करते समय रैण्ड का भाविक-कुरीतियों और विनाशकारी में स्वर नहीं निहित मने हैं। लेखक का दृष्टि समझता है कि उसी की घटना का चित्रण करता है और यह आवश्यक भी है ।

हिन्दू-मुसलमान भारत में दो महत्त्वपूर्ण धर्म हैं । स्वाधीनता आन्दोलन में बीरों को “फूट डाली राज करी” को नीति के कारण ये जापस में लड़ते रहे । बीरों का मूल-उद्देश्य स्व-धीनता-आन्दोलन को हक्ति की पट्टा ना था, जिसके लिए हिन्दू-मुसलमानों को फूट आवश्यक था । “जितने बीराहे” उपन्यास में एक राष्ट्रीय-मुसलमान शांतिज साहब का चरित्र प्रभावपूर्ण है। शांतिज साहब देश को स्वाधीनता की कटिबद्ध हैं। समाज उन्हें पागल समझता है। यद्यपि वे लो हैं नहीं- “शांतिज साहब की पागल-सामे के छात्रों ने “पागल” नहीं माना । उन्हें रात में अच्छा नांद जाता है। मूल में लगता है। समझदारों को बातें करते हैं। जितने “बरतवा” वाला

गीत का तार गहं टूटा और सराबनी नायक के लफंगे पुनः के
सभी बड़े लोगों की तब और तार मिलने के बात नहं मूलते । ^{७०} बहो
हफाज साहब रात की स्कूल के भवान में फांटा फहरा देते हैं । ^{७१} फांटा
फहराकर वे उसी मिठरा के साथ स्कोलर भा करे हैं और लोगों की
माणावा देते छु कहते है- "कल मनाबी । कुलफाहिया उड़ाबी, मिठा-
हयाबांटी, सिलवर पुष्ता मनाबी। फार हफाज साहब सुषा की रात
गांठ में बांध ली। -- क्या बात ? तो सुनी- "जाय के फांटा तीहरा जाय
के फांटा - एक दिन शीड़ि के फांटा तीहरा जाय के फांटा । ^{७२} से
राष्ट्रवादी मुलमान हफाज साहब भी सांप्रदायिक दौ में रहोद हो जाते
हैं- हफाज साहब को देह पर विराजत डाक्टर आम लगा दो न ^{७३} । यह
वास्तविकता इसी जाहें फुलने का साहब जियो में नहां । न जाने हफाज
साहब की कितनी निर्दोष राष्ट्रवादी उस बोमत्त- आम के दवाते हुए।

विधेयता और अहिंसा के कारण भारतीय- जीवन नरकीय
हो रहा है। रंग, पराधीन देश के बात पर रहे हैं, किन्तु आम को
जाजादो के गह वर्णवाद बही स्थिति है। मोहरिल मामा की लड़की
शरधिका विधवा हो जाती है, उसका पति मिस्टर सहाय "सचमम लीट
जाबी" जादीलन में रहोद हो जाता है। ^{७४} शहाद विधवा अपने दादादाज
पिता मोहरिल मामा के घर रहे रही है। कुंन, समाज पर उसका गहरा भार-
पर उपाय नहां है, इसलिए उसका विता उरी ५०० रुपयों में बेका जाहता
है। ^{७५} देश पर शहाद हीनवाले के लिए क्या बही उपाय है ?
इससे ताते और ज्वलंत प्रश्न की मानवाय-स्तर पर उठाकर समाधान लीजने
की विवश करते हैं। समाज में, विशेषकर निम्न और मध्य वर्ग में यह ज्वलंत
समस्या है ।

हास्टल में प्रष्टाबार, बालेन प्रबन्ध सभित्त को समझाना ,
 अध्यापकों द्वारा द्युधन, मोहरिल को निधन व्यक्तित्व द्वारा भविराधान ,
 जाला-विहारो मेमनाव और शीणण-उत्थाहन की रणु ने "चित्तने चीरगहे"
 में व्यापक कलन पर विविधित किया है। ये ऐसे समस्यारं हैं जिनका
 समाधान शोध और बलि आवश्यक है।

"चित्तने चीरगहे" देश के स्वाधान-आम्नीसन से लेकर हिन्दु-
 स्तान-पाकिस्तान की १९६५ तक की लड़ाई का विश्व प्रस्तुत करता है।
 विश्व सुसमता के साथ रणु पटनाओं को उठते हैं, अंत तक उनका निगारें न
 कर सकते हैं कारण प्रभाव को नष्ट कर देते हैं। परवर्षपूर्ण पटनाओं का अंत
 मा। उनमें यहाँ रोमाना होता है, जिसका निगार होता है- मनमोहन के
 इतिहासी यात्र। यह मात्र समस्यारों के प्रति वैज्ञानिक दृष्टि का न होना
 है। स्वाधानता आंदोलन में मात्र विचारकों के द्वारा किये गये कार्यों का
 वर्णन कर रणु ने इस उपन्यास की रचना बना दिया है। इस न्यायन पर
 "मेला बाँस" और "परता - परिष्ठा" जैसे विस्तृत और गहन उपन्यास को
 आवश्यकता थी, जिसे रणु पूरा कर सके हैं कामगं रहे।

पलटू बाबू रौठ : स्वातंत्र्योद्धार समाज में व्याप्त अराजकता का इतिहास

"पलटू बाबू रौठ" (१९७९) रणु का जीतम उपन्यास है।
 "मेला बाँस" (१९५४) से चलकर "पलटू बाबू रौठ" तक पर रणु को
 साहित्यिक यात्रा का अवसान होता है। यह अवसान-हिन्दु विचारों को
 सामान्य नहीं कहा जा सकता। "मेला - बाँस" विस्तृत और विनाश

समस्याओं को परत-पर परत उधाड़ने वाला लेखक "पल्टू बाबू रौड" जैसा सामान्य समस्याओं को लेकर उपन्यास लिखे और उनका सूक्ष्म विवेचन न करे, यह विचित्र स्थिति है। लेखक जहाँ से अपनी यात्रा शुरू करता है, वहाँ से निरन्तर अपने कीमतीपन और महत्ता का ज्ञान है। उसको समझा निरंतर सामाजिक-परिवर्तन के अंदर छिपे अंतर्निहित पर टिकी रहता है। समाज के प्रत्येक परिवर्तन के पीछे जो कारणों का तत्व छिपे हैं—लेखक उन्हें खोजता करता है। महान् लेखक इन्हीं तत्वों का फाँफाता करके सामाजिक विषमताओं को दूर करने हेतु निरन्तर खोजते रहते हैं। लेखक की सूक्ष्म-दृष्टि का महत्ता और विस्तार माना ही उसे कहा जाता है। प्रेमचन्द, यशपाल, मुक्तिबोध आदि लेखक इसके प्रमाण हैं। उनको महत्ता इसमें नहीं कि वह कर्म-विहीन का विरोध कर रहे थे, बल्कि इसमें है कि वे निरन्तर उस अमानवीय पहाड़ से टकराते रहे, जो सामाजिक पारा में अवरोधक बना हुआ था। रैणु के साथ ऐसा नहीं हुआ। "मेला बाँकल" और "पारले-परिकषा" की भिन्न रातोंरात प्रसिद्धि ने रैणु का पतन हो दिया। इन दो उपन्यासों में जो जोखिम और ताकत देखने की भिन्नता है वह कालवार के काल में लीता जाती नहीं। इसका एक दुःख परिणाम है — "पल्टू बाबू रौड"। "पल्टू बाबू रौड" को समस्याओं की हम कबार नहीं मिली। बाबादो के साथ बनसो अमानवीयता की रैणु ने वाणाप्रदान की है। लेकिन हमारे सामने "पल्टू बाबू रौड" वाला रैणु नहीं है बल्कि "मेला-बाँकल" और "पारले-परिकषा" का रैणु है, जो भारतीय ग्रामीण-जीवन को एक-एक समस्या की, उसके अंतर्निहितों को उसमें निहित जोखिम और सुनस्य को गंभीर रूप में विचार करता है। भारतीय ग्राम का एक ऐसा चित्र प्रस्तुत करता है जिसमें नहीं था अधुरावन नहीं है। सम्पूर्ण ग्राम अपनी समस्त अक्षय-जगत्

के साथ जोड़ते हैं डठसा है। "पल्लू बाबू रीठ" में ऐसा नहीं है। यह उपन्यास जायादी के बाद बहुत प्रष्टाचार, अविद्याचार, अज्ञानता, माद-मत्तोबावाद, सदा हथियाने का भ्रष्टाचार, राजनीति, राजीसो-बरीस, और अन्दर से टूटती जादको का वर्णन करता है। रीठ को दृष्टि यहाँ संकुचित हो गई है। अपने पहले के दो उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं को विस्तृत ताल पर चित्रित करके मजिद्व के लिए सही-सुझ विज्ञान के साथ रीठ, ग्रामीण जीवन को ज्वलंत समस्याओं से नीचे धुंध धुंध करता है। ग्रामीण जीवन के जितने गहरे संस्कार रीठ में हैं, उतने नागरिक जीवन के नहीं। यही कारण है कि "दायादा", "कुल", "रेलवे और रीठ" और "पल्लू बाबू रीठ" में रीठ, प्रभावों पर पादकता उत्पन्न नहीं कर पाती है।

"पल्लू बाबू रीठ" स्वाभाविकता के बाद जाये परिवर्तनों का उत्प्रेषण करता है। यह परिवर्तन नागरिक जीवन के हैं। "पल्लू बाबू" उक्त पल्लू रीठ केरगाहों केरगाहों के प्रख्यात राज्य-परिवार के सम्मानित सदस्य हैं। वे अपने बाधुनिक जीवन में एक ठेकेदार के बीबीदार थे। लेकिन अपनी कुल कुल और प्रष्टाचारों कायंजुत तालों के दल पर राज्य-परिवार के सर्वोच्च हो गये हैं। राज्य - परिवार में तो गया, जब पूरे केरगाहों में उन्हें बीबीदार करने को जितना में हिम्मत नहीं। राज्य-परिवार के भुक्तान निपलेन्दु बाबू को मृत्यु के परवात् पल्लू बाबू पर पर बधिकार क्या लेती हैं। पर के भुक्तान सट्टुबाबू को उनके अनुसार बनकर रह गयी हैं।⁹⁴ सारा परिवार उन्हें गुल दाबू कहता है। और परिवार का प्रियेक सदस्य गुल दाबू की प्रसन्न रहता बाहता है।⁹⁵ प्रसन्न रहने का सबी बड़ा कारण पल्लू बाबू की गुला में सट्टु बाबू द्वारा कमाया जा रहा बनाप-हनाप धन है। "पल्लू बाबू" सारा यकास्त

करने के बाद विष्णु राय ने जिसका जमा किया उसने हाथों का छत्र
कारबार लट्टू बाबू एक सप्ताह में हा कर ले-जाते हैं। लट्टू बाबू इस
वाक्य मानते हैं, फस्ट बाबू को बात बी। तबका और प्रष्ट ठेका
पारा कमाये गये घन के लिए फस्ट बाबू एक नाम है। इसा घन के कस पर
वे राय परिवार में सम्मानित हैं। मकुब, फस्ट बाबू लीया हैं। जहाज
का कप्तान। --- बेग जो वे मैदात में लाया तक लट्टू बाबू निरबन्त हो
गये। तीन हो दिन के बाद ३ साल का कारबार बिना बिना के देले-दुने
जाने ही गया।

फस्ट बाबू को उम्र ८५ वर्ष है। दूसरा उम्र के अनुभवों का
विशाल कुंजी उन्ही पास है। उन्हां अनुभवों के कस पर फस्ट बाबू अपना जापि-
परि जायम रहते हैं। फस्ट बाबू एक और ती इस परिवार के लिए घन कमा
रहे हैं, फलस्वरूप सारा परिवार को उन्का सम्मान करता है और दूसरा और
घर में ही उन्ही प्रष्टाकर हैं। उन्हां के कारण पंटा उनका सम्मान नहीं
करता। घर में जैसा पंटा हो ऐसा है जो गुलबदा का असम्मान करने की
सदैव तत्पर रहता है, कारण कि पंटा गुलबदा का वास्तविकता में
गुरिष्ठ है। रमा इति कमा अब बढ़ो हो गई हैं, जने जो के गठन-
गठन में जो अब परिवर्तन होना शुरू हो गया है, लेकिन वह कुछ उन्हीं पकड़
पर अपनी दाढ़ी से गुदगुदी लगाता है उनका देह में। नावे बराम्दे पर गुल
बाबू के गदगो (जायम कुंजी) पिछले इस-बारह वर्षों से एक ही जगह
पर लगी रहती है- उन्का ही कारण है। बीड़ा सा भा स्थान परिवर्तन
का किया जाय, कुछा खुद अपनी कुंजी लिखा कर पुराना जगह पर ले जाता

है। घंटा ने परोपकार करे देता है। --- बात यह है कि उन स्थानों के वास्तव्य का एक हिस्सा दिक्कतों से भरा है। कुछ-कुछ सब स्थायी नारा-देह का एक फलक देखने की बातना उनका पुरा होता है। फीला की माँ--- यानी माँ के हाथ का पान हो वह क्यों जाता है ? बिबू दो की मोठ पर हाथ क्यों फोरता है ? ⁵⁰ गृहस्थाभिना के माँ उसी जैव सम्बन्ध हैं- " पत्नी बाबू गृहस्थाभिना के माँ उसी जैव सम्बन्ध हैं- " पत्नी बाबू गृहस्थाभिना की कुला मिर देखते हो पिपल जाते हैं तब से । जब पत्नी-पत्नी जाया थी । याद है गृहस्थाभिना की ठीक वही चीन्हा के पास वह लड़ी थी, मिर लीला-का नया दुलार--- गुनदाद जाये । मिर उनकी लीला लड़कड़ा कर ती गुन-दाद ने मिर पर हाथ रत दिया- क्यों दुक्ता ही ? बिना सुंदर जाता है, सुन्दर यह कुला मिर । उन दिनों गुनदाद के लीला हाथ सम्भारते थे फूल बागान में । उनको उपस्थिति में कोई चीन्हा-माँ नहां कर सकता । जीर जीर गुनदाद की सल्ल बाहों में पड़ी उसने कहा था- जब मिर नहां दुक्ता जाये सामने। --- रात में ठीक वही गुनदाद के फीरों का जायाज सुन्दर हो उसी पति की नांद कुल जाता जीर वधान पत्नी लड़कड़ा करती है मांगती। जीर, गुनदाद निम्न, जिन्हें उनके कर्मा में जा जाते । ⁵¹ यह धृष्टि निम्न है उन धनपति का, जिसका समाज में सम्मान होता है। इस निम्न जीर धृष्टि का तावण में निम्न ही चीन्हा जायाज नहां रह सकता । जिन्हें फीर की जाह है, वेत फीर की, उनकी लिर संपूर्ण मानवीयता जीर जायाज सम्बन्ध फीर के बाजार पर लीते हैं । " फूलबागान " ती माँ प्रताप है, माँ प्रतियोगिता करती है- ली प्रष्ट लीनी जा, जी वास्तव में समाज में ली है। सामाजिक जीवन जीर मानवाय-मूल्यों की नष्ट करने में पत्नी बाबू सम्बन्ध की लीन हो प्रमत्त हैं ।

बाजादो के परवाह, ऐसी प्रष्ट व्यवस्था का संस्था बहुत बढ़
 गयो, जोकि लादो के मकीद कपड़े पहनकर निधने जन्ता का सेवा के नाम
 पर शोभाया करते हैं। यह कल्ला जतिशायीति न होगी, जो या तो हुंते
 लादर में लिपते हैं या लादर में। वह हुंते हतमा जमानवोय नहीं होता,
 जितने ये नेता होती हैं। हुंते कम-से-कम बड़े जादमा के यहां हुंते डालता
 है लेकिन ये नेता-हुंते तो गरोक की मो नहीं डीड़ते। जमान पेंना गंडासा
 सदैव तैयार रहता है, जिसका गदन जा जाये, उता की लाफ कर देते हैं।
 'पल्लू बाहू रोड' में एक ऐसी दो काग्रेसी नेता मुला मनीश मेहता का
 वर्णन रेणु ने किया है। और मा विश्रुता है कि इन नेताओं के पास
 बाजादो के पूर्व अपने नाम पर किया प्रकार का सम्पत्ति नहीं था, किन्तु
 वेह की बाजादो क्या मिली, नानी इन्हें भी शोभाया को कुली हट मिल
 गले ही। संसद में तेजर विधान-सभाओं के सदस्यों को सम्मानदारा से जांच
 को जाये तो यह तथ्य सामने आयेगा कि स्वायत्त जादमों की डीड़र ये
 समो नेताक नेतागिरी से पल्ले तेजर और जितान्तर गराव थे। मला में
 जाती हो इन्होंने दोनों हाथों से गरावों की सृष्टि। जाज बार-बार कुमाव-
 जाजानि कुमाव में जाय की राशि का औरा मांगता है, संसद में प्रस्तावों
 जाय औरा मांगा जाता है, लेकिन वह जितना सब है- इन्हीं समो जमते
 हैं। मेहता को हमो प्रकार का पात्र है- "वहा मुला ? जिसकी हम लोगों
 का रामटल जो डांट देता था तो परफो ला जाता ^{है} और वहा मुला
 मनीश मेहता काग्रेस का मंत्री बन जाता है। काग्रेस का मंत्री बनने का फलतव
 तक जायकारी उसके जीवनस्थ। राय-नरिवार का जाय वास्तव में नरिवार
 की का जाय है, जहा मुला बाहू बहुत सहायक होगे हैं। जोमल जाज
 जायारी जादमा है, वह जायता है कि जिसकी कहां प्रयोग में लाया जा

सकता है। इससे मैं नये स्मॉडोवीं जा रहे हैं, इससे मुझे बाबू का संरक्षण बहुत आवश्यक है। हीगफ्ल लट्टू बाबू ने पूछा है— "यह बेटा मुझे मनीषर एक ही साथ सब कुछ है— गाँवों की, गैरलिस्ट का, मजदूर — लोडर और जलधारवाला भा । साता बीसता कम है, पाटला है ज्यादा । जो इनकी यदि किसी तरह बाबू में लगता जा सकेता--- समझिये कि उर-दियाग, पुरुष-परिचय सब और ही लिखेंगे । हाँकि नये स्मॉडोवीं जा जा रहा है, उसी बारे में सब लिख चुका है कि बादमा "तामैपानेवाला" है। लेकिन, गाँवियों ने बहुत डरना है। लट्टू बाबू ने गारंटी करगया है कि डिवाजन का पीछा वेत ला, मन ने परे पर। ---उर, नेपाल का सामा । नेपाल का सामा का जय - नभ, पड़ता, बिरासिन तैस, बानी और सॉर्ट का दस गुना बोझ । पुरुष काल का बोझा मुझे मनीषर मेझता ? लट्टू बाबू बोले— "मुझे बाबू की जानता है।--- माथे उठका थाप हूँ लीगों का पुराना मन्त्रिस्त था ।" ⁵² काते सका हीगफ्ल लट्टू बाबू की और भी संकेत कर गया - "इस मुझे मनीषर की हाथ में लाये बिना "सप्ताह" चलाना पुरिक्त है। जोई उपाय करना हो लीगा ।" ⁵³ उपाय हो गया - पीले वाले की उपाय करने में जवा करत है। "वह कम में मुझे बाबू के रहने का व्यवस्था को गले है। दैत ने नेताओं को बहुत-बहुत तस्वीरें बत हो टांगो मधे हैं । दरवाजे और लिफ्टियों पर भी सहर ने हो पड़े लगाये हैं । बी रात जगद रिक्ता ने तस्वीरों के सील तैयार किये हैं ।" ⁵⁴ तिक बी रात जगद तस्वीरों के सील हो नहं कर सकां भी तैयार हुए हैं। मुझे बाबू के जाय काम है, वह बहुत लड़े पैत हैं, जफसर उन्ही डरते हैं, क्यों न रिक्ता सम्पेण कर दे। पी वाले कमाने की कि स्तर तक गिर सके हैं, यह सामान्य-जन कल्पना भी नहीं कर सकता। "मुझे बाबू ने रिक्ता की पिठा कर जंगल" का लिफ्ट का एक पल्ल

होते हाथ में सटा दिया । समतोल का समय देता रहा है । — समतोल का नाम लड़े हुए सट्टे का मारगो — ? कुछ छटसटा हुआ न ? २५६
लट्टू बाबू के सभी मार्गों की श्रेणी है विजली, जिन्से अपने मत को सप्ताह की जारों रखने के लिए वे विजली को सप्ताह करते हैं । विजली सप्ताहस्थ स्थिति है यह । फी के लिए मनुष्य अपनी जारों की भी देख सकता है— हमने अधिक क्यों दीह कीर देते हैं कारिज्जि पलम का क्या क्या होगा ? यह हमका प्रणिताम मनुष्य है ।

मुरली बाबू को क्या है सब डिबिजन्स बाकिसर साहब ने विजली की सब - डिबिजन्स विजिलेंस जम्हो का मेम्बर चुन लिया है।
कच्चा , बानो , तेल , मोमेन्ट , पैट्रोल का पीटादेने वाला ज्येटो - विजिलेंस ज्येटो । यह बड़ी विविध स्थिति है जि विजली , गार्मेंट , सीला , लीयला को अपनी कारा में फासे में आम में करता है , जो विजिलेंस ज्येटो की मेम्बर भी है। जहाँ यह भी प्रकट है कि लट्टू बाबू को यह फासे मूलतः कैमानी या बापारित है । इस कैमानी की दूर करने का काम विजिलेंस ज्येटो या है जो उन्में विजली है - विजली । हमका साधा-सादा जर्न है कुलो-सट्ट । यह कुलो लूट कीर्ण मामान्य बादमी नहीं कर रहा , बल्कि बाग्रेसो-पंडा को क्या पर एक बनपति कर रहा है । अब भी कर रहे हैं। पूंजोपत्तिर्णों से कुलाव के लिए फी लेख नेतागण मानती उन्हें शीणण करने का अधिकारपत्र हो दे देते हैं। पल्टू बाबू रीट का ज्वलन्त जमाना जाव भी है लेकिन पहले से अधिक । साहो रणकी कुलाव में काम करने वाली ने नेता पूंजोपत्तिर्णों के गुलाम बनकर रह जाते हैं । वे भी चाहते हैं-जनता का शीणण करते हैं जो फी से लहादे गरी नेताजी में रहना चाहते हैं रीट कि वे कुछ कह सकें । कतः शीणण को यह परम्परा अविरत भाव में चल रही है । मुरली बाबू की नेता जब भी जानन्द को बंसा बना रहे हैं जो

उनके नाम पर लट्टूबाबू की जनपति जनता का निमेष शीघ्रता से अंजलि अंजलि बना रहा है। उसी छेदी के छल पर लट्टू बाबू 'कट भित' होलने को योजना बना रहे हैं। न जाने जितने लो लोह हैं, जिनकी तस्वरो से पैसा बनाकर उद्योग होले हैं। कौन-कौन और अभिजातियों का इससे अधिक सदुपयोग और क्या हो सकता है।

राजनैतिक उल्ल-पुल्ल को देखकर केवल काँग्रेस में हा हने रहना योग्यता का नापवण्ड नहीं है। राज्य-परिवार बहुत बड़ा है, जतः पल्टूबाबू को कुछ काम करता है और वे घंटा और इति है कहकर सोशलिस्ट पार्टी को स्थापना करा देते हैं। न जाने कब क्लारे दल को सरकार जा जाये, जतः व्यापार की नियमित चलाने के लिए यह आवश्यक है, परिवार के कुछ सदस्य क्लारे दल में जा जायें। बैरगाड़ी में सोशलिस्ट पार्टी को स्थापना होता है। हममें गोपन की भी सम्मिलित किया जाता है। गोपन के पाँके पुलिस पड़ा है और पुलिस से क्लारे का स्थापना उपाय नेता बनना हो है। जतः गोपन पल्टू बाबू को बाल में जा जाता है। बैरगाड़ी में जिला समाजवादी किसान-सभा को विशेष बैठक हो रहा है, जिसका सारा सब गोपन उठा रहा है- "इस बैठक और समा का सारा सब गोपनताल ने क्लारे सिर पर लिया है। फुल बैदा सारा स्तवाह की हुम दिया है गोपनताल ने क्लारे स्तवाह चढ़ा रहे। --- पान सिगरेट भी फ्रों। जिसकी सोशलिस्ट-पार्ट क्लारे देली, या फुल सफाष्ट देली, उगले पैसा फल मार्गो। " ⁵⁸ सोशलिस्ट पार्टी का नेता क्लारे हो गोपनताल निरिक्त हो गया है, जब उसे न पुलिस का डर है और न जिला अन्य का। जितनी बच्ची है नेतागारो- गोपन जब समझ रहा है। काँग्रेस और सोशलिस्ट पार्टी दोनों का बैरगाड़ी में हैं। लेकिन, फुल बात यह है कि क्लारे भी बायकल क्लारे पार्टी को नास्ति है

कारें में नहां जानता । मात्र जलन-जलन प्रकार के कपड़े पहनने से ही वे
 जलन-जलन पाटियों के बन जाते हैं- " तट्टू मादू ने जीवन में पल्लु कार
 लहर को पीता पल्लो है। बंदर लुता गंवा है तो क्या हुआ । ऊपर कुता
 है तादो का । " ^{१०} जी गोपन ने सीरलिस्ट बनते हो - " सीरलिस्ट
 काट रुपां और पाजाया पल्लो है। छिफा सीरलिस्ट-काट हो नहां, गोपन
 लाल में मूँह मो सफाबट भुवा ला है--- मूँह रतार जीध सीरलिस्ट की
 ही सक्ता है मला। ^{११} मूँह कटाकर गोपन सीरलिस्ट बन गया और तट्टू
 मादू तादो पहनकर कगिया । ऐसी जन-प्रतिनिधियाँ से देश का क्या मला
 होगा- जिन्होंने वैश्वपूजा की हो दल-विरोध बना लिया है। छवि और
 पंटा तो और मो विचित्र हैं, " कारर जाते समय हाथ में एक किताब कर
 ले लेतो है, छवि । विदेश सेन्ट लाता है। पंटा ने पाहप पाना शुरू
 किया है और दिन-रात लुहर का सूट पहने रक्ता है। --- क्यूहा। ^{१२}
 ऐसी लोगोंने के लिए राजनीति मध्य एक शक्त है । अच्छे कपड़े पहनना, अच्छी
 तरह रक्ता और अच्छे लोगोंने से भिन्ना-भुक्ता हो इनके लिए राजनीति का
 पाप फायदा है । बेरमाओ में काग्रेस और सीरलिस्ट पाटों के जिन नेताओं
 का परिवार रणू ने किया है, उन सबमें समाज-सेवा का भाव किया में
 नहां है। प्रत्येक नेता व्यक्तिगत -लाभ और हित के लिए पाटों में जाया है।
 मुरली मनीहर मेहता-फेला बटोर रहे हैं, गोपन पुलिस जातक से बचने के
 लिए सीरलिस्ट-पाटों में जाता है, भिन्नी बसो काम रणू एण्ड ब्रदर्स,
 क्यूहाक्टर एण्ड सप्सायर्स की सप्सायर्स की अधिक से अधिक बसाने के लिए
 काग्रेस-पाटों में जाता है, पंटा और छवि अपने राजनीतिक-विराधियों
 को चलते की ठंडा करने और फासल सभ्य काटने की सीरलिस्ट पाटों में
 जाती हैं। दोनों पाटों-जायालयों में न तो साहित्य है और न कार्यकर्ता हो।

कग्रेस परामिट से फट बटोर रहो है और सोशलिस्ट उदगम इन्फेम - विरोध कर भात उठता रहे हैं। यही स्थिति देश को हो रहा है। देश की जनता को चिंता किसी को भी नहीं। अभी हुए चुनावों से यह निष्कर्ष सामने आता है। परिचय-कोश का वाम-पार्श्व सरकार की झड़कर अन्य तीन राज्यों में न कांग्रेस (७०) और न विरोधी अपना बहुमत प्राप्त कर सके। यह दुष्परिणाम जन-समस्याओं से न जुड़ पाने के कारण है। संभवतः हमने राजनीति पर कुछ सोचें- यह उम्हारे के लिए में रहता।

राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक प्रभुता का देश का एक समाज फतनी-पुल हो रहा है और हमारे साथ ही बराबरता बढ़ रहा है। स्वायत्तता के ३५ वर्षों में प्रभुता का ऊपर से नीचे को और गहराता जाता गया है। ऊर्ध्व में फैल गया है। ऊर्ध्व में फैलने का अर्थ- अतिरिक्त विकास। इस लिए फुल्ल-विकास आवश्यक है। यह वर्तमान प्रभु - राजनीतिज्ञों के द्वारा संभव नहीं। पलटू बाबू इसी प्रभुता का बढ़ का प्रतिनिधि हैं, यहाँ से जो पौधा विकसित होता है, उसके तले प्रभुता का को और बढ़ाने में सहायक होते हैं। पलटू बाबू स्वयं चौक-बारा से लेकर राय-परिवार के गुलामों के उच्च-पद तक प्रभुता का फैलाप हो हो जाता है। उनका प्रभुता का अधिक हो नहीं, तारो-रिक्त भी है। वह बाहर हो नहीं पर में भी है। गृहस्वामिनी के अन्तर्गत सम्पत्तियों से लेकर उनकी पैटियाँ तक के प्रति उनकी दृष्टि अच्छी नहीं है। पलटू बाबू राय-परिवार के हितों को इस लिए हैं कि वहाँ उ को समस्त जाति-जाति-जाति-यथासमय पूरी हो जाता है। पर में जान होता किसी, इसी और जना और उपा ने प्रति पलटू बाबू का मन स्वस्थ नहीं है। किसी समय में बढ़ी है, इस लिए पलटू बाबू गृहस्वामिनी के बाद किसी के प्रति अधिक आसक्त हैं- किसी किसी-रावस्था को सामा पार कर जानो में पाँच रह रही थी। फुल्ल जागान में जनार के फले पैर के पास किसी बढ़ी थी।

हीटो-हीटो पाजियां --- सात-सात कड़ी जैसी गलियां--- जीर जिंजीरी
 कड़ी । पल्लू बाबू की प्यास लग गई थी, शीतकाल में भी ।--कपटो
 पर देह-पुष्प नहीं- दी चार्टें ॥--- जिंजीरी की कड़ी हो पल्लूबाबू
 तड़प उठे- तड़प-तड़प ॥--- अजबानी, नाब-याजा-- कदम-कदम---
 कड़ी ॥ ⁻³⁸ इससे पुणित-काय जीर क्या ही सकता है। जिस पर मैं
 पल्लू बाबू रुक रहे हैं, जिस पर मैं उन्हें गुरुदास कहकर अत्यधिक सम्मान
 भिजता है, जिस पर का मुक्ति पल्लू बाबू एक प्रत्येक बात की बात
 समझ कर पूरा करता है-- उसी पर मैं पल्लू बाबू के प्रष्ट के प्रष्ट
 करता है। उसी का बदला लेने के लिए वह भीलाशाहा बाबू के तेरा केटा
 कुंला से विवाह करता है और सारा सम्पत्ति कुंला के नाम बसावत कर
 देता है। कुंला भीला साहा बाबू बकात का लड़का है, जो कसकड़े में
 लोह-लोहो पास करके जाता है। पल्लू बाबू बदले का जग में जल रहे हैं
 और कुंला सम्पत्ति प्राप्ति का जग में । परिणामस्वरूप ८५ वर्षों का
 कुंला पल्लू बाबू कुंला से विवाह करता है और प्रथम रात की रहस्यमय
 रंग से भर जाती है- पार दिने जाती है कुंला द्वारा सम्पत्ति लुप्त होने के बाद।

“पल्लू बाबू रीड” स्वतंत्रभूषण भारत में पालती-पालती प्रष्टा-
 वार का कहानी कहता है । पल्लू बाबू की प्रष्ट और पुणित लोगों का
 प्रामिषिचित्व करती हैं, उनके यहाँ फी के जलावा और कीड़े मूत्र्य-हां हैं।
 समस्त मानवीय-मूल्यों के लण्डन पर लुटा है, पल्लू बाबू का प्रष्ट-संतार ।

समाज को हीटो-हीटो समस्याओं को लेकर चलने वाले रैण्ड के
 ये उपन्यास १९६०-६६ के उनका निरंतर दाय होता वैचारिकता का निदर्शन
 कराते हैं। आरम्भ में स्पष्ट वैचारिकता जहाँ उन्हें “मैसा-पॉपुलर” और “परतो-
 परिख्या” की महत्वपूर्ण उपन्यास लिखता है, वहाँ वैचारिकता का अभाव
 भी हो उपन्यास लेख।

संदर्भ

- १- रैणु - दोषीया, लेखकोय वसतव्य
- २- -वही -
- ३- -वही- पृ० १७
- ४- -वही- पृ० १५
- ५- -वही- पृ० १२
- ६- -वही- पृ० २९
- ७- -वही- पृ० ४१
- ८- -वही- पृ० ४३
- ९- -वही- पृ० ४६
- १०- -वही- पृ० ४६
- ११- -वही- पृ० ४६
- १२- -वही- पृ० ४९
- १३- ४० बीरब्रह्म सिंह जरीरा- मानवता का कुमारी, गान्धारी,
दिनांक २८-३-८२, पृ० १-३
- १४- रैणु- दोषीया, पृ० ११९
- १५- -वही- पृ० ८९
- १६- -वही- पृ० ८२
- १७- -वही- पृ० ५३
- १८- -वही- पृ० १०२
- १९- -वही- पृ० ११२
- २०- -वही- पृ० १२२
- २१- -वही- पृ० ३१-३६-३७

१२-रैणु - दाघीया का भूमिका

१३- रैणु- दाघीया, पृ० १७

१४- -वही - पृ० १११

१५- -वही - पृ० ११३

१६- -वही - पृ० १२३

१७- -वही - पृ० १२६

१८- -वही - पृ० १२५

१९- रैणु - कुल्ल , पृ० १०१

२०- रैणु - कुल्ल की भूमि— है ।

२१- रैणु - कुल्ल , पृ० ६९

२२- -वही - पृ० १५

२३- -वही - पृ० १६

२४- -वही - पृ० ११०-११

२५- -वही - पृ० १२९

२६- -वही - पृ० १३९

२७- -वही - पृ० १४९

२८- -वही - पृ० १४०

२९- -वही - पृ० १५७

४०- -वही - पृ० १८७

४१- -वही - पृ० १७४

४२- -वही - पृ० १७६

४३- -वही - पृ० २०

४४- -वही - पृ० २३

४५- -वही - पृ० २२

४६-	-वही-	पृ० ५२-५३
४७-	-वही-	पृ० ५४
४८-	-वही-	पृ० ५५
४९-	-वही-	पृ० ५६-५७
५०-	-वही-	पृ० ५८
५१-	-वही-	पृ० ५९
५२-	-वही-	पृ० ६०
५३-	-वही-	पृ० ६१
५४-	-वही-	पृ० ६२-६३
५५-	-वही-	पृ० ६४
५६- रेणु	-वही- जिसने जीरा है	पृ० ६५
५७- रेणु ,	जिसने जीरा है	पृ० ६६
५८-	-वही-	पृ० ६७
५९-	-वही-	पृ० ६८
६०-	-वही-	पृ० ६९
६१-	-वही-	पृ० ७०
६२-	-वही-	पृ० ७१
६३-	-वही-	पृ० ७२
६४-	-वही-	पृ० ७३
६५-	-वही-	पृ० ७४
६६-	-वही-	पृ० ७५
६७-	-वही-	पृ० ७६
६८-	-वही-	पृ० ७७

६९- रेणु- टूटी छिछरी बर्फी का वास्तान, रविवार, २८ अगस्त-

३ सितम्बर, १९७७, पृ० ७८

૭૦-	રેવું -વહો -	મિત્તન વીરાઈ, પૃ ૧૦૧
૭૧-	રેવું -વહો -	મિત્તન વીરાઈ, પૃ ૧૨૨
૭૨-	-વહો -	પૃ ૧૨૨
૭૩-	-વહો -	પૃ ૧૩૩
૭૪-	-વહો -	પૃ ૧૨૮
૭૫-	-વહો -	પૃ ૩૧
૭૬-	રેવું, પલ્લુ વાદ્ય રીઝ,	પૃ ૧૧
૭૭-	-વહો -	પૃ ૨૦
૭૮-	-વહો -	પૃ ૧૧
૭૯-	-વહો -	પૃ ૬૦
૮૦-	-વહો -	પૃ ૨૭
૮૧-	-વહો -	પૃ ૧૨૩
૮૨-	-વહો -	પૃ ૨૦
૮૩-	-વહો -	પૃ ૨૭-૨૮
૮૪-	-વહો -	પૃ ૨૮
૮૫-	-વહો -	પૃ ૩૩
૮૬-	-વહો -	પૃ ૮૪-૮૫
૮૭-	-વહો -	પૃ ૧૮
૮૮-	-વહો -	પૃ ૧૭
૮૯-	-વહો -	પૃ ૮૦
૯૦-	-વહો -	પૃ ૩૩
૯૧-	-વહો -	પૃ ૮૦
૯૨-	-વહો -	પૃ ૧૨
૯૩-	-વહો -	પૃ ૧૦૧

रंगू की कहानियाँ

रंगू समाजीन्मुख रचनाकार है। जीवन-कात् की उत्कृष्ट समस्याएँ उसकी कथा-साहित्य में विस्तृत-कालक पर प्रकाश हुई हैं। समाज का दुःख-दर्द, जाहल, निराशा, शोषण-उत्पादन एवं राजकला का कलात्मक चित्रण रंगू का उद्देश्य है। समाज की विभिन्न स्थितियों और अमानवीयताओं की उदाहृती करने के लिए मरसक प्रयत्न करना केवल का प्रथम उद्देश्य है, जिसे रंगू ने पूरा किया है। अपनी प्रारम्भिक कहानियाँ के माध्यम से उन्होंने विषयगतार्थी जयधर्म-चित्रण प्रस्तुत किया है। इसीलिए उनकी कहानियाँ में जाति-प्रथा, धर्मान्यता, राजनीतिक - प्रभुतावाद, शोषण और दुराचारों पर तीव्र व्यंग्य प्रकीर्ण किये हैं। उनकी कहानियाँ के माध्यम से रंगू ने बलपूर्वक यह विचार प्रकट किया है— "जिस कहानियों को योजना में उसने बना के प्रस्तुत किए हैं उनमें जाति-प्रथा के विचारों-बोध का सुन्दरतम चित्रण किया है— अभीलाता है : रंगू मूलतः दलितों का कथाकार है, और जहाँ लगता है वह कठोर वास्तविकता का निष्कर्षण, तटस्थ प्रतीति है। बरहदास यह सब है कि अन्य ग्रामीण अंश पर लिखने वाली को तरह न ही उसका यथार्थ जीवन-दृश्य स्फुरित का होता है और न ही वह दमनक उत्पन्न— अंश को हर सिद्धुन और कठिनाता की उसने बड़ी सुलभा प्रतीति और प्रयोग रूप में किया है— लोक गीत को मूल आधारकता उसको हर रीति में प्रतीति है नहां, प्रतीति नहां ; पाठक उसे हमेशा अपने मन में नहां महसूस करता है।— रंगू

का पाठक कहानी पढ़ता नहीं, देखता है-- एक-एक प्वाँव, एक-एक रंग की महसूस करता हुआ उसे जोता है, उसके गहरे अर्थों की जाँचकर बचिबत होता है ; किंगों में जिन्हें धुँ लीग समझा था , तब उसको कथा-प्रक्रिया में गूँझकर इसके व्यंग्य के बावजूद "अच्छे-आदमी" बन जाती हैं। उसने पूछा-ब और मारी दोनों "पूछना" नहीं हैं, मूलतः उसने सारी यथावश्यक है बावजूद उसका "साफिबटोकेन" बताया है कि वह कौमलता का आधार है ।

कहानियों के संदर्भ में यह बात विशेष रूप से कही जा सकती है कि अपने उपन्यासों को अनेक कहानियाँ (हमारे जो कहानियों की छोड़कर) में वे उतनी गहरी नहीं उतर जाये हैं । इसका कारण यह भी हो सकता है कि उपन्यास में विस्तृत - अभिव्यक्ति के लिए अवकाश होता है, जो कहानियों में नहीं है। कहानियाँ एक संवेदना की लेकर चलती हैं और उपन्यासों में तबिक-मावों का पूरा होता है, जो यथावसर अभिव्यक्ति पाता रहता है। "मैंता-बाँकल" (१९५४) और "कहती : परिक्रमा" (१९५७) के बाद कि प्रचार रण, इतने अच्छे उपन्यास नहीं लिख सके, वेते हा "हमारी" (१९५९) के बाद इतनी अच्छी कहानियाँ । "आदिम रात्रि की महसूस" (१९६७) को कहानियों में कुछ बहुत अच्छा है, और कुछ निरर्थक ।

लेखक की रचनाओं का आकस्मिक संयोजन में ही तो वह लेखक का वास्तविक एवं निरपेक्ष मूल्योक्त होता है। लेखक एक सामाजिक प्राणी होता है। समाज को हर घटना उस पर भी प्रभावपूर्ण होती है, लेकिन सामान्य ढंग से नहीं । बूँक वह अत्यधिक संवेदनशील प्राणी होता है, वहतः उसी तरह ही उस घटना का अर्थ भी ग्रहण करता है। समाज के सामान्य-व्यक्ति की सख्त लाने वाली कोई भी घटना लेखक के अन्तर्गत गहरी जाकर अर्थ-प्रदान करता है, वह उसका सुदृढ पकड़ और अति-संवेदन-बल के ऊपर निर्भर करता

है। रैणु का सर्वेदन -यह झोटी-झोटी फटना की तरह मो केबल ही उठता था, जिसका प्रतिकारण उन्नी कहानियाँ में होता है।

रैणु को कहानियों का मूल्यार्थन करने में हमारा दृष्टि तटस्थ रहे, इसको जीवित को नहीं है। समाज को हर पक्षों की पक्षों को जितनी जगहों पर रैणु में है, उनी उसी ताकत के साथ उभारने का विनम्र प्रयास हमने किया है। समाज में व्याप्त एक-एक विनम्रता की तरह हमने रैणु को कहानियों की कहा है, जिस पर वे लगे उठते हैं। कहाँ-कहाँ रैणु विस्तार में न जाकर मात्र तब तक देते हैं, उन सीतों के बाजार पर फल - फलता की उद्घाटित करने के लिए उनका लेता हाथिक - सत्य सीतों का भी प्रयत्न किया गया है। रैणु को कहानियों मानवोद्य- पक्षधरता की लिए हुए एक बात सर्वेदनको कहानियों का है किन्ना कहा-जाता है, जिन्हें पक्षों की गणना के लिए तत्कालीन सामाजिक, बाकिं खं र जैतिक परिस्थितियों की तह में जाना आवश्यक है, कहा हमने किया है। हमारा मुख्य उद्देश्य रैणु को कहा-नियों में अभिव्यक्त लोक-शोधन की सामाजिकता की उद्घाटित करना रहा है। लोकशोधन की सामाजिकता को सीधे ही हमने सरल कहा, जितनी जगहों है। इसके लिए विभिन्न सामाजिक -विनम्रताओं की जगहों के बीच के गुजरने का आवश्यकता होता है, ऐसा किया गया है। समाज में व्याप्त कुल-तियों का मंडाकांड करे अमान्योद्य दमन-का के प्रतिष्ठा रूप की की उठा कर दिया है, जिससे रैणु की समझने में सुगमता होगी - ऐसा विश्वास है।

जाति-प्रथा ग्रामाण-शोधन का मूलधार है। जाति की तरह समस्त मारामर्ग संझों वणों पूरे का भागि जाय भा बंटा हुआ है। यद्यपि ऊपर से दिखाने पर है लिए जीवनैक प्रयत्न किया जा रहे हैं कि जातिप्रथा की नष्ट किया जाये - समझ, लेकिन व्यवहार में इसके विपरीत परिणाम की दृष्टिगत ही रहे हैं। विशेष रूप से स्वाधीनता के परवत् हम यह निश्चित

हम ही कह सकते हैं कि जातिवाद की कृपावा मिता है। ना के ही लिए अगर तक यह जातिवाद की अप्रतिफल फल-फूल रहा है। गर्व-प्रधान के लिए राष्ट्रपति तक का चुनाव जाति के आधार पर हो होता है। तीन जाति के किसी सदस्य हैं, तीन जाति शक्तिशाली है उन्ही का प्रधान होगा उन्ही का एमएसएम और एमपी। इस जातिवाद में एक और ती मार-तोन समाज की एकता को नष्ट किया और दूसरी और राष्ट्रियता को महान् प्रवर्धन क्षमता की संकुचित किया । इस संकुचित राष्ट्रिय-धारा के कारण देश की संपूर्ण शासन-व्यवस्था अस्त-वस्त हुई । आज हमारे बहुत और बुरा स्थिति क्या होगी कि हमारे राष्ट्रिय नेता की एक विशेष जाति के बनकर रह गये हैं। रैण्ड ने अपनी कहानियों में जातिवाद पर लोली बोट को है। हर साहित्यकार महान् उपदेश्यों की लिए साहित्य-भुवन करता है और जहाँ वह अपनी धारा में आरोप देता है । उनका जमकर विरोध करता है- करना भी चाहिए ।

साहित्यकार को बहुत जीवन-काल में जितना मजबूत होगा वह उन्ही का बड़ा होगा । रैण्ड को कहानियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि जहाँ जातु और जीवन जितना धारावा और संतुष्टता के साथ जाया है उतना अल्प नहीं । जीवन के एक-एक क्षण का विशाल अनुभव रैण्ड को है और उन्होंने इसे उठा सत्ता के साथ विशिष्ट भी किया है। जातिवाद नामोका जीवन में नाचूर का काम करता रहा है- रैण्ड उससे बहुत दुःखी थे । उन्हो कहानियों में यह विशाल फल पर चिन्तित हुआ है । रैण्ड को "राष्ट्रिया" कहानी मूलतः जातिवाद की संकीर्णता और कुपता की कैद तिस्रो हुई कहानी है। अगर ही ती प्रेम-कथा जैसी लगी है, किन्तु मूल-कथा उसको जातिवाद के घुणित रूप की उजागर करती है। भिन्न-भिन्न बहरदार जाति का है, जो निम्न कोटि में जाती है और वह प्रेम करता है जीवन गुण की लड़कों के ही उससे जाति (उच्च) को है। प्रेम करते समय

मिर्दंगिया ने अपनी जाति दिखा ली थी, कारण कि वह स्पष्ट जानता था कि जाति बताकर रमपतिया उसे प्रेम नहीं कर सकती। यह हिन्दुस्तान हो है जहाँ पर प्रेम को जाति की संज्ञाओं गंदी-गालियाँ दे बिखरना पड़ता है। प्रेम जैसे पवित्र बीर भावतरंग - सम्बन्ध के मोह में जाति नहीं, रैक्म यहाँ है। यहाँ वह सब होता है जो बीर नहीं करता। बीर उसी का शिखर होता है मिर्दंगिया। बाठ बर्ण तक शिखा पानी के बाद जीवन गुरु जो उसकी साक्षी की बात अपना लड़को रमपतिया से करते हैं। रम पतिया बीर मिर्दंगिया में वाफा में भी प्रेम है, हिन्दु जाति बाड़े जाती है। मिर्दंगिया ने अपनी जाति दिखा ली थी - "बाठ बर्ण तक ब तासोम पानी के बाद गुरु जो मैं स्वजात पंक्तियों से रमपति या के कुलीन को बता बताते हैं मिर्दंगिया समी तान-मान भूत गया। जीवन गुरु जो मैं मैं अपनी बात दिखा रहा था।" किन्तु बड़ा अभिप्राय है कि रमपतिया बीर मिर्दंगिया के प्रेम के मोह में जाति-मान का गया और छुट गया।

गाँव की स्थिति यह है कि निम्न जाति का व्यक्ति उच्च जाति के बच्चे की माँ बैठा नहीं कर सकता। इसी पूरी बीर सम्मान स्थिति बीर था ही पड़ता है। जातियों में हम ऐसे बड़े हुए हैं कि हमारा संपूर्ण व्यवहार जातिवाद से नापे रखा हुआ है - जग बाही लीड़-मारीड़ दी। मिर्दंगिया ने परमानन्द में उस बार एक प्रादुर्भाव के लड़के की प्यार से "बैठा" कह दिया था। सारे गाँव के लड़कों ने उसे देख कर मारपट का तैयारी की थी - बहरदार हीर प्रादुर्भाव के बच्चे की बैठा कहना ? मारी साते मुहुरे की देख। -- मुँह फोड़ दी। मिर्दंगिया ने हाँक कहा था -- बच्चा, इस बार नाफा कर दी मारवार। अब तो आप सीगों की बाप हो रहेंगे।

‘ठेस’ स्थानों का सिरजन या इसी आतिशाय का शिखर है। वह ‘पटुआ-
 क्ता’ का कुल और सिद्ध कृत हस्ताक्षर है, लेकिन उसको क्ता जाति से
 जाना ही नहीं। जाति का धर्म तो सब कुलों से जांचा है। मगर गांव में
 उसका सम्मान मात्र इसलिए नहीं होता कि वह गिनी जाति का है। इसी-
 लिये उसे सब अपना टटलुवा समझते हैं और जगह के रूप में जान लेते हैं।
 यदि वही स्व जाति का होता तो उसको क्ता के ठीक आकार में टटल रहे
 होते। झोटा जाति में जन्म लेने पर बलाघार को प्रतिमा को कुंठित होता
 है। यह हमारे देश पर कहां है। आज ही नहों यहाँ भदेव के प्रतिमा को
 आतिशाय का निर्माण दुस्तलाओं में केन्द्र पर रखा गया है। बात्मा कि नीले
 हेमर डा० अम्बेकर तक इसके शिखर हुए हैं। आज भी संपूर्ण विन्ध्युत्तम
 पून लेने के बाद बाप देखें कि बात्मा कि को पूना मात्र हरिजन करते हैं और
 डा० अम्बेकर को जाटव। क्या प्रतिमा या किसी जाति-विशेष को होती
 है ? महान् लोग यहाँ भी किसी एक जाति या वर्ग-विशेष के लिए संपर्क नहीं
 करते। वे सीधा पांडित मान्यता को लेना करते हैं और वे इसी के लिए
 दूसरों पर बातें हैं। कबीर, दाद, रेदास, जीवा एवं यन्ना संध्या में बापनी १०५
 जैसे ब्रह्मण मिलेगा और स्थिति बाप यहाँ तक पहुँच गई है कि हरिजन
 रामचरितमानस की झाँझों का ग्रंथ मानते हैं और रामायण की अपना।
 कारण भी स्पष्ट है कि रामचरित मानस है रचयिता गीस्वामी ज्ञानदास
 झाँझों के और रामायण है रचयिता बात्मा कि हरिजन ?

‘पंक्तावट’ स्वाधान गाँव में व्याप्त आतिशाय को गोमत्त-
 स्थिति की उजागर करता है। जारा गाँव जाति के आकार या टीले में व्या-
 प्त है। हर टीले में अपना पंचायत है और उसको एक पंक्तावट में है। महती
 टीला घाले या अपना पंक्तावट लाते हैं। पंक्तावट ग्रामों १-बावन में

प्रतिष्ठापक बनते हैं। महती टीली पर पंक्ताइट जाने देत ब्राह्मण टीली में
 हथिया का बाव बाधत होता है। गांव में हथिया होने को अत्यधिक भावना है
 है। जीटो-हीटो पटना में भी होती है हथिया और जलन के कारण। फिल्ले
 पन्द्रह महोनों के दंड-गुमाने से पैसा हकट्टा कर महती टीली के पंच पंक्ताइट
 तरोद लाते हैं। गांव में बाहर हो ब्राह्मण कुलीन माना फिल लाते हैं और
 जलन हथिया और जलन की अभिव्यक्ति देती हुए कहते हैं, -- "फिल्ले के
 सासटेन खरो हुआ महती ?" रण्ड इस जलन के फूल में पहुंचकर ग्राह्य-जादन
 को जूझने की बताते हैं - "बाधन टीली के लोग से हो जाय बरें हैं। जलने
 पर को ठिग्रा की मो बिजला - बजा कहीं और खुशी के पंक्ताइट की सासटेन।"
 ग्राह्य-जादन को इसी हथिया और जलन के आधार पर समस्त कार्य संभाल
 होते हैं। संपूर्ण गांव जादियों में होता है, और जलन के अनुसार जलने जाय-
 कलाप हैं। महती टीली के पंच पंक्ताइट ली जोद लाते हैं, किन्तु उनी जलाना
 कीध नहां जानता। यद्यपि यह बहुत बड़ा बात नहां क्योंकि गांव में हर टीली
 में जलाने वाली है, लेकिन उनी जलाना बाधावन रहसान जीन ले ? और जीन
 उत्साही तुम्हें। पंचायत को उज्जत उतना झोटा है कि यदि जलने दूसरे के जलना
 मो लिया तो - "कंगो पर ताना।" बात बात में दूसरे टीली के लोग फूट
 करी- हम लोगी का पंक्ताइट पल्ला कर दूसरे के हाथ ले---। नून नून। पंचायत
 को उज्जत का स्वतंत्र है। दूसरे टीली के लोगी के फल बहिष्। "महती टीली
 का पंक्ताइट जलती न देल दूसरे टीली में जलने को जलना का फल" "राजपूट टीली
 के लोग खंते-खंते पणत ली रहे हैं। कहते हैं, जान कड़कर पंक्ताइट के माफने
 गांधी बार उठी- बेठी। जलने जलने लगी। -- लाल सा बगिया मारा
 बालेंद जादमी है। कह रहा है पंक्ताइट का पन्ना जरा हीशियारा नै देना।"
 गांव में जलने उतरति है कि महती-टीली का पंक्ताइट नहां जल रहा। पर
 बहरीक विरोध - जलित प्रसन्नता जिया एक व्यभिच से न हीनर एक जाति है है।

कथपि पहली टोली के लोगों का दूसरी टोली के लोगों से कुछ लेना-देना नहीं, फिर भी इन्हीं तीनों इन्हीं से है। बाहे हमें कुछ न मिले, किन्तु दूसरी का काम सारा ही जाये। यह प्रमाण गांव में हो ही, ऐसा नहीं है। सन् १९७७ में प्रधानमंत्री के पद के लिए जे. बी. काजीवन राम का नाम आया तो बहुत जातिवादी बांधों बांधासिंह ने पीरार का बैसाफ की मरण इसी कारण स्वीकार कर लिया। बांधों बांधासिंह यह बांधों के कि हरिजन प्रधानमंत्री नहीं लेना चाहिए। इसके लिए स्वयं जाता नाम उन्होंने बांधासिंह से लिया और पीरार का बैसाफ का समर्थन किया। जातिवाद का यह अप्रदेष्टि कि प्रचार फसला-कृत्ता जा रहा है कि नाम्नाय सम्मान्य मो नष्ट हो गये हैं। भारत को एकता और प्रगति के लिए इसका बहुत भार आवश्यक है।

ज्य-विश्वास -

विफलता और अशिक्षा - दोनों से ज्यविश्वास को कमनी है। जाधिम-सम्मानका समस्त सामाजिक सम्मान में की देनदण्ड है। मनुष्य की केतना का निष्कर्ष मो जाधिम परिस्थिति हो जाता है। मनुष्य का मूला है और वह मूल का विशालता बनकर सामने देखाकार - अट्टहास वाली है, जो केतना के समस्त मार्ग अलग हो जाते हैं, क्योंकि मनुष्य का रास्ता पैट हो हीर जाता है। अतः जब मनुष्य एक ही दुःखी हो और दूसरी अशिक्षित मो, जो उसके समस्त अभाव यहाँ उपाय रहता है कि ज्य-विश्वासी को तार्क में गिर फड़े। यह कारण है कि ज्यविश्वास गांव में कम है, शहर को जोड़ा। पढ़ा-लिखा समाज उन्हें न के बराबर मान्यता देता है, की अभाव हरक जाह होते हैं। शहरों में जीविकाकरण और शिक्षा के बहुत प्रकार-प्रकार ने ज्यविश्वासी के मावकीर दिया जिसे हमें अतिरिक्त

निरंतर टूटता गया । ग्रामीण-जीवन स्थायीमूलक है ३५ वर्षों परचातु मो लामन बैसा हो है, अब भी वहाँ ३५ प्रतिशत साक्षरता है । ६५ प्रतिशत लोग अब भी निरक्षर-मट्टाचार्य हैं। ऐसी लोग जिन्हें विज्ञान की कल्पना ही नहीं है, अंधविश्वास की लान्छे में पड़े चिपक रहे हैं। रंगू ने अपनी कहानियाँ के माध्यम से इन पर ताबे ब्याँव डिये हैं। रसप्रिया, तोषादिक, सिरपियों का सङ्ग, पुराना कहाना:ख्या पाठ, अब स्व अग्निहोत्र इत्यादि कहानियाँ अंधविश्वासियों को चञ्चलियाँ उठाने में सक्षम हैं ।

“रसप्रिया” कहानी के भिर्दंगिया का उंगली फुल्ले कजाते-जाती टूटो फड़ जाती है, किन्तु रसप्रिया की यह प्रेम है कि उसे जो चीज़ा उसने दिया है, उसी के प्राप्ति हासन बाण मार गई है, फलस्वरूप उसकी उंगली टूटो फड़ गई है । भिर्दंगिया अपनी निम्न जाति के कारण ही रस-प्रिया से जुझा नही कर पाता । यह दाँव तो समाज का है कि वह प्रेम में जाति देखता है। भिर्दंगिया यदि अपनी जाति छिपा भी गया तो क्या प्रेम बीर युद्ध में सब सब होता है । लेकिन भिर्दंगिया का फुंठ ता मान्य नहीं रहा । रसप्रिया बीर उसके कैटे मोहना की यह अंधविश्वास ही जाता है कि “हायन ने जान मारकर तुम्हारी उंगली टूटो कर दी है । --रस-प्रिया भी कहती थी, हायन ने जान मार दिया है । ” अंध-विश्वासों के अंतिम परिणाम निरन्तर पतन में होता है और वही भिर्दंगिया के साथ हुआ । हमेशा-हमेशा के लिए नभकीड़ा को मंडला टूट गई । पारो-पारो कताये से विधायक नाव हो उठ गया । भिर्दंगिया निःसहाय हो रह गया । अंध-विश्वास की न मानने का केना जी उस अशिष्टात में नहीं था ।

“तोषादिक” कहानी में अंधविश्वासों को बलिया और भा बच्छी तरह से उधेड़ो गई है। शिशिरात की स्त्रो, फूट साह की बूँदी, सत्त्व

को माँ और डीमन समी तीर्थ करने जा रहा है- पीछे से साथ । तभी
 को अक्सर-अक्सर भाव्यताएं और फनीलियां हैं। शक्तिशाली को बहुत सको
 अधिक परेशान हैं । कारण कि--- किसी लड़का ने उसके पति को छत्र
 में मड़ बनाकर रत लिया था । पढ़ाई-लिखाई तो बीसट छ' हा, छुट्टी-
 ज्ञान भी गंवा जाये । यहाँ बेपनाह उसके पति को छुट्टी फिर से लौटा
 दें, यहाँ फनीला करने जा रहा है वह ।--- दुहाई बाबा । "उज्ज्वल पति
 शक्तिशाली छत्र में जाने से पूर्व " कृष्ण में सको लज, गाने-बजाने में मस्ती जागे,
 केसा सुंदर शरीर । क्या ही गया सब ? अब तो निपट गतिरूप है। " १०
 बिल्वो हास्यास्पद स्थिति है कि शक्तिशाली की दिक्षाना ली चाहिए या
 किसी बड़े चिकित्सक अथवा फनीलिक्ताक की , जिनमें उसको समस्त
 व्याधियां घु ही सको और उल्टे जा रहा है, तोर्थ करने, शक्तिशाली की
 घर पर जैसा ही छुट्टी । अब मोरजा अंधविश्वास है, यह पढ़ी बरखा की
 बात लगती है, किन्तु जहाँ किसी प्रकार को लिखा नहीं, बिल्वो का
 फनीला प्रकाश नहीं, यहाँ के लोगो के लिए अंधविश्वासी की मान्य है
 अति शक्ति और गीर्वाण उपाय भी तो नहीं । यदि हम तटस्थ पुरातन को
 तो यह स्पष्ट ही जायेगा कि हमने दो लोगो के जीवन-रत की सुधारने
 के लिए किया हो गया है, सिवाय उन्हें और भी अधिक चर्मीला लो
 परम्परावादी बनाने के । स्थापान भारत में बीसोस स्थित देश कुम्हने के फनीला
 भी लोगो की अन्धी पर विश्वास नहीं ही जा रहा है। अन्धी बारम्बार-विश्वास के
 मद्धु करने का न तो अवसर मिल पा रहा है और न प्रेरणा है। ऐसी
 स्थिति में जहाँ मोली अस्वस्थ नहीं, यहाँ के लोग अंधविश्वासी की न मानें
 तो कौन हो स्या ?

“ शिरपंचमी का समुह ” अंधविश्वासी को कक्षा में किसी
 सिंघास को कहना है। सिंघास हीटा न्या किमान है, अच्छी फनीला न

हीने के कारण वह कालू कुमार की पांच बचें लेन नहीं दे पाया । इसी बीच शिखरपदी जा गई । यह किसानों का सबसे बड़ा त्यौहार है। उनका ऐसा विश्वास है कि बाज के दिन किसानों का प्रगार न बफ़लकन न हो । रैणु कहते हैं- "गिरपंचमी के दिन सभी किसान अपनी-अपनी लगन को खेत लाते हैं । उस दिन किसानों से केदार रार न हो, किसानों का नगर न ला जाये, योंही हाँक न दे । सुहरवार से लौटकर बैलों की महलाकर रांगे में तेल लगाया जाता है। इस के हरिस पर बाबल के जाटे की सफाई की जाती है। औरतें उस पर बिंदूर से माँ लहरो के दीनों परों को जंगलियाँ जिकर करती हैं। गाँव से बाहर गली जमीन पर गाँव भर के किसान अपनी हाँ-देल और जान-बकरी के साथ जमा होते हैं। नई बुद्धि से सवा हाथ जमीन हासल कर केते के पड़े पर अदात-दूध और पड़े का मीठा प्रगद बढ़ाया जाता है। धूप-दीप देने के बाद, इस में बैलों की जीतकर पूजा के स्थान से जुगड़े का जोमणीह किया जाता है। फाल की रैफ पूजा के बीच पड़े, इसका लगल सभी किसान रखते हैं।— जुगड़े के साथ किसानों के मल-मूत्र त्याग करे, उन्हीं हाद-पमा को कमी नहीं लीगो इस साल का लेता दें । बाज किसानों के बैठ गया का बुद्ध से खुद गया— उसका लेते के मातृक सोताताम । "३१

लेकिन इतने वक्त पर कालू कुमार ने शिंपाय की चीला दिया इसके हल का फाल टेंडा कर दिया - यानी उसके फाल की चीला टेंडा कर दिया । बाज के दिन का अफ़लकन याने पूरा साल का अफ़लकन । यह अविश्वास सामंत-का और उसके हिमायतियों ने जमजम में फैला रखा है। इसी उन्हाँ का हिल होता है। तबहोम बार्ते और इस प्रगार की सिद्धाविता मनेब भूष्याका और सम्पन्न-काँके हाथों की मसबूत हो बनाती हैं । यह निरिक्त हैं कि यदि इन अविश्वासियों की मज्जर कर कार्य किया जाये तो हाजि नहीं होगी,

है किन जातिम कीन उठायी ? सिंघास कैसा जशिदितात और निधन विताम ।
 जी संभव नहीं । सिंघास कैसी विताम हमेंका हमेंका बकिर्गों में पिस्तरी रहे हैं
 और पिस्तरी रहें, जब तक हम अंधविश्वासों को बरकेंमहों तोलो जातो ।
 किन्तु प्रश्न यह है कि हमें की जीन- उर में रहने वाला सफेद-काला मुटि-
 जोवी कसा और-उकरी कैता ?

असंख्य अंध-विश्वास की बढ़ती है । व्यक्ति जहाँ यह
 अनुभव करने लगे कि हमसे जाने में कुछ मो नहीं कर सकत, वहाँ वह जिना
 असंख्य शक्ति को कल्पना करता है और अपनी को बसो के खाली कर देता है।
 यह स्थिति हमसे काजीरा और संघर्ष न कर सकने का सामना का बाधास
 देता है। प्रत्येक व्यक्ति संघर्ष कर मो ली नहीं कर सकत। यद्यपि संघर्ष के
 लिए फौजदारी-माना और पक्ष-द्वय नहीं चाहिए - हम की हा संघर्ष
 करी हैं, किन्तु उन्हीं लक्ष्य के प्रति अनिच्छता और दुर्बलता शक्ति होती है।
 ऐसे व्यक्ति अंधविश्वास एवं लो हा अन्य दोषों फाँफटी में नहीं पड़ते । हमसे
 विनोत वे व्यक्ति जिन्हें सामने हिन्दुस्तान होने को बिड़्या है और
 अपना जीवन सार्ज का उच्छा से बालित न होकर उरवर को उच्छा से लो
 करता है, वे संघर्ष के बलिन पक्ष से बल होकर स्वविवेक मो अपनी मावान् के
 यहाँ गिरवी रख देते हैं। ऐणु ने लो हा लोनों के बारे में अपना कहानी
 "गुलामी कहानी : क्या पाठ" में व्यंग्य किया है। अंधविश्वास लोग के
 किन्ना असाध्य बना देता है, यह उस कहानी में विदित हुआ है। मो के
 बाढ़ का जाता है, मारा लोत्र तबहार ही जाता है। यह लोत्र हासास्पद
 विदित है कि गर्व को असाध्य बाढ़ से बचने का लोत्र उपाय नहीं दूँती ,
 बकि लोत्रो नदी की बंदता में लगा हुए है। उनका यह अंध-विश्वास है कि
 लोत्रो हमारा माँ है, वह बँकल करने से लो प्रसन्न लोत्रो और लोत्रो मुदित
 रहेंगे । उन्हीं यहाँ बाढ़ का जाना सरकारी तंत्र की अक्षमता एवं प्राकृतिक
 प्रतीप न होकर लोत्रो माँ का लक्ष्य है। इसातिर , ब'निलपाय,

काशाय जीर्णों ने कांफ-पूरेण खाकर बीसों-मैया का सम्पदा गात शुरू
 किया। --- कांफ-पूरेण ने तास पर फटे कंठों के मयोरताइक गुरु ---
 कि वारे मिया - जीवका - जा-बा-बा-हिय-मैया-तीहरो - चरन्वा - ने
 मिया कहसुत - फुलवा कि होय मिया-समहु-चढ़ायव-ह्य--- । --- तह -
 ता-मिया, ता-जा थे र, नाचो-नाचो जीता मिया--- । और सचमुच हया
 तास पर नाचतो छुं बीसों-मैया बाध और देखते हा देखे सेत-सतिहान-
 गाव-पर- छि सभा हया तास पर नाचो ली- ता- ता मिया, ता-जा मिया
 --- पिन-तक-धिन्ना, ह्यम्क-बट-ह्य । ^{३२} और परिणाम हम अक्मोवता
 रां अंविस्वास का -- " मुंह बाये, विशाल मारमन्त्र की पाठ पर
 तवार वस-मुता जीतो - का नाचतो, विस्वासा, अट्टहास यरा बागी बड़
 रहा है। अब पूरेण-कांफ नहां, गीत नहां-- सित हाहाकार ^{३३} यह मया-
 कहता है अंविस्वास में जाने वालों का, जो निलपाय और जहाय हीकर
 सम्पदा नाचतो मृत्यु की समर्पित हैं। यहाँ के लोगों का एक अंविस्वास यह भी
 है कि बीसों-मिया पर जो सरकार ने राज कवाया है, उसी का लक्ष्य ही नहीं
 है और परिणामस्वरूप अब संपूर्ण देश की नष्ट-प्रष्ट बारी मानेगी। जीसो
 की वहाँ रीका जा सकता है ? उसे ली हैड़ना भी नहीं चाहिए क्योंकि उ जो
 शक्ति असोम है। वे यह मानते हैं कि--- " कौसका मिया है मला बादमा जात
 मज्जी ? -- ली, और लोधी बीसो बी । अब क्या हीगा ? -- गाव ने लो-
 का बालों को रीकना मंद ही नहीं--- एक तरह अंविस्वास में दुनिया ह्व रहा है।
 --- प्रत्य, प्रत्य । ^{३४} चारों और मयामक गाड़-बाहा । और जनता
 अंविस्वास में ह्वो छुं - परिणति हीजण, चि-लीफण । सत्कारा-कें
 और राजनैतिक नेताओं का गाव-दृष्टि गाव पर मंडराने लगा । चारों और
 हाहाकार जाहजार । ह्वता-मरती ग्रामाका अंविस्वासा जनता और उसे
 लटते, लोचते-हाते कणपार - माग्य विधाता । सैकड़ का सफलता वहाँ है,

वहाँ वर जिसे छुआई जा किष्ण कर रहा है, उसकी प्रति पाठन के मन में
पूजा का भाव भा दे, भा दिया है ; रँगु की यही सकलता है ।

धर्म—

धर्म व्यक्तिगत आस्था की वस्तु है। इसका सामान्य भावना
ही है, तर्क ही नहीं। धर्म की मूल-भारि पवित्रता और भक्तिता है महान्
एवं सुदृढ़ स्तम्भों पर टिका है, लेकिन व्यक्तिगत व्यवहार में इस प्रकार
कहाँ कुछ देखने में नहीं जाता। धर्म के नाम पर जितनी शीषण समाज में
ही रहे हैं, उतनी और जितनी के नाम पर नहीं। कारण भी स्पष्ट है कि
धर्म हमारा भावना पर हाका डालता है और फिर हमें हमें तब कुछ करने
अपिचार में कर लेता है। धर्म की जाग उतनी तोला हीले हैं कि वह जहाँ
एक बार लग गई वहाँ कुछ बचने वाला नहीं। बलौगढ़, मुआदाबाद, भिमेंडा,
स्तम्भन, हेराबाद एवं जमींदपुर में लीने वाली जाये-दिन केसंभ्रदायिक की
हमारे प्रमाण हैं। संशुणालि में जाने के बाद यह स्पष्ट हो जायेगा कि
धर्म वास्तव में अफोम का नशा है। जिस प्रकार ये अफोम हमारे कैनन मन
पर अपिचार का माजारा बना देती है, ठीक वही स्थिति धर्म की भी है।
पाकिस्तान, ईरान एवं अन्य हाड़ी के देशों में आप्त बनान्मिता जितने कारण
देमन्दिन छेकड़ों हतारों एवं अनाचार ही रहे हैं— मान्मीयता के ऊपर कर्क
नहीं हैं ? ऐसा धर्म जिस काम का जो मान्य की गिरा दाम्म बना दे। मान्य
में और फल में मूलभूत अंतर विवेक का होता है और इस विवेक ही धर्म
गिरवी रख लेता है जिसके कारण अमान्य व्यक्ति फलु-जा ही जाता है।
इत्या, आमजानी, कृपाट और विविध अत्याचारों का फल धर्म ही है।
धर्म के नाम पर ही झिड़ला, टाटा, डालमिया और अन्य ऐसे फल ताप मान्य-

जीवन की निरंतर अमानवीय जीवण का जीर डूबल रहे हैं। रैणु घम के इस स्वयं का विरोध करते हैं। तेजस्वादी-साधे जिया बात की नहीं कहना कहना मा नहीं चाहिए, क्योंकि तेजस्व ने दिवार जितने यथार्थ जात का बोधसत्ता की हिने हम में प्रकट करें, उतना ही अच्छा है। रैणु की 'तोषादि' 'मित्यलोहा', 'सिरंधी का सगुन', 'लात्पान की केम' एवं 'जलवा' कहानियां घम जीर उनके बाहु में ही रहे अनाचारों की जावत-नागा है।

'तोषादि' रैणु का प्रमुख कहाना है, जिसमें ऊपर से विभिन्न परिवर्तित होने वाले घम के अंतर्निर्णी की वाणो मित है। देवपर ने बंडा का सिपाही हर सम्भव नांव-नांव धमता है और पम्पों जनता की आध्यात्मिक और पारलौकिक मुक्त का जीरो कल्पना के फल काकर ले उड़ता है। जिस देश की माठ प्रतिष्ठित जनता गरोबों की सोया रैणु ने नावे जोवन-यावन कर रहे हैं, अर्थात् मित १ पूत का म्ही-म्ही रीटो सावर जो रहो हैं, वहाँ माभिन्-तोषों ने नाव पर ठोकर करना, क्या ठजि है, यह एक बहुत बड़ो विहम्बना है कि सच्ची अधि-धर्म-धर्म वे लोग करते हैं, जो नीर्नी हाथों से नियम के रयत का दोहन कर रहे हैं। जे 'पूटर बाह सपरिवार जा रहा है। नाव का महाजन है- पूटर बाह।' ^{-२५} महाजन-अभिप्राय कानून डूबत है, यह। अब तक जिसने निरपराध मासूम ग्रामाणों की सपना पाइत कर मारा शनिा जीर आज वह सपरिवार जा रहा है- तोष। यह अच्छा घम है, पक्के नराधी का रयत बाजी, फिर तोष में उस बाप की घी ली। यहाँ नहीं, उसने बाप गरोक मा चकर में जाते हैं- गैहू के माथ तरबुआ ली मित्रता हो है। लखू का मां बा ता 'ने निर परिवार ने विद्रोह करता है- 'नालो पोते में गंगा नहा जाये जीर में अमानो सेता कि गंगा की जीन कहे,

पानी की पूर्णता में भी नीला जो जिहा गढ़लिया में भी एक दुकान
महान्ता पावे । --- डाक्टर तो जिन परामे के बहाने अपने घर की
कटना-- पटना, इस्ता-दिरता दिरता बार । भाँ का घर मुहमा या चतर
सवार की गया- बाप-पुत दोनों के लिए । ^{१६} सत्तु का भाँ विद्विह
करके तोर्य जाता है। यह विद्विह सामान्य और सहाय नहीं है। सत्तु का
भाँ बड़ो बड़ो है, दादा है, अतः उनका इस उम्र में घर त्याग पराम्परा
की सिद्ध करना है। रणु और माँ और देते हुए करते हैं कि गाँव में सब
परिवार पहले विद्विहित ही चुके होते हैं, मात्र यही एक परिवार बचा था,
तो उसी की घमं छोड़ देता है । ^{१७} घमं के नाम पर लीजणा में भाँ रणु
उजागर करते हैं। एक और भी बातें साह हैं और दूसरी और गाँव का अन्य
बीरते । साह-सहजाइन के जानक बा रहे हैं- फेरी के मत पर । तोर्य में गरीब
की योर्न नहीं पहुँचा, जिस पर अधिक लफ्फे हैं, अर्थात् जो अधिक की लुटा-
गेता, उसकी लैक फेरी भाँ करी- गरीबी पर त्याग है जो वे फंडों की लुटायें।
फंडों के एक पुन पुन सवार रहता है, लैन-लैन-प्रकारेन ताप-यात्रियों की
लुटी-लुट्टी - "हाथ फेरा कि हाथ फेरा । बोझो, बाल-बच्चे मरने के हाथ
लेशा फेरी हा रहे हैं। --- डीमन की भाँ अपनी पैटे के साथ फुट साह का
बाना देत जाते हैं। जाते हा मुँह-हाथ बफाकर बोला, बाया है सहजाइन का।
हां, जिसकी बासा बहते हैं। तान-तान बहते हैं । तानों ती दिन-भर हू-
हू गिरता रहता है पानी । क्या नीला महान है। --- सहजाइन स्त्री पर
मोर्न थी । फंडा की परवाला पूरा जान रही था, साह-सहजाइन के लिए।
सहजाइन का बाक्यकुल फंडा देखने में भी अकाली फंडा लगता है। क्या था,
कवमान ली भावान दाखिल हैं । ^{१८} कवमान यदि भावान दाखिल हैं तो
सत्तु को भाँ, हरिजन की घर और डीमन को भावान हुए । वे भाँ की कवमान
है, लेकिन शूरणा कि उन पर लुटाने की लफ्फे नहीं हैं और जिस कवमान
पर लफ्फे नहीं वह राफास दाखिल है। फिना अंतर है घमं के सिद्धान्त और

अवसर हैं, जहाँ गरीब की जीर्ण नष्ट पंजा और भी बाते भावान् है
 स्थान पर जाकर स्वयं पकवान् बन जाते हैं। शहिकति को बहू का हीनण
 लंछन करता है। लंछन सम्प्रदाय है कि वस अत्यन्त दुखी है और दुखी स्त्री
 को भावनाओं की मात्र धर्म है। मुझा सक्ता है। लंछन धर्म-दीन में है।
 रहता है अतः वह इस कार्य में निपुण है। शहिकति को स्त्री की ले जाते
 हैं, जहाँ रक्षा में न जाने किस अधीरो बाधा है अलाटे पर और गति
 को पिलाकर उसकी मनी कामना पूर्ति है। उसका निम्न हीनण करता है।
 इस प्रकार के हीनण को अन्य कहा सम्भावना नहीं है, नहीं ही सक्ती ;
 धर्म के अलावा ।

“कल्ला” कहानी धर्म के नाम पर होने वाली जाफा वैमनस्य
 और तण्डव्य कोपत अत्याचारों का रहस्य है। फातिमादि कैमलिस्ट
 नीतियों को पुनः हैं, जो राष्ट्रीय आंदोलनों में मान लेता हैं कि तम
 राष्ट्रीय स्वायत्तता आंदोलन को लड़ाई भारतवाय जनता स्पष्ट होकर ल
 रणों को उस समय को धर्म के मांडावरदार जाफा में स्वयंभवात्ता को लड़ाई
 कम, धर्म को लड़ाई अधि लड़ रहे थे। इसमें उनके स्वयं के स्वार्थों का विभिन्न
 प्रकार के चमकोते-मड़कोले जावरण चलकर प्रकट हो रहे थे। ख और हिन्दू
 राष्ट्र को दुहाई दो जा रह पा, तो दूसरा और मुस्लिम-राष्ट्र का।
 हिन्दू राष्ट्र की स्थापना है प्रत्यक्ष रूप में चाहें और लोग रहे हैं, लेकिन
 परीक्षा रूप में भारतवा गति का है। पूर्ण स्वायत्तता-आंदोलन का तटस्थ
 मूल्यार्जन करने पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि धर्म-निरपेक्षता का
 बात कहनेवाले गांधी सक्ती पहले हिन्दू थे, उनका हर गतिविधि और दैनन्दिन
 के क्रिया-धर्म हिन्दू-धर्म को परंपरागुहार कर रहे थे। प्राचीनता ने फिर
 राजनीति-धर्मार्थी तक के ऊपर भाषा हिन्दुत्व का गर्भ ले मिलत थे।
 इसीलिए जिन्ना मुस्लिम-नेता के रूप में उभर कर जाये। यह बड़ी विविध

स्थिति है कि गांधी लिखना चाहते थे कि धर्मोन्मत्तता को दाय
 छोड़ते हैं और जिन्ना व्यक्तिगत जीवन में मुस्लिम नो-टि-रो-ति का अनु-
 सरण न करते थे (उदाहरणतः रीजि में जो शराब और सिगरेट पान,
 एक दिन को म्याद न पढ़कर) मुस्लिम नेता बने रहे । इन्द-मुस्लिम जनता
 का नैतिक हन दोनों नेताओं के हाथ में रहा । ये जो बहो वही करवाते ।
 धर्म-धोरा जनता को भावनाओं की इन्हीं जलने राजनीतिक प्रभाव की
 अशुद्धता बनाये जाने के लिए अच्छी तरह पुनाया । इसीलिए तो वास्तविक
 लड़ाई लड़ने वाले जिनकारों कांधी पर फूटते रहे और ये ठाठ में रफू-
 पति राधा राधाराम गांधी हुए सम्पूर्ण बांदातन का श्रेष्ठ जना और सांकी
 रहे । इन्हां कीदीरीपी के कारण फिरकाईस्तो निर्ंतर बढ़ता गया,
 जिसका परिणाम हुआ हिन्दुस्तान-पाकिस्तान बंटवारा । यह केवल धर्म
 हा था जिसने दो देशों की जन्म देकर लाली-साली मानवी का नरसंधार
 कराया । बंटवारे के बाद जिस प्रकार के बोमत्स-बांड हुए और जिस प्रकार
 काल के लोगा बाज के राष्ट्रवादो बन गये, वे दुःखो हीर फाटिमादि
 जैसा संघर्षोत्त एवं पीर राष्ट्रवादो नारा राजनीति छोड़ देता है । स्वाधोन्मत्ता
 के बाद राजनीति अच्छे लोगों के रहने योग्य नहीं रही । मैटर के खूने पर
 कि बापने राजनीति क्यों छोड़ दी, वह कहता है, "यह मुझसे क्यों
 पूछते हैं ? जलने हम नवाजवादी से क्यों नहीं पूछा, जो रातों-रात देश
 फाट " कलकत्ता कांग्रेस के सत्र में बांखिल ही गये - फल में दुरो दवाकर । अपने
 नेताओं से क्यों नहीं जवाब लाने करते ? वह तब गांधी-जवाहर-पटेल की तारी-
 जाम नातिना देखाते, कठपुतली की भांति फटने की जलाने वाले फिरकाईस्त
 तो गिर्यो को उज्जत अफजारी का गढ़ और मुल्क के लिए मरने-पिटने वालों की
 दूध की भविष्य की तरह निवास करना ।-- तुम खुद क्यों से यह स्वात क्यों
 नहीं पूछते ? " यहा नहीं स्वाधोन्मत्ता के बाद देश के दो टुकड़े होने के
 बावजूद भी यह धर्मान्धता ठंडा नहीं पड़ा । इस धर्मान्धता के शिकार हुए

महत्मा गांधी और व्हामा को नाथिक बट्टर राष्ट्रवाद कातिमादि।
 'मैसमिस्ट, मुस्लिम-कान्फेस' बल्ला होने जा रहा है, इसका विरोध करते
 हैं, गवर्नर लोग। स्वाधीन भारत में, सर्वधर्म-निरपेक्ष भारत में राष्ट्र-
 वादियों के सम्मेलन में 'गांधियों, नारें और रह-रकर रहें और पत्थरों
 को बाँझार। पुलिस के सिपाहों चुपचाप कतार बाँधकर खड़े हैं, ज्यों-जैसे प्रार्थन-
 कारियों को रस्सुमार, कुलीन मुस्लिम नेताओं के बल साहबजादे और कई
 बफासरों के लड़के जा रहे हैं।' इसका शिकार होता है कातिमादि।
 कातिमादि का दीन-मात्र इतना है कि उसने 'महत्मागांधी का जय'
 का नारा लगाया। स्वाधीन-भारत में राष्ट्रवाद को जय का नारा लगाने
 का दण्ड मिलता है- 'देखो-हो-देखो परिन्दों ने उनकी मान पर पटक
 दिया और बास फड़फड़ प्योटगा शुरू किया। दीनों और लड़ा भाड़ ने
 सातियाँ कबाड़-साबार। जब तक पुलिस के सिपाहियों को टुकड़ों पड़ते
 उन्होंने कातिमादि के सवा चक्रे उतार लिये हैं। --- पैरों पर रसिक
 का शोशो उठेन दो पा। पैरों फुल्लकर जाला ही गया है। एक बांस
 तराब हो गई है। --- हाथ का हड्डी टूट गई है।' धर्म के नाम पर वक्ती
 और अधिक बर्बादकार क्या ही सके हैं। जब भी भारत में हर तान नहं-
 न - कहां गांधीवागिक दंगे होते रहते हैं और धर्म के नाम पर ज्यों जमता बमने
 की जगुरिगत बनस करती है। धर्म निरपेक्षा का दुहाई देने का तो सरार
 बलोगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय जैसा राष्ट्रिय संस्था की उत्पत्तियन दवा करार
 देतो है, ताकि मुस्लिम-मत उगे मिलती रहें। यदि यही स्थिति रहा तो देश
 को परिस्थितियाँ किस और कब भयानक करबट लेता, पता नहीं? वर दिन
 दूर नहीं जब हर धर्म का फतावलम्वो जाने सार्वत्र देश को भांग करने में नहं
 लिखेगा। इसका ज्वलंत प्रमाण है- कातियों के जर्मैससिंह फिंडरावाला और
 नरदार गंगासिंह द्वारा 'देश-संजाव' का भांग। देश विघटन के काम पर है

बीर सरकार राजीव गांधी एवं इंदिरा गांधी की स्मृति में लगे हैं।
 देश के नेताओं की वर्तमान संकट की गहराता देश अपनी स्वायत्त-प्रतिष्ठा
 त्यागने लगी और भारत का अखंडता एवं सार्वभौमिक-सत्ता का प्रतिष्ठा
 हेतु कपूर लखर पंदान में डूबना लीगा। हमें समझ रहे हैं १९४० के अंदाज़ में
 से सचक सीना लीगा। धर्म क्या होता है, हमका बाढ़ में मड़कने वाला किंगारा
 की मण्ट करना हो लीगा, करना स्थिति के कैलाश होने पर हमने से क्या
 कीर्ति लाभ नहीं लीगा। धर्म के हतो पागलपन की सचक मण्ट करने के लिए
 ऐसी चिंतित है, जिसका प्रमाण जहाँ ये कहानियाँ हैं।

शीर्षक -

मुख्य धारा मुख्य का शीर्षक अमान्नाय-वापस है।
 दास-प्रथा से पूँजीवादो-समाज तक शीर्षक को कभी चिह्नित करते रहते
 हैं, जिसकी समाप्ति समाजवादो - समाज को स्थापना होने पर हो लीगा
 है। सामंतवाय जिस प्रकार अपने शत्रु पूँजीवाद की अन्धकार में जन्म देता है
 और प्रतिपक्ष रूप में उसका पीछा करता है, ठीक उसी प्रकार पूँजीवाद
 को समाजवादो - समाज को स्थापना हेतु बाधारीपण करता है। की-की
 बाधारे -अमान्नाय बढ़ता जाता है, की- की हो समाजवादो -अति पीछा
 विकसित होता रहता है। पूँजीपति अधिकारी का रूप- दीहना करके यह
 समझ बैठता है कि यह चिह्न - जल तक उसी प्रकार के अमान्नाय- वाय
 करता रहता और अधिक, जिसे उसने स्वतंत्र बना दिया है अमान्नाय-
 दुष्प्रचार के सहन में करता रहता। लेकिन यह उसकी निरा पूँजीपति शीर्षक
 को कभी के नीचे फिसलता स्वतंत्र अपनी युक्ति का मार्ग सार प्रस्तुत
 करता रहता है और एक दिन उस अमान्नाय और अतिपूर्ण दास-अवस्था
 की उताड़ पकता है और नवीन राज्य का सुदृढ़ आधारशिला रहता है।
 इन अवस्था में पिछले प्रतिष्ठित अन्धकार के गुरु-दुःख, बाधा-निराशा और

बीर बाकायामी का हित-रक्षण होता है। लेकिन जब-तक ऐसा नहीं होता, तब तक शीणण -कड़ू के नाशे पिस्तता निरोध अमि-वर्ण निरंतर अमानवीय-जीवन व्यतीत करता रहता है। रैणु अपनी कहानियाँ हैं अमानवीय-रक्षक के प्रति अपनी सीसी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। यद्य-तत्र पिरोये हुए उनकी सच्चा जीवन-जातु को वास्तविक कार्यों प्रस्तुत करते हैं। यथायं वहाँ नहीं होता जी ऊपर से परिस्थित होता है, जीवन-जातु की वास्तविकता की विधित करने के लिए यह आवश्यक है कि परिस्थितियों के अंतर्धोरीयों की जागरूक किया जाये और यह सभी संभव है जब कीसक को पकड़ सुदम और सीसी ही। रैणु को यह विरोधता है कि ऊपर से सत्य-वस्तु रूप में परिणति होते जाते कार्य-व्यापार के ऊँदर से कार्यकर देतते हैं और उगर्वे कुछ अंतर्धोरीय दिखने पर गहरे पैठकर वास्तविकता की व्यवस्था करते हैं। यह वह वास्तविकता है जी ऊपर से दिखने वाली वास्तविकता में एक-दम भिन्न है। रैणु का कहानियाँ इसका प्रमाण हैं कि जीवन-जातु और जातु-जीवन से उनको गहरी पैठ था, पात्र सुने-सुनाये उद्देशक प्रयोग एवं लिखित रूप में प्राप्त मुस्सों व्यापार पर कहानी लिखना, उन्हें क्या स्वाकार नहीं था। इसीलिए दिनन्दिन जीवन को सुदम- से सुदम घटनाओं की उन्होंने अभिव्यक्ति दी।

शीणण चाहे किसी प्रकार का क्यों न हो, रैणु उसके निरीधी रहे। व्यक्तिगत जीवन में भी वे इसका मुकाबला जत सभ्य तक करते रहे। १९४२ के लापोनता-आंदोलन से लेकर १९४७ का नैपालो-क्रांति, तरफ-बातु स्वाधीन भारत की विभिन्न समस्याओं की लेकर एवं अंतिम समय में आभात-काल तक वे अमानवीय-शीणण का विरोध करते रहे। १९७५ में फ्रमजी एवं अन्य सरकारी अंतर्गर्णों का आग रैणु का ईमानदारी का प्रमाण है। यही कारण है कि रैणु का कहानियाँ में विद्रोह है और शीणण

की ऊँट फूल से समाप्त कर डालने या उल्टा देखा है। उनका ठेस, पंक्ताइट, गिरपंक्को या सगुन, पुरानी कहानी : नया पाठ, उच्चाटन, बाबाद पारिन्दे, बाबु-सादा, केना-जीगिन, अगिन्तीर, मिनि किन या क्यूरो एवं दसगज्ज है इस पार और उस पार कहानियाँ जमानाय जीवण के विरुद्ध संनाद करती हैं।

“ ठेस ” कलाकार-मन की कहानी है। कलाकार जीवन-जगत् के प्रति अत्यधिक कोदमल होता है- लीना या बाहिर। यह सौदम्यता हो एक तोमा पर जाकर उसके जीवण में तक्षक बनती है। “ शिरकन ” पट्टा-बसा का गुपिक है। ऐसा गुपिक शिरकन गाँव में ध्यंर जीवण का शिगर ही रहा है। कीर्ति नरां पृष्ठता उसे जब - “ एक समय था, जबकि उसकी खंड्या के पास बड़े बड़े बाबू लोग” से नवारियां धारा रस्तो पार। ये लोग पूछते तो नहीं थे, उनकी सुनान्य भा करे थे।^{२३} लेकिन आज उसे कीर्ति नहीं पृष्ठता। रेलोकारो के पला भी गाँव में उनकी गिनती नहीं होती। लोग उसे केदार ही नहीं केदार विमलते हैं।^{२४} यह पारिवारिक व्यक्तिवाद की देन है और व्यक्तिवाद पूंजीवाद को। पूंजीवादी समाज में हा बरहू एक सिंह होती है, तीव्र जो प्रहार करता मो। कला की वास्तविक पहचान यहाँ कलाकार-भाव और उसकी विजय-उपयोगिता से की जाती है। यह बहुत बड़ा बंदर है कि सामंतो-समाज में अन्य दस्तकारों का तरह हा सामाजिक जीवन में कलाकार का स्थान किस्त तथा सुनिश्चित था, परन्तु पूंजीवादी समाज में यह नहीं है। दूसरा कारण निरंतर बढ़ता समाधिकार है। और इसा समाधिकार पूंजीवाद के जमाने में कलाकार की स्वतंत्रता निरंतर विस्तृत होती जाती है। समाधिकारवादी पूंजीपतियों के लिए कला का उल्लेख, जो बूढ़ो पर अभिमत समूह के लिए भाग गुजारने के जमाने से अलग युग नहीं है। बाकी कला के लिए बड़े-बड़े बेन माध्यम हैं जिन्हें वे

मुसफ़ी के प्रति और नैतिक आध्यात्मिक प्रष्टाचार फैलाने के साधन के रूप में शीश्या के लिए प्रयुक्त करती हैं। यों वह दुराह के प्रभाव की वजह से विरह में लड़ जा रही होती हैं किन्तु हम यहाँ में सहायक रूप में जो अभी साम्राज्यवाद को गिराकर दे रहे हैं तथा जिनमें लोक-संस्कृति के पारस्परिक रूपों की जीवनाच्छा ज़रूर नष्ट किया जा रहा है।^{२५} हमारा देश को इसी प्रकार का है, जहाँ लोक-संस्कृति पारस्परिक सम्बन्ध नष्ट हो गये हैं, हो रहे हैं। गिरकर जैसा स्थावर इसी लिए कष्टमय जीवनापन कर रहा है। अब वह गर्व में रहकर निर्दोष शीश्या का शिकार हो रहा है। गाँव के लोग उसे कहलाकर एवं पुकार कर शीश्या कर रहे हैं, किन्तु अब - क्या ? यह कहलाना और पुकारना भी धारा रह गया, अब तो जबरदस्ती बेगार लेना चाहते हैं, गाँवों में उस पर दुराह है नहीं। जिस पर कुछ है नहीं उनका ही भाग्य भी सहायक नहीं है। यहाँ पर भी दुष्टता है कि गिरकर के शीश्या में उनका आर्थिक-विवर्धनता के साथ-साथ उनका मित्र-जाति भी सहायक है। भारत में गाँवों जाति का विस्तार भी बहुत स्थावर हो जाये, उसे भी नहीं छूटता। इसी कड़ी विडम्बना और ही भी क्या सकता है। शिकार तो ऐसे जिनमें और निम्न-वर्ग के स्थावर का प्रतिनिधित्व करता है, वरना ही अल्प स्थावर हैं, जो शीश्या का शिकार हो रहे हैं और जहाँ उनके लिए उनको कीर्ति-सहायता न करे शीश्याजारी तत्त्वों की कृपा दे रहा है।

“लोक - विविधता” का हारापन और “मिथिचित्त” का म्यूरी का कुलपति को भी भी ऐसे ही अमान्योय शीश्या का शिकार हैं। हारापन एक ऐसा शीश्या है, जिसका माना सुन्दर शिर्षा के मुँह दोड़े जाते हैं - उनके कपड़े को दोबारों पर गाम्भीर्यने रेगाड कमला और प्रचारि भारत-प्रसिद्ध स्थावियों को तबारी सटप रह फें। साथ प्रती-क वधवा सटो-फिफ्ट को तरह को जोरों। फाल पर विभिन्न वाय-यंत्र बिली हुं दे।^{२६}

जिसे बच्चे-बच्चे स्थावर सलाम करते थे, किन्तु वह स्थावर आज अपनी

स्थिति का वर्णन करते हुए कहता है—“यंत्रकार नहीं या कारोगर । कैपूरा
 महं कह सका कोई ।— यह ही कभी कभी का फल मीन रहा हूँ, सुने ।
 बेजान लकड़ी, तार तथा कूड़े बर्तों का छुर चढ़ाकर जीवन बिताने के लिये
 बीर-ज्वा बारा है अब ? स्थापित जीवन बिता रहा हूँ ।—” स्थापार को
 ऐसी इलाक़ा क्यों नहीं रही— इतिहास प्रमाण है। कुलपतिया को माँ फना
 देता जो स्थिति में गाँव में ऐसी हो है, ऐसी कि सर्वशिरा-का को होती है।
 उसके “हण्डर पर आज हावन के फूस भी नहीं । बठार-उम्मीद सात पक्षी
 कुलपती के बाबूजी मुखमावावा में जाह — जमान सब फाँककर बासिर मा
 फाँक में बाहर की गयी । धार के लौक में, कुछ साकर भी रहे । तब ही —
 कुलपती को माँ गाँव — धार के विमानों के धार में बूट-बासकर गोदा का बक-
 लीलो सतान को पालता रहा । हाथ में एक गुण था जिसने बाराण चौड़ा
 पूछ जीर प्रतिष्ठा होती था । अब वह भी नहीं । अब, शायद-अपार, स-
 त्याहार के अन्तर में पर “मिथ पर जमान में ही देवा-देवताओं का लखवार
 के अलावा पाहल्लेय को लखारों लटकाई जाता है । “बाहसनीय” प्रमाण
 हैं निम्न निम्नो जाधुम कूँवादा — युग में हुआ है, जिसने फना का
 लौक फूट नहीं । अर्थात् लोक-संस्कृति में प्रलिनिधि कला-सैविका फना अब
 मुखमारी के का जीवन जो रहा है। जेणु सदैव लोक-संस्कृति के मध्यमे रहे हैं,
 यह बात उनके उपन्यासों में सिद्ध होती है। इसलिये के इस जीवन कहानी का
 “सोसिजिस्टो-समाधान” प्रस्तुत करने के चक्कर में व्यथायें पोंडू दे देते हैं, जिसने
 परिणाम फना के सम्मान में होती है और सम्मान कराता है, पटना का एक
 रहस्य मनातन बाबू । समातन बाबू का उद्देश्य फना बंधन उसका बंधन का
 सम्मान करना नहीं, बल्कि उसका नव-नीयता कन्या कुलपती का वैशिष्ट्य
 स्वीकार है । वे लिखते हैं “समातन लोक में फूटा हुआ है। निश्चय ही रातों
 ही उसने बाँतों में नांदे नहीं जा रहा । जाँत फूँटती ही उसकी लाता है— उ

जैसा गीरे बैठा हुआ है जो उसे बसिं तरीर कर देखता है और बूझा है- यह क्या कर रहा है तू ? बत्तारकार ? कुमारी की अपवित्र रीति तू ? अपनी वासना पूरी करने के लिए रत्ता का यह व्यापार ? हा हा हा हा----
 जिग खैर कौन हंडस्ट्री ? हा हा हा --- हंडस्ट्री अगर मैं - तुम्हारी फीवटरी मैं , कुत्तपत्ती , और उसका माँ का जिन्ह मीथरी बुरी से मीरगा न ? मधुबनी रेलों का प्रभुता जाता, बसता अधिकारी कमर तु लीक-अत्याज वातावरण का पदार्थ डालकर अपने प्राइवेट कैमर में बैठा रहता और कुत्त-पत्ती, उसको माँ हा नहीं बान् मीथरी का सादाब मैं तुम्हारी 'प्लेटाटर हाउस' में बिके होती, बाँतो रहता --- ?

शीणण के विभिन्न प्रकार हैं। 'पंचलाइट' के गोपन का शीणण भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। गोपन दूसरे गांव से जाकर उस गांव में जाता है, पंचों को अच्छा ये विरलद । पंच अर्थात् जो लोग जो जाफि कृष्टि है बहुत सम्पन्न हैं। सम्पन्न व्यक्तियों का मधु हा गांव में राज करता है, जिस प्रकार बड़े मूलामा और पूजापति देत पर राज करते हैं। जिस प्रकार देत को हमारे गांव है , उसी प्रकार बड़े मूलामा और पूजापतियों का बजाये ग्रा-मीण मूलामा और महाजन है । दोनों का बगै-बगैर एक हा है, अतः गाय-प्रणाली भी एक है। बड़े बन्ने के लिए हरिवा और भाग्य तलायक नया, बान् उनका बसता ही कण है । इस शीणण से गोपन के वजह- नहाँ एक पाता । पंचों को अच्छा ये विरलद एक तो उसे जाना हो नहं जाँदर या और जा भी गया तो उनके बं को मंथुष्टि के लिए उनकी दावत को बगैर, सिन्धु जाधुनि-पूजावन्तः युग का गंजन गोपन इस बात को जानता है कि वह स्वामीन मादत का नागरिक है, अतः कहां भी रह सकता है, रहने के लिए स्वतंत्र है। सर्व-सम्पन्न ग्रामीण पंचों को समझता, गाय प्रणाली का यह

सुधारवात था, अतः वे इसे भी स्वाकार करते, स्वीकार करने का स्पष्ट
 कार्य था - उनको ताबालाही प्रभुति पर हीन । पंच इस बात को अच्छी प्रकार
 समझते हैं कि आज यदि गोधन की छूट मिल गई तो इस जीर में कौन हथका
 लान उठा सकता है। अतः पंच इस तथ्य के प्रति सज्ज है जिससे मणिष्य में
 उनसे अस्तिविषय पर किता प्रचार का संकल्प जा पाये । यहाँ यह भी महत्वपूर्ण
 तथ्य है कि जीधन सर्वहारा है, सर्वहारा का शोषण तो हमने घमेलानों
 में भी किया है, फिर ये कैसे बर्चित रह जाते । रैण्डु मिलते हैं दुर्गो गांव से
 जाकर का है गोधन, और अब तो टीले के पंचों की पान-मुपारा लाने के
 लिए भी कुछ नहीं दिया । परवाह हो नहीं करता है । इस पंचों की मौका
 मिल गया । इस लक्ष्मी भूषणा । न देने से दुक्का - पाना बंद । २३१
 निरपराध गोधन की इतना बड़ा सजा ? कारण भी बताया है कि वह दुर्गो
 की है और गाना गाता है- गाना गाना जीन का अपराध है। यहाँ यह भी
 दृष्टव्य है कि पैट्रीमैस लरादने के लिए किया महाजन-मुखाया ने भी नहीं
 दिये, बल्कि पिछले फट्टर महाने से बंड-भुमाने के भी जात करके महती टीला
 के पंचों ने पैट्रीमैस लरादने के लिए किया महाजन-मुखाया ने भी नहीं दिये,
 बल्कि पिछले फट्टर महाने से बंड-भुमाने के भी जात करके महती टीला के
 पंचों ने पैट्रीमैस लरादा है। कि दण्ड-भुमाना किस पर हुआ होगा, स्पष्ट
 है, गोधन- की निधन और विपन्न लोग पर । बड़े बादो पर भुमाने
 करने का कौन सास हो नहीं कर पाता । अतः पंचों का चीन का पर रोचना
 होगी, पर जमागामी उनमें और भी ली हैं — उन लोगों के जिन्हें पान कुछ
 नहीं है। जिन्हें पान कुछ है हो नहीं, उन्हें लिए उताव और और परावर
 है। किन्तु फिर भी उसे बलाने के लिए गोधन की आवश्यकता पड़ती है और
 गोधन उनमें है दण्डानुभव प्रति है परित्यक्त है। रैण्डु यहाँ इस बात की
 स्पष्ट करने चाहते हैं कि इन पंचों के यहाँ कौन नियम कानून स्थापित करें

संविधान बना नहीं है, जो वे कल जल्दी हैं और गौरीमल जलाने के लिए
 गोधन हमने मुक्त कर दिया जाता है। यह क्या है? जिस कारण यह है कारण
 गया किन्तो, उसी को हट दे दो जाती- "तुम्हारा साथ तुम माफ। तुम
 गायी सलीमा का गाना।" और गाँव में मस्ती है रही। यही सब ली
 देश में ही रहा है। देश के प्रत्येक नागरिक पर समान रूप से लागू भारतीय
 संविधान के दुम्हे सजावारी बगैरे देनन्दिन कर रहा है। संविधान का उत्पन्न
 उन्हीं लिये एक मन्त्र ही गया है। राजीव के लिए क्या वही भारतीय संविधान
 है जो अन्य नागरिकों के लिए है। मेन्का के संविधान और गोन्विया के संविधान
 में भी अंतर है, यद्यपि मेन्का सामान्य रूप का लेण्डा में नहीं जाता, तथापि
 सजावारी-बगैरे का मुटिल र जनाति को छिन्नार तो है ही। यही सब है कि
 गोन्विया गाँवों जिना भारतीय नागरिकता ग्रहण नियमावली १९६२
 हैं- ठाठ में और मेन्का का घर में अपमानित करके जिनालता राज-धराने का
 यमिगत एवं रुद्ध-यौव माफता समझाया जा रहा है जो राजीव-बिंदरा
 के कारण अत्यन्त-रुद्ध दिव्य। नारा - स्वातंत्र्य के लिए रात-दिन गता
 फाड़ दुष्टान् देने वाली बिंदरा जो का यह कार्य संविधान के विपरीत नहीं ली
 और क्या है? यदि इसी कार्य की और पीछे जाता तो क्या उसे मा अति-
 गत माफता कसकर दना दिया जाता? कम नहीं। जब देश को प्रान्तात्मा है
 किन्हीं की परवाह नहीं करता, फिर उन्हीं बगैरे ही है। मैं तो ग्रामोण
 पंच की कर सकती हैं।

हाईटे विधान का गाँव में स्थिति है बहुत ही दयनीय होती
 है। न तो यह सर्वहारा को लेणा में जाता है और न भूस्वामी का में।
 निर्दर बोध का स्थिति में रहता है, इसी कारण उसका हीनता का
 कार्यरूप में होता है। ग्रामोणजावन में जिस पर ली लफ्फे मो एक माफ
 बच रहें तो यह मा जने की फराजन से कम नहीं समझता और हीनता

करने में पाड़े नहीं रहता । रैण्ड कहता चाहते हैं कि लीजगायर्स तब
 हर जगह हैं, वहाँ कड़े हैं तो वहाँ लीटे । सिरपेन्स का गानुन का जाल
 सुहारवीरो का काम करता है। समा क्रियाम उनसे पास बाते हैं। गानुन में
 छोटे क्रियानों का अधिक स्थिति दयनीय है । फलस्वरूप वे सर्व-कर्म-जन
 का लेन नहीं दे पाते । बाद इसका अनुचित लाभ उठाता हुआ उन क्रियानों
 से केयर लेता है, उनसे लड़ा फलतः ही जाल बाड़े काट लाये, किन्तु क्रिया
 में या विराम प्रकट करने का शक्ति नहीं । सिंधाय भी ऐसा ही समांत
 क्रियाम है, क्रियानों की अपनी दानता के कारण पाँच जाल से जाल की लेन
 नहीं दे पा रहा , लेकिन हमारे कले में जी वह सेवा ले रहा है, वह सब
 मुफ्त में ही है। लीजगायर्स की यह परम्परा कितना विकट है कि वह निरंतर
 केयर में फिर रहा है— दूध, कूतार, गेहूँ, साम-सब्जी का काम सभी जाल
 या उसकी बोली से नहीं दिया । जाल में लड़कों में क्रियानों का उनसे
 होश का पैरु कटवाया है, तबला बाँटते समय पेटों को जाल से लंबाया है।
 इस केयर की वह अपना अधिकार समझता है— सम्पत्ति । इसी मुक्ति पाने
 का तरीका भी रैण्ड स्पष्ट करते हैं— परंपरा विराम । परंपराओं की कालों
 में ही व्यक्ति निरंतर क्रिया ही रह सकता है, उसी मुक्ति पाने का उपाय
 उसका विराम ही है और यह सामता सर्वोपरा बनने ही है।

अमान्यता मान्यता की लड़ होती है। मान्य नहीं कर
 हमना स्वाधीन ही जाता है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति भी उसके कलुष पर जंकु
 न ला पाये, वहाँ से लुप्त होती है— कुख्यात राजनीति का । बलात्, लूट
 और मुसलमानों में मारते मान्य के प्रति लोभना हीना स्वाभाविक है, हीना भी
 बाहिर-बीर यदि यह लोभना का पाले का शिकार ही जाये तब क्या उनकी
 मनुष्य कहा जा सकता है— क्या नहीं । स्वाधीन भारत में हमने अमान्यता
 दुष्कर्मी का मर्म-नृत्य ही रहा है। दिल्ली से सूर्य संबलित हीना है और
 सूर्या भारत में पलक भाषकते ही उसको अनेक परिणाम ही जाता है। यह

है। किसी व्यक्ति का नहीं, बल्कि संपूर्ण समाज का है। सदा जब दूसरों का कलहा काटने की छद्म राजनीति कहली हो, तब साहित्यकार का दायित्व और भी बढ़ जाता है। 'पुराना कहानी : नया पाठ' इसका प्रमाण है। सीने में काढ़ जा जाता है, लीन प्रस्तुत है। मैत्रा अपनी राजनीतिक छद्मवादी में व्यस्त हैं। अपने अत्यधिक जन-सेवक सिद्ध करने का स्वार्थ रच रहे हैं। जय-कांत मास पर मास डी रहे हैं, अपने धर्म की और काढ़ में दुबली-मरती जनता का कीड़ा नहीं सुन रहा। क्योंकि 'ठाकुरों और भयों की क्या कीड़ा काप नहीं। वे 'हमडोर' और 'जाउटडी' कैलों में मस्त हैं- मैत्र-कांत।³⁴ जनता का दोष दे-देते कंठों में चम्की मा जाती ही नहीं। --- मास ~~का~~ मास मास कर लाना अच्छा, और रिश्वत काब लूना पड़ी नहीं हूँ। कि: हि ॥ --- वह 'कू-कू' बंक्ता 'पोलियर' के गुरुगुरु की कुसलता रहा था, जानते ही ?--- सब औरों को ठ ठ ठ। किन्तु जनता के लिए किसी सरकारों सहायता की मैत्रा का गरीबी और वह दिया 'पचास टिन गिरासक, दस बीरा आटा और चावल' के साथ 'रिश्तेदार' को नाव फेंक कर लो लो लोस पारा में डूब गई। --- लापता ही नहीं।³⁵ अंतिय व्यक्ति में मैं ऐसा स्पष्ट कह देती हूँ--- 'लापता ही नहीं, अपार जन-सेवक' ला गये। जनता की स्वातंत्र्यसहानुभूति केरु उसका मत पाने के सातको ये मैत्रियी आन्धरायता की मूल चुके हैं, जिस प्रकार मैत्रियी के लिए मर्त्य की आवश्यकता होती है, चाहे वह किसी का क्यों न हो, उसी प्रकार हम मैत्रियों की आदमी के रूप में आवश्यकता होती है, आदमी चाहे जैसा भी हो।

चिरंतन हीराण ने गुमास्ता जीवन की व्यथना कर दिया है। जयकांतों और महाजनों प्रथा के सम्य मातृमय जनता काल और भल में मरती थी, किन्तु आज स्वाधीन भारत का जनताओं सरकार की न त मोतारों के कारण मर रही है। मार्गीय प्रथा में जा-सा सम्यक इतने पारंगत सम्बद्ध रहने

वे हि एक ही मरता देखकर दूसरा इनकी सहायता कर देता था। जहाँ-तहाँ
 यन्त्रि-विष्णु थे, लेकिन आज वे मृतवासी की तरह दुःखमय हैं। कृष्ण-
 वासी सभा में तब मानवाय सम्बन्धी नई तिलांजलि दी जा रही है।
 मानवीयता हाहाकार कर रही है- यही नशा है जो उसे जहाँ पहुँचाने वाला।
 इस वृद्ध मानवीयता का सबसे बड़ा कारण कनकाल का विनाश है। जहाँ-
 आज का समस्त कार्य-कारण व्यक्तिगत मुनाफे पर आधारित है और
 व्यक्तिगत मुनाफा जहाँ जहाँ है वह प्रष्ट और अमानवाय प्रकृत है, अतः
 इस प्रष्ट और अमानवाय-परम्परा की निरंतरता प्रदान करने के लिए
 व्यक्ति दूसरे का मरता हाटने में विवश था। वेद का अनुसंधान नहीं करता।
 एक - का कला दूसरा हाट रहा है, तीसरे का लोभ। अर्थात् कृष्ण-
 वासी सभा में मुँह में मन्त्र-मिथ्या पीतकर वह व्यक्ति कुरा किये पुर रहा
 है। वह वादना एक-दूसरे-बातचीत है, डरा हुआ है। व्यक्तिगत की इतनी
 बड़ी दुनिया जहाँ जहाँ रही। मरने-वाला इस व्यक्तिगत-मरण के मरु
 रहा है किन्तु ग्राम में बड़े नशा। स्वाधीनता के मरने की मरु और भी
 बड़ गरीब है। फिर भी गाँव का आत्म यह सम्बन्ध है कि यह व्यक्तिगत
 का संघर्ष मरने में का लोभ, इसीलिए वह मरने की और कनकाल कर रहा
 है। व्यक्तिगत व्यक्तिगत की मरने-दोड़ के कारण उनका हुआ और
 व्यक्तिगत की मरने-दोड़ मुनाफे के कारण। मुनाफे का मुनाफा ही मरने
 है और इसी ही मरने के लिए ग्राम में निरंतर कनकाल कर रहा है।
 इस कनकाल-परम्परा का योग्यता गीत (गीतान : १९३६) में लीला
 है। गीत ग्राम-हीनता को मरु-प्रति। वे बचने के लिए मरने की और
 मानता है, परन्तु मरने में ही वृद्ध कीन देवता बैठे हैं, जो हीन व
 की। उन्हीं नेट उन्हीं में बड़े हैं। मरु पर उन कीन हीनता का अतः वे
 मरने में मरने की भी अधिक हीनता के विचार लीते हैं।

ग्राम्य जीवन में व्याप्त हीनता को दूर करना देने में स-
 का भी हम जिम्मेदार नहीं हैं। जब तक जिये गये भूमि-पूजा और
 कृषि विवास हेतु बनाये गये नियमों-उपनियमों का काम नहीं उठाकर
 कामों को हाथ भिठा है, जो समाचारों-पत्रों का आलाप संस्कृति को जलाये
 हुए हैं। समाचारों-उन्मुख, हरित क्रांति एवं अन्य सरकारी सहायताओं ने
 गरीबों की ओर का गरीब बनाया और ऊपर की हप्ता का इकर दिया,
 जिससे कृषि के विकेंद्रिकरण के स्थान पर केन्द्रिकरण हो चुका। इस
 केन्द्रिकरण का सत्प्रक्रिया ने सामाजिक कृषकों को भूमिहीन - प्रथम
 बना दिया। यह कहा सुमरिय है कि भूमिहीन-अधिकांशों को संस्था निर्धार
 बढ़ रहा है, क्योंकि सर्व-स्वतंत्र मूलभूत और पूंजीपति केमालों ने उत्पन्न
 पनरहित से कृषि-भूमि ग्रह पर रहे हैं। मूलभूत के अति विकृत स्तर में बैठा
 पूंजीपति भी नष्ट हो के काले-धन की हिलाने के लिए कृषि-भूमि ग्रह
 कर रहा है, जिसने भूमिहीन-अधिकांशों को संस्था बढ़ाया जा रहा है। मूलभूत
 प्रभावशाली बाजारों परणालिह ने इस पर किता प्रकट की है, उन्को किता
 का एक प्रमुख विचार यह भी है कि गाँव से लघु-उद्योग भी नष्ट हो गये
 और कृषि-भूमि का भी केन्द्रिकरण हो गया, ऐसी बमाल्मोय स्थिति
 उत्पन्न करके बाद का सरकार बन्की और ध्यान नहीं दे रही - गंध
 तो बिल्कुल उबड़ गये हैं। वहाँ गौरी-उद्योग बना नहीं है। ताकत है, दिया-
 सलाह है, बुद्धि है, हट है, बुद्धि है, बुद्धि है, रंगरेज है, बुद्धि है,
 बुद्धि है, सभा तो काम कर दिया हफ्ते। तो फिर खाल है कि देशी-बाजारों
 को मिटे ? बाव हमारे देश में बाजारों को तादाद तैलात कोसदा है।
 यानी देश कोसार बाजारों का बाबादो है से तेरे-बाजारों बाकि हैं और देश
 के कुल बाजारों में तोस प्रतिकृत कृषि बाकि हैं। यानी बात करोड़ कृषि
 मजदूर बाजारों देश में है है बाई-उनके लिख्योजना ? बाई-बात नहीं है
 बाजारों के पास ? बाई-मोकर है इस खाल पर ? जहाँ बाजारों में, तो देश

में किसानों की संख्या १५ फीसदी थी। आज यह गया है- ४० प्रतिशत। हमने सभी "माजिबत-कारना" खत्म कर दिये। ये सब जमीन हिन जाने के बाद लेत मजदूर हो गये। यह १५ फीसदी से ३० फीसदी हो गये। देश के कुल किसानों में हमकी संख्या ४० प्रतिशत है। यहाँ से मुम्बई न मजदूर बन रहे हैं। ये भी लोग हैं (४० प्रतिशत) जिनके पास आज चार बोधा से कम जमीन है। १८ फीसदी ऐसी हैं, जिनके पास ४ बोधे से ज्यादा जमीन है, यानी १८ रहे गये। जिस किसान के पास पाँच बोधा जमीन है, वह क्या लेता मजदूर होता। उसका जमीन उसके लिये और उसके परिवार के लिए हो पूरी नहीं है।^{३८} उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि ग्रामीण जीवन की समस्याओं को सरकार ने सदैव महारा है, इस कारण "ग्रामीण गरीबी" के बीच कैरीफाना और और परिश्रम व्यापक है, और निम्न-मजदूरियों, मुद्रास्फीति और बावश्यक उपस्थिति कमजोर को ऊँची कीमतों के कारण उनका खतरा होती जा रही ताकि उनमें किसी को जब कि किसी को मजदूरों पर बोझ का काम करने पर मजबूर कर देती है, और वह अपनी की दारों को तरह के व्यवहार के लिए पैसा करने पर मजबूर हो जाते हैं। उड़ोवा, बिहार के पिछड़े राज्यों से पूर्ण उत्तर-प्रदेश और मध्य-प्रदेश के प्रोत्साहित इसी से प्रति वर्ष छाती से मजदूर स्थानान्तरण करते हैं। प्रष्ट प्रशासन को लापरवाह और भ्रष्ट प्रशासन के कारण ठेकेदारों, भ्रष्टाचारियों और उन्नी दलालों द्वारा इन अनाथ मजदूरों को लोचन बंद कर दिया है।^{३९} अन्तरगत रूप से बलते इस जीवन का अमानवीय कर्मों की रणनीति स्वाकार करते, जहाँ वे अपनी कहानियों में इसे जड़-भूत से समाप्त करने हेतु कटिबद्ध हैं।

रणनीति का गाँव हिंडोना- जीराहा है, इसीलिए वे अपनी परिष्कारवाणी की अपनी गाँव के बाबाबा गुरुदास से कहते हैं। रणनीति ग्रामीण-प्रसायन से बड़े दुखी थे। जिसे देखी कहते बहर जा रहा है, शहर

हुआ था कल्पतरु, जिसके गांव बैठ सब सम्मानार्थी का समाधान स्वतः हो ही जाता है। गांव में रहकर करें मां क्या, वे मरफेट रौंटी नहीं भित्तो। केवल गांव में वसोतिर रहने का कसबू पाते रहना कि हमारा गांव है, यहां हम जन्मे हैं; मूर्खता है। भावुकता है। जन्म है बाद पेट मां दिया है, और जहां पेट नहीं भरता, वहां रहने से क्या कामकाज। वसोतिर- "उजड़े हुए छिंडाना -मठ पर लंबड़ा बनाकर गलतुल का नाम लेने वाला सम्मान कावा जो सूरतदास बैरानी कहता है, "सभी जायें। एक-एक कर सभी जायें---।" ^{४०} कावाजी की यह भविष्यवाणी। यह मितलता है- "गांव है जलम-जलम लड़ने गांव छोड़कर भाग रहे हैं। क्या नहों, शहर में पानी में क्या है कि जो सब शहर सब कुंठ मां पा लेता है फिर गांव का पानी हमम महां होता। गौपिम गया, जहाँ साय पंच-कोड़िया और मुजवा की लेकर। उजड़े बाद, सामन -टीते के दो बड़े जगुन भितर और गैरा भा। ---" ^{४१} धारे-धारे शहर जाने का रंग बढ़ रहा है, फौल रहा है- गांव में रहकर कुछ आय मां नहों, शहर में रहकर रिता फताफी, सब मां गांव लम्बी रौं की कमाई।" ^{४२} इस उजाड़ होते गांव की भविष्य परिस्थिति का वर्णन कर रेणु देव की प्रत्येक गांव में स्थिति का वर्णन करते हैं। यह रानोजीह ती मात्र ली प्राक है। देर के तमस्त प्रसाध से ऊपर गांव इसी रानोजीह का तरह उजाड़ हो रहे हैं, और सरकार चुप है, जैसे कुछ ही नहां रहा फौ।

गांव में शोषण का चिह्नतो छुं भूमि-व्यवस्था निदीयः है ही, इनके साथ ही महाजन-त्रया मां कम नहां हैं। महाजन है एक बार जो बनकर में फांस गया, फिर जाशीबम उसकी बुद्धि कहाँ? वादीकता के बाव को- को जादीनीकरण और कृषि-विकस का गति में होती नहें, की- की ही हम महाजनों का शिकंसा और कसता गया। यह ही सस्ता है कि हमके प्रकारों और कायं -प्रणाली में जंतर रहा ही, किन्तु फिर भी

यह निश्चित है कि इनके कार्य-प्रणाली और भी आन्वयिक एवं निष्पक्ष बनी
 है, सरल नहीं। आज ग्रामोण-आवन में इन महाजनो का बहुत प्रभाव है,
 इसी प्रभाव के कारण उन्हें राजनैतिक-क्षेत्र काया प्राप्त है, जिनसे वे नरोन्नी
 का शोषण और भी करहमी के साथ कर रहे हैं। रीणु को 'उच्चाटन' कहानो
 इसी आन्वयिक-प्रणाली के विरोध में लिखा गया अत्यन्त कहानो है। रामविलास
 भिखर महाराज से उनकी उधार लेकर विवाह कर लेता है। विवाही-परिस्थिति
 भिखर के लक्ष्मी कहाँ से है, गाँव में ही जोड़े-जाम ही नहीं। भिखर को
 लक्ष्मी छोड़ने वाली कहाँ ? छारे गाँव में उनका लक्ष्मी कलम करने की जिम्मे
 में भी रहित नहीं। अतः वह अत्यन्त आन्वयिकता से अपने-एक-एक-एक-एक
 उपवास या कि वह गाँव छोड़कर शहर भाग जाये-वही करना है- 'दे' माल
 पहले, केत पहोने को बायो रात में गाँव छोड़कर बुधवार भागा था, राम-
 विलास गाँव छोड़कर और भिखर को नौकरी छोड़कर ; भिखर का बुरा पचा-
 कर ^{४३} रामविलास के शहर भगाने पर उनका माँ और पत्नी पर भिखर के
 बर्तावहार बढ़ते हैं, एक और ती ये बर्तावहार और बुरा और गैर को असह्य
 पोड़ा। इन बर्ताव में एक मँस हा उनका अवलम्ब रहा है- वह ^{४४}। सोमो
 मँस सीलनेक को यमको भिखर को और वे भिखरों के जितनी बर्तावहारों को
 सहन किया है, उन्होंने इन दो बर्तावों में। आज रामविलास लौट बाया है।
 वह भिखर के बिना-दंत की उलाह पँकता है, शहर को जागृति का कुछ और
 उसने माँ ग्रहण किया है इसीलिए गाँव में कहाँ है "जब इनकी विलसिया मत
 कहना सीधे"। भिखर को 'परी-परी' के पागो कर दिया। बीला, 'विलसिया
 मा बीली, रामविलास कहिए। ^{४५} --- भिखर का नाक पर भी लक्ष्मी
 का 'पुलक' पँक दिया। ^{४६} भिखर मँकका रह गया। अन्य ग्रामोण
 भिखर का कूता बने हुए हैं, उनमें साहस नहीं कि वे सब भिखर इस प्रकार के
 बर्तावहारों का विरोध कर सकें। रामविलास के नेतृत्व में गाँव के दलितों का
 एक संघठन बनता है, जो शहर जाने के लिए तैयार है। शहर जाने का मुख्य कारण

गांव में कोई काम न होना और भिन्न के वस्तु शीघ्रता का विरही है ।
 सभी रामविलास ही प्रसन्न हैं, उनको प्रसन्नता का कारण मात्र यही है
 कि उसने भिन्न के मनमानेपन और अमानवीय व्यवहार पर रोक लगा दी ।
 सारे गांव में रामविलास को व्य-व्यवहार ही रहे हैं, "भिन्न का बहर-
 दांत" उसने उखाड़ फेंका । गांव में उस बात की लेकर रामविलास का जे-
 वेकार ही रहा है। गांव के हर घर में उसका नाम दिन में एक बार लिया
 जा रहा है। -- बेटा ही तो ऐसा । -- -- भय ही तो ऐसा । उका फलान
 गांव के मासिक भिन्न का बीवाल ही गया है । अब धामन रामपूत टोले के
 जमान भी बाहर बैठते हैं। दिन भर चय बोझी, ताश और रात में कौजी
 ताश "। ^{४६} रामविलास के ली ठाठों की देखकर गांव में जोन रहना बाह्यता
 सारे गांव के मौजवान गांव लीड़ने की तैयार हैं। अस्त हैं गांव के इस अमान-
 वाय और दम्भीटू वातावरण में। कलमा-वलाध मन में उछलें तरंगोपात कर रहा
 है, अठौतियां खेल रहा है- बात दी बात में घुलना पैसा, यहाँ पूरे जिनो
 में संभव नहीं । पटना है या स्कॉट, उनको समझ में नहीं आ रहा । अब बाहे
 कोई क्यों न ब रोके , वे अवश्य पटना बावेंगे, यहाँ रहे कर कोई भया करेगा।
 क्योंकि सक्के सब रामविलास के पाई पड़े हुए हैं- सहर जाने के लिए , मामी
 पटना में उन्हें इन्दिरा-बाग़ीचा मंत्रिमण्डल में मंत्रिपद भित्ति वाला ही- "राम-
 विलास पैसा, इस बार आपकी साथ में भी जाऊंगा । -- मैं पो। -- मैं पो ।।
 -- मैं पो ।।। -- यहाँ बात पर हस्ताक्षर करते हैं बिना एक ही बात लकी
 हैं । वहाँ, एक महोना में दी गई । राम विलास काका, मैं पो। -- रामवि तस
 पाहुन, मुली का मुल्लिमा । रिखा-डेवरो नहीं तो जिया लोटल में ही
 रहना दोजियेगा । -- साला, हम बिनियां बादाव बैयेंगे। -- मामा, बाप उम
 दिन कह रहे थे कि रद्दो कामज -ताशी- बीतल का कारबार भी खुद मफा
 वाला होता है। -- ^{४७} और बात में , वही सतही समाधान कि "पर की
 बायो रीटी मता । -- उधर में क्या है ? जितना आमदनी होती है उसे बांगुना

छह वर्ष होता है। नाम बाकि नांव है--- भिखर जो ने बाको काँधे का
 एक पाठोँ का छुट नहीं लिया । शहर में इस तरह की छुट देता ? --
 पटना नहीं या दिहेंलो , जो क्या करने नांव में है, वर इन्टरन में जो
 नहीं । ^{५५} जिस ज्वलंत समस्या की रैण्डु ने उठाया था, वह बीच में हो
 बटक गई । कहानी की समाप्ति तक पहुँची-पहुँची उन पर ग्रामोना-मीह एवं
 बाबुलदास हाको हाँ गया और इतने अच्छे विचार पर कहानी जिसने वाले
 रैण्डु बीच में झीड़ जाग गये । इसका कारण उनको समाजवादो दुष्टि ६ ।
 समाजवादो प्रामुख परिवर्तन है क्या भी समर्थक नहीं रहे, उसीलिए उनका
 समाजवाद बाज ही पकीं को पाठोँ का समाजवाद बन गया है । " भिखर जो
 छुट नहीं लेती ", यह ठोक है, " किन क्यों ? इतने मूल में उनको विचारधारा
 काम कर रही है, रैण्डु ने स्पष्ट नहीं किया और उनका उसी हृदय-मीहो
 मायुक्ता में बहकर रह गये और निगम्य भी दे जाता कि अब रामवि तब नांव
 से क्या नहीं जायेगा - नांव इन्टरन से भी बहकर है- गलत है । भिखर जो
 जानती हैं कि मली-बल माँति जानती हैं कि रामविनास यदि पटना फ्ला गया
 तो उसके साथ नांव है समा जीवमान मली जायेंगी । उन्हीं नांव से छहवें दामे
 पर यहाँ रह हो काम जायेगा , जिस पर उनको जीवना को दूसरी तत्वार
 पल सके, दूसरे यह कि पटना जाकर ही रामविनास की तरह लफ्फे बसाकर ले
 जायेंगे, फिर उनका महाजना-बुद्धा की छुट स्वाकार नहीं कोना- करने को
 बाबुलदास भी नहीं छोड़ो । इसी दमन-कड़ की यथावत चलाने के लिए भिखर
 जो रामविनास की फुसलाते हैं और यह है कि फुसल माँ ६ जाता है।
 लेकिन यह सब मत जाता है कि ये वहा भिखर जो हैं जिन्होंने उनी नांव झीड़ने
 की विवह किया था । वे सरे काम उसका अपमान करते थे- " सारी लफ्फा
 लेकर " बिहा-गंगा " किया । अब बीबा को टांग पर हाँग बहाकर सीते ही
 और ये लफ्फे को बात पूरा गया ? हाँ ? --- मैं यदि लफ्फा नहीं देता तो

अपनी "गुलाम" बेटी लाते, रोज ? हाँ ? ^{४९} और उसकी सचर भागने का
 उसकी माँ-बहिन की रोज परेशान करे, यमकी देते, रामविलास को माँ
 दुःख की शब्दों में कहता है- "बेटा । अब क्या बताऊँ ? अब उस दिन
 मियर का बड़ा बेटा दूध लेने आया । दूध पिल गया था, तब । कहाँ से
 देता ? ती बहिन उठाकर जाती यमक बोम हँकरी बीला- "जमाना हाँ उसट
 मया है। तबों ती, वही टीले से पैर के कदमे औरत का दूध दुहकर ले गये हैं
 सिपाही - बरकंदोज । ^{५०} आज वहा मियर को रामविलास पर मुद का
 लफ्फा डीढ़ रहे हैं और रामविलास उठे उनको न टलता न मानकर सत्यवता
 मानता है, रोज़ वहा पर उनके हृदय परिवर्तन को मुहर लगा देते हैं- यहा रोज़
 को बमकीरो है। वहाको बर्तमान जीवन को विनमता और कुठिलता पर
 अपनी संपूर्णता के साथ व्यंग्य करते चल रहे थे, जो जं में जाकर गतहो
 समाधान के कारण प्रभावपूर्ण बनने ली रहे जाती है ।

स्वाधीन-भारत में जिस राजनीति का विकास हो रहा है,
 मनी-बादमियों को चीज़ नहीं रह गई है । बाकी स्वार्थ-सिद्धि, प्रष्ट-बयकरी,
 अस्मरवाद, हरया, बरिभ-बनन एवं भार-बलीबाबाव हो वर्तमान राजनीति
 के मानक बन गये हैं । जो जितना बड़ा प्रष्ट और अस्मरवादी है, वह उतना
 ही बड़ा राजनीतिज्ञ है। ऊपर से तिर नाथे तब यह प्रष्ट अस्मरवादी कल-
 फूस रहा है। अपनी जंठ को तुष्टि और पर-परिवार को पाटी बनाने वाली
 उदिरा नाथी उग्रता मैतव कुलता से संपाते हुए हैं । हर दल (साम्यवादी
 की डीढ़कर) इसी प्रकार से बीड़े रखते अपनाकर सदा संपातना चाहता है ।
 राजनैतिक-नाटक हर फल पर हो रहे हैं, एक दल अपनी जितना वे साथ है
 और दूसरे फल अन्य जितना वे साथ । सदस्य सफर्यों के मौल जित रहे हैं।
 भारत के राष्ट्रपति को मौलम संजोव रैड्डी ने भी इस प्रकार के फरकर
 परिस्थिति पर गहरी चिंता प्रकट करते हुए कहा - "विधायकों की जनता

की भावना का प्रतिनिधित्व करने या उनके लिए हितकारी साधन होने का ज्ञात करना चाहिए। उन्होंने कहा, इसे मूकक विरोध सहक हाथ सड़ा-इतने में धान लेने से विधायक का पक्षी कर्तव्य बोझ रह जायेगा। विधायिका का मुख्य काम एक नमर कायित्व है। इसे हलके-फुल्के नहीं लिया जाना चाहिए। जनता बताती है कि कुने नये विधायक सदन का आयोजन हो व वहाँ में उनकी भी योगदान करें।— एक और चिन्ताजनक बात यह है कि जन-ज्याण के महत्वपूर्ण मामलों पर कक्षा के दौरान विधायकों को उपस्थिति कम रहती है। हमें ऐसा कोई रास्ता खोजना होगा जिसे सरकारों को तय्यारी को तय करने में, सरकार के कार्यक्षेत्र को समोपना करने में व विधायिका प्रक्रिया में अधिक से अधिक सदस्यों की भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके।^{५१} राष्ट्रपति की यह चिन्ता भारत में देश का वर्तमान राजनैतिक गिरावट की स्पष्ट करती है। रणु में उसी बहुत दुखी है। स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद से फौजी आभाषणों के विरुद्ध है, इसीलिए वे राजनीति छोड़ साहित्य में चली। साहित्य में भी उन्होंने उन-भाषीय मूल्यों के लिए लिखा, संघर्ष किया, जिन्होंने लिये वे राजनीति में कभी थे। रणु की तक इस संघर्ष आकाश से चिन्ता ही नहीं रहे वरन्, संघर्ष भी करते रहे। सम्मन-आवा की लिए रणु ने कर-कर संघर्ष भी करते रहे। सम्मन आवा की लिए रणु ने कर-कर संघर्ष किया और वो में अत्यधिक दुखी होकर शीघ्र-तनाशाहा के विरोध में पद-मना और अन्य समस्त अंतर्करणों का परिचय कर दिया - यह रणु को मनः स्थिति का प्रतीक है। इसी राजनैतिक भूतशान १ की लिए रणु अपना कहान-उपन्यासों में निरंतर विरोध करते रहे। उनको तबे एकता पत्नी है, जल्मा, पुराना कहाना : नया पाठ, आत्म-साक्षा, मैना, जोगिन एवं कर्मज्या के इस पार और उस पार "कहानियाँ" राजनैतिक पक्ष का बड़ा दस्तावेज है। "पुराना कहाना : नया पाठ" में उन अन्तरवादी राजनैतिकों पर व्यंग्य है,

की जनता को बाढ़ को रोकना ही अधिक काम उठाना पड़ेगा है। रैण्ड ने
 स्पष्ट किया है कि ये नेता अगर ही जनता के हिस्से को बारम्बार धुंधले
 देते हैं, विस्तृत और उनके साधन-सु-प्रतिष्ठा ही होती है। वही पक्ष-प्रतिष्ठा
 के कारण वे धिनीने एवं अपान्नाय कार्य करने में पीछे नहीं रहते। मानवीयता
 को जिस प्रकार हत्या कर देते हैं वे नेता। यह कहानी हमने प्रमाण है।
 रैण्ड लिखते हैं— "उन लोग जो का काम कम बुद्धि है। वही धुंधले में उनका
 व्यवहार ही रहा है। -- चुनाव में वही और वही का नाम जाहिरात के साथ
 फिफ्ट जाने को जारी रखा है। दूर ही नहीं है। उनमें से कुछ लोग कम बुद्धि
 है। -- कबान्, अगर है, वहाँ न वहाँ। " ५२ जनता, बाढ़ में पर रही है और
 नेता छूट रहे हैं, छूट रहे हैं, पाठित जनता के नेता की जीत को। इससे
 अधिक पक्ष और क्या ही सकता है। " आत्म-साक्षात् " कहना राजनीति नहीं
 है व्यापक बाफो फूट, उधारे और पक्ष को बहाना है। रैण्ड ने इस अवसर
 समझा की अधिव्यक्ति प्रदान करने के लिए "कम्युनिस्ट पार्टी" की बुद्धि है,
 यह उनका कम्युनिस्ट-विरोधी विचारधारा का ही बीज है। कम्युनिस्ट पार्टी
 के सम्मुख में इस प्रकार का आरोप निराधार है। जबकि अन्य बूझा-पाटियों
 में यह आंतरिक बलबल केन्द्रित है जनता ही फूट हीता रहता है, सीते
 रही है। सभाधारी पक्ष के अंदर पर को ही फूट बहाना प्रमाण है। धिनी
 गांधी और मेनका गांधी को यह लड़ाई-सम-सू का लड़ाई न हीरा सभा
 हथियाने को लड़ाई है। बांधरा परणामिहारा सक्रिय राजनीति है संन्यास
 ली है पीछे की लोकसभा की आंतरिक फूट और सभा हथियाने को बुद्धि
 राजनीति है, किन्हीं जामा संन्यासों का पहना दिया गया और धिनी
 बांधरा लोग जीवन-मगदूरी निरुद्ध हीते हैं, बांधरा सभा प्रगति हीते हैं। यह
 राजनीति काटक बांधी दिन बूझा-राजनीति के लिए काम भात है वही धिनी
 ही जनता अब इन पर विश्वास नहीं करेगा। और पर हमान्दारी की कर्तव्य-
 निष्ठ व्यक्ति यह सीकत है कि "सूत्र" में पर वही फूट नहीं है। दुनिया

को हर चीज काय दो पार्श्वों में बँटा हुआ लगता है। हर जादू को दो दुर्ग, दो फूलों और दो पत्तों द्वारा मिल । ^{५३} यह भीड़ में तो पाहुना-दायक स्थिति है, जिसे रेंगू जायावन भीगते रहे । "इसगणना के इस पार और उस पार में प्रतापशरम कहानी है। इसगणना । भारत और नेपाल की सामा-रक्षा को इस नज जमान- की मैन्सलेण्ड । इस पर जिहा भी देश का अधिकार नहीं है। भारत और नेपाल में अपराध जमाने अपराधों यहाँ बाज ठाठ से रहते हैं। कहते हैं--- "इस पार (भारत) या 'उस पार' (नेपाल) में अपराध करने यदि कोई अपराधी 'इसगणना' में जाकर पहुँचा हो जाता है, तो उसकी न हिन्दुस्तान का और न नेपाल को पुलिस पकड़ सकती, गोली भी नहीं चला सकती । ^{५४} किन्तु अच्छा काम है दोनों देशों में अपराधियों की सुली हट । ठीक इसी प्रकार 'ह' में भी 'इसगणना' जमान है, मोझी और यथाधारा दल के सदस्यों के काले जहाँ किन्तु भी कुछ अपराध पढ़ें जायें, उरी साथ लगाने का भिन्नो में हिम्मत नहीं । हाजी मस्तान के लेकर टाटा-बिड़ला तक इसा इसगणना जमान में गोरदित्त हैं, यहाँ बैठ के रात-दिन बमान्वाय-राजगणना करता रहे हैं और साथ वर्ग उन्ही कुछ न कुछ उन्ही कैसी जारा मिले की वे स्वर्ग-भाग रहा है। जनता दाया-गोहित हो, मर रही है। हाहाकार और चात्कार कर रहा है, किन्तु ये सुटी हम यकी केकर ही, भीन से केर संमोग तक की राजनीति कर रहे हैं ।

रेंगू को समस्त कहानियों का निरलेखण करने में एक तथ्य स्पष्ट होता है कि उन्को भिन्नो का कहानी में अपानांतर से चुन चलते हैं। एक जन-मस्तान का और दूसरा प्रेम का । प्रेम का यह शाश्वत-मूल कहाँ-कहाँ पर रिफिल-या सब परितपित होता है, किन्तु वास्तविकता हमारे विपरीत है । रेंगू के यहाँ जन-मस्तानों जितना महत्वपूर्ण है, उन्का ही महत्वपूर्ण प्रेमताप । उन्का कहानी 'रसप्रिया' (दुमरा १९५९) के लेकर 'अग्निनली

(१९७१) की समस्त कहानियाँ में इसी प्रेमात्मक के दर्शन होते हैं। यह परि-
स्थितियाँ पर किये जाती हैं कि कहीं जितना स्पष्ट हो गया है। रँगू
प्रेम की जीवन की बटु बचाव के रूप में स्वाभाविक रहे हैं। प्रेमी मान्यता
है कि यदि कहीं व्यक्ति उसका स्पष्ट उद्घाटन नहीं कर रहा तो उम्मीद यह
क्यापि बर्ध नहीं कि उम्मीद प्रेम - तब है तो नहीं। वरन् यह कि वह जाने
बाधितात्मक - स्वयं की कम्बखी रहने के लिए उसे स्पष्ट नहीं कर पाता।
यह एक समीक्षात्मक - सत्य भा है कि हमारे हर कार्य-कारण की ऐसी या
विपरीत लिं-प्रेम प्रभावित करता है। लेकिन रचनाकार का उद्देश्य यहाँ
संभावना नहीं ही जाना, वह उत्तम भा प्रकृत है, जिसका परिणामि क्या-क्या
उदात्त प्रेम में भी होता है। हारामन और होराबाई का निरन्तर प्रेम इस बात
का उदाहरण है। होराबाई एक वैश्या है, वैश्या नारा जी होता है।
अतः उनके भा में एक बार से संपूर्ण नारा - नारा जाने का अदम्य इच्छा है,
जिसे पूरी करता है गाँव का पीला-भाता अन्ध कुंआरा हारामन। हारामन
भा कुं है और होरामन भा। प्रेम का उदात्तता का यह एक अद्भुत नमूना है।
रँगू की समस्त कहानियाँ का नारा - गाँव ऊपर से जितना उठे, उठे
है, उंदर से उठे ही सत्य। उनमें यहाँ में कहाँ - व - कहाँ प्रेम का कम्हा
पीया बट-बूझ करने की सम्भावना रहा होता है। जानर जाने पर उम्मीद
प्राप्त्य भी होता है। रँगू का यह बहुत बड़ा विरोधता है कि वह के कारण
उनको कहानी का मूल लक्ष्य कहाँ भी सिद्ध नहीं होता। जो पूर्ण से
समान रूप से लिये बलमा, रँगू की ही गाँव ही गया है। यहाँ रँगू यहाँ
सम्बन्धों के रूप में अपना और स्पष्ट कर ज्ञान स्थान बनाते हैं।

यम-जीवन से गहरी संश्लेषित हा ऐलक की वह इष्टि प्रदान
करती है जिससे वह जीवन-जात के कर्मों की वाणी प्रदान करने में सक्षम
होता है। ऐलक का बहुत जितना गहरा जीमो उ - के साहित्य में उम्मीद ही
बादोश से फटनाई का विषय होगा। यह निर्विवाद सत्य है कि रँगू

संक्षेप-

- १- राजेन्द्र वादन, रंगु ना वेष्ट गणान्यां, पृ० ६-७
- २- रंगु - दुर्गा पृ० १७
- ३- -वही- पृ० ९-१०
- ४- -वही- पृ० ८३
- ५- -वही- पृ० ८३-८४
- ६- -वही- पृ० ८४
- ७- -वही- पृ० ८७
- ८- -वही- पृ० ९६
- ९- -वही- पृ० ९३
- १०- -वही- पृ० ९४
- ११- -वही- पृ० ९१-९२
- ✓ १२- रंगु- जादिय रात्रि का मकर , पृ० ७१-७२
- ✓ १३- -वही- पृ० ७३
- ✓ १४- -वही- पृ० ७२
- १५- रंगु - दुर्गा पृ० २२
- १६- -वही- पृ० २८-२९
- १७- -वही- पृ० २६
- १८- -वही- पृ० ४२
- १९- -वही- पृ० ४२ - ४३
- ✓ २०- -वही- जादिय रात्रि का मकर , पृ० ५६
- ✓ २१- -वही- पृ० ६८
- ✓ २२- -वही- पृ० ६९
- २३- रंगु - दुर्गा पृ० ५७
- २४- -वही- पृ० ५४
- २५- डा० कुरमासिंह - शास्त्रिय और राजनीति, पृ० २२३

- २६- रिणु - कुमारी पु० १७३
 २७- -वही- पु० १७१
 २८- -वही- पु० १७३
 २९- रिणु - बगिनचौर , पु० ४४
 ३०- -वही- पु० ४८-४९
 ३१- रिणु - कुमारी , पु० ८६
 ३२- -वही- पु० ८३
 ३३- -वही- पु० ८८
 ३४- -वही- पु० ८२
 ३५- रिणु- बादिम राशि का नक्ष, पु० ८०
 ३६- -वही- पु० ८०
 ३७- -वही- पु० ८१
 ३८- बाग्याधिः रविवार में उठेय, १८ - फ़र १९८२, पु० १३
 ३९- भारतीय रेल मजदूर युनियन का पाँचवाँ राष्ट्रीय सम्मेलन, रिपोर्ट और
 प्रस्ताव, राजकोर (बिहार) १६-१९ अक्टूबर १९८१, पु० १०३
 ४०- रिणु - बादिम राशि का नक्ष , पु० ८४
 ४१- -वही- पु० १४
 ४२- -वही- पु० १५
 ४३- -वही- पु० १००
 ४४- -वही- पु० ९८
 ४५- -वही- पु० ९६
 ४६- -वही- पु० १०२-०३
 ४७- -वही- पु० १०३-०४
 ४८- -वही- पु० १०८
 ४९- -वही- पु० १६
 ५०- -वही- पु० ८६

५१- राजस्वति का लक्षणा- नैए प्रविनिधि उभा के राजस्वो लक्षारैह
का उद्घाटन करै सभ (बंगलौर), राजस्वान सभिका, ज्यमु
नि मां २५-४-१९८२ (मुद्राप्रुष्ठ)

५२- रैणु - जदिय राजि का मल्ल , पु० ८१-८२

५३- -वक्ष- पु० १६७

५४- रैणु -अगिनसौर , पु० १४

SECRET

वृषभध्वज

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100 101 102 103 104 105 106 107 108 109 110 111 112 113 114 115 116 117 118 119 120 121 122 123 124 125 126 127 128 129 130 131 132 133 134 135 136 137 138 139 140 141 142 143 144 145 146 147 148 149 150 151 152 153 154 155 156 157 158 159 160 161 162 163 164 165 166 167 168 169 170 171 172 173 174 175 176 177 178 179 180 181 182 183 184 185 186 187 188 189 190 191 192 193 194 195 196 197 198 199 200 201 202 203 204 205 206 207 208 209 210 211 212 213 214 215 216 217 218 219 220 221 222 223 224 225 226 227 228 229 230 231 232 233 234 235 236 237 238 239 240 241 242 243 244 245 246 247 248 249 250 251 252 253 254 255 256 257 258 259 260 261 262 263 264 265 266 267 268 269 270 271 272 273 274 275 276 277 278 279 280 281 282 283 284 285 286 287 288 289 290 291 292 293 294 295 296 297 298 299 300 301 302 303 304 305 306 307 308 309 310 311 312 313 314 315 316 317 318 319 320 321 322 323 324 325 326 327 328 329 330 331 332 333 334 335 336 337 338 339 340 341 342 343 344 345 346 347 348 349 350 351 352 353 354 355 356 357 358 359 360 361 362 363 364 365 366 367 368 369 370 371 372 373 374 375 376 377 378 379 380 381 382 383 384 385 386 387 388 389 390 391 392 393 394 395 396 397 398 399 400 401 402 403 404 405 406 407 408 409 410 411 412 413 414 415 416 417 418 419 420 421 422 423 424 425 426 427 428 429 430 431 432 433 434 435 436 437 438 439 440 441 442 443 444 445 446 447 448 449 450 451 452 453 454 455 456 457 458 459 460 461 462 463 464 465 466 467 468 469 470 471 472 473 474 475 476 477 478 479 480 481 482 483 484 485 486 487 488 489 490 491 492 493 494 495 496 497 498 499 500 501 502 503 504 505 506 507 508 509 510 511 512 513 514 515 516 517 518 519 520 521 522 523 524 525 526 527 528 529 530 531 532 533 534 535 536 537 538 539 540 541 542 543 544 545 546 547 548 549 550 551 552 553 554 555 556 557 558 559 560 561 562 563 564 565 566 567 568 569 570 571 572 573 574 575 576 577 578 579 580 581 582 583 584 585 586 587 588 589 590 591 592 593 594 595 596 597 598 599 600 601 602 603 604 605 606 607 608 609 610 611 612 613 614 615 616 617 618 619 620 621 622 623 624 625 626 627 628 629 630 631 632 633 634 635 636 637 638 639 640 641 642 643 644 645 646 647 648 649 650 651 652 653 654 655 656 657 658 659 660 661 662 663 664 665 666 667 668 669 670 671 672 673 674 675 676 677 678 679 680 681 682 683 684 685 686 687 688 689 690 691 692 693 694 695 696 697 698 699 700 701 702 703 704 705 706 707 708 709 710 711 712 713 714 715 716 717 718 719 720 721 722 723 724 725 726 727 728 729 730 731 732 733 734 735 736 737 738 739 740 741 742 743 744 745 746 747 748 749 750 751 752 753 754 755 756 757 758 759 760 761 762 763 764 765 766 767 768 769 770 771 772 773 774 775 776 777 778 779 780 781 782 783 784 785 786 787 788 789 790 791 792 793 794 795 796 797 798 799 800 801 802 803 804 805 806 807 808 809 810 811 812 813 814 815 816 817 818 819 820 821 822 823 824 825 826 827 828 829 830 831 832 833 834 835 836 837 838 839 840 841 842 843 844 845 846 847 848 849 850 851 852 853 854 855 856 857 858 859 860 861 862 863 864 865 866 867 868 869 870 871 872 873 874 875 876 877 878 879 880 881 882 883 884 885 886 887 888 889 890 891 892 893 894 895 896 897 898 899 900 901 902 903 904 905 906 907 908 909 910 911 912 913 914 915 916 917 918 919 920 921 922 923 924 925 926 927 928 929 930 931 932 933 934 935 936 937 938 939 940 941 942 943 944 945 946 947 948 949 950 951 952 953 954 955 956 957 958 959 960 961 962 963 964 965 966 967 968 969 970 971 972 973 974 975 976 977 978 979 980 981 982 983 984 985 986 987 988 989 990 991 992 993 994 995 996 997 998 999 1000 1001 1002 1003 1004 1005 1006 1007 1008 1009 1010 1011 1012 1013 1014 1015 1016 1017 1018 1019 1020 1021 1022 1023 1024 1025 1026 1027 1028 1029 1030 1031 1032 1033 1034 1035 1036 1037 1038 1039 104

उपलब्ध

लेख अपने युग की निरन्तर परिवर्तित घटनाओं और उनके मूल में कार्यरत व्यापारों का कलात्मक लेखा-जोखा है। कला एक ज्ञेयवसाय है। जीवन की सातत्य प्रक्रिया में गहराई से उतरता लेख मानवीय संवेदनाओं की खोज करता है। उसका उद्देश्य मात्र खोज करना ही नहीं, बल्कि उनकी स्थापना करना भी है। वह जिम मानव-सूत्रों की स्थापना करना चाहता है जथा करता है, वह सम्पूर्ण मानवता के लिए मीलकारी होते हैं। इस बीच लेख जिम अन्तर्द्वन्द्वों में जीता है जथा उन्हें भोगता है, उसकी अभिव्यक्ति करने की उत्कट इच्छा उसके मनो-मस्तिष्क को बेचैन किये रहती है। वह यह भी चाहता है कि अच्छे जीवन की परिणति के लिये वह अपने अनुभवों को अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचा सके। और इस पहुँचाने के लिये जो कलात्मक-अभिव्यक्ति होती है, वही साहित्य है।

लेख के पास जितने गहरे अनुभव होंगे, वह उतना ही तपन लेख होगा। अनुभव जीवन की गहरी सम्पुक्ति से आते हैं। प्रेमचन्द, निराला, मुक्तिबोध और रेणु की महानता का मूल उनकी जीवन-सम्पुक्ति ही है। रेणु के "मेला जीकल" और "परती परिकथा" विशाल और विस्तृत यथार्थ दृष्टि के कारण ही महान बन पड़े हैं। रेणु में जीवन के प्रति एक उद्दाम समक थी। जीवन की छोटी से छोटी घटना भी उन्हें गहरे जाकर छूती थी, इसीलिये उनकी संवेदनाओं का आकार निरन्तर

फैलता और गहराता गया । जीवन के आरम्भ से ही उनमें अन्याय का
 प्रतिहार करने की क्षमता थी । पराधीन-भारत की विपदा जनता की
 समस्याओं से बाढ़ान्त रेणु विजार्थी जीवन से ही विद्रोही बन गये ।
 उनके इस विद्रोही स्वस्व ने उन्हें विस्तृत जन-समुदाय से जोड़ा । उनके
 सुख-दुःख , आशा-आकांक्षा एवं राग विराग की समझने की कुंजी प्रदान
 की । बनारस विश्वविद्यालय के अध्ययन काल में उनकी समवेदनाओं पर
 धार धरकर पैना बना दिया । वहीं रहकर रेणु समाजवादी-विचारधारा
 के सम्पर्क में आये । आचार्य नरेन्द्रदेव जैसे कर्मठ एवं प्रतिभाशाली समाजवादी
 नेता के विचारों से आकर्षित हो रेणु की आत्मा उनके दल एवं कार्यक्रमों के
 प्रति बढ़ गई । समाजवादी-विचारधारा जीवन के अस्तित्वों को समझने में
 सहायक रहती है । बदलते जीवन की सूक्ष्म छटनाओं की तह में जाने का मार्ग
 प्रशस्त करती है । रेणु यहाँ रहकर इस विचारधारा में दोगुना हुए जिसका
 प्रभाव उनके साहित्य में उपस्थित है । समाजवादी विचारधारा के आलोक
 में रेणु जीवन की यथार्थ व्याख्या करते रहे । यथार्थ के जिन पक्षों का
 तन्मयता के साथ रेणु चित्र खींचते हैं वे वास्तव में स्वीकारणीय हैं । समाज-
 वादी-विचारधारा में जो यह अच्छाई है कि उसके यथार्थ तक पहुँच कर उसे
 स्मृति के साथ देखने की क्षमता है -वही यह बुराई भी है कि चरमोत्कर्ष
 पर पहुँचने के बाद उनके पास समस्याओं का कोई निदान नहीं है। इतनीलिये
 बुद्ध-परिवर्तन और यथार्थस्थिति उनके साहित्य में मिलती है । परिणामतः
 रेणु के निष्कर्ष अयथार्थ बनकर रह गये हैं । रेणु के बादरी स्वस्व का
 आरोप, हिन्दी के विद्वान लगाते चले जाये हैं किन्तु इसके मूल में वे काम
 से कारण हैं , इस पर विद्वानों ने ध्यान नहीं दिया । किसी भी लेखक
 में यदि कहीं कोई कमी है तो उसकी छाँव हमें सम्पूर्ण जीवन का आकलन

करने पर निश्चित मिलेगी । इन्हीं कारणों की खोज में हमने उनके जीवन और जीवन-परिवेश का सर्वेक्षण किया है । रेणु राजनीति से साहित्य में आये थे । राजनीतिक-जीवन के विपुल अनुभव उन्हें "मैला बाघल" और "परती:परिक्षा" जैसे महत्वपूर्ण उपन्यास लिखाने में सहायक बनते हैं । साहित्य में आने से पूर्व अर्थात् 1952-53 से पहले वे समाजवादी-दम की सक्रिय राजनीति से संलग्न थे । इसी कारण यथार्थ दृष्टि से गाँव और उसके रहस्ये स्वस्थ को रेणु ने देखा और बाद को लिखा । 1952 के बाद रेणु साहित्य में पूर्ण रूप से आ गये । साहित्य की अपनी राजनीति होती है -अलग । रेणु उससे अलग नहीं रह सके और मान-अपमान की राजनीति ने उन्हें "परती:परिक्षा" और "कुमरी" तक तो लहो-लगावत बनाये रखा, लेकिन धीरे-धीरे पुराने अनुभव समाप्त होने लगे और जिस भूमि पर वे बैठे थे वह धीरे धीरे खिसकने लगी । फलस्वरूप कुमरी के बाद के लेखन में वह जीवन्तता और ताज़गी नहीं रही । यही कारण है कि "दीर्घाया", "जुसुस" "कितने चौराहे" एवं "पन्टू बाबू रोठ" कोई सार्थक दिशा दे सकने में असमर्थ हैं । लेखक के अनुभव और वैचारिक क्षमता ही महत्वपूर्ण लेखन के आधार हैं । किन्तु रेणु 1960 के बाद इन दोनों से अलग होते गये । 1960 के बाद का काल रेणु के पराभव का काल है । वैचारिकता के स्तर पर रेणु एकदम खींचने हो गये, यही कारण है कि गाँव से पटना और पटना से दिल्ली तक की यात्रा करते रेणु किसी भी जन-संघर्ष से नहीं जुड़ सके रेणु । जन-संघर्ष हमारी संवेदनाओं की छुम बनाते हैं । और संवेदना वह धारदार हथियार है जो कथ के पटार में भी आसानी से छुसकर उसमें निहित मूल तत्त्व का उद्घाटन करती है । रेणु की संवेदना माँथरी होती चली गई । इसी माँथरेपन के कारण

“ मेला बीकन ” एवं “ परती: परिकथा ” जैसी कृति देने में रेणु असमर्थ रहे । 1960 के बाद बना वैचारिक हीमता का यह दौर 1970 के आस पास उन्हें अराजक बना देता है । अराजक दृष्टिकोण के कारण वे एकदम नक्सलवाद की ओर उन्मुख होते हैं और उनका भावुक मन यह मानने लगता है कि अब इस परिस्थिति में अवसाध “ कैमट ” के माध्यम से नहीं “ कुमट ” के माध्यम से जायेगा । प्रजातन्त्र से उनकी आस्था उठ जाती है। अराजकता के इसी दौर में वे निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में चुनाव लड़े और पराजित हो गये । पराजय के अनुभव रेणु को शिक्षा देते हैं । 1974 में उठे बिहार जन-आन्दोलन से वे सीधे सीधे जुड़ गये । 1974 के बाद रेणु में एक सार्थक समझ का आभास-सा होता है, किन्तु 1975 में आपात्काल और उसके तुरन्त बाद मृत्यु ने रेणु को कुछ निजाने नहीं दिया और कुछ निजाना भी तो उसे गीब से चोर चुरा ले गये । लेकिन यह विश्वास्त्यपूर्ण कहा जा सकता है कि वह उनके अन्तिम उपन्यास “ पन्टू बाबू राठ ” से निरिक्त ही बछा होगा क्योंकि उनकी दृष्टि इस समय पुनः प्रकाश हो गई थी ।

रेणु की अतिरिक्त भावुकता भी उनके जीवन में अवरोधक बनी । राजनीतिक समझ के स्तर पर रेणु यह मानते थे कि कांग्रेस की नौतियाँ ही देश के असमान विकास में अवरोधक रही, यह हम भी मानते हैं क्योंकि कि यह वास्तविकता है । अब तक के किये गये शोधों के आधार पर विद्वानों की राय भी यही है । लेकिन उनके आगे रेणु यह मानते हैं कि कांग्रेस को हटाकर यदि कोई अन्य दल सत्ता में जाता है तो वह विकास में क्रान्तिकारी कदम उठायेगा । यह उनकी अतिरिक्त भावुकता का ही परिणाम है । एक वृत्ति के बाद दूसरे वृत्ति का जाना क्रान्ति नहीं हो सकती।

कारण कि दोनों का वर्ग, चरित्र एक ही है, अतः वैचारिक क्षमता भी समान है। 1971 में हुए सत्ता परिवर्तन ने यह बात स्पष्ट भी कर दी है। आमूल परिवर्तन व्यक्ति से नहीं नीतियों और कार्य प्रणाली से होता है। जब तक भूस्वामी-पूँजीवादी हितों की संरक्षक सरकार सत्ता में रहती है तब तक व्यक्तिगत हितों के लिये आपा-धापी मची रहेगी और आम-आदमी के लिये किसी भी प्रकार का लाभ उन्हे की जायेगा। रण्टू की समाजवादी विचारधारा इस तथ्य को समझने में कतराती रही। यही कारण है कि रण्टू के निष्कर्ष गान्धीवादी वायवी दृश्य-परिवर्तन और लोक-संस्कृति में समस्याओं के समाधान ढुंढने में व्यर्थ ब्रन गये हैं। भावुकता और स्पष्ट समझ का अभाव रण्टू जैसे पथार्थवादी कथाकार को वायवी बना देता है, यह एक महत्वपूर्ण बात है।

स्वाधीनता के पश्चात् मची आपाधापी देश की असमान विकास की ओर मोड़ देती है। सत्ताधारी दल की राजनीति कुबेर का खजाना बन गया, जो भी वही पहुँचा वही माना-माना हो गया। देश के बड़े-बड़े जमींदार, जो कि स्वाधीनता के पूर्व औजों के गुलाम थे और स्वाधीन आन्दोलन के समय में बड़-बड़कर भाग ले रहे थे जवानक लकड़ टोपी पहनकर देश भक्त बन गये। इस बग़ैर भक्ति ने व्यक्तिगत लाभ की उन्धी दौड़ आरम्भ कर दी। राजनीति के सुत्र-संचालक वे व्यक्ति बन गये, जिन्होंने देश की स्वाधीनता में किंचित भी योगदान नहीं किया। क्रान्ति-कारी एवं महान् देश-भक्तों को दूध की मक्खी की तरह निकाल कर बाहर फेंक दिया गया। इस राजनीतिक आपाधापी की छुड़ाई में भ्रष्टाचार-मन आगे निकल गये और आर्थिक स्वाधीनता का यंत्र अपने कब्जे में कर लिया। राजनीति में भाई-भतीजा, भ्रष्टाचार, बरपाचार, जाति, धर्म एवं धर्म इन्त इन्त जैसी घुणित प्रवृत्तियाँ घर कर गईं। धीरे-धीरे यह चिक-बेचि

कमती-कमती रही और उसे पानी देने में तरता दम ने अपनी क्षमता का अपूर्व परिचय दिया । 1948 से ही इस बराजकता, सकल निम्नमे आरम्भ हो गये थे, जब कि नेहरू की कुटिल और पूँजीपति-भुत्सामी नीतियों एवं तानाशाही प्रवृत्ति के विरोध में गान्धी जी के सकल पर कुलमानी ने त्यागपत्र दे दिया था और बाद में इन्हीं नीतियों के कारण 1952 में प्रजा-सामन्तवादी पार्टों का निर्माण हुआ । इस प्रकार देश में एक व्यक्ति विशेष का शासन चलता रहा । देश को छूटने वाले लक्ष्य भेड़िये इस प्रकार कार्य करते रहे कि स्त्री पद्धति पर अपनायी गयी "पंचवर्षीय योजनाएँ" भी इनका छत्र बढ़ाने में ही सहायक रहीं । योजनाओं की समस्त राशि व्यय करने पर भी साधारण जन का कहीं भी हित नहीं हो सका । चकान्दी, भूमि सुधार, हरित क्रान्ति और सामुदायिक विकास योजनाओं ने असमानता को और भी बढ़ावा दिया । अमीर और गरीब के बीच की खाई निरन्तर बढ़ती ही गई । एक ओर गाँव में भूमिदर कमिक ज्यादा गति से बढ़ते गये तो दूसरी ओर नगरों में शोषण की अन्धी दौड़ आरम्भ हुई । कृषि का विकेन्द्रीकरण के नाम पर केन्द्रीकरण हुआ । बड़े - बड़े भुत्सामी बात बात के छोटे कुक्काँ की भूमि को अपने अधिकार में लेने के लिये तरता-से सहयोग कर मन्मानी करते रहे लगे । भुत्सामी ने बीते के कल पर गाँव को नाश दिया और शोषण की चक्की को और भी धारदार बना लिया । जिस शोषण से बचने के लिये ये लोग नगरों में शरण ले रहे थे, वहाँ और अधिक शोषण के शिकार हुए । असमान विकास की इस अन्धी दौड़ ने देश के समस्त जाय-स्वातों को विनाश कर दिया । राजनीति की भाँति ही आर्थिक क्षेत्र में भी एकाधिकार को बढ़ावा मिला । तरता-दम की राजनीति इसी भुत्सामी-पूँजीपति वर्ग की अनुामिनी एवं हितसंरक्षिका बन कर रह गई।

अरबों रुपये की लागत से तैयारित महत्वपूर्ण योजनाओं से एक छोटे वर्ग को ही लाभ हुआ। जिस वर्ग के लिये ये योजनाएँ तैयार की गई थीं, वह भीषण बना देखा रहा गया। लोकतन्त्र और प्रजातन्त्र उसके लिये गौण के मन्त्र साबित हुए। यह बड़ी विचित्र स्थिति है कि पंचवर्षीय योजनाओं और अन्य कार्यक्रमों में व्यय की गयी पूँजी के नाम पर राष्ट्रीय ऋण तो बढ़ी किन्तु प्रति व्यक्ति आय निरन्तर कम होती चली गयी। देश को मिली स्वाधीनता के समय लगभग 40 प्रतिशत व्यक्ति निर्धनता की सीमा रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रहे थे किन्तु सम्पूर्ण विकास योजनाओं के नाम पर व्यय की अरबों रुपयों की सम्पत्ति ने इस स्तर में और बड़ाफा किया और अब यह लगभग 60 प्रतिशत है। सीमान्त-क्षेत्रों की स्तरा स्वाधीनता के समय लगभग 55 प्रतिशत थी, लेकिन अब यह 40 प्रतिशत रह गई है। यानी कि 15 प्रतिशत सीमान्त क्षेत्रों को हमने और खेतिहर-श्रमिक बना लिया। इसके साथ-साथ पूँजीपति-भूस्वामी निरन्तर बढ़ते जा रहे हैं।

धर्म, जातिवाद और भाई-भतीजावाद भ्रष्टाचार की जड़ों में तीव्रता के साथ फैल रहा है। स्वाधीनता के समय देश के भाग्य-विधाताओं ने सर्व-धर्म समभाव भारत के निर्माण का संकल्प लिया था। किन्तु यह संकल्प मजबूत नीतियों के कारण टूट-टूट कर बिखर गया। धर्म के नाम पर ही रहे दंगे इसके प्रमाण हैं। जातिवाद तो अब राजनीति का पर्याय हो बनकर रह गया है। यही समस्त राजनीतिक कार्य-पद्धति का आधार जातिवाद पर आधारित है। टिकटों के बंटवारे से लेकर मन्त्रित्व का पद भी जातीय आधार पर मिलता है। कौन जाति के सबसे अधिक सदस्य हैं, उसी जाति का नेता चुना जायेगा। यह कुशा निरन्तर

बढ़ रही है। इस प्रकार बाधित-क्षेत्र की भाँति राजनीतिक क्षेत्र में भी केन्द्रीकरण की यह कुवृत्ति कमजोर हो रही है। देश निरन्तर विभाजित के कगार पर जा रहा है और राजनीतिक समस्त नैतिकता और मानवीयता की तिरस्कृत कर पद प्राप्ति की दौड़ में लगे हैं।

रेणु का कथा साहित्य इस दृष्टि से अत्यधिक उपयोगी है। उनके सम्पूर्ण कथा-साहित्य का सामाजिक-राजनीतिक अध्ययन करने पर ऐसे तथ्य उभर कर सामने आते हैं जिन्होंने स्वातन्त्र्योत्तर समस्त तथा-कथित विकास की वास्तविकता स्पष्ट हो जाती है। रेणु की यथार्थ दृष्टि के कारण ही यह सब सम्भव हो सका।

“मैना जीकम” और “परती:परिकथा” स्वातन्त्र्यता के शीघ्र बाद ही लिखे गये उपन्यास हैं। ग्रामीण-जीवन में परिवर्तित होते सामाजिक-राजनीतिक मानदण्डों को रेणु ने स्पष्ट किया है। बदलते भूमि सम्बन्ध और राजनीतिक अनुष्ठानों के आधार पर होते गये भूमि केन्द्रीकरण को रेणु ने बड़ी ही कुशलता से चित्रित किया है। “मैना जीकम” के विरचनाध प्रसाद और “परती:परिकथा” के जितेन्द्र मिश्र दो ऐसे भूस्वामी हैं, प्रारम्भ में जिनके पास भूस्वामित्व नहीं है। किन्तु अपनी धानाकी, बेईमानी और जालसाजी के आधार पर वे गाँव में सबसे अधिक भूमि के स्वामी हो जाते हैं। स्वाधीनता के बाद बदलते ग्रामीण-परिवेश में समस्त सरकारी सुविधाओं का लाभ इसी वर्ग ने उठाया। विरचनाध प्रसाद भूमि सुधार कार्यक्रम लागू होने से भी लाभ उठाते हैं। मेरीगंज को रेणु ने पिछड़े गाँव के रूप में लिया है। यहाँ की प्रत्येक छटना प्रातिनिधिक-रूप में भारतीय ग्राम का चित्र प्रस्तुत करती है। भूमि सुधारों का एकमात्र उद्देश्य छेतिहर-जम्मा को

कालतु भूमि देना था लेकिन देना नहीं हुआ । यह स्वातन्त्र्योत्तर ग्राम-विकास की वास्तविकता है । मेरीगंज में मूलतः स्थान बटारबादर है । इस भूस्वामी ने जिसे सरताधारी-दन का समर्थन प्राप्त है, विरचनाथ प्रसाद कांग्रेस जिना कमेटी के सदस्य हैं ; समस्त कालतु भूमि को पहले से ही अपने और अपने सम्बन्धियों के कर्जों नाम कर दिया । ग्राम के अन्य लोगों की भाँति स्थानीय की भूमि भी भूस्वामी को ने अपने अधिकार में कर ली । मात्र यही नहीं भूमि के केन्द्रीकरण की यह अनवरत परम्परा छोटे भूस्वामी रामकिरणामतिह और सेनायन यादव की भी भूमिहीन बना कर रहती है । मेरीगंज के ज्ञात बात की समस्त भूमि पर भूस्वामी विरचनाथ प्रसाद का अधिकार हो जाता है । और दोनों छोटे भूस्वामी भूमिहीन हो जाते हैं । गाँव में निरन्तर बढ़ रहे छेतिहर-श्रमिकों की परम्परा की रेणु ने स्पष्ट किया है । "परती परिकथा " का जिलेन्द्र मिश्र सरकारी अनुदान के तहत पर हो रहे भूमि विकास हेतु प्रयत्नों से लाभ उठाता है । परती पर तो उसका अधिकार होता ही है , साथ ही उर्वरक क्षमता बढ़ाने हेतु किये गये सरकारी प्रयास का लाभ भी उसे ही मिलता है । कुलारीयाम को कोली की मुख्य धारा से जोड़ने का लाभ भी उसे ही मिलता है । हजारों बीघे जमीन परती पर गुलाब के पौधे लगाये जा रहे हैं जिससे हजारों की आमदनी उसे होगी। सर्व-सेटलमेन्ट के नाम पर गाँव में हलचल मची । लोगों की लगा कि अब स्वाधीन भारत में संभवतः उन्हें भी कुम्हिले, लेकिन समस्त जातों पर पानी फिर गया । महाजन रीराम बिस्वा महाजन के साथ भूस्वामी हो गया और जिलेन्द्र मिश्र की परती उपजाऊ बन गई । यही गाँव में हुआ है। सरकारी सुविधाओं का लाभ भूमिहर-श्रमिक को नहीं, बल्कि भूस्वामी को मिलता है । सरकारी-सुविधाओं के नाम पर भूस्वामी ने उन्हें उगटे भूमिहर

ही बनाया है । यह स्वातन्त्र्योत्तर ग्रामीण इतिहास है जिसे रेणु ने बड़ी कुशलता के साथ चित्रित किया है ।

मेरीगंज मठ का महन्त 900 बीघे उपजाऊ भूमि का स्वामी है । अतः उसकी समस्त गतिविधियाँ भी भूस्वामी-वर्ग जैसी हैं । शोषण करने का अधिकार उसे धर्म ने दे रखा है । श्रमिक-वर्ग का चेतन न देना, लक्ष्मी दासिन के साथ अनैतिक सम्बन्ध रखना, राजनीतिक दलों को चन्दन देना और उनकी जाव भात करना - महन्त का काम है । रेणु यह स्पष्ट कर देते हैं कि धर्म के नाम पर सार्वजनिक सम्पत्ति को व्यक्ति-विशेष महन्त का धोगा पहन कर किस प्रकार दुरुपयोग करता है । धर्म के नाम पर होने वाले भ्रष्टाचार का भी रेणु ने उद्घाटन किया है । "परती परिकथा" के तरबजीत बीघे और परमादेव की त्वारी के वर्णन में धार्मिक रूढ़ियाँ और भ्रष्टाचार ही प्रमुख हैं ।

देश की वर्तमान राजनीति में व्याप्त अराजकता और भ्रष्टाचार का वर्णन रेणु की गहरी समझ को स्पष्ट करता है । जाति, धर्म और व्यक्तिगत - स्वार्थों पर आधारित राजनीति से रेणु दुःखी थे। भूस्वामी-बूजीपति अपने स्वार्थों की सिद्धि हेतु राजनीति में जाता है । राजनीति उसके यही गंगा के समान है कि स्नान करी और मनोकामना पूरी । विश्वनाथ प्रसाद गाँव की भूमि का एकछत्र स्वामी बनकर कांग्रेस में जाता है कांग्रेस में जाने से उसकी समस्त व्याधियाँ अपने आप दूर हो गई । सस्ताधारी दल की जिना कमेटी का सदस्य बनने के बाद वह अपने शोषण के हथियार को और भी तेजी से चला रहा है । छेतिहर श्रमिक नार की और रोटी-रोजी की दौड़ में दौड़ रहे हैं और वह ट्रैक्टर खरीदता है । मुस्तौ सस्ताधारी दल ^{का} कर्मठ कार्यकर्ता है । उसकी समस्त राजनीति में अपने

व्यक्तिगत स्वार्थ और बदले की भावना के क्वाचा कुछ नहीं है। अपने स्वार्थों की पूर्ति हेतु यह धर्म, जाति और धर्म हनन जैसे जोड़े - हथकण्डों तक का सहारा लेता है। यही सब कुछ आज हो रहा है। गीत से लेकर केन्द्र तक की राजनीति इनहीं भ्रष्ट साधनों की लेकर चल रही है। जनता के सुख-दुःख की किसी की चिन्ता नहीं। रण्ट के ये चिक्का आज की राजनीति के ज्वलन्त चित्र हैं। गिरते नैतिक मूल्यों और अराजकता पर रण्ट की टिप्पणियाँ उनकी सामाजिक पक्षधरता की सूचक हैं।

1960 के बाद का लेखन रण्ट की अतिरिक्त भावुकता और अस्पष्ट राजनीतिक समझ की स्पष्ट करता है। 1960 के बाद राजनीतिक मानदण्ड जिस तीव्रता के साथ परिवर्तित हो रहे थे, रण्ट की पकड़ उन पर ठोसी हो गई। "दीक्षाया", "जुस" "कितने घोराने" और "पन्टू बाबू रोठ" उपन्यास इसी भावुकता की देन हैं। छोटी-छोटी समस्याओं को लेकर लिखे गये ये उपन्यास एक भावुक-सा समाधान देकर शान्त हो जाते हैं। "मेला बाकल" और "परती:परिकथा" में रण्ट जिस विस्तार और गहराई के साथ पते खोजते हैं और यथार्थ का ज्वलन्त चित्र प्रस्तुत करते हैं वह इनमें नहीं है। इन उपन्यासों की कथावस्तु भी नवीनता की लिये दृष्टे नहीं हैं। होस्टनों में व्याप्त भ्रष्टाचार, शरणार्थी समस्या, राष्ट्रीय सुरक्षा की समस्या और असमान विकास के कारण व्याप्त भ्रष्टाचार - इन उपन्यासों का दृष्ट है। लेकिन इन समस्याओं के मूल में रण्ट की पहुँच नहीं बन पाई है। अतः ये उपन्यास प्रभावपूर्ण नहीं बन सके हैं।

कहानी जगत में रण्ट "दुमरी" कहानी संग्रह लेकर उपस्थित हुए। "दुमरी" संग्रह की कहानियाँ उनके प्रारम्भिक दौर की कहानियाँ हैं, अतः उनमें रण्ट की तबियत मुजर है और वनू भाई की ताजगी के कारण

जीवितता है। धीरे धीरे जिस प्रकार उपन्यास जगत में रेणु का पतन होता चला गया वही स्थिति कहानियों में है। "आदिम रात्रि की महक" "जन्म" "बीर" पुरानी कहानी : नया पाठ" कहानियों को ठोड़कर अन्य अन्य कहानियाँ रेणु की तत्सही दृष्टि की परिचायक हैं। प्रारम्भ में जो अकालीय गन्ध और जीवितता है वह इनमें नहीं आ पाई है। उनके अस्तित्व कहानी संग्रह "अग्निज्वर" की कहानियाँ निरक्षित ही "कुमारी" के कथाकार की नहीं लगती। इन कहानियों में नार - महामन्द की तत्सही समस्याएँ उभर कर आती हैं, लेकिन रेणु की दृष्टि इन समस्याओं के प्रति न्याय नहीं कर पाती, अतः कहानियाँ भी तत्सही होकर रह जाती हैं।

रेणु मुक्तः ग्रामीण-जीवन के सार्थक रचनाकार थे। यह जहाँ भी अपने जीवन से कम हुए हैं, वहीं उनकी लीखना की गहराई और दृष्टि का पैनापन बरका होता चला गया है। समाजवादी विचार-धारा से नक्सलवाद की बराबर यात्रा ने भी रेणु के साहित्य की प्रभावित किया। रेणु के समस्त साहित्य का राजनीतिक और सामाजिक अध्ययन इसी दृष्टि के कारण अत्यन्त उपयोगी है। प्रारम्भ में "मेला जीवन" की दयाति से विद्वानों ने चर्चा तो की और स्वागत-भाषा भी हुए, लेकिन उनके सम्पूर्ण परिवेश और वैचारिकता से गुजर कर अध्ययन करने की आवश्यकता की किसी ने अनुभव नहीं किया। प्रस्तुत संग्रह रेणु की सम्पूर्णता में समझने के लिये सार्थकता प्रदान करेगा - ऐसा विश्वास है।

मूल एवं सम्बन्ध - ग्रन्थ - सूची

- 1- बाबुसाजी, नामकुण्डा : विद्यमानवात, प्रथम संस्करण, 1979
- 2- एंगेल्स, फ्रेडरिक : परिवार, व्यक्तिगत सम्पत्ति और राजनयता की उत्पत्ति, द्वितीय हिन्दी सं० 1955
- 3- कश्यप, डॉ० सुभाष : इंडियन पोलिटिकल पार्टीज, प्रथम सं० 1971
- 4- " " : भारतीय राजनीति और राजनीतिक दल, प्रथम सं०, 1972
- 5- " " : वन-वन और राज्यों की राजनीति, प्रथम संस्करण, 1970
- 6- ठाकुर, चन्द्रिका : बिहार की कृषि एवं सामाजिक व्यवस्था, प्रथम संस्करण, 1977
- 7- धर्मर, डेनिकस : एंग्रेरिकन प्रोटेस्ट इन इंडिया, प्रथम संस्करण, 1956
- 8- दत्त, भुवेंद्र नाथ : स्वकारित राजनीतिक इतिहास
- 9- दत्त, रजनी वाम : आज का भारत, प्रथम संस्करण, 1977
- 10- डांडेकर, बी०एम० : पार्टी इन इंडिया, प्रकाशन तिथि नहीं है।
एवं नीलकंठ रथ
- 11- देसाई, ए०बालू : भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक दृष्टिकोण, द्वितीय संस्करण, 1977
- 12- " " : भारतीय राष्ट्रवाद की वह अनुनात्म प्रवृत्तियाँ, प्रथम संस्करण, 1978
- 13- मैथिलिप्रसाद, ईश्वरम०यस० : समकालीन भारत: सर्वप्रसूती संकट, प्रथम सं० 1981
- 14- प्रसाद, डॉ० राजेन्द्र : जीटोबायोग्राफी, प्रथम संस्करण, 1957
- 15- प्रेमचन्द : गजम, 1977

- 16- कौस्तुभ, रेणु : उपन्यास और लोक जीवन, तृतीय सं०, 1980
- 17- बरन, पाम पौ : दि पासिफिक इकानामी अफ ग्रोथ,
प्रकारण तिथि नहीं है
- 18- बोटम हाइम, चार्ल्स : इंडिया इंडिपेंडेंट, 1968
- 19- मानवीय, हकीम : सैंड रिफार्म्स इन इंडिया, 1955
- 20- मार्क्स, कार्ल, फ्रेडरिक एंगेल्स : कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा-पत्र,
सातवीं हिन्दी संस्करण, 1977
- 21- " " : संकलित रचनाएं, प्रकारण तिथि नहीं है ।
- 22- मिश्र, जे एल : सैंड रिफार्म्स, प्रकारण तिथि नहीं है ।
- 23- मिश्र, श्रीकान्त : भारतीय अर्थव्यवस्था और उसका विकास,
प्रथम संस्करण, 1976
- 24- मिश्र, डॉ० कृष्णाबिहारी : आधुनिक सामाजिक आन्दोलन और आधुनिक
हिन्दी साहित्य, प्रथम संस्करण, 1972
- 25- मुक्तिबोध, गजानन माधव : नये साहित्य का सौन्दर्य-शास्त्र, 50 सं० 1971
- 26- मेघ, डॉ० रमेश कृष्ण : अध्यात्म सौन्दर्य विज्ञान, 50 सं० 1977
- 27- मोर्य, जारो जारो : उत्तर प्रदेश भूमि विधियाँ, 80 सं० 1976
- 28- यादव, राजेन्द्र : रेणु की श्रेष्ठ कथामयि, 1966
- 29- राय, सी० एच० हनुमन्त : टेक्नीजिकल चेम्ज एण्ड डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ मेन्स
इन एग्रिकल्चर, प्रकारण तिथि नहीं है ।
- 30- राय, डॉ० बादाम सिंह : प्रेमचन्द का कथा संसार, 1980
- 31- रेणु, फकीरचरण : मेला जीवन [1954] नया सं० 1977
- 32- " " : परतीःपरिकथा [1957] तृतीय सं० 1972
- 33- " " : कुमारी [1959] चौथा सं० 1973
- 34- " " : दीर्घता, प्रथम सं० 1963
- 35- " " : कुसुम [1965] द्वितीय सं० 1970

- 36- रेणु, कजीरवरनाथ : किताबें घीराहे। 1966।, द्वितीय सं० 1968
- 37- " " : बाहिम रात्रि की मटक, 1967
- 38- " " : अग्निमूर्छा, 1971
- 39- " " : पन्हु बाबू रोड, 1979
- 40- " " : मेरासी डाकू की कथा, 1977
- 41- मेडोन्टरेस, लो : राजनीतिक वर्धात्मा की स्मरेखा, 50 सं० 1977
- 42- मोहिया, डी० राम मनोहर : कास्ट सिस्टम इन इंडिया, 50 सं० 1961
- 43- वर्मा, प्रमिल : मा कर्त्ताव क्या है ? तात्वी सं० 1976
- 44- वेरिगर, डी० रीम : लैंड रिफॉर्म इन प्रिंसिपल एण्ड प्रैक्टिस, 1969
- 45- लक्ष्मणायन, राहुल : मानव समाज, 50 सं० 1977
- 46- सिंह, डी० सुभाष : हिन्दी उपन्यास : सामाजिक चेतना, 50 सं० 1976
- 47- " " : साहित्य और राजनीति, 50 सं० 1981
- 48- सिंह, कमलीत : नेबस्ट स्टेप इन विलेज इंडिया, प्रकारान तिथि नहीं है ।
- 49- सिंह, जयोत्सना : भारत का मुक्ति संग्राम, 50 सं० 1977
- 50- सिंह, डी० राम सुभाष : रेणु : संस्मरण और क्रांति, 50 सं० 1978
- 51- सेन, भवानी : एवोन्गुलन और एटोरियन रिसेशन इन इंडिया, प्रकारान तिथि नहीं है ।

रिपोर्ट्स एवं पत्र-पत्रिकाएँ

- 1- इण्डियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल इकॉनॉमिक्स, अक्टूबर-दिसम्बर, 1956
- 2- इकॉनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, जिम्बे 8, अंक 52, 29 दिसम्बर, 1973
एवं 27 मार्च, 1976
- 3- इण्डिया 1976
- 4- हाइड्रॉ फिफ्थ काउन्स ईयर ब्रान , जिम्बे 2, 1974-1979
- 5- जर्नल ऑफ डेवलपमेन्ट एनालिसिस , अंक 1, 1969
- 6- रिपोर्ट ऑफ यू० पी० जमींदारी एवांयूअल कमेटी, 1948
- 7- भारतीय खेत-मजदूर यूनियन का चौथवाँ राष्ट्रीय सम्मेलन , रिपोर्ट ऑर प्रस्ताव, राजगीर [बिहार], 16-19, अक्टूबर, 1981
- 8- रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन द साइज ऑफ हॉल्डिंग्स, 1956, प्रिंटेड इन रिपोर्ट्स, 1959
- 9- दिग्गजान, 23-29 जून, 1978
- 10- रविवार, 23 अगस्त-3 सितम्बर, 1977 एवं 18 जून, 1982
- 11- लोक सभ, 15-4-1989
- 12- तारिका, वर्ष 19, अंक 240, 1 से 15 जून, 1979
- 13- इण्डियन एक्स्प्रेस, 4 अक्टूबर, 1979
- 14- टाइम्स ऑफ इण्डिया, 4 अक्टूबर, 1979
- 15- राजस्थान पत्रिका, 25-4-1982